

श्रीअभय जैन ग्रन्थमाला पुष्प ७ वा

युगप्रधान श्रीजिनचन्दसूरि

लेखक—

अगरचन्द नाहटा,
भंवरलाल नाहटा ।

प्रकाशक—

शङ्करदान शुभैराज नाहटा
नं० ५१६ आरमेनियन स्ट्रीट,
कलकत्ता ।

प्रथमावृत्ति
१०००

)

वि० सं० १९६२

{

मूल्य १)

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि



परमपूज्य शासन-प्रभावक शास्त्र-विगारद जैनाचार्य
श्रीजिनकृपाचन्द्रमरिजी महाराज



परमपूज्य, प्रातःस्मरणीय, महोपकारी, शासन प्रभानक,
स्वनाम धन्य जैनाचार्य श्रीजिनकृपाचंद्र
सूरीधरजी महाराज !

पूज्य गुरुदेव,

आपके सदुपदेशसे हमारे हृदयक्षेत्रमें साहित्यानुराग और
साहित्य सेवाका जो भव्य बीज प्रस्फुटित और पल्लवित हुआ
है, उसीके फलस्वरूप यह प्रथम पुष्पाञ्जलि प्रेम, श्रद्धा और
भक्ति पूर्वक आपके कर-कमलमें सादर समर्पित है ।

विनीत,

अगरचन्द्र नाहटा ।

भंवरलाल नाहटा ।

महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकर जी
हीराचन्द जी ओझा महोदयको

सम्झति

सत्रहवीं शताब्दीके जैन समाजके आचार्यामें एक श्री जिन-
चन्द्र सूरिजी नामक बड़े ही प्रभावशाली आचार्य हो चुके हैं ;
जिनका उपदेश उस समयके तत्कालीन मुगल बादशाह अकबरने
सुनकर अपने साम्राज्यमेंसे हिंसातृप्तिको बहुत कुछ रोक दी थी ।
उनकी तपस्या और त्यागवृत्तिन बादशाहका चित्त जन धर्मकी
ओर सौंघ लिया था, जिमसे जैन धर्मका विकास होकर उस
तरफ उत्तरोत्तर आस्था बढ़ती जाती थी । फलत बादशाह
अपने यहा प्राय जैन साधुओंको बुलाकर उनमें उपदेश ग्रहण
किया करता था । वह जैन समाजके लिये स्वर्णयुग था और
कर्मचक्र चञ्चलवत जैमें श्रावक उसमें मौजूद थे । इतिहासमें
स्पष्ट है कि अकबरके समयके जैन आचार्याोंने इस प्राचीन
धर्मकी सरक्षाके लिये कठिन तपस्या की थी । वास्तवमें देखा
जाय, तो मध्यकालीन युगके भारतके इतिहासको सुरक्षित रखने-
का बहुत कुछ श्रेय जैन साधुओंको भी है, जिन्होंने कई ग्रन्थ
निर्माणकर सन्दृत साहित्यको जीवित रखनेका बड़ा प्रयत्न किया है ।

हिन्दी सप्ताह अभी तक ऐसे साहित्यरक्षकोंसे अपरिचित है, अतएव इस कमीको पूरी करनेके लिये बीकानेरनिवासी श्री अगर-चन्दजी नाहटा और श्री० भवरलालजी नाहटाको बड़ी लगन है । उनकी प्रथम कृति 'युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि' मेरे सामने है । पुस्तक उपयोगी है और प्राचीन पुस्तकों, पट्टावलिओं, शिलालेख आदिके आधारपर लिखी गई है, जिससे उस समयकी परिस्थिति और आचार्य श्री जिनचन्द-सूरिजीके जीवनकी सारी भाँकी होती है ।

श्री० अगरचन्दजी नाहटा और श्री० भवरलालजी नाहटा सोजके बड़े प्रेमी हैं । श्री अगरचन्दजी नाहटा द्वारा लिखित 'विधवा-कर्त्तव्य' और श्री भवरलाल जी नाहटा लिखित 'सती मृगानती' अपने विषयकी अच्छी पुस्तक है, और मैं उनके उत्साहकी प्रशंसा करता हूँ ।

अजमेर,
ता० १७ सितम्बर १९३५

गौरीशंकर हीराचन्द आभा

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि



स्वर्गोया विदुषी आर्या श्रीमती विमलश्रीजी महाराज

स्व० विदुषी आर्या श्रीमती विमलश्री

—का—

सांक्षिप्त जीवन ।

‘यथा नाम तथा गुण’ क वाक्यानुसार विमल श्री जीकी पवित्र सर्वथा विमल और निर्मल थी। हार्दिक ऋजुता (सरलता) और स्वभाव आपके अनुपम और आदर्श गुण थे। सत्सारे उदासीनता आध्यात्मिक मद्गता आपके प्रसन्न मुख और मृदु वचनोंसे टपक आपके उपदेश बड़े रोचक और असरकारक हुआ करते थे। जिन्हार भी आपके युनीत दर्शन एवं सत्समागमका लाभ मिला है वे सदगुणोंसे सदाके लिये मुग्ध हो जाते थे।

फलोद्या निवासी चौधरी करणमलजी झाबककी धर्मपत्नी देवीके कुक्षिसे स० १९३२ के अक्षय तृतीयाको आपका जन्म हुआ। आपका शुभ नाम दुगाकुमरी रखा गया। अवसरविज्ञ माता १३ वर्षकी योग्य वयमें चौधमल जी लोकड़के सुपुत्र मोहनलालजी आपका पाणिग्रहण कर दिया, किन्तु दुर्दैव कालने विवाहको पूरे होनेके पूर्व ही आपकी सौभाग्यश्री को हरण कर लिया, या जाय कि भोग्यकर्म आपके अवशेष न था और चारित्र्यावर्णीय क्षयोपशमने आपको चारित्र्याभिमुख होनेका मौका दे दिया।

इधर पूज्या सिंह श्री जीके उपदेशोंने आपके हृदयको वैराग्य प्रोत कर दिया। फलतः दुगाबाईने अपने सास ससुर आदि व्यक्तियोंकी आज्ञा सम्पादन कर स० १९५० के आषाढ कृष्ण तिथिसे दीक्षा ग्रहण की, स० १९५० आषाढ शु० ११ को हो जानेपर आपका शुभ नाम ‘विमलश्री’ रखा गया।

दीक्षाके अनन्तर आपने स्वपर सिद्धान्तोका अध्ययन क विद्वत्ता और योग्यता प्राप्त की। साधनाके मन्त्रे आदर्शने वि

सं० १९६९ के पौष शुद्ध १२^१को श्रीसिंहश्रीजीका अजमेरमें स्वर्गवास हो गया, तबसे उनको आज्ञानुवर्ती आर्या सहकु देखभाल आपके नेतृत्वमें रही, आपने बड़ी योग्यतासे इसका संचालन किया और आपके गम्भीर एवं शान्त प्रकृतिने सबके हृदयों पर प्रभुत्व जमा लिया ।

नव वर्षकी अवस्थामें दीक्षित आर्या प्रमोदश्रीजीका विद्याध्ययन भी आपके नेतृत्वमें हुआ, जो आज परम विदुषी, पण्डिता और आर्यारत्नकी ख्याति प्राप्त है ।

पूज्या विमलश्रीजीने मारवाड, मेवाड, मालवा, गुजरात, काठियावाड आदि देशोंमें विहार कर बहुत शासनोन्नति और धर्म प्रभावना की है, शिक्षा प्रचार और जीर्णोद्धारकी ओर आपका विशेष लक्ष्य था ।

भोपाल और गन्धारमें प्रतिष्ठा महोत्सव, रतलाममें ध्वजा-रोपण और यायासाके मन्दिरका जीर्णोद्धार, सरवाडके दादावाडीके भव्य मन्दिरका उद्धार, सोजतमें कन्या पाठशालाकी स्थापना, कोटेमें दीवान बहादुर केशरीसिंहजी द्वारा विंशति स्थानक तप उद्यापनका महोत्सव, बीकानेरमें नवपद (१०-१२) उद्यापनका महोत्सव आदि अनेक धर्म कृत्योंके होनेमें आपके सद्बुद्धेश ही प्रधान कारण है ।

इस प्रकार आत्मोद्धार और धर्म प्रचार करते हुए सं० १९९० माघ कृष्ण अष्टमी मंगलवारके रात्रि ९। बजे समाधि पूर्वक फरौधोमें आपकी अमर और पवित्रात्मा नश्वर देहका परित्याग कर स्वर्ग सिंघारों, उप पौद्गलिक देहकी अविद्यमानतामें भी आपकी विमल कीर्ति चिरस्थायी है ।

विनीता,

आर्या राजेन्द्र श्री ।

आवश्यक सूचना —आपकी स्वर्गीया आत्माके सद्गुणोंकी स्मृतिमें फरौधो सहने (१०००) रुपये धर्मार्थ निकाले हैं ।

इस ग्रन्थरत्नकी भी ४०० प्रति ये पूज्य विमलश्री जीकी स्मृतिमें अमूल्य वितरणार्थ जिन-जिन धर्मानुरागी श्रावक ध्राविकाओंने द्रव्य सहायता दी है उन्हें धन्यवाद दिया जाता है और सदा हमी प्रकार उत्तम ग्रन्थोंके प्रकाशनमें सहायता देते रहें, यही अनुरोध है ।

कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत युगप्रधान श्री जिनचन्द सूरि अष्टक



एजी सतनके मुख वाणि सुगी, 'जिनचन्द' सुणिंद महन्त यति ।

तप जप करै गुरु गुर्जरमे, प्रतिबोधत है भवि कु सुमति ॥

त्तव ही चित चाहन चूप भई, 'समयसुन्दर'के प्रभु गच्छपति ।

पठइर पातशाहि अजगत्की छाप, घोलाए गुरु गजराज गति ॥१॥

एजी 'गुजर' तैं गुरुराज चले, विचष्ट में चौमास 'जालोर' रहे ।

'भेदनीतट' मन्त्री मडाण कियौ, गुरु 'नागौर' आदर मान लहै ॥

मारवाड 'रिणी' गुरु वन्दन को, तरसै 'सरसै' विच वेग वहै ।

हररयो सब 'लाहौर' आये गुरु, पातिशाह अकबर पॉव गहै ॥२॥

एजी शाहि 'अकबर' बबर के, गुरु सूरति देखत ही हरयै ।

हम योगी यति सिद्ध साधु वृती, सब ही पट दर्शनके निरखै ॥

तप जप्प दया धर्म धारणको, जग कोइ नहीं इनके सरखै ।

'समयसुन्दर' ६के प्रभु धन्य गुरु, पातिशाह 'अकबर' जो परखै ॥३॥

एजी७ अमृतवाणी सुणी सुलतान, ऐसा पातिशाह हुकूम किया ।

सब आलम माहि अमारि पलाइ, घोलाय गुरु फरमाण दिया ॥

१ गुरु २ भेजे ३ अकबरी ४ अधविच ५ में ६ टोपीवशऽमावस चन्द
उदय, अज तीन बताय कला परखै (मुद्रितमें पाठान्तर) ७ गुरु

जग जीव दया धर्म दाखण तैं, जिन शासनमे जु सोभाग लिया ।

‘समयसुन्दर’ कहै गुणवन्त गुरु, दृग देसो हरपित होत हीया ॥४॥
एजी६ श्रीजी गुरु धर्म गोठ १० मिलै, सुलताण ‘सलेम’ अरज करी ।

गुरु जीव दया नित चाहत ११ है, चित्त अतर प्रीति प्रतीति धरी ।
‘कर्मचन्द्र’ बुलाय दियो फुरमाण, छोडाइ ‘सभाइत’की मच्छरी ।

‘समयसुन्दर’ कहै सब लोकनमे, जु १२ सरतर गच्छकी ख्याति खरी ॥५॥
एजो श्री ‘जिनदत्त’ चरित्र सुणी, पातिशाह भयौ गुरु राजिय १४ रे ।

उमराव सबे कर जोड़ि सडै, पभगै अपगै मुरा हाजिय रे ॥
युगप्रधान १३ क्रिये गुरु कु, गिगडदू धुधु बाजिय रे ।

‘समयसुन्दर’ तू ही जगत गुरु, पातिशाह ‘अकबर’ गाजिये रे ॥६॥
एजी ज्ञान विज्ञान कला सकला, गुण देस मेरा मन रीझिये जी ।

हिमायुंको नन्दन एम अखै, मानसिंह ‘पटोधर’ कीजिये जी ॥
पतिगाह हजूरि थप्यो ‘सिंह सूरि’, मडाण मन्त्रीवर १५ बाँजियैजी ।

‘जिणचन्द्र’ १६ अने ‘जिनसिंह सूरि’, चन्द्र सूरज ज्यु प्रतपोजियै जी ॥७॥
एजी ‘रीहड’ वश विभूषण हंस, सरतर गच्छ-समुद्र शशि ।

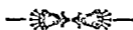
प्रतप्यो ‘जिनमाणिक सूरि’के पाट १७, प्रभाकर ज्यु प्रणमो उलसी ॥
मन शुद्ध ‘अकबर’ मानतु है, जग जाणत है परतीति इसी ।

जिणचन्द्र मुणिन्द चिर प्रतपो, ‘समयसुन्दर’ देत आगीस इसी ॥८॥



८ भव्य ९ इम १० ध्यान ११ प्रेम धरै १२ जु १३ चामरछत्र
मुरा तय भेट १४ रीक्षियै १५ कीजियैजु १६ पटे १७ पट ।

वक्तव्य ।



सतरहवा सैका भारतका स्वर्णयुग था । इससे पहिलेही कई शताब्दियोंकी तुलना करनेसे इस समयमे युगान्तर सा ज्ञात होता है । उस समय जैन धर्मकी अवस्था बड़ी उन्नत थी । आचार्य-देवकी आज्ञा, भक्तोंके लिये शाही आज्ञासे भी कहीं अधिक उण्देय समझी जाती थी, इसी कारण प्रत्येक गच्छ और नमुदायका संगठन इतना सुदृढ था कि उसके सामने बड़ी बड़ी सत्ताएँ भी टकरा कर पीछे हट जातीं और सिर झुकाती थीं । भक्तिवादका माम्राज्य इस समय बडे जोरोसे था । जैन धर्ममे ही नहीं बल्कि अन्य धर्मोंमे भी भक्ति रसका पोषण इस समय प्रचुर प्रमाणमे हुआ था । हमने हमारे चरित्र नायकोंके गुणानुवादकी, तत्कालीन लिखी हुई १०८ गहलिया (भक्तिकाव्य) संप्रहकी हैं, जिनको पढनेसे उम समयके विद्वानोंकी आचार्य देवके प्रति कितनी अगाध भक्ति थी, इसका अच्छा परिचय मिल जाता है ।

हिन्दी-भाषाका अधिकाधिक प्रचार और सुव्यवस्थित रूपसे गठन भी इस शताब्दीसे प्रारम्भ हुआ है । इस शताब्दीके रचित और लिखित ग्रन्थोंकी संख्या बहुत विशाल है । अतः साहित्य युगके नाते भी यह शताब्दी विशेष उल्लेखनीय है ।

सम्राट् अकबर आदि उस समयके राज्य शासक स्वयं विद्याविलासी थे, अतः प्रत्येक धर्म-प्रचारक विद्वानकी, विद्वत्ता और आचार ही सर्वोच्च कसौटी थी, इस कसौटीपर जैन विद्वानोंने उत्तीर्ण होकर राज्य शासको एवं अन्य विद्वानोपर भी अपना असाधारण प्रभाव जमा लिया था। जिसके फल स्वरूप इस समय ऐसे कई काम हुए, जो मनुके लिये चिरस्मरणीय हैं। अकबरके शासनकालमें प्रजाको जो शान्ति प्राप्त हुई, इसमें जैनाचार्यों और विद्वानोंका सतत उपदेश ही प्रधान कारण है।

जैनाचार्योंने इसके पहले और पीछे भी, समय समयपर राजसभाओंमें बहुत सन्मान प्राप्त किया है एवं जैन धर्मकी महान् सेवा और अत्यधिक प्रचार करके शासनकी परम प्रभावना की है। आर्य्य नृपतियोंकी तो बात ही क्या? प्रत्येक विद्याविलासी नृपतियोंकी राजसभाओंमें उनकी विद्यमानताके प्रमाण मौजूद हैं। उन्होंने अपनी प्रखर मेधा और असाधारण पाण्डित्यका परिचय देकर अजैन विद्वानों पर भी अपनी विद्वत्ता एवं उत्कृष्ट चारित्र्यका गहरा प्रभाव डाला है।

राजसभाओंमें खरतर-गच्छाचार्य्य ।

खरतर गच्छके विद्वानोंका नृपतियोंकी सभाओंमें बड़ा ही गौरवास्पद स्थानथा। “खरतर” विरुद्ध प्राप्तिसे लगाकर जिन जिन आचार्योंने राजसभाओंमें अपना प्रभाव फैलाकर सन्मान प्राप्त किया है, उनके कतिपय नाम ये हैं —श्रीजिनेश्वर-मुरिजीने गुर्जराधीश दुर्लभ राजकी सभामें, श्रीजिनवल्हभसरिजीने

+सद्विद्यु दुल्लह राण सरसइ अको घसोद्विपु सुदपु ।

मज्जे रावसह पविसिडग लोयागमाणु मय ॥ ६६ ॥

(गणधर सार्व शतकम्)

धारानरेश नरवर्मकी सभामे, श्रीजिनदत्तसूरिजीका अजमेरके अणों-
राज और त्रिभुवनगिरिके कुमारपालका प्रतिबोध - मणिधारी
श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका दिल्लीके राजा मदनपालपर प्रभाव* और
श्रीजिनपति सूरिजीका अन्तिम हिन्दूसम्राट् पृथ्वीराजकी सभामे
तथा राजा जयसिंह एव आगिकान—रेश भीमसिंहकी सभामे
वाकियोंको शास्त्रार्थमे परास्त कर सम्मानित होना, इतिहाससं-
भली भांति सिद्ध है- ।

आर्य-संस्कृतिके विनाशक मुसलमान बादशाहोपर भी उनका
प्रभाव विशेष उल्लेखनीय है । क्योंकि भिन्न जाति, भिन्न प्रकृति
और भिन्न विचारवाले मुसलमान बादशाहोपर प्रभाव जमाना देशी
नरेशोंकी अपेक्षा अनि कठिन कार्य था । वे लोग हरएक पर जरा-
जरामी बातोंमे त्रिगड जाते और यद्वातद्वा टण्ड दे डालते थे । उन
मुसलमान सम्राटोंपर सर्वप्रथम प्रभाव जमानेका श्रेय भी सरतर
गच्छके आचार्योंको ही है ।

* इन सब बातोंके लिये "गणधर सार्धशतक बृहन्वृत्ति" देखना-
चाहिये ।

x यह सम्बन्ध पत्र ८६ की प्राचीन गुवावलीमें है ।

- देखे 'ऐतिहासिक जन काव्यसंग्रह' के पृष्ठ ९ में —

"वामिड जेगु छत्तीस विधादहि, जयसिंह पुढविय परपदइ ॥

बोहिय पुढवी पमुइ नरिन्दइ, निखणिय वयणि जिण धम्मु करइ ॥१६॥

इन शब्दार्थोंका विस्तृत और मनोरंजक वर्णन प्राचीन गुवावली

(पत्र ८६) में है ।

सरतर गच्छके ओर भी कई आचार्योंने नृपति द्वारा सम्मान प्राप्त
किया है, विमला उल्लेख प्राचीन गुवावली आदिमें है ।

कलिकाल केवली श्री जिनचन्द्रसूरिजी (स० १३४९—७६)
सुलतान कुतुबुद्दीनको चमत्कृत किया। उमके पश्चात् श्री जिनप्र
सूरिजी- ने स० १३८५ पोप शुक्रा २ (८) अनियारके सन्ध्या मम
महमद तुगलक बादशाहसे मिलकर इतना जबरदस्त प्रभाव डाला
कि वह सूरिजीका परमभक्त हो गया, यहांतक कि प्रवाममे
उनको अपने साथ रखा था। पन्द्रहवीं शताब्दीमें वेगडशाहके प्रथ
आचार्य श्री जिनेश्वर सूरिजीने महमद वेगडेसे अच्छा सम्मा

× कुतुबुद्दीन सुल्तान राउ, रजिउ स मणोहरू ।

जगि पयडउ जिगचन्दसूरि, सूरिहि सिर सेहरू ॥

(जिनकुशलसूरि रास, ऐ जै का स० पृ० १६)

— इनके विषयमें 'विविध तीर्थ कल्प' कन्नानय तीर्थ कल्पद्वय और पं
लालचन्द्र भगवानदास गाधीका लेख 'जैन' पत्रके रोप्यमहोत्सवक, ओ
गीतत्रय ऐ जै का स० पृ० ११ से १४ में देखने चाहिये ।

पुरातत्त्वविद श्रीजिनविजयजी विविध तीर्थ कल्पके प्रस्ताविक निवेदन
जिन प्रभसूरिजीके विषयमें लिखते हैं —“ग्रन्थकार अपने समयके ए
बड़े भारी विद्वान् और प्रतिभाशाली जैन आचार्य थे। जिस तरह विक्रमव
१७ वीं शताब्दीमें मुगल सम्राट् अकबर बादशाहके दरबारमें जैन जगदगु
हीरविजयसूरिने शाही सम्मान प्राप्त किया था, उसी तरह जिनप्रभसूरि
भी १४ वीं शताब्दीमें तुगलक सुल्तान महम्मद शाहके दरबारमें बड
गौरव प्राप्त किया था। भारतके सुमलमान बादशाहोके दरबारमें, जैन
धर्मका महत्त्व बतलानेवाले और उसका गौरव बढ़ानेवाले शायद सब
ले ये हो आचार्य हए ।”

प्राप्त किया था—। सोलहवीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें उपा० सिद्धान्त रुचिजीने माडवगडमें गयासुद्दीनकी सभामें विजय प्राप्त की* पर उत्तरार्द्धमें श्री जिनहस सूरिजीने सिकन्दर लोदी बादशाहके चित्तको चमत्कृतकर ५०० कैदियोंको छुड़ाया था ६।

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिजी जो कि हमारे चरित्र नायक हैं, उन्होंने सम्राट अकबर और जहाँगीरको प्रतिबोध देकर शासन्नोनति की है। जिसका परिचय इस ग्रन्थसे भलीभांति मिल जायगा। उनके पठ्यात् श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राट जहाँगीरने युगप्रधान—

— देखो जिनेश्वरसूरि गीत (ऐ० जै० का स० पृ० ३१२) —

परतौं प्योँ खान नौ, 'भणहिलवाडे' माहि हो ।

महाजन बद् मुकावियो, मेलयउ सब उच्छाहि हो ॥ स० ॥ ६ ॥

'राजनगर' नइ पागुर्या, प्रतिबोध्यो 'महमद' हो ।

पद ठवणो परगट कियो, दुख दोहग गया रद हो ॥ स० ॥ ७ ॥

* श्री गयासुद्दीनशाहेर्महासमालब्धवादि विजयानाम् ।

श्री सिद्धान्तचि महापाध्यायाना विनेयेन ॥ २ ॥

(स० १५१९ साधुसोम कृत, महावीर चरित्र वृत्तों)

* देखें ऐतिहासिक जैन काव्यसमूह पृ० ५३ में भक्तिलाभोपाध्याय कृत 'श्रीजिन हससूरि गुरु गीतम्' और पद्यावल्लिं ।

—स० १६७५ खरतर बसहीके शांति प्रासाद भादिके लेखोंमें —“दिल्लीपति पातश्याह श्री जहांगीर प्रदत्त युगप्रधान विरुद्धारक श्री अकबर शाहिरजक कठिन काश्मीरादि देश विहारकारक युग प्रधान श्री जिनसिंह सूरि ।”

स० १६७९ में कविबर समय छन्दरजीके स्वयं लिखित गुर्नावली पत्र १ में

श्री दिल्लीपति पातशाहि विमुना, श्री नूरदी साहिना ।

येभ्यो दायि युगप्रधान पदवी, पटानुपट्टनमा ।

भू पीठोत्तम चोपडाभिघकुल, प्रायेय रोचि प्रभा ।

जीयाछर्जिनसिंह सूरि गुरुव, प्रौढ प्रतापोदय ॥ ९ ॥

पदसे विभूषित किया, उनके पट्टधर श्रीजिनराजसूरिजी^x १६८६ मार्ग-शीर्ष कृष्णा ४ को आगरा में सम्राट् शाहजहाँसे मि श्रीजिनरत्नमूरिजी और श्रीजिनरगसूरिजीका भी शाही दरवा नवावोंसे अच्छा सम्बन्ध रहा था, जिसके प्रमाण स्वरूप कई फरमान, लखनऊके खरतर गच्छीय ज्ञान भंडार और वीक श्रीपूज्यजी श्रीजिन-चारित्रसूरिजीके पास उपलब्ध हैं ।

बादशाह औरङ्गजेब बड़ा क्रूर-नीतिज्ञ और कट्टर मुस था । अतः तभीसे शाही दरवारसे जैनाचार्योंका सम्बन्ध म गया । अस्तु, कहनेका सारांश यह है कि खरतरगच्छा प्रभाव देशी नरेशों तक ही सीमित न होकर मुसलमान वा पर भी यथेष्ट था ।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि खरतरगच्छाचार्योंका प्रभाव नरपतियों पर गूत्र जमा हुआ था यहां तक कि वे उन्हें अपना गुरु मानते थे—वीकानेर, जेसलमेर, जोधपुर, जयपुर आदि न तो अविच्छिन्न सम्बन्ध रहा है, जिसके फल स्वरूप आज भी पत्र, पट्टे, परवाने, ग्रास रुक्के आदि विपुल परिमाणमें उपलब्ध वम, इन बातोंका विवेचन यहाँ समाप्त कर प्रस्तुत पुस्तकके जानेका कारण दर्शाते हैं ।

इति स० १६७९ वर्षे भाद्र पद ११ दिने । श्री प्रह्लादनपुरे । श्री सुन्दरोपाध्यायौल्लिखेति पठित सहजविमल मुनि पञ्जार्थम् ।

(हमारे सा

हमारी साहित्य प्रगति—

स० १९८४ के वसन्त पंचमीको परम पूज्य आचार्य महाराज, मकलागम रहस्य वेदी, परम गीतार्थ, श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी अपने विद्वान गिष्य, प्रवर्तक मुखमागरजी आदि मुनि मण्डलके साथ वीकानेर पगरे । सौभाग्यवश उनका चातुर्मास भी हमारे मकानमे हुआ, इससे हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पडा । प्रतिक्रमण, व्याख्यान श्रवणादिके अतिरिक्त समय समय पर पूज्य आचार्यश्री एवं प्रवर्तकजी आदिसे सैद्धान्तिक विषयमे प्रश्नोत्तर करते हुए धार्मिक तत्त्वोका यत्किञ्चित् बोध हुआ । यद्यपि आपश्रीका लगभग तीन वर्ष वीकानेरमे बिराजना हुआ, किन्तु हमे केवल १॥ वर्ष ही आपके सत्समागमका सुयोग मिला ।

एक दिन प्रवर्तकजीसे “आनन्द काव्य महोदधि, उवा मौक्तिक” लाकर श्रीयुक्त मोहनलाल ढलीचन्द्र देशाइ B A L. L B का “कविवर समयसुन्दर” नामक निबन्ध पढा, तभी से हमारे हृदयमे कविवरके प्रति अगाध भक्ति उत्पन्न हुई और शीघ्र ही उनकी कृतियोका खोज-शोध करना आरम्भ कर दिया । “श्रीमहावीर जैन मण्डल” के कतिपय हस्तलिखित ग्रन्थोको मगयाया । सौभाग्यवश उनमे हमे एक ऐसा गुटका (पुस्तकाकार प्रति) मिला, जिसने हमारी मानसिक-भावनाको अत्यधिक उत्तेजन दिया, इसका कारण था—उक्त गुटकेमे दो सौके लगभग कविवरकी छोटी कृतियोका उपलब्ध होना, जिनमे बहुत सी तो देशाइ महोदयको भी अनुपलब्ध थी । वम, उत्तरोत्तर खोज शोधकी रुचि बढती गई, उसने इनने अधिक प्रमाणमे कार्य

करनेका अवसर दिया कि जो हमारे लिये एक तरहसे कल्पनातीत और असम्भवना था ।

इस ग्रन्थकी जन्म कथा—

सं० १९८६ मे यु० प्र० श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका सक्षिप्त परिचय पट्टावलीके आधारसे लिखा । जिमका उद्देश्य एक मात्र यही था कि कविवर समयसुन्दरजी आपके प्रशिष्य थे, अत उनके चरित्र सम्पादनमे काम लगेगा, किन्तु उस समय यह कल्पना तक न हुई कि कविवरका जीवन-चरित्र लिखनेके पूर्व ही, इन महापुरुषकी जीवनी इतने विस्तारसे लिखनेका सुयोग मिलेगा । सं० १९८७ के आश्विन कृष्णा २ को वीकानेरमे हमारे चरित्र नायककी जयन्ती मनाई, उस समय भी आपत्री के विषयमे सक्षेपत कई पृष्ठ लिखे गये । तदनन्तर तीसरी बार जिनदत्तसूरिचरित्र—उत्तरार्द्ध, गणधरसार्ध-शतक (भाषान्तर) आदिमे वर्णित चमत्कारिक घातों (जो इस ग्रन्थके १६ वें प्रकरणमे हैं) के साथ चरित्र लिखा गया । उसके बाद खोज-शोध करते हुए नयी नयी सामग्री प्राप्त होने लगी, उसी वर्षमे श्रीपूज्यजी महाराजके सप्रहका अवलोकन किया और उपा० श्रीजयचन्द्रजी गणिके ज्ञान भण्डारके पुस्तकोकी ज्ञातव्य सूचि बनाई । इन भण्डारोमें भी हमे प्रचुर सामग्री मिली, तत्संबंधी साहित्य, गहुंलियो प्रशस्तियो आदिकी नकल की गई । सौभाग्यवश “अकबर प्रतिबोध रास” भी उ० श्रीजयचन्द्रजीके “ज्ञान भण्डार” की सूचि करते हुए उपलब्ध हुआ, अन्यान्य छोटे बड़े ज्ञान भण्डारोसे भी यथेष्ट सामग्री मिलने लगी , जिससे हमारे चित्तमे परम सन्तोष और उत्साहकी

अभिवृद्धि होने लगी। आखिर स० १९८६ में ममस्त प्रमाणोका सार सौंच कर मुद्रगार् चोथी कॉपी तैयार की गई उसमें जो कुछ लिखना अग्रशेष था स० १९६० में पूर्णकर दिया और यह इच्छा हुई कि इसे श्री० देमाड, श्रीजिनविजयजी, नाहरजी, जयसागरसूरिजी आदि इतिहास वेत्ताओंको दिखला कर शीघ्र ही छपा दे, किन्तु किमी अज्ञात शक्तिकी प्रेरणासे वह प्रेसकॉपी न तो कहीं भेजी गई और न प्रकाशनकी व्यवस्था ही हुई। गत वर्षमें चौकानेरके वृहत् ज्ञान-भण्डारके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी सूचि, छह मामके अथक परिश्रमसे निर्माण करनेके समय भी ऐतिहासिक सौज शोध, अध्ययन और इसके सहायक अन्यान्य ग्रन्थोंको देखनेका कार्य चालू रखा। फलतः शुद्धि और वृद्धि द्वारा ५ वर्षोंकी शोध-सौजके परिणाम स्वरूप जिनचंद्र सूरिजी रूपी चद्रमाकी १६ कलाओंके सूचक १६ (मूल) फरमों और १६ प्रकरणोंमें विभक्त होकर यह विस्तृत ग्रन्थ, जिसका कि इतना बड़ा होनेकी कोई सम्भावना ही नहीं थी, आज हमें सुहृद पाठकोंके समक्ष रखते हुए परम हर्ष होता है।

प्रयुक्त सामग्रीकी प्रामाणिकता—

हमने सूरिजीके जीवन चरित्रकी प्रायः सभी बातें तत्कालीन लिखित विग्रसनीय प्रमाणोंके आधारसे ही लिखी हैं। बिहार पत्र गहूलिये आदि अधिकांश सामग्री हमारे संप्रदमे मौजूद है। पहले हमारा यह विचार था कि इस ग्रन्थकी ममस्त साधन, सामग्रीकी ग्रन्थके परिशिष्टमें प्रकाशित कर दी जाय किन्तु यह विचार अन्तमें स्थिर न रह सका। क्योंकि ऐसा करनेसे मूल ग्रन्थसे भी परिशिष्ट

लम्बा हो जाता, जो ग्रन्थके लिये शोभास्पद नहीं होता। अतएव प्रमाण साक्षात्कारके निमित्त फुटनोटमे अवतरण देकर कतिपय अत्यावश्यक सामग्री “परिशिष्ट” मे दे दी है एवं राम और उपयोगी गहूलिया “ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह” मे प्रकाशित कर दी है।

हमे घटनाओंको क्रमिक लिखनेमे दो विहार पत्रोंसे जो कि हमारे संग्रहमे हैं, पूर्ण सहायता मिली है। सच पूछे, तो इनके बिना सत्रत्सरानुक्रमसे जीवनी लिखना असम्भव था। पहला विहार-पत्र तत्कालीन लिखा हुआ है, वह जर्जरित जीर्ण आदर्श नष्ट न हो जाय इसलिये हमने उसका चित्र पुस्तकके परिशिष्टमे लगा दिया है, जिससे पाठकोंको जीर्ण प्रथमादर्शका साक्षात् दर्शन हो जाय और साथ साथ हमारे लिखित बातोंको जाँच करनेमे भी सुगमता मिले। ऐतिहासिक सत्सरसे अज्ञात वृत्तान्त, मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीका मृत्यु-समय भी इसी विहार पत्रमे है अत यह पत्र बहुत महत्वपूर्ण है। दूसरा विहार पत्र हमारे ख्यालसे कवि राजलभ या उनके शिष्यका लिखा हुआ है। उसका लेखन समय अठारहवीं शताब्दीका पूर्वार्ध है, अत प्राचीनताके नाते हमने इस पत्रसे भी, अधिक प्रामाणिक होनेसे पहले पत्रका विशेष उपयोग लिया है।

छठा प्रकरण “अक्षर आमन्त्रण” प्राय “अक्षर प्रतिबोध रास” के आधार पर ही लिखा है, जिसकी मूल प्रति, कर्ताकी स्वयं लिखित ७० श्रीजयचन्द्रजी गणिके भण्डार (वीकानेर) मे है और इसे “ऐ० जैन काव्य संग्रह” मे हमने प्रकाशित कर दिया है। कर्मचन्द्र-

बग प्रन्थ वृत्ति- से हमने पूर्णतः सहायता ली है, क्योंकि उममे भी विशेष सामग्री है—वह सबसे अधिक प्राचीन, (रचना मवत् १६५०-५५) विग्वगनीय और सूरिजीके साथ ही लाहोर जानेवाले परम गीतार्थ विद्वानकी रचना है, अतएव इममे मन्डेहको तनिक भी स्थान नहीं है। 'अकवर प्रतिशोध' और 'युगप्रधान पद प्राप्ति' नामक प्रकरण द्वय इसी ग्रन्थके मुख्याग्रामे लिखे गये हैं। इनके अतिरिक्त अनेको गिलालेख, प्रगस्तियों, प्राचीन पट्टावलियों, हस्त लिखित ग्रन्थ आदि प्रामाणिक साधनों द्वारा इम ग्रन्थका सकलन हुआ है। 'सहायकग्रन्थ सूचि' में, जिन-जिन ग्रन्थोंकी सहायता ली गई है, उनके नाम दे दिये गये हैं, वाकी फुटकर कृतियोंके नाम फुटनोटमें निर्देश कर दिये हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थकी उपयोगिता—

सूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रायः सभी विषयोंपर प्रकाश डालनेका यथासाध्य प्रयास किया गया है। द्वितीय प्रकरणमें सूरिजी के पूर्ववर्ती आचार्यों, १३ वे प्रकरणमें जिन्य-समुदाय और १४ वे प्रकरणमें आज्ञानुवर्ती साधुसङ्घके परिचयके साथ साथ उनके रचित ग्रन्थोंकी विस्तृत नोध भी दे दी गयी है, जिससे सरतरगच्छके विद्वानों की उल्लेखनीय साहित्य-सेवाका खाना परिचय मिल जायगा। इसी प्रकार १५ वे प्रकरणमें भक्त श्रावकोंकी स्तुत्य शासन-सेवा पर प्रकाश डाला गया है।

* इम ग्रन्थकी हस्तलिखित प्रति हमें भी चिनरूपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भण्डार—बीकानेरसे प्राप्त हुई थी, पर प्रति अशुद्ध होनेसे इम ग्रन्थमें उसके अवतरण (श्लोक) दिये गये हैं—उनमें भी अशुद्धियां रह गयी हैं, और भी दृष्टि और मुद्रण दोषकी अशुद्धियोंके सशोधन स्वरूप 'शुद्धा-शुद्धि पत्र' दे दिया गया है।

यद्यपि मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीकी जीवनी कइ ग्रन्थोमे प्रगट हो चुकी हैं पर तथाविध सोज शोध और सामग्रीके अभावसे अद्यावधि ऐतिहासिक ससारमे उनके और उनके पुत्र भाग्यचन्द्र लक्ष्मीचन्द्रके विषयमे अनेक भ्रमणाएँ चली आती थी, हमने उन सबका तत्कालीन विद्वसनीय प्रमाणोंके आधारसे निराकरण कर इम ग्रन्थमे मन्त्रीश्वरकी प्रामाणिक जीवनी जनताके समक्ष रखनेका भरसक प्रयत्न किया है। अतः यह ग्रन्थ सूरिजीके जीवनीके साथ-साथ उस समयके उत्तरगच्छीय विद्वानो उनके कृतियों, भक्त श्रावकों आदि अनेक ज्ञातव्य बातोंके जाननेमे परम उपयोगी होगा।

स्पष्टीकरण—

“अकबर प्रतिग्रोध रास” और कर्मचन्द्र मन्त्रि-वश प्रबन्धमे पररपर साधारण दो बातोंका वैषम्य है ‘रास’ मे, अकबरका कर्मचन्द्रमे पूटना और उनका सूरिजीके राजनगरमे अवस्थित होना बतलाना, एव “वश-प्रबन्ध” के अनुसार सम्भातमे होना। दूसरा ‘रास’ मे सूरिजीके लाहोर पधारनेके पश्चान् अष्टोत्तरी-स्नानमहोत्सव होना और “वश प्रबन्ध” में पहिले होना। इन पाठातरोपर

* बडगा जैन मित्रमण्डल-भावनगरसे प्रकाशित जैन स्पेशीयल ट्रेन स्मरणोंकेके पृष्ठ १९ में “करमचन्द्र दीवान दीसही मा भाधीने रखा, त्यां तेमणे अकबर गदशाह नो सारो प्रेम जीत्यो अने श्रेताम्बर जैन सब ना प्रसिद्ध विद्वान् श्री हीरविजय सूरिने, सन्नाट् अकबर ना दरवार मा बोला-घवा मा करमचन्द्र दीधाने ज आगळ पडतो भाग लीघो इतो” लिखा है और भाग्यचन्द्र लक्ष्मीचन्द्रका मृत्यु समय इ० स० १६१३ लिखा है जो सर्वथा असिद्ध है।

विचार करनेसे ज्ञात हुआ कि “वशप्रनन्ध” में, सूरिजीसे पहले वा० मानसिंहजी (जिननिह सूरि) का लाहौर जानेका जिक्र ही नहीं किया है अतः संभव है कि वाचकजीको लाहौर भेजनेके समय सूरि महाराज राजनगरमें हो । हा ? सूरिजी तो लम्भातसे ही लाहौर पधारे थे यह बात समयसुन्दरजी कृष्ण अष्टकादिमें भलीभांति सिद्ध है । अष्टोत्तरी स्नात्रके विषयमें “वश-प्रनन्ध” का कथन ही विशेष प्रायः एवं विश्वशनीय है, क्योंकि ‘जहागीरनाम’ में भी स० १६४७ में जहागीरके पुत्री जन्मका उल्लेख है और अष्टोत्तरी स्नात्र भी उसी पुत्रीके जन्मदोषके उपशान्तिके निमित्त ही हुआ था । अतः हमने “रास” के अनुसार सूरिजीके लाहौर पधारनेके पश्चात् आनेवाली चैत्री पूनमका लिखा है किन्तु वास्तवमें स० १६४८ की चैत्री पूनम होना चाहिये ।

दूसरे प्रकरण (पृ० १५) में “सदेह दोलावली बृहद् वृत्ति” को भ्रमसे श्रीजिन प्रबोध सूरि द्वारा रचित लिखा है किन्तु यह कृति प्रबोधचन्द्र कृष्ण है । पृ० १६ में सूरि परम्परामें जिनलक्ष्मिसूरिजीनाम छूट गया है ये स० १४०० के आषाढ शुक्ला १ को श्रीजिन-पद्मसूरिजीके पाटपर बैठे, श्रीतरुणप्रभाचार्यने इन्हें सूरि मंत्र दिया । इनके रचित एक विद्वत्तापूर्ण स्तोत्र हमारे संग्रहमें है । स० १४०६ में इनका स्वर्गवास हुआ ।

पृ० १४० के फुटनोटमें दिया हुआ स० १६६८ का लेख, हमारे चरित्र नायकसे प्रतिष्ठित मूर्तिकार न होकर आद्यपञ्चीय श्रीजिन-सिंहसूरिके शिष्य श्रीजिनचन्द्र सूरिजी द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमाका है ।

पृ० १७१ मे “श्रीमण्डल वृत्ति” का रचनाकाल श्रीदेशाइके लिखे अनुसार स० १७०५ लिखा है, किन्तु हमारे ‘प्रशस्ति संग्रह’ में उस ग्रन्थकी प्रशस्ति देखनेपर ज्ञात हुआ, कि उक्त ग्रन्थ स० १७०४ मे रचित है।

पृ० २०२ मे ‘राजपूतानेके जैन वीर’ के अनुसार जयपुरके राजा अभयसिंहका उल्लेख किया है, किन्तु उस समय जयपुरका अभयसिंह नामक कोई राजा नहीं था।

चित्र और फरमान पत्र—

सूरिजीके अकबर मिलनका चित्र - इस पुस्तकमे दिया गया है। उसका ब्लॉक हमें “श्री जिनकृपाचन्द्र सूरि ज्ञान भण्डार” इन्दौरसे प्राप्त हुआ है, एतदर्थ हम उक्त ज्ञान भण्डारके सरक्षक चादमलजीको धन्यवाद देते हैं। ऐसे प्राचीन चित्र कई जगह उपलब्ध है, (देखे पृष्ठ ११० की फुटनोट) एव दादाजीके मन्दिरकी दीवारोपर भी चित्रित पाये जाते हैं। सूरिजीके विराजे हुए और उनके समक्ष मश्राट् अकबरादि हाथ जोड़े रखे हैं—ऐसा चित्र कलकत्तेमे सुप्रसिद्ध राय वट्टीदाम बहादुरके मन्दिरसे लगा हुआ है। चित्र नायकका एक स्वतन्त्र फोटो सेदुजीके मन्दिर (वीकानेर) में भी है।

* श्रीमान् हीरविजय सूरिजीका भी ऐसा ही फोटो कई ग्रन्थोंमें प्रकाशित हुआ है, पर उसकी प्राचीनता और प्रमाणिकताके विषयमें पुरातत्वविद् श्री विद्याविजयजीसे पूछनेपर, मित्ती फाटगुन श्रुत्या १० (वी० स० २४६१) पाठनसे दिये हुए कार्डमें आप इस प्रकार लिखते हैं —

१ हीर वि० सू० और अकबरके मिलनका चित्र बनावटी है। मैंने छपनठमें बनवाया था।

पंचनदी साधतं समयका एक और चित्र श्री पूज्य जी श्री जिन-चारित्रसूरिजीके पास है।

सूरि जीकी मूर्ति, जो कि श्री व्रपभ देव जीके मन्दिरमें है और लेख पृ० १५८ मे छपा है, उसका सुन्दर फोटो इस पुस्तकमे दिया गया है, किन्तु उम स्थानकी विपमताके कारण फोटोमे गिला छेपकी प्रतिकृति न आ सकी।

आपाठी अष्टान्हिकाका मूल फरमान जो कि हमें प० प्र० यतिवर्य सूर्यमल जीकी कृपासे प्राप्त हुआ है। उसका फोटो उसक परिशिष्टमे लगा दिया है। लखनऊके भण्डारसे प्राप्त करनेमे हम यति जीका आभार मानते हैं। दूसरा शजुख्य तीर्थ विषयक फरमान (मूल) खोज करनेपर भी न मिला। उसका अनुवाद बीरानेर ज्ञान-भण्डारस्थ पत्रसे नकलकर परिशिष्टमे प्रकाशित किया है। सम्भव है कि मूल फरमानके मिलनेमे अच्छा प्रकाश पड़े। अन्यान्य फरमान पत्र खोज करनेपर भी प्राप्त न हुए इसके कारणोमे एक कारण यह भी है कि सूरि जीके पञ्चान खरतर गच्छमे तीन गच्छ-भेद हो गये—(१) जिनसागर सूरि, (२) जिनरग सूरि, (३) जिनमहेन्द्र सूरिजीसे। इसमे सामग्री यत्र-तत्र विलस गयी और उसका पना लगाना दुष्कर हो गया। राधनपुरमे श्री जिनचन्द्र सूरि जी (स० १८३४—१८५६) के जेमलमेर उ० उदयधर्मजीको दिये हुए पत्रसे ज्ञात होता है कि उन समय तक तो कई फरमान विद्यमान थे। उस पत्रका आवश्यकोय अंश यहा उद्धृत करत हैं। यह पत्र हमारे सग्रहमे है।

“प० क्षमाकल्याण गणि चौमास ऊनर्ये जेसलमेर थी । विहार करस्यै सो तुमे जेसलमेर पूठियानी थिति मरजाद सरव साचवजो श्री सव नू पिण लिख भेजसा प० क्षमाकल्याण गणि नू पिण लिख्यौ छै मो चालना तुम नु सुपरत करस्यै तुमे तथा पं० क्षमा कल्याण आपम मे घणु सप राखज्यो हेतमे सरव रूडो छै तथा गाठडी नी तुमे पाच पाती करी हती ते गाठडीमे जूना परवाना मुसलमानी अक्षर ना हता ते परवाना ठावडा करि नै पाली पहुचता करेज्यो पालीवाला नू इननो लिख देज्यो रामनपुर ठावडा पुहचारेज्यो पाली थी राधणपुर ठावा पहुचस्यै बलता पत्र देज्यो मिसी द्वितीय भाद्रवा वदि १४”

श्री जिनसागर सूरि शाखाके ज्ञान-भंडार (वीकानेर) मे कइ ग्राही फरमान विद्यमान होनेका कहा जाता है, पर भंडार कइ वर्षोंसे बन्द है, अत प्राप्त न हो सके । प्रयत्न चालु है, मिल गये तो द्वितीया वृत्तिके समय प्रकाशित कर दिये जायगे ।

सूरि जीने स० १६५४ मे भी शत्रुजय की यात्रा की थी एव वहा मोटी टुक (विमलब्रसही) के समक्ष सभा मण्डपमे दादा श्री जिनदत्त सूरि जी और श्री जिनकुशल सूरि जीकी पादुकाए प्रतिष्ठित की थीं । उन दोनोंके लेख सरोखे हैं अत पाठकोंके अग्रलोकनार्थ एक लेख यहा देते हैं —

सं० १६५४ वर्षे जेठ सुदि ११ रवौ दिने श्री वृहत्सरतरगच्छे श्री जिन कुशल सूरिजी पादुका श्री युगप्रगान श्री जिनचन्द्र सूरिभि प्रतिष्ठित च सं० सोना मुख मन्ना जगदास पुत्र सं० ठाकरसीह पुत्र सववी सामल का० सपरिवारेण ।

शत्रुजय पर शिवा सोम जीकी टुकमें श्री जिनचन्द्र सूर जी और श्री जिनसिंह सूरि जीकी पादुकायें श्री जिनराज सूरिजीकी प्रतिष्ठित हैं, जिनके लेख क्रमशः इस प्रकार है —

संवत् १६८१ युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि-
श्वराणा पादुके कारिते डोसी गोत्रीय स० फ० श्री कमल-
लाभोपाध्याय प० लक्ष्मिकीर्तिगणि प० राजहस गणि प० वा ।
मरुदेव विजयादि युतेन उ०(प१)देशेन तव श्रेयसे शुभ भवतु
प्रतिष्ठित वृहत्परतर गच्छाधिराज श्री जिनराज सूरिभि

स० १६७५ वर्ष वैशाख सुदि १३ शुक्रे कान्माराध (काश्मीराय ?)
नार्य देश बोध विहारादि प्रचार पथार मारि प्रवर्तक सर्वविधान
नर्त्तकी नर्त्तक जहागीर नूरद्दीन पातिसाहि प्रदत्त युगप्रधान पद श्री
जिनसिंह सूरिणा पादुके प्रतिष्ठिते श्री जिनराज सूरिभि सकल
सूरि राजाधिराजै ॥

इनके अतिरिक्त और भी तत्कालीन अनेक विद्वानोंकी चरण-
पादुकाएं वहा प्रतिष्ठित हैं, जिनके प्रकाशित होनेसे बहुतसा इतिहास
प्रकाशमे आ सकता है ।

उपसंहार—

सम्राट अकबरके दरवारमे श्रीमान् हीरविजय सूरिजी और
श्रीजिनचन्द्र सूरिजीका अच्छा प्रभाव रहा है, जिनमे हीरविजय
सूरिजीकी जीवनी तो कई वर्ष पूर्व ही ग्योज शोध द्वारा प्रकट

* सं० १६७४ में सूरि जीकी चरणपादुकाएं जैसलमेरमें प्रतिष्ठित है ।
देखें जैसलमेर लेख संग्रह, लेखांक २५००

हो चुकी थी किन्तु ऐतिहासिक सामग्री विपुल प्रमाणमे न मिलनेके कारण श्री जिनचन्द्रसूरिजीकी जीवनी अभीतक प्रकाशमे नहीं आयी थी। श्री हीरविजयसूरिजीकी भाति इनकी चरित्र-सामग्री किसी बड़े ग्रन्थाकारमे प्राप्त न होकर “कर्मचन्द्र मन्त्रि वश ग्रन्थ और राम द्वयके अतिरिक्त अन्य सभो अग यत्रतत्र विखरे पडे थे, उनमे उपलब्ध सर्व साधनोको एकत्र कर सम्पादन करना कितना कठिन और अमसाध्य कार्य है, इमे साहित्य-प्रेमी विद्वान् ही अनुभव कर सकतेहैं। यत —

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रमम् ।

नहि वन्ध्या विजानाति गुर्वी प्रसव वेदनाम् ॥

५ वर्षके अनुसन्धान और परिश्रमसे यह ग्रन्थ लिखा गया है और इसे सर्वाङ्ग सुन्दर बनानेका पूर्ण प्रयत्न किया गया है। उस कार्यमे हम कैसे और कहातक सफल हुए हैं, इसका निर्णय विज्ञ पाठको ही पर निर्भर करते हैं। यद्यपि हमने लापरवाही और प्रमादसे बचे रहनेमे पूर्ण लक्ष्य रखा है तथापि हमारा यह प्रथम प्रयास है, अतः अनेको त्रुटिया रह जाना सम्भव है। विद्वज्जन उनका सशोधन कर हमें सूचित करें, द्वितीयावृत्तिमे उनको दूर करनेका यथामाध्य प्रयत्न किया जायगा।

आभार प्रदर्शन—

इम ग्रन्थके निर्माण करनेमे हमें अपने अनेक इष्ट-मित्रोसे अनेक प्रकारकी सहायता मिली है, अतएव हम अपने समस्त सहायकोके प्रति धन्यवादपूर्वक हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। जैन-

साहित्यके धुरन्धर लेखक श्रीयुक्त मोहनलाल दलीचन्द देमाई B A. L L B (वकील हाईकोर्ट, बम्बई) का हम हार्दिक आभार मानते हैं कि आपने हमारे अनुरोधको तत्काल स्वीकार करके अनेक कार्यों-मे व्यस्त रहते हुए भी हमे विद्वतापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना* लिख भेजी। राजपूत इतिहासक अमर वेत्तक विश्व विद्युत श्रद्धेय महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकरजी हीराचन्दजी ओझा महोदयने वृद्धावस्थामे शारीरिक अस्वस्थता होते हुए भी अपनी अमूल्य नम्रमति प्रदान करके हमे अनुगृहीत किया है। हम यह नहीं जानते कि इन दोनों विद्वानोंके लिये किन शब्दोंमे कृतज्ञता प्रक़ाशित करे।

यह सूचित करते हमें अपार हर्षहोता है कि विद्वद्वर्य श्री लखि मुनिजी महाराजने इस ग्रन्थक आधारसे सूरिजीके चरित्रका सस्कृत काव्य रचना प्रारम्भ कर दिया है, एतदर्थ आप श्री कोटिश साधुवादके पात्र हैं।

विदुषी आर्या श्री प्रमोद श्री महाराजके उपदेशसे ग्रन्थ प्रकाशन होनेकेपूर्वसे ही आपको स्वर्गीया गुरुवर्या श्री विमलश्रीजी महाराजकी पवित्रस्मृतिमें नि शुल्क वितरणार्थ ४०० प्रतियोंको फलोधी सघने स्वीद करनेका वचन देकर ग्रन्थके प्रचार एवं प्रकाशनमे सहायता दी और हमे उत्साहितकिया। एतदर्थ हम आपका आभार मानते हैं।

* प्रस्तावनाका हिन्दी अनुवाद कर प्रकाशित करनेका विचार था, पर देशाह महोदयकी उसे गुजराती भाषा नागरी लिपिमें प्रकाशित करने की सूचना होनेसे वसा ही किया गया है।

जैनोंए देगनो इतिहास भडार अने साहित्यनिधि साचवी राख्योछे, तेमानो घणोए अप्रगट पड्योछे, जैनोंनी खुदनी तवारीस, तेना महान थावकोनी, प्रतिभाशाली आचार्योंनी-साधुओंनी, पवित्र तीर्थोंनी, कलामग मदिरोंनी, गच्छोंनी-सप्रदायोंनी तवारीस अण-उकेली, सिलमिलावध अणलखेली, छिन्न भिन्न दशामा, पण छूटक छूटक प्रचुर माहिती आपनारी घणी सामग्रीवाली स्थितिमा पडी छे, तेमाथी देगना प्रजाजीवनने लगती रस भरी हकीकतो पण खूब मली आवे तेम छे ।

ए सौभाग्यनो विषय छे के वर्तमान युगमा अनेकवलो पैकी५ नु एक वल ते आपणा देगना प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति ना प्रामाणिक अभ्यासमा उडा उतरवानी सत्यशोधक वृत्ति जन्मी चुकी छे । केवल कपोलकल्पित दतकथाओंने भरोसे रही आपणा भूतकालने महोज्वल मान्या करवानी, अथवा तो विदेशी या अन्य इतिहासकारोए करेली केवल उपरछला ६ सगोधनपर अवलंबीने आपणा अतीतनी हीणी गणना करवानी—ए वन्ने आदतो वच्चे आ तुलनात्मक सशोधन दृष्टि इष्ट कार्य साधनारी छे ।

आवी वृत्तिए केवल देश अने प्रातनीज नहीं, पण एकेक प्राचीन नगरनी प्राचीनता नपासवानु गरु थयु छे अने ते उपरात देशवीरो—यर्मवीरोना जीवनचरित्र पग लखावा गड्या छे ए आ जमानानु शुभ चिन्ह छे । आ पुस्तक एवो एक प्रयत्न छे ।

जैन तवारीखमा पुष्कल^७ लेखन सामग्री उपलब्ध थइ शकं छे, परन्तु तेमा जेनेतर लेखकोण चचु प्रवेश नथी कर्यो—ते प्रत्ये प्रयत्न करवानो कोइए मकरूप कर्यो होय तो ते सफल थयो नथी। आथी ते कार्य जेन लेपको, अधिकारीओ, शिष्यको, ग्रेज्युएटो अने साधुओपर आये छे, कारणके तेमने जैन ग्रंथो अने सामग्रीनो विशेष परिचय करवानी अनुकूलना अने जोगवाइ मली शकं छे।

एक विद्वान् लखेछेके —‘इतिहासने सर्जनारा तो गया, पण ए सजायिला इतिहासने एकठो करनारा ये नथी जागता। आपणीज माटीमा आपणा रत्नो दटाया। आपण पग नीचे चगडाया ८। एने बीणजा ६ माटे दरिया पारथी टॉट आज्या फाविस अने वाट्सन आज्या, तेओ कइ खाम इतिहास सशोधनने माटे नहोता नीमाया १० हाथमा सोपायेला पातोनी हाजेमी करताज तेओने आपणी प्रेमकथाओनो अने शौर्यवार्ताओनो नाद लाग्यो हतो। आपणा सडरोमा दटायेला भूतकालनो पोकार एने काने पड्यो हतो। घोडे चढी चढीने ए इतिहासना आगको पहोडोनी गिरजरमालामा भट्क्या। अरुड अने रोमाचक इतिहास आपीने आज ए इतिहासना आगको करमा सुता छे अने एना लख्या-भाग्याना आज आपणे भाग्या तूट्या तरजुमा करीए छीए। आपणने-हिन्दू मातानी तवारीखना मिथ्याभिमानो वारसदारोने—आपणामाथीज केम कोई टॉडके फाविस न सापड्यो? शौर्य तो परवार्या पण शौर्यना पूजन--अरे स्मरण पण विसार्या ?

‘आज पण गौरा अमलदारो निर्जन, विकट, रोग भर्या प्रदेशोमा

उलट भेर रहे छे—नदनवन सजे छे, अने कलम तथा केमेरो लईने पोताने वींटलायेली ११ नानरुडी १२ दुनियानो गाटतम परिचय करील्ये छे । कहो के पी जाय छे । हिन्दनाके हिन्दना कोई पण भागना मौ-राष्ट्र, गुजरात, मारवाड, मेवाड वगैरेना देशी अधिकारी वधुने आवी तालावेली १३ क्यारं लागगे ? मौराष्ट्र, मेवाडनी भूमिने तो पोपडे पोपडे इतिहास बाइयो १४ होवानी आपणने जाण छे, गामे गामनो इतिहास आज अधिकारी भाइओने ठेने १५ आवे छे । नवा युगनु शिक्षण पामेला नवयुवको हाकेमी भोगवी रह्या छे । कोई पुस्तक या मासिक वाटे मली आवती असली शौर्य घटनाओने पण लेओ अत्यन्त जिज्ञासा साथ वाचे छे । तेओने जूनी तवारीख कहेनार मनुष्योने सामग्रीओ पण हाथ जोडी हाजर छे । मात्र तेओने तो कलम लईने ते वधु टाचण १६ करवानी वृत्ति थवानीज रहे छे । अधिकारीओ ए कर्तव्य उपाडील्ये तो एमनी पोतानी जिन्दगीमाज नवु दीवेल १७ रेडाय, पोताना पग तले नित्य चगडाती वरतीनी-महत्ताना दर्शन याता ए पोतेज मानवताना रोमाच अनुभवो रहे । देशना इतिहास भूगोलपर आवा अजगाला पाथरवा १८ होय तो आ इतिहास विमुख अने अकिचन भूमिना देशी अधिकारी वधुओनी सहाय वहु अगत्यनी छे ।

आ दिशामा साची सुगमता जो होय तो ते प्रत्येक राज्योना केलगणी खाताने । तेमा सेरुडे पोणीसो टका शिक्षको तो सचीत १९ आ वस्तुमा रस लेनारा रह्या । एने फुरसद घगी तेथी गामना

११ घरे रुप, १२ छोटी, १३ उलटकना, १४ मिला हुआ, १५ स्कन्धपर १६ उताग, १७ उन्नयवस्थित लेखन, १८ तेल, १९ फेंलाना, १९ सचमुच ।

दृष्टो, प्रमादीओने गप्पोटीओनो डायरो ण्णी ओसरी२० मा मले।
एमाथी कटलु इतिहास-द्रव्य मले ?

आपणा युनीवर्सिटी नी परीक्षामा पसार थई वहार नीकलेला
रोज्युएटो प्रमाद ठोडी पोतानो जे काल फुरसद तरीके ओलजायठे
तेनो सदुपयोग पोतानी भूमिनी माटीमा द्दायेला वेमूल जवाहिरोने
शोधो काढवामा, जे कोई वीरधर्मी नी भाल२१ लागे तेनी कथा-
नोधो लेजामा गालजे, तो नूतन भूमि जन्मजे ने तेना यशोभागी पोते
थजे ।

आपणा मुनिओ तो दिवम ना चोवीसे कलाक सेवानु व्रत टई
गामडे गामडे, जहेरे जहेर प्राते प्रात पिहरनारा ठे । ए अप्रतिग्रह
विहारी प्रवासीओ पोताना चातुर्मास समयमा एक स्थले स्थिरवासमा
अने ते सिवायना आठ माममा अत्र तत्र थोडा निवासमा ते ते क्षेत्रना
मानव ममाजनी, प्रकृति सोन्दर्यनी, धर्मजीवननी, वगैरे सर्वदशीत्र
माहितीओ उपरात तेना इतिहास, कथाओ, पुरातन अग्रशेपो वगैरनी
नोंवो मजल छत। समतोल, अने लागणीमय२२ उता विचारोन्पादक
तमन आल्हादक झेलिम। पूरी पाडी शके तेम छे । तेओमा प्रमादक
पर प्रत्ययनेय२३ बुद्धि होवाज न घटे, एयो तेमनो शिष्ट आचार
छे । तेओ तरफथो आपणा घगा मनोरथो सकळ यत्रानी आशा छे ।
तेओ धारेतो जेन साहित्यमा पूर्वाचार्योना लयेला ऐतिहासिक पुस्तको,
प्रबंधो, चरित्रो वहार पाडी शके एटलुज नहीं पग दगेक गामना

२० बँडकलारा, २१ शोध, २२ सकल, प्रयत्नमय, २३ दूमरेपर नरोमा
करनेका विचार ।

जिनमदिरो, प्रनिमाओ, वर्गेना उत्कीर्णरु लेखो एकत्रित करी समग्र भारतमाना पूर्ण जैनोना गौरव बतावी शके ।

जेवी रीते देशभक्ति पेदा करवा माटे देशनो प्राचीन इतिहास शोधावो जोइए, नेत्रीज रीते धर्मप्रेम तथा धर्मगौरव ते ते धर्मना मूलपुण्योना भव्यजीवन चरित्रो, ऐतिहासिक प्रमाणोवाला वहार पाडवाथीज जामे । एमा धार्मिक दृष्टि साथे ऐतिहासिक दृष्टि सकलायेली रहेवी जोइए२५ । आवा प्रकारनो प्रयास आ जीवनचरित्र मा थयेलो छे ।

धार्मिक पुण्योना जीवन चरित्रो ए पण एक प्रकारनु लोकोपयोगी साहित्य छे । 'साहित्यमा कोमीतडा२६ पटे ए वनु मा वधु अनिष्ट वात छे' ए कथनमा रहेलु सत्य स्वीकार्य छे, अने ए लक्षमा राखी जैन के जेनेतर-कोई पण ऐतिहासिक साहित्यमा थी जैन के जेनेतर लेखके तेज साहित्यने वलगी२७ रहीने अन्य साहित्यनी उपेक्षा करवानी नथी, पण वन्ने साहित्यमा थी मलनी हकीकतो मेलवी वन्नेने सत्य आकारमा तटस्थताथी अने व्यापक दृष्टि थी रजु२८ करवानी छे । जो के घम करवामा वजा लेखको शक्तिमान होता नथी, या सफल थता नथी, छता जे लेखक तरफ थी तत्कालीन साहित्यपर निष्पक्षपात दृष्टि राखी तेमाथी पोताना विषय पूरती सामग्री मेलवी ते कालनी बीनाओ२९ नो केवल एक शुभ अखड अमिश्रित निर्देश थाय, ते लेखकने तेदले अगे अभिनन्दन आपवु योग्य छे । आमा खास पले पले स्मरणमा राखवुं आवश्यक छे के साम्प्रदायिक मोहके

२४ खुदे हुए, २५ चाहिये, २६ साम्प्रदायिक भेद, २७ चिपककर, २८ जाहिर करना, सामने रखना २९ हकीकतें ।

કોમી દષ્ટિને ઇતિહાસની ચાલણીમા ચાલી નારવ્યા જોડા—મટ્ટીમા ગાલી ભસ્મ કરવા જોડ્ય । તેમ ધ્યાત્ર નોજ મત્ય દેવ નુ આરાવન થડ ગચ્છે ।

વિક્રમની પદ્મ સદી વીતી ગઈ અને સોલમીનો પ્રારમ્ભ યતા હિંદના પાટનગર દિલ્હીના સિંહાસને સમ્રાટ્ અકબર ત્રિરાજ્યો અને તેના સમયમા મોગલમત્તાનો સૂર્ય પૂર્ણ-તેજથી પ્રકાશ્યો । તે સમ્રાટ્ અકબરને વ્યા ધર્મોનો માહિતી મેલગી તે સર્વમાથી ઉપયુક્ત વસ્તુઓની ંકીકરણ કરી ંક સર્વ સામાન્ય ધર્મ કાઢવાની ઉત્કઠા થઈ, તે ઉત્કઠા તૃપ્ત કરવામાટે સર્વ પૈકી ંક ંગ્રા જૈન ધર્મના ત વચતે વિદ્યમાન આચાર્ય શ્રી હીરવિજયમૂરિને પોતાની પાસે વોલાવી તમની સાથે મન્ત્રણા કરી । શ્રી હીરવિજયમૂરિ ંગ્રાનામ્બર જૈનના તપાગચ્છના આચાર્ય હતા, અને તેમગે જૈન ધર્મના મહાત્મ્યની પ્રથમ જ્ઞારતી સમ્રાટ્ અકબરને કરાવી । આ આચાર્યનુ જીવન ગુજરાતી ભાપામા આલેખવાનો સનલ અને સફલ પ્રયત્ન મુનિ શ્રી ત્રિશ્યાવિજયજીં 'સૂરીશ્વર અને સમ્રાટ્ ' ં નામના પુસ્તક રૂપે કરેલો, તે સં ૧૬૭૬ મા પ્રથમ પ્રકટ થયો, (કે જેનો હિંદી અનુવાદ પળ ત્યાર પછી તેમગે બહાર પાડ્યો) જ્યારે પન્દર વર્ષે—સં ૧૬૬૧ મા—તેજ સમ્રાટ્ અકબરને ધયેલા પરિચયની જ્યોત જ્ઞાલગી૩૦ રાસગામા મહાયક સરતરગચ્છ ના આચાર્ય શ્રીજિનચન્દ્રસૂરિનુ જીવન હિંદી ભાપામા લગી પ્રકટ કરવાનો સફલ પ્રયાસ વીકાનેરના પ્રસિદ્ધ નાહટા કુટુમ્બના વગજો શ્રીયુત અગરચન્દ અને મવરલાલ નાહટા તરફથી થયોઁ તે જોડે સરંસર આનન્દ યાત્ર તેમ ઁ ।

श्री हीरविजयसूरिनी प्रतिष्ठा अने गौरव जेटला तपा गच्छमा छे तेदला प्रतिष्ठा अने गौरव श्री जिनचन्दसूरिना सरतर गच्छ मा होय ते स्वाभाविक छे ।

सरतरगच्छ ए तपागच्छ यी प्राचीन छे । तपागच्छनी उत्पत्ति जगच्चन्द्र सूरिण बहु तप कर्यो तेथी तेमने 'तपा' (एदले तपस्वी) ए विरुद, कहेवाय छे के, मेवाडना ते वरान ना पाटनगर आघाट नगर-ना राणाए स० १२८५ मा आप्यु, ते परथो ते सूरिनी शिष्य परम्परा नो गच्छ 'तपा' नामथी प्रसिद्ध थयो, ज्यारे सरतर गच्छनी उत्पत्ति गुजरातना पाटनगर अणहिलपुर पाटणमा दुर्लभसेन (राज) राजानी सभामा श्री जिनेश्वरसूरिण चैत्यवासी जैन साधुओनो आचार शास्त्र समत नथी एम वतावी आपी 'सरतर' (विशेष प्रसर-अप्र आचारवाला) विरुद प्राप्त क्यु । ए परथी ते सूरिनी शिष्य-परम्परा सरतर गच्छना नामे ओलखावा लागी एम, जणावयामा आवे छे ।

पाटणनी गादीपर गुर्जरराज दुर्लभराजे स० १०६६ थी १०७८ एम वार वर्ष राज्य क्यु, एम मेरुतुङ्गसूरिनी विचारश्रेणी-स्थवि-रावलीमा, तेमज राजावलीकोप्टरुमा जणाव्युं छे अने ते श्रीमान् ओझाजीए अने अन्य इतिहास-कारोए स्वीकारेल छे । ज्यारे सरतर गच्छना केदलाक, उपर्युक्त वनाव वन्यानो सवत १०८०, तो कोहरु १००४ आपे छे एम सरतर गच्छ पट्टावली समग्रह (सम्राहक — श्री जिन-विजयजी, प्रकाशक वावू पूरणचन्द नाहर) परथी अने अन्य पट्टा-वली परथी जणाय छे ।

‘ (१) स० १५८२ मा थगेली ररतरगच्छ-सूरिपरम्परा-प्रशस्ति
मा जणाव्यु छे के —

तत्पट्ट पङ्केरुह राजहसा जैनेग्ररा सरि शिरोपतसा ।

जयन्तु ते ये जिनशैवशासन श्रुतप्रवीणा भजनासमक्षिपन् ॥३७॥

श्री पत्तने दुर्लभराज राज्ये विजित्य वादे मठवासिसूरीन् ।

वर्षाविपक्षाभ्रगशिप्रमाणे लेभेऽपि ये ररतरो विरुद् युग्मम् ॥३८॥

अर्थ—ते (वर्द्धमान सूरि) ना पट्टकमल पर राजहस रूप

जिनेश्वर सूरि मस्तकना आभूषण थया के जेमणे जैन शैव शासनना
शास्त्रोमा प्रवीण होइ भवब्रामने फेकी दीधो तओ जय पायो । श्री

पत्तनमा दुर्लभराजना राज्यमा मठवामी आचार्योने वाढमा जीती
जेमणे स० १०२४ ना वर्षमा ‘ररतर’ नामनु विरुद् युग्म (? एकज)

विरुद् पण मलेज्यु ।

आ प्रशरितमा जणावेली स० १०२४ नी सालने एक् सबन्
१६७५ आसपामनी ररतर पट्टावलो ‘दस सय चिहु वीसेही’ एट्ले
स० १०२४ मा ।

‘सुविहित गच्छ ररतर विरुद्, दुलभ नरवई तिहा दियउ ।

श्री वर्द्धमान पट्टइ तिलउ, सूरि जिणेसर गह गहउ’ ॥

एम कही टेको आपे छे । पण आ पुस्तकना लेखक नाहटाजी
‘दस सय चिहु वीसेही’ एनो अर्थ दशमो अने चार वीम एट्ले पैमी
एवो करे छे ते ररतर हुशियारी बतावनारो (ingenious) छे ।

(२) ररतर गच्छीय मुनि क्षमाकल्यागनी स० १८३० नी
ररतर गच्छनी पट्टावलीमा एवु कथेलु छे —

xxएव सुविहित पक्ष धारका जिनेश्वर सूरयो विक्रमत १०८० वर्षे 'सरतर' विरुद्ध धारका जाता ।

अने ते समयमा लसायेली बीजी पट्टावलीमा पण ते सूरिमाटे एम जणावेलु छे के 'सवन् १०८० दुर्लभराज नभाया ८४ मठपतीन् जीत्वा प्राप्त सरतर विरुद्ध ।'

आमा त्रण हकीकत आप्ने छे — [१] पाटणमा जिनेश्वर सूरिए दुर्लभराजना राज्यमा तेनी राज्यसभामा मठवासीने हराव्या [२] ते जय थी 'सरतर' विरुद्ध तेमणे मेलव्युं [३] ते घटना स० १०२४ मा के स० १०८० मा बनी । आ त्रणेना सम्बन्धमा विशेष प्राचीन प्रमाणो केवा प्रकारना मले छे ते जोइए ।

उक्त जिनेश्वर सूरिना पट्टधर जिनचन्द्र सूरिना शिष्य प्रसन्नचन्द्र सूरिना शिष्य सुमति वाचक ना शिष्य मुनि गुणचन्द्रे महावीरचरिय प्राकृत भापामा स० ११३६ मा [श्री हेमचन्द्रसूरिना त्रिपण्डितशलाकापुरुष—चरितना दशमा पर्वमा आवेल सस्कृतमा महावीरचरित्र रचायुं ते पहेला] रची पूर्ण कर्युं तेमा छोड़ी प्रशस्तिमा कहुं छे के —वर्धमान सूरिने वे शिष्य हता । प्रथम जिनेश्वर सूरि अने बीजा बुद्धिसागर सूरि, अने

बोहित्योव्व समत्यो सिरि सूर जिणेशरो पढमो ।

गुम्साराओ धवलाओ सरय(र) साहु संतइ जाया ॥

[पाठातर] गुरु साराओ धवलाओ निम्मल साहु सन्तइ जाया ॥

हिमवताओ गगुव्व निग्गया सयल जण पूज्जा ।

अण्णो य पुण्णिमा चन्द सुन्दरो बुद्धिसागरो मूरी ॥

[पीटर्सन रिपोर्ट, ३, ३०६ पी० ५, ३३]

अर्थ—प्रथम शिष्य जिनेश्वर सूरि बुद्धिमान नमर्थ हता, ते धरल गुरुना सारमाथी सरतर [पाठातर-निर्मल] साधु सन्तति थई । जेम हिमवन्तमा थी सकल जनने प्रज्य एवी गङ्गा नीकली तेम, बीजा शिष्य ते पूर्णिमा ना चन्द्र जेवा सुन्दर बुद्धिसागर सूरि थया ।

[आ ग्रन्थ शैठ देवचन्द्र लालभाई जैनपुस्तकोद्धार—फण्डना ग्रन्थाक ७५ तरीके प्रकट थई गयो छे तेमा उपरनी गाथामा सरचरने चढले सुविहिया [निम्मला पु०] एम उपलु छे]

उक्त जिनेश्वर सूरिना शिष्य नवागी वृत्तिफार अभयदेव सूरिना शिष्य प्रसन्नचन्द्र सरिना शिष्य देवभद्रसूरिए प्राकृतमा पाठवनाथ चरिय स० ११६८ [वसु रस रुद्र] ना वर्षमा रच्यु तमा प्रशस्तिमा एखलु जणव्यु छे के

तस्सासि दोन्नि सीसा जय [ग] विस्त्राया दिवायर नसिब्व ।

आयरिअ जिणेशर बुद्धिसागरायरिय नामाणो ॥

[पी० ३, ६४]

अर्थ—ते [वर्द्धमान सूरि] ना जयथी (जग मा) विस्त्रात थयेला सूर्य अने चन्द्रमानो जेरा [अनुक्रमे] ते शिष्य-आचार्य जिनेश्वर अने बुद्धिसागर आचार्य ए नामना थया ॥

[आ ग्रन्थ ने जेमलमेर जैन भाण्डागारीय ग्रन्थाना सूचीपत्रम मा ग्रन्थाङ्क २६६ तरीके मात्र नाम आपो २०६ पत्रो जणाप्री ताट-पत्रीय प्रत तरीके नोधेल छे । तेमा उपलो गाथानी बीजा पक्ति नीचे प्रमाणे छे एम श्रोतुन नाहटाजीनु कहेवु थाय छे —

आयरिय जिणेसर बुद्धिसागर सरयरा णाया ।

ण्टले सरतर [विरुद्र] थी ज्ञात थयेला आचार्य जिनेश्वर
अने बुद्धिसागर-एम तेमा 'सरतर' शब्द मूकेलो छे ।]

स० ११७० मा लिरिन कवि पाल्हे अपभ्रंश मा करेली सरतर
पट्टावली के ज 'अपभ्रंश काव्यत्रयी' ना परिशिष्टमा पृ० ११० थी
११२ मे आपी उं तेमा कहेल छे के —

दवसूरि पहु नेमिचन्दु बहुगुणिहिं पमिद्धउ ।

उज्जोयणु तह वद्धमाणु खरत(?)र वर लद्धउ ॥

सुगुरु जिणेसरसूरि नियमि जिणचन्दु सुसजमि ।

अभयदेव सच्चगु नाणि जिणवद्ध आगमि ॥

जिणदत्त मूरि ठिउ पट्टि नहि जिण उज्जोइउ जिणवयणु ॥

मावडहिं परिक्रियवि परिवरिउ मुल्लि महग्घउ जिण रयणु ॥

आमा सरतरनो वर जेणे लब्ध कर्यो छे ते विशेषण नामान्य-
रीते उद्योतन पठी थयेल वर्द्धमानने लागु पडे, पण ते सुगुरु जिने-
श्वरसूरिने ल्गाडवानु छे ।

उपर्युक्त जिनेश्वरसूरिना जिनचन्द्रसूरि अने अभयदेवसूरि ते-
मना जिनवत्तलभसूरि अने तेमना पट्टधर जिनदत्त सूरि [आचार्य
पद स० ११६६ रव० १२११] कृत 'सुगुरु पारतन्त्र्यम्' मा उक्त
जिनेश्वरसूरि सम्बन्धी एवुं दशविलुं छे के —

यह पट्टावली हमारी ओरसे प्रकाशित होनेवाले ऐतिहासिक जैन
काव्य संग्रह (पृ० ३६५ से ३६८) में छप चुकी है । —(लेखक)

पुरओ दुटलह महिवलहस्स अणहिल्लयाडए पयड ।
 मुक्का वि वारिऊग सीहेण व दव्व लिगि गया ॥१०॥
 दस मच्छेर व निसि विप्फुरन्त मच्छन्द सूरि मय तिमिर ।
 सूरेण व सूरि जिणेसरेण हयमहिय दोसेण ॥११॥

अर्थ—अणहिल्लयाडामा दुर्लभ नृपति पास 'द्रव्य' लिगी रूपी
 गजो, सिंहनी पेठे विदारी नारय्या अने दशम। अच्छेरा [आश्चर्य],
 रूपी रात्रिमा फेलायेल स्वच्छन्द रूपी मृगिना मत रूपी अघारं
 जेणे सूर्यनी पेठे टाली नारय्यु एवा निर्दाए जिनेश्वर मृरि ।

तेज जिनदत्त सूरि वली पीताना गगधरमाल्द्वरतक मा उक्त
 जिनेश्वर सूरि सम्वन्धी विशेष जणावे छे के —

तेमिं पय पउम सेवारसिओ भमरव्व सव्व भम रहिओ ।

सममय-परसमय पयत्थ वित्थारण समत्थो ॥६४॥

अणहिल्लयाडए नाडड च्च दसिय सुपत्त मन्दोहे ।

पउर पाण वहु कविदमगे य सन्नाण गाणु गए ॥६५॥

सड्ढिय दुटलह राए सरमद अको व सोहिए मुहए ।

मज्झे रायसह पविसिउण लोयागमाणु मय ॥६६॥

वसड्हिं निवासो साहूण ठविओ ठाविओ अप्पा ॥६७॥

परिहरिय गुरु कमागय वर वत्ता ए वि गुज्जरत्ताए ।

वमहि निवासो जेहिं फुटीकओ गुज्जरत्ताए ॥६८॥

—तेमनो [वर्धमान सूरि ना] पद कमलनी सेनामा रमिक एवा
 मरनी पेठे सर्व भ्रमयी रहित, सममय अने पर समय [शान्त्र]
 पदार्थ जेणे अर्थ सहित विस्तारेंला एवा समर्थ [जिनेश्वरमृरिण

अणहिल्लवाडामा नाटकमा जेम छे तेम सुपात्रना सन्दोह जोगे देसाइया छे एवा, प्रचुर प्रज्ञ, बहु कवि दूपक, सन्नायक ने अनुगत एवा ऋद्धिमान्-राजा दुर्लभराज सरस्वती अकथी उपशोभिन, सुखद अने सुभग राज्य करता सता तेनी लोकागमने अनुमत एवी राज्यसभामा प्रवेश करीने विचारहीन एवा नामना आचार्यों साथे विचार-विवाद करीने साधुओनो निवास वसतिमा होवो जोइए ए स्थापित करु अने गुरु क्रमथी चाली आयेली वात जोणे तजी-दीधी हती एवी गूर्जरत्रा [गुजरात] मा पण जेमगे वसति निवास ते गूर्जरत्रामा स्फुट कर्यो ।

(गुजरात ए शब्द जे 'गूर्जरत्रा' शब्दमाथी फलिन थयुं मनाव छे ते 'गूर्जरत्रा' वारमी सदी जोटलो ती जुनो छेज ए आ अवतरण परथी सिद्धथाय छे)

उक्त जिनेश्वर सूरिए रचेल पचलिंगी प्रकरण पर उक्त जिनदत्त-सूरिना पट्टधर जिनचन्द्रमूरिना पट्टधर जिनपति सूरिए [सूरिपद स० १२२३ ने स्व० स० १२७७ वच्चे] वृत्ति रचता तेनी आदि-माज कहेल छे के —

इह गूर्जर वसुधाधिप श्री दुर्लभराज सभा सभ्य समाज महा वादि चैत्यवामि कल्पित जिन भवनवास समासादित विसृत्वर कीर्त्ति कपूरपूर सुरभित त्रिभुवन भवनाभोग श्री जिनेश्वर सूरि विरचित पचलिंगारण्य प्रकरणस्य (पी० ३ पृ० २५०)

—आ गूर्जर भूमिना राजा श्री दुर्लभराजनी सभामा सभ्य समाजमा महावादी चैत्यवासी ना कल्पित जिन मन्दिरमा वासने

निर्मूल करीने जेनी कीर्तिरूपी कर्पूर थी मुगन्त्रित थयेल त्रिभुवन रूपी भवन छे एवा श्री जिनेश्वर सरिना रचेल पवर्लिगी नामना प्रकरणनी ।

तेज भावार्थनु उक्त जिनपति गृरिए सघपट्टकनो विवृत्तिना प्रारम्भमा जिनेश्वर सरि समान्धे कह्यु छे । जुथो अपभ्रंश काव्य-त्रयी नी पण्डित श्री लालचन्द्र भाई नी प्रस्तावना पृष्ठ १० ।

पूर्वभद्रे म० १२८५ (के जे वसन्तनी आसपास तपागन्ठना स्थापक जगच्चन्द्रसरिए तप वटे 'तपा' नामनु विरुद प्राप्त क्यु) मा वन्नाशालिभद्र चरित्र रच्यु छे तेनी प्रगस्तिना जणाज्यु ठे के —

श्रीमद् गूर्जरभूमि भूषण मणौ श्रीपत्तने पत्तने
श्रीमद् दुर्लभराज राज पुरतो यश्चैत्यवामिद्विपान ।
निर्लोड्यागम हेतु युक्ति नररैवास गृहस्थालये
साधूना समतिष्ठपन मुनि मृगाधीशोऽप्रधृष्य परै ।
सरि स चान्द्रकुल मानम राजहंस
श्रीमज्जिनेश्वर इति प्रथित पृथिव्या ।

श्री भरेली गूर्जर भूमिना आभूषण मणि रूप श्रीपत्तन नामना शहरमा श्रीमद् दुर्लभराज राजानी आगल जेणे चैत्यवामी रूपी हार्थीने आगमहेतु युक्त रूपी नगरी पराजित करीने अन्यथी साया न जाय तेवा जे मुनि रूपी मिहे गृहस्थनी मालेकीनी जग्याण साधु-ओए वाम करवो जोइए एम स्थापित क्यु' एवा चन्द्रकुल रूप मानमरोवर ना राजहंस रूपी सृंग श्रीमद् जिनेश्वरसरि पृथ्वीमा प्रसिद्ध थया ।

द्य० १२६५ मा उक्त जिनपति सूरि शिष्य सुमति गणिष उप-
युक्त गणधर सार्द्धं जनक पर बृहद्रवृत्ति रची छे तेमाथी जिनेश्वर
जिनेश्वर सूरिनु विशेष चरित्र मली आवणे, ते आरसी वृत्ति ऐतिहा-
मिक विगतोनो भडार छे उता ते प्रगट कई नथी ए दुर्भाग्यनो विषय
छे । उक्त जिनेश्वरसूरिना लीलावती तथा काव्य नो उद्धार धता
छेवटे लखलछे के —

“इति श्री वर्द्धमानसूरि शिष्यावतस—वसतिमार्ग प्रकाशक
प्रमुत्री जिनेश्वर सूरि विरचित—प्राकृत श्री निर्वाण लीलावती
कथेति वृत्तोद्धारं लीलावती सारे जिनाके (जैसलमेर सूचीपत्र ४३
अक ३४७)”

उपरना प्रमाणो जिनेश्वर सूरिनो शिष्य परम्परामाना जोया,
हरे आपगे तेथो भिन्न परम्परामानु एक स्वतन्त्र प्रमाण लईए
ते चन्द्रगच्छमाथी पठोथी थयेल राजगच्छना धनेश्वर सूरि, अजित-

* इमो वृत्तिका अन्तर्गत प्रकरण (श्रीवर्द्धमान सूरिजोसे श्रीजिनदत्त
सूरिजो तक्रका ऐतिहासिक चरित्र) प्रकाशित हो चुका हे और उसका
भाषान्तर भी श्रीजिनकृपाचन्द्र मूरि ज्ञान-भण्डार इन्दौरसे प्रकाशित हो
चुका हे । उक्त वृत्तिमें खरतर विरद प्राप्ति विषयक उल्लेख इस प्रकार हे —

“किं बहुनेत्य वाद कृत्वा विपक्षान्निर्जित्य राजामात्य श्रेष्ठि सार्थवाद्
प्रभृति पुर प्रधान पुरपै सह भट्टचट्टेषु वसति मार्ग प्रकाशन यश पताका-
यमान काव्य ग्रन्थान् दुर्जन जन कर्णशूलान् साटोप पठत्स सत्स प्रविष्टा
वसतो प्राप्त परतर विहदा भागन्व श्रीजिनेश्वर सूरय एव गुर्जरग्न देशे
श्रीजिनेश्वर सूरिणा प्रथम चक्रे”,

(गणधर सार्द्धं शतकान्तर्गत प्रकरणम् पृ० ११)

(लेखक)

मिह-शालिभद्र-श्रीचन्द्र-जिनेश्वरगदि-पूर्णभद्र—चन्द्रप्रभ सूरि जिप्र
प्रभानन्द सूरिण प्रभावक चरित्र सस्कृत काव्यमा सप्त १३३४ मा
रच्युं छे तेमा आपला जिनेश्वर सूरिना जिप्य अभयद्वमणि दे
जेमणे नत्र अगोपर मन्हुन वृत्तिओ रचीले तना चरित्रमा श्री नीचेनी
हकीमन मली आवेछे —

‘भोजना राजत्व कालमा धारानगरीमा वनता लक्ष्मीपति नासे
श्रीमन्तने त्या रहेला म'यदशना व विद्वान युवान व घात्रग पुत्रो
श्रीपर अने श्रीपतिण आचार्य वर्धमान सूरि पामे दीक्षा लीधी अन
तेओ जिनेश्वर अने बुद्धिमागर नाम'प्री प्रमिद्वेया ।’

‘आ जन्ने पाटणमा चैत्यवासीओतु प्राप्रत्य हतु, ते ँटला सुधी
के तेमनी मम्मति मित्राय सुविहित साधु पाटणमा रही नहोना
शकता, आचार्य वर्धमान मृगिण पोताना जिप्य जिनेश्वर सूरि अने
बुद्धिमागरने त्या मोरलीने पाटणमा सुविहित साधुओनो त्रिहार
अने निजाम चालु करायजानो विचार कर्यो अने पोताना उक्त वन
शिप्रोने* पाटण तरफ त्रिहार कराव्यो । ते वन्ने पाटणमा गया पण-
त्या तेमने उतरवा माटे उपाश्रय मल्यो नहि, वधे फरीने तओ त्याना
सौमेश्वर नामना पुरोहितने त्या गया अने पोतानी विद्वत्तानो परि-
चय आपी तेना मकानमा रक्षा ज्यार चैत्यवासीओने ए समाचार
मल्या तो पोताना नियुक्त पुरुषोद्वारा तेमने पाटण छोडी जवा जणाव्यु,

* म० १२९५ -चित गणवरसार्द्धशतक बृहद्वृत्तिमे वर्धमान सूरिनी
भी पाटण साथ ही पधारे धे ओर रामभाम भी साथ थे, स्पष्ट उल्लेख है ।

पण पुरोहिते कह्यु के आ वायतनो न्याय राजसभामा थरो । आर्थी चैत्यवासीओण राजानी मुलाकात लीधी ने वनराजना समयथी पाटणमा स्थपायेल चैत्यवासीओनो सार्वभौम सत्तानो इतिहास समजाव्यो, जे परथी पाटणनो नृपति दुर्लभराज पण लाचार थयी अने पोताना उपरोध थी ए साधुओने अहीं रहेवा देवा माटे आप्रह कर्यो के जे वात चैत्यवासीओण मान्य करी ।

‘ए पछी पुरोहिते सुविहित साधुओना उपाश्रय माटे राजाने प्रार्थना करी । राजाए ए कामनी भलामण पोताना गुरु जेवाचार्य ज्ञानदेवने करी, जे उपरथी भात वजारमा योग्य जमीन प्राप्त करीने पुरोहिते त्या उपाश्रय कराव्यो, त्यार पछी सुविहित साधुओने माटे वसतिओ थवा माडी ।’

“जिनेश्वर सूरि ज्यारे पहेलीवार पाटणमा गया त्यारे पाटणमा दुर्लभराजनु राज्य होवानु आ प्रबन्धकार लखे छे । (ज्यारे उपर वताव्या प्रमाणे) जिनदत्त सूरि आदि सरतर गच्छीय आचार्यो पण गणवरमाद्धगतक आदिमा ते वसते पाटणमा दुर्लभ राजनु राज्य वताने छे, पण सरतरगच्छ वालाओ ए प्रमद्ग (स० १०२४ के स० १०८० कोर्ड) १०८४- मा वन्यानु लखे छे ते वरावर लखतु नथी, कारणक (१०२४ मा मूलराजनु राज्य हतु अने स० १०८० मा के) स० १०८४ मा पाटणमा दुर्लभराजनु राज्य नहीं पण भीमदेवनु राज्य हतु ।”

—इतिहास-महोदधि साक्षर मुनि श्रीकल्याणविजयजी नी प्रभावक चरितना गू० भापा० नी प्रस्तावना ।

* सवत् १०८४ नु प्रमाण कोइए आप्यु होय एधी अमे अज्ञात छीए, छता मुनि श्रीकल्याणविजयजी जेवा इतिहासज्ञ ते आपे छे ती तेनु प्रमाण ते जणावसे ।

तत्कालीन प्राचीन प्रमाणधी जिनेश्वरसूरिने 'सरतर' ए विन्दु मल्लु अने ते मल्लु तो अमुक वर्ष मा मल्लु ए गोधी काटी बतावना मा ऐतिहासिक सशोऽक्रोए प्रयास सेववा योख्ये । आ विषय पर लेखक महाशयने स० ११७० नी लखेली पट्टावली* जोवा मली छे तेमा जिनेश्वरसूरिने 'सरतर' विरुद्ध मल्यानो स्पष्ट उल्लेखछे अने ते विषय पर विशेष विचार लेखक महाशय एक स्वतन्त्र निबन्ध रूपे प्रगट करशे एम पृ० ११ नी टिप्पणमा पोते जणावे छे, तो आ निबन्ध प्रगट अये विशेष प्रकाश पडवानी आशा रहे छे ।

वृहत् सरतर गच्छनी पट्टावली मा श्रीमान् प्रभु महावीर थी उक्त जिनेश्वर सूरिनु स्थान ४० मु छे, त्यार पट्टी तेनी पट्ट परम्परा मा प्रस्तुत पुस्तकना नायक छट्टा जिनचन्द्रसूरिनु स्थान ६१ मु छे । ५

नायकना चरितमा बोकानेरना मन्त्री कर्मचन्द्र अगत्यनो भाग भजवे छे । तेमना द्वारा सम्राट् अकर साथे मेलाप-परिचय, जीव-व्रत्याग-अमारिना फरमान, नाहजादा सलीम तथा अमीर उमराव साथे पिछान, सलीम पादशाह थता तेगे नाधुओ प्रत्ये तिरस्कार थी—काढेल हुकमनुं रद करावनु वगैरे अनेक वीनाओथी नायकनु चरित्र रमभयुं अने माहितीबालु छे । तेने योग्य न्याय आपवा-

* यह बर्यो पट्टावली है जिसका अवतरण देशाह महोदयने हमारी सूचनानुसार पृ० ४२ में दे दिया है ।

* पट्टा नम्बर ४०-६१ क्षमाकल्याण कृत पट्टावलीके अनुसार है । अन्य पट्टावलियोंमें नम्बरोंमें कमी बढती भी है । (लेखक)

माटे लेखक महाशये घणी महेनत लई तत्कालीन साहित्यमाथी घणी विगतो एकठी करी तेने अनुक्रममा सरल अने रुचिकर भाषामा प्रयोजी एक मत्स्य जीवनचरित आलेखी प्रकट कयुं छे । ते माटे लेखक महाशयने अभिनन्दन घटे छे ।

कर्मचन्द्र मन्त्री सन्वन्धी, गुणविनय उपाध्यायकृत 'कर्मचन्द्र मन्त्री प्रबन्ध' गुजराती पद्यमा स० १६५५ मा रचेली बहार पड्यो ते परथी आपणे जाणता थया हता अने मुनि श्री विद्याविजयजीए 'सुरीवर अने सम्राट्'मा पृ० १५३-५४ पर हुकमा हकीकत जणावी छे । पण ते गुजराती प्रबन्ध ते गुणविनयनाज गुरु जयसोम उपाध्याये संस्कृतमा स० १६५० मा अकबरना राज्य दिन थी ३८ मा वर्षे लाहौरमा प्रबन्ध रच्यो हतो, तेना परथी गुणविनये कयो हतो अने ते संस्कृत प्रबन्ध पर तेज गुणविनये संस्कृतमा व्याख्या स० १६५६ मा श्री तोसामपुरे कर्मचन्द्र मन्त्रीना आप्रह थी रची पूरी करी हती ते प्रसिद्ध इतिहास रसिक श्रीमान् पूरणचन्द्रजी नाहर M, A, B L पासेथी मने प्राप्त थई हती अने ते परथी तेमज श्रीयुत उमरावसिंहजी टाक ना अगरेजी चरितमाथी हकीगत लईने अनुक्रमे भारा 'जैन साहित्यनो सक्षिप्त इतिहास' नामना पुस्तकमा पारा ८३६ थी ८४४ मा तेमज मुनि श्री जिनविजयजी सम्पादित जैनऐतिहासिककाव्यसचय नी प्रस्तावनामा मे विशेष हकीकत आपीहती [ते संस्कृत मूल प्रबन्ध 'कर्मचन्द्र वंगोत्कीर्तनक काव्यम्' ए नामे रायनहादुर गौरीशंकर ओझाजीए सम्पादित करी हिन्दी अनुवाद सहित सन् १६२८ मा उपाव्योछे, पण हजु सुधी जनता समक्ष प्रकट

थयो नथी, वली ररी उपयोगी तेना उपरनी गुणविनयकृत सस्कृत टीका हजु सुधी छपाई नथी ए दुर्भाग्यनो विषयछे । जुओ जैन युग पुस्तक ५ पृ० ४६० थी ४६४]

लेखक महाशयोण विशेष शोध रोल करी उक्त कर्मचन्द्र मन्त्रीना जीवन अने वगजनु विग्वसनीय चित्र रजु कयुं छे ते माटे तेओ धन्यवादने पात्र छे ।

सम्राट् अकबरने जैन साधुओथी आठोआठो परिचय स० १६३६ पहेला थयो हतो, पण तेना पर प्रबल अविचल अने व्यापक असर करनार जैन तपागच्छना आचार्य श्री हरिविजयसूरि हता ए निर्विवाद छे, अने पछी ते असर कायम राखनार तेमनु शिष्य मण्डल विजयसेनसूरि, भानुचन्द्र आदिनु हतु । तेनु एकज दृष्टान्त बस थशे के अकबरना मित्र अने मन्त्री जेवा विद्वान अतुलफजले उर्दुभाषामा लेखेला 'आइन-इ-अकबरी' नामना प्रसिद्ध पुस्तक परथी जणायछे के 'अकबरं पीतानी धर्मसभाना सभ्योने पाच विभागमा विभक्त कर्या हता, ते बधामा मलीने कुल १४० सभ्यो हता । पहेला वर्गना २१ सभ्यो छे, तेमा प्रथमना चार नामो मुसलमानोना छे अने १६ मु नाम हीरजीसूर (हीरविजय सूरि) नु छे, ने पाचमा वर्ग मा विजयसेन अने भानुचन्द्रने मूकेला छे ।

आ रीते जैनोमाथी त्रण प्रसिद्ध व्यक्तिओ बधो तपागच्छ ना साधुओ अकबर नी धर्मसभा ना सभ्यो तरीके मूकायेला छे, परन्तु खरतरगच्छना आचार्य जिनचन्द्रमृगि के अन्य प्रसिद्ध व्यक्ति तेमा दाखल करेली नथी । अतुल फजलनु नरू मलीमे (जहागीरि)

सन् १६०२ नी १२ मी ऑगस्टे (स० १६५९ मा) कराव्यु, ज्यारे तेना मरण पहेला दश वों जिनचन्द्र सूरिने स० १६४६ मा लाहोरमा युगप्रधान पद मल्यु ने अकबर बादशाहनी साथे तेमनो अने तमना शिष्य जिनसिंह सूरिनो विशेष परिचय थयो, छता ते वन्नेमा वी एम्फेनो तेमज समयसुन्दर आदि विद्वान् व्यक्तिनो पण समावेश आइन-इ-अकबरीमा करवामा आव्यो जणातो नथी ।x

श्रीमान् जिनविजयजी प्राचीन शिलालेख सप्रहना घोजा भागमा पोताना अवलोकन पृ० ३६ मा कथे छे के —

x आइन-इ-अकबरीमें चाहे उल्लेख न मिले पर उससे भी अधिक महत्त्व का उल्लेख अष्टान्हिका फरमान पत्रमें है, सम्राट् अकबर स्वयं जिनचन्द्रसूरिजी का प्रभाव इस प्रकार व्यक्त करते हैं —

“इससे पहले शुभ चिन्तक तपस्वी जिनचन्द्रसूरि खरतर, हमारी सेवामें रहता था । जब उसकी भगवदभक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बढी बादशाहीकी महारवानियोंमें मिला लिया ।” (इसी ग्रन्थके पृष्ठ २७८)

श्रीजिनसिंह सूरिजीका उल्लेख भी सम्राट अकबर और जहागीर दोनों इस प्रकार करते हैं —

इन दिनों आचार्य जिनसिंह उर्फ मानसिंहने भर्ज कराई कि पहले जो ऊपर लिखे अनुसार हुक्म हुआ था वह खो गया है, इसलिये हमने उस फरमानके अनुसार नया फरमान इनायत किया है । (उक्त फरमान पत्र पृ० २७९)

इन सेवकोंके दो पन्थे हैं । एक तपा दूसरा करतल (खरतर) । मानसिंह (जिनसिंह सूरि) करतलोका सरदार था और बालचन्द्र (भानुचन्द्र ?) तपोका, दोनों सदा स्वर्गवासी श्रीमान् (अकबर) की सेवामें रहते थे ।
(जहागीर नामा) लेखक

‘स० १६३६ थी १६६० सुधी अकबरने जैन विद्वानोनो सतत सहवास रह्यो, तेंमा प्रथमना दश वर्षोमा तपागच्छनु अने पठीना दश वर्षोमा खरतरगच्छनुं विशेष वलण हतु एम कहेवामा काई हरकत नथी, परन्तु साथे एटलु तो अवश्य कहेवु ज जोडए के खरतरगच्छ करता तपागच्छने विशेष मान मल्यु हतुं । अने वादशाह पासेथो सुकृत्यो पण ए गच्छवालाओण अधिक कराव्या हता।’

ऐसके हीरविजयसूरि मम्बन्धी टु क उल्लेख पृ० ६४ उपर करी तेमनु सविशेष चरित जोवा वाचकने ‘सूरीश्वर अने सम्राट्’ ए पुम्नकनो हवालो आपी दीयो छे ।

तपागच्छाचार्य हीरविजयसूरि स० १६३६ थी १६४२ एम त्रण वर्ष अकबर बादशाह पर प्रभाव पाडी गुजरात प्रत्ये विहार करी गया ने पोताना केटलाक शिष्यने वरतनो वरत तेना परिचयमा आव्ये जाय ते माटे राखता गया । त्यारपठी खरतरगच्छाचार्य जिनचन्द्र सूरिए सम्राटनु कर्मचन्द्र मन्त्री द्वारा आमन्त्रण थता लाहोर जड अकबर बादशाहने मली पोतानो अने पोताना धर्मनो परिचय कराव्यो । (लाहोरमा प्रवेश स० १६४८ फा० सु० १२) त्यारपठी तेमणे तथा तेमना शिष्य मण्डले—जिनमिहसूरि आदिए ते अकबर बादशाह पर पोतानी अमर चालु राखी—ए सर्वे वृत्तान्तनु वर्गन आ पुस्तकमा मनोहर रीते करवामा आव्यु छे अत्र साथे साथे ए पण जोवानुं छे के तपागच्छना विजयसेन सूरिने आमन्त्रण मलता तेओ पण लाहोर जड अकबर बादशाहने मल्या । तेमनो लाहोरमा प्रवेश स० १६४६ ज्येष्ठ सुदि १०) आवी रीते तपागच्छना हीरविजय सूरिए पोते तेमज

पोताना शिष्य प्रशिष्योए तेमज सरतर गच्छना जिनचन्द्रसूरि अने तेमना शिष्यादिए सम्राट् अकबरपर धीमे धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाणमा प्रभाव पाडी तेने जीवदयाना पूरा रग वालो कर्णो हतो एमा किचिन्मात्र शक नथी । ए वातनी साक्षी ते बादशाहे बहार पाडेल फरमानो (के जे पैकी केटलाक अत्यारे पण मली आवे छे ते) परथी, तेमज अबुल फजलनी, आइने अकबरी, वदाउनीना अलग-दाउनी, अकबरनामा वगैरे मुस्लिम लेखकोए लखेला ग्रन्थोपरथी पण स्पष्ट जाणय छे । (जुओ मारो 'जैन साहित्य नो सक्षिप्त इति-हास' पारा ८१०) आ प्रभाव जेवो तेवो न गणाय । तेनाथी जैन धर्मनी महत्ता समग्र हिंदमा विस्तृत थई अने बादशाहने पण ते धर्मना अनुरागी करे एवा समर्थ महापुरुषो जैन धर्ममा पण पड्या छे एम सिद्ध थयुं ।

तेथी अकबर बादशाह जैनधर्मो थयो, एम मानवानु नथी । तेणे अनेक क्रान्तिकारी फेरफारो कर्या हता ते पैकी पोताना राज्य वर्ष थी एक सवन् नामे 'सन् इलाही' चलाववानुं, अने एक सामान्य धर्म नामे 'दीन-इ-इलाही' प्रवर्त्ताववानु तेने पोताना मनमा स्फुर्युं हतु . अने तेमा ते कटले अशे पोताना राजत्वकालमा फलीभूत थयो, पण पोताना मरण पछी ते बने विफल थया । पोते काढवा धारेला सामान्य धर्म माटेनी सामग्री मेलववा जुदा २ धर्मोना वडाओने बोलावी ते ते धर्मना मुख्य सिद्धान्तो, आचार, विधि विधानो जाणवा पुष्कल प्रयास कर्यो । ए रीते हिन्दु, जैन, पारसी, ख्रिस्ती वगैरेना धार्मिक सिद्धांत जाणवा ते ते धर्मना, अग्रणी विद्वानो आचार्योने बोलावी

तेमनी साये पोते कलाको ना कलाको गालतो । जैन धर्मना वडा ते वराने तपागच्छमा हीरविजयसूरि अने सरतरगच्छम जिनचंद्रसूरि हता । पहिला हीरविजयसूरिने भागरा पासे फतेपुर (सीकरी) घोलावी सवत् १६३६ ची १६४२ सुधीमा तेमनो परिचय सेव्यो, ने ते सूरिण पठी पोताना शिष्यो शालिचन्द्र, भानुचन्द्र आदिने वाडगाह ना निकट समागममा वखनो वखत आवे तेम राख्या । पठी जिनचन्द्र सूरिने लाहोर घोलावी स० १६४८ ने त्थार पठीना वर्षमा तेमनो समागम सेव्यो, ते सूरिण पण पोताना पट्टर शिष्य जिनभिह सूरिने तेना समागममा आवे ते माटे राख्या हता । स० १६४६ मा हीरविजय सूरिना पट्टर शिष्य विजयमेन सूरिने लाहोरमा गोलाव्या हता । आ रीते तपागच्छ अने सरतरगच्छ एम वनेना अप्रणी विद्वानो पासेथी जैन धर्मना-मिद्धान्तो आदि जाणी अकर वादगाहे जीवदया, जीववध-त्याग अमुक दिवमोए आखा देगमा पलायो जोडण ए वावतना, तेमना तीर्थोनी रक्षा ना, तेओने कोई अडचन न करे ए वावतना, जीजीया बेरो वध करवाना वगेरे अने फरमानो काढी आप्या ते परथी ते धर्मगुरुओनो प्रभाव केडलो वधो अकर वादशाह पर पड्यो हतो तेनो सारो ख्याल आयी शके तेम छे, आ माटे ते बन्ने-आचार्यो हीरविजय सूरि अने जिनचन्द्र सूरिना विस्तृत जीवन-चरितो वाचवा जोइए ।

हवे त वन्ने आचार्यो अने तेमना पट्टधरोनी फालक्रम आदिनी कइक दुक माहिती सररामणी अर्थे नीचेना कोष्ठक रूपे-
जोइए—

१	जन्म सबत्	हीरविजय सूरि १५८३	जिनचन्द्रसूरि १५६५	विजयसेनसूरि १६०४	जिनसिंहसूरि १६१५
२	जन्म स्थल	पालणपुर	तिमरी-वडली	नाडुलाई(मारवाड)	खेतानर
३	जन्म नाम	हीरजी	सुलताण	जयसिंह (जेसङ्ग)	मानसिंह
४	ज्ञाति	वीसा ओम्बवाल	वीसा ओसवाल	वीसा ओसवाल	वीसा ओसवाल
५	पिता	कु रा (कु वरजी)	श्रीवत	कला शा	चापा
६	माता	नाथी	सिरियादे	कोडा दे	चापल दे
७	दीक्षा संवत्	१५६६	१६०४	१६१३	१६२३
८	दीक्षा नाम	हीरहर्ष	सुमतिवीर	जयविमल	महिमराज
९	दीक्षा गुरु	विजयदानसूरि	भिन्माणभ्यम्भूरि	विजयदानसूरि	जिनचन्द्रसूरि
१०	गच्छ नाम	तपा	खरतर	तपा	खरतर
११	सूरिपद सबत्	१६१०	१६१२	१६२८	१६४६
१२	परिचित नृप	अकबर	अकबरअनेजहागीर	अकबर	अकबरअनेजहागीर
१३	स्वर्गगमन सबत्	१६५२	१६७०	१६७२	१६७४
१४	स्वर्गगमन स्थल	उना (काठियावाड)	विलाडा (वेनातट)	संभात-अरुवरपुरा	विलाडा वेनातट
१५	पट्टधर	विजयसेनसूरि	जिनसिंहसूरि	विजयदेवसूरि	जिनराजसूरि
१६	सुव्यकृति नाम	जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति दी का	पौपधप्रकरण दृत्ति		जिनमागरसूरि

हीरविजय सूरिना चरितमा कोई राम अगम्य चमत्कार जणातो नथी, ज्यारे जिनचन्द्र सूरिना चरितमा पञ्चनदी साधना नो चमत्कार (प्रकरण १० मु) आपवामा आवेल छे, तेमज बीजा चमत्कार १६ मा प्रकरणमा गणाव्या छे । वने नु आयुष्य लगभग सरसुं ६६ अने ६५ वर्ष नुं हतुं । प्रथमना बीजाथी वयमा १२ वर्ष महोटा हता । वनेण अकबर वादशाह पर प्रभाव पाडी 'अमारि' ना फरमान अनुक्रमे मेलव्या हता अने जिनचन्द्र सूरिने आपेल ते प्रकारना फरमानमा हीरविजय सूरिने अगाड अपायेल फरमाननो उल्लेख छे । वनेने सम्राट् अकरे 'जगद्गुरु' अने 'युगप्रधान' एम अनुक्रमे पद-विरुद्ध आप्या हता । वनेना पट्टधर सररा प्रभावगाली हता । वनेना शिष्य परिवार बहोलो हतो । वनेना शिष्य प्रशिष्योण अनेक प्रन्थो सस्कृत प्राकृत अने देशी भाषामा रचेल सापडे छे । वने शासन प्रभावक पुरुष हता । अने पोत पोताना गच्छमा प्रभावगाली अपणी नायक हता ।

अकबर वादशाहे खुद श्री जिनचन्द्रसूरिने 'युगप्रधान' पदवी आपी हती तेथी आ प्रन्थनु नाम 'युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि' अन्वर्थक छे । तेमा जुदा २ प्रकरणो रारती विषयने कालानुक्रमे लेखके विशेष विकसित अने विस्तृत बनाव्यो छे । ते प्रकरणो ना नामो आ प्रमाणे छे —

१ परिस्थिति, २ सूरिपरम्परा, ३ सूरिपरिचय, ४ पाठणमे चर्चाजय, ५ विहार और धर्म प्रभावना, ६ अकबर आमन्त्रण, ७ अकबर प्रतिबोध, ८ 'युगप्रधान' पद प्राप्ति, ९ सम्राट् पर प्रभाव,

૨૦ પચનદી સાધના, ઔર પ્રતિષ્ઠા, ૨૧ મહાન્ શાસન-સેવા, ૨૨ નિર્વાણ, ૨૩ વિદ્વન્ શિષ્ય સમુદાય, ૨૪ આજ્ઞાનુવર્તી સાધુ-સઘ, ૨૫ ભક્ત શ્રાવકગણ, ૨૬ ચમત્કારિક જીવન ઔર અવશેષ ઘટના, તદુપરાન્ત પરિશિષ્ટમે દો વિહાર-પત્ર, ક્રિયાઉદ્ધાર નિયમપત્ર, સામાચારી પત્ર, દો શાહી ફરમાન, ઇક પરવાના, સાવત્સરિક પત્ર, આદેશપત્ર, પ્રશસ્તિપત્ર, વિજ્ઞાપિપત્ર, આચાર્ય ઈન્ અષ્ટમઠ ચૌપાઈ, સસ્કૃતમે પચતીર્થી સ્તવન, પાર્શ્વનાથ સ્તવન—એ ઉપયોગી જ્ઞાતવ્ય હકીકતો રજુ કરી છે । તેથી ચરિત્ર નાયક સમ્બન્ધિની તાત્કાલિક લાભગ વળી સરી વીનાઓ, તે વચ્ચતનું વાતાવરણ, સરતરગચ્છ અને તે ગચ્છના મુનિ શ્રાવકો આદિના વૃત્તાન્ત આપણને પ્રાપ્ત થાય છે ।

લેસક મહાશયની લેસન પ્રવૃત્તિ પરથી કહેવું જ પડશે કે તેમણે પોતે પુરાતત્ત્વ રસિક હોવાથી તેમજ સરતર ગચ્છના અનુયાયી હોઈ ને પોતાના વીકાનેરમા રહેલા પુસ્તકભંડારો તપાસવાની મગવડ સુભાગ્યે મલગાથી તેમણી શોધ કરી ઐતિહાસિક સામગ્રી ઇકત્રિત કરી તેને વ્યવસ્થિત ગોઠવવામા અને તેનો શુભ તથા યથાસ્થિત ઉપયોગ કરવામા કોઈ જાતની કસર રાવી નથી એ સમગ્ર પુસ્તકના પૃષ્ઠે પૃષ્ઠે દગ્ગોચર થાય છે । પોતે રહ્યા શ્રીમન્ત વ્યાપારી, વીકાનેર, કલરુતા, સીલહટ, ઘોલપુર, ચાપડ, વાવુરહાટ વગેરે સ્થલોએ પોતાની ધયાની પેઢીઓ અને તેને લગતા વ્યવસાયો પોતાને સમાલગાના રહ્યા, ઊતા તે મર્વનો વહીવટ કરવાની સાથે આ જાતનું સાહિત્ય કાર્ય અરણ્ડ ચાલુ રાસે । સરેસર તેમના ધર્માનુરાગ અને તદર્થે પ્રીતિશ્રમ (Labour of love) ને આભારી છે ।

ए पण नोधत्रा जेवु छे के वीकानेरना घणा वसत थी वध रहेला पुस्तक भण्डारो जोवा तपासवानो महामहेनते प्राप्त थयेली तक लेखरुने न मली हत, तो आ ग्रन्थनी अनेक हकीकनो प्रकाशमा आवी शकी न हत । जैन पुरतक भण्डारो स्थले २ विद्यमान छे, पण ते एवी स्थितिमा छे के तेनो लाभ विद्वानो—पुरानत्त्वना शोधकोने पण मलो शकतो नथी ए अति शोकनो-दुर्भाग्यनो विषय छे । आ बखने अमदावादमा एरु पुस्तकालयनो पायो नासता पुस्तकालयना मकान, व्यवस्था अने जैन सवना ग्रन्थ भण्डारोनी दशा सन्वन्धी महात्माजीए केटलीक घगी महत्त्वनी सूचनाओ करी छे—छेले छेले थोडो दर्द भर्यो विनोद पण कर्यो छे । ते अहीं अवतारवानु रोकौ शकतु नथी । तेओ कहे छे—“गुजरातमा जैन धर्मना पुस्तकोना घणा भण्डार छे पण ते वाणीयाने घेर छे । तेओ ए पुस्तकोने सुन्दर रेशमी बखोमा बीटालीने राखे छे । पुस्तकोनी ए दशा जोई मारु हृदय रडेछे, पण जो रडवा वेसु तो हु ६३ वर्ष जीनु पण शी रीते ? पण मने तो एम थायछे के जो चोरीनो गुन्हो न गणानो होय तो ए पुस्तको हु चोरी लउ अने पछी एमने कहु के तमारे माट ए लायक नहोता माटे मे चोरी लीधा । वणिको ए ग्रन्थोने नहीं शोभावे, वणिको तो पैसा भेगा करी जाणे अने तेथीज आजे जैन धर्म—जैन साहित्य जीववा छता सुकाई गया छे । धर्म पैसाना ढालामा केम पडे ? पैसो धर्मना ढालामा पडवो जोइए ।”

आ परथी श्रीगुरु ‘सुशील’ नामना सुप्रसिद्ध पत्रकार जणावेठेके “महात्मा गाधीजी जेवा सात्त्विक वृत्तिवाला पुरुषने जैन ग्रन्थालयो

ना रेशमी वस्त्रोधी वोटलायेला, गर्भ श्रीमन्तना लाडकवाया पुत्रनी जेम पम्पालाता प्रन्थो चोरवानु मन थाय ए आपणे सारु एक सरस प्रमाण पत्रज गणाय । आपणे एनी जेवी जोइए तेवी व्यवस्था करी शक्या नधी, एनाथी जगतने अने आपणने पोताने जे लाम मलत्रो जोइए तेनाथी आपणे वचितज रह्या छीए । अने एनुं कारण आपणे विद्या, साहित्य, ज्ञान करता पण धनवैभवने विशेष अगत्यनुं आसन आप्युं छे एज छे एम तेमना कहेवानो मुख्य आशय छे । जुदा २ स्थानोए, जुदी २ मालेकीना अनेक ग्रन्थ-भण्डारो होयए तेना करता सार्वजनिक अने मुख्य स्थले ग्रन्थममृद्ध पुस्तकालयो होय वधु इच्छवा योग्य छे । मर्यादित द्रव्य अने शक्ति थी एनु सुयोगपणे सरक्षण अने प्रचार पण थई शके । आवी सीधी मादी बात पण आपण व्यवहारदक्ष आगेवानोने गले हजी-उतरनी नथी ।”

लेखक महानुभावोए अन्य मालेकीना पुस्तक भण्डारोनी तपासवा जेटली सगवड मेलणी तेनो बने तेदलो उपयोग करवानो उद्यम कर्यो, एटलुज नहीं परन्तु पोते पण पोताना माटे अनेक ग्रन्थोनी जवरो सम्रह द्रव्य रखी वीकानेरमा कर्यो छे कै जे जोवा आववानु आमन्त्रण मने करताज आव्याटे । ए सम्रहनो एक सार्वजनिक सम्रह स्थान तरीके जनताने लाभ मले एवो प्रबन्ध करवानी नेमनी अभिलाषा छे ते सत्वर पार पडो ॥

‘सूरीश्वर अने सम्राट्’ ए पुस्तकमा अकरर वादशाह तेनी साथे सम्बन्ध धरावती अन्य व्यक्तियो, राजवहीवट वगैरे सम्बन्धी जैनेतर’

साधनो द्वारा एकत्रित करेली हकीकतो मूकवामा आवी छे तेथी अ पुस्तकमा तं मन्वन्धी निर्देश करवाथी लेखक मुक्त रह्या छे तं सुघटित छे ।

जीवन चरित्र ना पुस्तकमा उपदेशात्मक विवेचनो बहु पान रोके तो ते अन्दरना इतिहासने लगभग दाटी दर्शन वाचकने मुदानी वातथीज विमुक्त बनावी छे तेथी धास्ती छे । पुस्तकनो हेतु कदाच जैन धर्मनो यज्ञ प्रद्योत बताववानो होय, तेनी फिर नथी, परन्तु धर्मना उपरछला विवेचनोने लीधे पुस्तकनी ऐतिहासिक महत्ता झारी पडे छे ए ध्यान बहार रहेवु न जोईण ।

आ पुस्तकना लेखक तथा 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ना लेखक मुनि पोताना ऐतिहासिक शोरने हरदम सिंचन कर्या करे अने भविष्यमा विशेष अन्धकार भेटीने ग्वीज साची धातु कशा मिश्रण विना आपणी समक्ष मूस्या करे, एम इच्छीशु ।

सामान्यरीते ग्रन्थावलोकन करता एक वानतमा एक इतिहास-रसिक तरीके मारो भिन्न अभिप्राय सप्रमाण व्यक्त करवानु शुद्ध तरीके नम्र पणे बताववानु मने प्राप्त थाय छे तो तेम करदा रजा लउ छुं ।

लेखक आ ग्रन्थ ना आठमा प्रकरणमा पृ० १०३ नी टिप्पणीमा खरत्तरगच्छीय जयसोम उपाध्याय कृत प्रश्नोत्तर ग्रन्थ मा थी असुक उतारो आपेल छे तमाथी आवश्यक भाग लईण —

“तउ तेहना (जिनचन्द्र सूरिना) शिष्य तथा श्रावक (तहने) 'युगप्रधान' कहै तिहा स्यौ दृषण घाड १x++वली 'युगप्रधान' नामि

दुहावो ते स्यु ? आज प्रभूत वली श्री जिनशासन माहि किणइ
 आचार्यनइ 'जगद्गुरु' कह्या हुवइ तो तुम्हे दिपाडो । तमारा ऋषी-
 मतीना भट्टारकनै श्रावक श्राविका 'जगतगुरु' कही गावै छै, तुम्हे
 साभली सुशी थाओ छो, श्री जिनचन्द्र सूरिजीना नाम 'युगप्रधान'
 साभली दुहवाओ ते स्यु ? जइ पातिगाह 'जगतगुरु' एहवा नाम
 साभलै (तउ) फजीत करै, श्री सेर अबुलफनल हजुर ' जगन्
 गुरु' नाम कहता-शेखे अम्ह * हजूर रोस करी भानुचन्द्र पन्यास
 नै जे बोल कह्या, ते भानुचन्द्र जाणे छे, वली लोकोना कह्या 'तपा'
 एहवा नाम मानौ छो एव विचारता तुमने ए प्रश्न अजाणपणो
 जणावै छे ।”

आमानु लखाण सम्पूर्ण सत्यमानी लेखक तेनी नीचे एम लखवा
 प्रेराया छे के —

‘इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिका
 ‘जगतगुरु’ पद उनके भक्त श्रावक श्रावकाओ द्वारा रखा हुआ गुरु
 भक्ति सूचक मात्र था, किन्तु सम्राट् अकबरने उन्हें ‘जगत गुरु का
 कोई विरुद् नहीं दिया था ।’

उपरना अवतरण परथी मने एम जणायछे के तपागच्छवालाओ
 स० जिनचन्द्रसूरिने ‘युगप्रधान’ ए विरुद् अकबरं आप्यु होय, एम
 स्वीकारता नहीं होय अने कहेता हये के ते तो तेमना शिष्य अने

* यह शब्द घजनदार है । जयसोमजी की सत्यवादिता, प्रमाणिकता
 और भवभीरुता उनके ग्रन्थोसे टपकती है ।

श्रावको तेमने ए पद लगाळे छे । आधी स्थिति धई हशे त्यारे स० जयभोमजी तपागच्छ वालाने उद्देगीने प्रत्युत्तर रूपे एम कहे के 'जगद् गुरु' ए विरुद् पण जिन शासनमा कोई आचार्यने अपातुं नथी, तेम ते पद अकवर माभले तो फजेत करे, अबुल फजल समक्ष हजुर 'जगद् गुरु' नाम कहेता तेणे अमारी समक्ष रीस करी भानु-चन्द्रने जे बोल कहा ते तो जाणे छे, वलो लोकोनु कहेतु तमार 'तपा' नाम पण बराबर नथी-ए स्वाभाविक छे । एक बीजानु उत्थापे एवो घाट आमा थयो लागे छे ।

तपागच्छना साहित्यमा सरतरगच्छाचार्य जिनचन्द्र सूरिने अकवरे 'युगप्रधान' विरुद् आप्यु एवु मारा जोवामा नथी आव्यु, ज्यारे तेम थयुं हतु ए वात सरतर गच्छना तत्कालीन साहित्य थी-शिलालेजोथी जणाय छे, तेथी ते एरु सत्य घटना तरीके न स्वीकार-थी ? स्वीकारवी घट । तेज प्रमाणे अकवरे तपागच्छाचार्य हीर-विजयसूरिने 'जगद् गुरु' विरुद् आप्यु ए वात भले सरतर गच्छना साहित्यमा प्राप्त न थाय पण तपागच्छना तत्कालीन साहित्य थी-शिलालेजोथी स्पष्ट छे तेथी ते हकीकत सत्य तरीके अवश्य स्वीकार्य छे । तेना उदाहरण जोइए —

॥ सप्त १६४६ मा लखायेली जेनी प्रन मले छे एवा काव्य के जेनु नाम पण 'जगद् गुरु' परथी 'जगद् गुरुकाव्य' छे तेमा तेना कर्ता १६७ मा श्लोकमा कहे छे के —

शुद्धा सर्वपरीक्षगै गुरुतरा ज्ञात्वंति पृथ्वीपति ।

सभ्याना पुरत स्वपर्यदि गुणास्तेषा स्वधी गोधिनान् ॥

उत्तत्रा सर्वं यतीश हीरविजयाख्या नाम ददाद् भक्ति ।

स्वैर्वाक्यैर्विरुद्धं जगद्गुरुरिति स्पष्टं मह पूर्वकम् ॥१॥

सर्वं परोक्षा थी गुरुवर शुद्ध छे एम जाणो वादशाहे पोतानी परिपद्मा मभ्योनी ममक्ष स्ववृद्धिथी शोधायेला एवा तेमना गुणोने कहीने सर्वं यनिओना स्वामी एवा हीरविजय नामना ने भक्तियो । पोते उवागेल्या वाक्योथी महोत्तमव पूर्वक 'जगद् गुरु' ए नामनु स्पष्ट विरुद्ध आप्यु ।

हीर मौभाग्य नामनुं महाकाव्य हीरविजय सूरिना ममकालीन तेमना शिष्य परम्पराना देवविमले स० १६४६ पहेला रचता आवेला तेमा १४ मा मर्गमा श्लोक २०५ मा जणाव्युं छे के—

'जेम आघाट नगरमा राजाण जगच्चन्द्रसूरिने वार वर्ष सुधो आचाम्ल तप करवामाटे 'तपा' विरुद्ध आप्यु, सभातमा दफरखाने मुनि सुन्दर सूरिने प्रेमथी 'वादि गोकुल संकट' विरुद्ध आप्युं, तेवी रीते—

गुणश्रेणी मणीसिन्धो श्री हीरविजय प्रभो ।

जगद्गुरु रिद्ध तेन विरुद्ध प्रददे तदा ॥

—ते अवसरे ते (प्रमुदित अकबर शाहे) गुणाश्रेणी रूप मणिना समुद्ररूप श्री हीरविजय प्रभुने आ 'जगद् गुरु' ए विरुद्ध आप्यु ।

स० १६४७ नो शिलालेख श्री पूरणचन्द्रजी नाहर सम्पादित 'जैन लेख-संग्रह भाग १ ला मा न० ७१४ नो ज मात्र एकज दाखला तरीके ल्हए —

॥२॥ सवन १६४७ वर्षे फाल्गुन मासे शुक्लपक्ष पचम्या तिथी गुरुवामरे श्री तपागच्छाधिरान पातशाह श्री अकबर दत्त जगद्गुरु

વિરુદ્ધ ધારક મદ્દારક શ્રી શ્રી શ્રી ૪ હીરવિજય સૂરીણામુપદેશેન
 ચતુર્મુરુ શ્રી ધરણવિહારે પ્રાગ્વાટ જ્ઞાતીય સુશ્રાવક સા૦ રેતા નાય-
 કેન વર્દ્ધા પુત્ર યશવન્તાદિ કુટુમ્બ યુતેન અષ્ટ ચત્વારિંશત્ (૪૮)
 પ્રમાણાનિ સુવર્ણ નાણકાનિ મુક્તાનિ પૂર્વદિક્ સત્ક પ્રનોલી નિમિત્ત
 મિતિ શ્રી અહમદાવાદ પાઠવે ઉત્તમા પુરત્ત ॥ શ્રી રસ્તુ ॥

આમ અનેક તત્કાલીન પ્રમાણોથી પુરવાર થાય છે કે હીરવિજય
 સૂરિનું 'જગદ્ગુરુ' વિરુદ્ધ પાતશાહ શ્રી અકબર દત્ત હતું । (જેમ
 જિનચન્દ્રસૂરિનું 'યુગપ્રધાન' વિરુદ્ધ પણ અકબર દત્ત હતું તેમ) અને
 શોધ સ્ત્રોતથી કાલક્રમ વિચારતા સ૦ ૧૬૪૦ માં તે 'જગદ્ગુરુ' વિરુદ્ધ
 હીરવિજય સૂરિને અપાયું હતું ।

જૈન સઘ એ એક વિરાટ વટવૃક્ષ છે । તેના થડમાં થી ફુટ્ટેલી
 શ્વેતામ્બર અને દિગમ્બર નામની બે મહત્તી શાખાઓ છે, અને એ
 શાખાઓમાંથી ગચ્છો, સમ્પ્રદાય, જ્ઞાતિઓ પેટા જ્ઞાતિઓ ની કોઈ
 અજબ રીતે પાગરેલી ઢાલીઓ છે, કે જેથી વધી દિશાઓ ભરાઈ
 ગઈ હોય તેવું કલ્પનામાં આવે છે, તે વિરાટ વૃક્ષ ના મૂળ જેટલા ઊંડા
 છે તેટલીજ તેની શાખાઓ હરીભરી છે, ઢાલીએ ઢાલીએ પુષ્પોની
 અને ફલોની વહાર જમી પડી છે, તે વૃક્ષની શાખાએ શાખાએ ઢાલીએ
 ઢાલીએ મહા પ્રભાવશાળી પુરપોની કીર્તિ સુવાસ વ્હેકી રહી છે,
 શાખાઓ ઢાલીઓ જાણેકે પરસ્પર સાત્વિક સ્પર્ધા કરતી હોય
 એમ લાગશે ।

સઘ તો અવિભક્ત રહેવો જોઈએ, એ સિદ્ધાન્ત ઘણો સુંદર અને
 આદરણીય છે, પણ પ્રકૃતિ પોતે એનો વિરોધ કરે છે, ઘૃક્ષુનું થડ મજબૂત

એક અને અરણ્ય હોય પણ એટલામાજ એનું સામર્થ્ય સમાઈ જતું નથી, શાસ્ત્ર ના વિસ્તાર માજ એના વલ અને રસની સાચી સાર્થકતા છે, સજૂરી અને નાલીયેરના ફાલ સીધા વચ્ચે જાય છે, પણ એની ઉપમા આર્ય સંસ્કૃતિ ના પ્રતિનિધિને આપી શકાતી નથી, વડ તો હિન્દુસ્થાનની ભૂમિમાજ ફાલે ફૂલે છે, અને આર્ય સંસ્કૃતિ ની વિરાટતા તથા ભવ્યતા પણ એ વટવૃક્ષ દાસવે છે એનું વીજ સૂક્ષ્મ છે, પણ કાલની સામે ઝૂઝવાની એના મા તાકાત છે, એનો વિસ્તાર પણ એટલો અસાધારણ હોયછે એની એક એક શાखा એક વૃક્ષ ના વિસ્તાર ની હરિફાઈ કરે છે । જૈન સંઘ એ રીતે જુદા જુદા ગચ્છો, સમ્પ્રદાયો-મા વિસ્તાર પામ્યો છે એને એ વધામા જે એકજ પ્રકાર નો રસ વહી રહ્યો છે તે જોતા જૈન સઘ તત્વત એક વિરાટ વટ વૃક્ષ નહીં તો વીજું શું છે ?

એ વટવૃક્ષ ની શ્વેતામ્બર શાસ્ત્ર ની ત્રણ મુખ્ય ડાલીઓ હાલ વિદ્યમાન છે, ૧ સરતર ૨ તપા ૩ અચલ, એ નામના ત્રણ ગચ્છો । આ ત્રણે ગચ્છના આચાર્યો ની પદ પરમ્પરા પર દૃષ્ટિપાત કરીશું તો તેના મા જૈન શાસનનો પ્રભાવ પ્રદર્શિત કરવાની પ્રવલ અને એકધારી ભાવના જાણત હતી એમ જણાશે, હજુ તેમનો સલગ, સવિસ્તર, અને શોધસોલધી મેલમેલી મામત્રી વાલો ઇતિહાસ લખાયો નથી એ શોકની વાત છે, પણ જ્યારે તેવો લખાઈ વહાર પડશે ત્યારે જણાશે કે તે એક કીર્તિવન્ત ઇતિહાસ છે, આ શાસ્ત્રાઓ ભિન્ન ભિન્ન હોવા-
છતા તે સર્વેનો મુખ્ય તિલક છે ।
વોજી દૃષ્ટિએ

વિસ્તાર એ નેટલા સ્વાભાવિક છે તેટલાજ વિરોધ અને વૈપામ્ય પ્રત્યેક ગારાને માટે ભયકર તમજ પ્રાણ હાનિકર છે । આપણા ગચ્છોના ઇતિહાસ ના એ વન્ને વસ્તુઓ મળી આવેછે, આરમ્બનો ઇતિહાસ શૌર્ય અને ઔદાર્ય થી અફિત હોય છે, પણ એ પછી જેમ જેમ વર્તમાન કાલની નજીક આવીએ છીએ તેમ તેમ વિરોધ અને ભેદ ભયકર રૂપ ધરતા જણાય છે । મનુષ્ય સ્વભાવ જાગે યુદ્ધશીલ હોય નહિ, તેમ નાની નિર્જીવ વાતોપર ઇવડા ધયા કર્યા છે, પુરાતન વીર પુરુષો ના કથાનક સામલી તથા સસ્મરી આપણે આલ્હાદ અનુભવીએ છીએ યગ વર્તમાન સ્થિતિ નો સામનો કરવાનો અવસર આપે છે ત્યારે તો ઉઝલના મારતું ગરમ લોહી પણ જાણેકે ધીજી જતુ હોય એમ લાગે છે, આપણી સઘ સમ્બાધુ વલ છિન્ન મિન્ન થયુ છે અને અન્ય સામાન્ય વિરોધી ના હાથ મજવૂત વન્યા છે, હજુપણ સમાજ ચેતશે ? અને આપસ આપસ ના ક્લેશથી તદ્દન મુક્ત રહેવાનુ મન વચન કાયાએ પાલી શ્રીવીતરાગ પ્રમુન્ના પોતે સાચા અનુયાયી છે એ સ્વન સિદ્ધ કરશે ? સૌ પોતા પોતાના સગઠન યોજે, કુપ્રથાઓ ના દાસત્વ ને દૂર કરે અને જ્ઞાનના વિસ્તાર અર્થે કડક પણ સગીન કામ કરી વતાપે નો સમુચ્ચયે સમગ્ર જૈન સઘ સગઠિત અને વલયાન વન્યા વિના ન રહે એ નિર્વિવાદ છે ।

ભૂતકાલ ની ભવ્યતાનુ સગીત દૂર દૂર થી આવતા સગીત નો પેઠે મનોરમ અને કર્ગપ્રિય લાગે છે અને માણસને મુગ્ધ વનાવે છે, તેમાથી ઘણી ખરી વિપમતા, કઠોરતા ઉડી જાય છે, દૂર દૂર થી વહી આવતા ધ્વજનુ પાણી જેમ નિર્મલના પામે તેમ ભૂતકાલ ના સૂર પણ

एक अने अरुण्ड होय पण एटलामाज एनु सामर्थ समाइ जनु नथी, शाखा ना विस्तार माज एना बल अने रसनी साची सार्थकना छे, रजजूरी अने नालीयेरना झाड सीधा वध्ये जाय छे, पण एनी उपमा आर्य संस्कृति ना प्रतिनिधिने आपी शकती नथी, वड तो हिन्दुस्थाननी भूमिमाज फाले फूले छे, अने आर्य संस्कृति नी विराटता तथा भव्यता पण ए वटवृक्ष दाखवे छे एनु वीज सूक्ष्म छे, पण कालनी सामे झूझवानी एना मा ताकात छे, एनी विस्तार पण एटलो असाधारण होयटे ऐनी एक एक शाखा एक वृक्ष ना विस्तार नी हरिफाइ करे छे । जैन सघ ए रीते जुदा जुदा गच्छे, सम्प्रदायो-मा विस्तार पाम्यो छे एने ए वधामा जे एकज प्रकार नो रस वही रह्यो छे ते जोता जैन सघ तत्वत एक विराट वट वृक्ष नहीं तो वीजुं शुद्धे ?

ए वटवृक्ष नी श्वेताम्बर शाखा नी त्रण मुख्य डालीओ हाल विद्यमान छे, १ सरस्वर २ तपा ३ अचल, ए नामना त्रणगच्छे । आ-त्रणे गच्छना आचार्यो नी पट्ट परम्परा पर दृष्टिपात करीशु तो तेना मा जैन शासननो प्रभाव प्रदर्शित करवानी प्रयत्न अने एकधारी भावना जाप्रत हती एम जणाशे, हजु तेमनो सलग, सविस्तर, अने शोधखोलथी मेलनेली सामग्री वालो इतिहास लखायो नथी ए शोकनी बात छे, पण ज्यांर तेगो लखाइ बहार पडशे त्यारे जणाशे के ते एक कीर्तिवन्त इतिहास छे, आ शाखाओ डालीओ भिन्न भिन्न होवा-छना ते सर्वेनो मूल अने थडनी साथे घनिष्ट सम्बन्ध छे, छता वीजी दृष्टिए जोइसुं तो प्रकृति ना नियम प्रमाणे विकास अने

વિસ્તાર એ જેટલા સ્વાભાવિક છે તેટલાજ વિરોધ અને વૈપામ્ય પ્રત્યેક ઝાણાને માટે ભયકર તેમજ પ્રાણ હાનિકર છે । આપણા ગચ્છોના ઇતિહાસ ના એ વન્ને વસ્તુઓ મલી આવેછે, આરમ્બનો ઇતિહાસ શૌર્ય અને ઔદાર્ય થી અફિત હોય છે, પણ એ પછી જેમ જેમ વર્તમાન કાલની નજીક આવીએ છીએ તેમ તેમ વિરોધ અને ભેદ ભયકર રૂપ ધરતા જણાય છે । મનુલ્ય સ્વભાવ જાણે યુદ્ધશીલ હોય નહિ, તેમ નાની નિર્જીવ વાતોપર ઇલ્લહા થયા કર્યા છે, પુરાતન વીર પુરુષો ના કથાનક સામલી તથા સમ્મરી આપમે આલ્હાદ અનુભવીએ છીએ પણ વર્તમાન સ્થિતિ નો સામનો કરવાનો અવસર આપે છે ત્યારે તો ઉઠલના મારતું ગરમ લોહી પણ જાણેકે ધીજી જતુ હોય ણમ લાગે છે, આપણો સંઘ સસ્થાનું વલ ડિન્ન મિન્ન થયુ છે અને અન્ય સામાન્ય વિરોધી ના હાથ મજબૂત વન્યા છે, હજુપણ મમાજ ચેતશે ? અને આપસ આપસ ના ક્લેશથી તદ્દન મુક્ત રહેવાનું મન વચન કાયાએ પાલી શ્રીવીતરાગ પ્રમુખા પોતે સાચા અનુયાયી છે એ સ્વત સિદ્ધ કરશે ? સૌ પોતા પોતાના સગઠન યોજે, કુપ્રથાઓ ના દામત્વ ને દૂર કરે અને જ્ઞાનના વિસ્તાર અર્થે કડક પણ સગીન કામ કરી વતાવે નો સમુચ્ચયે મમમ જૈન સઘ સગઠિન અને વલયાન વન્યા વિના ન રહે એ નિર્વિવાદ છે ।

મૂતકાલ ની મન્યતાનું સગીત દૂર દૂર થી આવના સગીત ની પેઠે મનોરમ અને કર્ગપ્રિય લાગે છે અને માણસને મુગ્ધ બનાવે છે, તેમાથી ઘણી સરી વિષમતા, કઠોરતા ઉઢી જાય છે, દૂર દૂર થી વઠી આવતા ક્ષરણનું પાણી જેમ નિર્મલના પામે તેમ મૂતકાલ ના સૂર પણ

अधिक निर्मल बने छे, क्षेत्र अने काल ना अन्तरमा वस्तुने विशुद्ध वनाइवानु स्वाभाविक सामर्थ्य छे, इतिहासमा भभकभरी विगतो मोटे भागे भरी होय छे ए देखाय छे प्राचीन वधु भव्य लागे छे ने भूतकालनुं घेन चडे छे, आ वस्तु-स्थिति थीं चेतवानुं छे

वली भूतकाल वर्तमाननी साथे सकलायेला रहे छे एने साव भूसी नासयानो प्रयत्न करनार गमे तेवी महान् व्यक्तिके प्रजा होय तोये ते निष्फल निवडवानी, केटलाकनी फरियाद छे के भूतकालनी अतिशयोक्तिओथी अने भूतकाल ने जे मव्य आकर्षणीय रगोथी रगवामा आवे छे, तेथी घणा वहेमो, पारखण्डो, अनाचारो अने दम्भो नभी रह्या छे, अने भूतकालनी भव्यता घणी वार माणसने आजी नाखे छे, अने यथार्थ वस्तु-स्थिति समजवा मा अन्तराय रूप बने छे, राजाओ अने मोटा श्रीमतोनी खुशामद करवा मा घणा सारा पण्डितो, कविओ अने तपस्वीओ ए पण पुरातन समयमा मोटो भाग भजव्यो छे, अने एने लीधेज भूतकाल आटलो आकर्षक बन्यो छे, भूतकाल ना ए ऐश्वर्यशालो राजाओ अने धनिकोनी 'नबला-इओ न होती एम बनेज नहीं, तेमणे गरीबोने चूसवामा, नबलाने जीतवा मा, सामा थनार पर जुलम करवामा, प्रजाने पीडवामा जे फइ कयुं होय तेनो कइं पण इसारो सररओ पण करवामा आवतो नथी, समाजमा रहेला अनाचार अत्याचार पण लोकाचारने नामे ओल्लखाता हता, अने जेमने ए जमाना ना एक महापुरुष, गणी शक्याय तेमणे पण ए अत्याचार सामे उ ची आगलो करवानी हिम्मत नथी बणावी, ऐटले के जुनुं एटलुं वधुं सारुं एम गणवुं के मानवुं

ए सत्यनो द्रोह છે, જે લોકાચાર કે રીતિ નીતિ ઉપર 'પ્રાચીનતા' ની છાપ પડી હોય તે પ્રત્યેક યુગમા પવિત્ર અને ઉપકારક જ હોય એ ભ્રમણા છે ।

एक विद्वान ना शब्दों मा इतिहास एटले अवनवी प्रेरणा नो प्रेरक, प्रजाभानो आत्मदर्शक, परम विशुद्धिकारक अनेक मथनो जगावनार महाप्राण, ए महाप्राण नुं हार्द लेखकोनी लेखनीओना स्पर्श थी उघडे છે, અનેક કલમો એ મહાકાલ ના મનોમન્દિરમા પ્રવેશવા ચાલી છે, અને વન્ય વારણાની ચીરાડો જોડ પાઠો વલી છે, ગર્ભદ્વાર મા દારણ થનારી તો વિરલ (છે) । इतिहास एटले हतु तेवुं आलेखनु पण खरेखर फेनु हतु ए कहवु शक्य नथी वन्यु छना इतिहास ना कालगोल पोत पोताना युग-मस्कार ना पडदा उपर झीलजा एज इतिहास लेखक करी शके तेम ठे इतिहास ना वनावो मा उडी उनरी अमृत ना अक्षरो पाडवा एटलु तेनी यासेथी इच्छीए ।

जीवन चरित्र ए पण इतिहासनु एक अङ्ग છે, મહાન પુરપોના જીવન યુગ ને ઘડે છે, તેઓ યુગસર્જક છે, અને યુગને જોડતા મહા-પુરપ મલી રહે છે, તેમના જીવનમા થી તેમના યુગ ના इतिहास માંપડે છે, વલી મહાપુરપો ના જીવન પ્રસંગો પ્રકાશ પાથરતી ડીવા ઢાડીઓ છે, તેનો અર્થ એ છે કે પુરપો ચાલ્યા જાય છે પળ ઇમના પુનિત સસ્મરણો રહી જાય છે, અને એ સસ્મરણો પ્રકાશની ગરજ માંગે છે મેંકડો ઉપદેશો કરતા, આવા જીવન પ્રસંગો શ્રોતાઓ અને વાચકોના ઢિલ ઉપર સ્થાયી અસર કરે છે, વલી એ પળ વિચારવાનું છે કે ધર્મના

मुख्य प्रचारको, प्रवर्तको अथवा पुनरुद्धारको धर्मनी प्राण शक्ति ना मूल झरण छै धर्म प्रवाहने जरूरने प्रसंगे सगठनके पुनर्विधान ना पाणि नथी मलता ते बहु लावा कालगीसुधी टकी शे कतो नथी मोटा रण मा नानी नदीओ ना जल गोपाइ जाय तेम ते धर्मप्राण कालेकरो ने क्षीण वने छै तेथी जरूर पडये प्रभावको, प्रचारको, युगप्रधानो अने धर्मधुरन्धरो ए बहता प्रवाहने विपे देश कालने अनुसरी पुनर्घटना ना नवा सस्कार ना प्राण पूरे छै, ए रीते धर्म सम्प्रदायो पोताना अनुयायीओ अने अनुरागीओने आलोक तेमज परलोकना कल्याणमा साधनरूप वने छै ।

सरतर गच्छना एक महान् आचार्य श्री जिनचन्द सूरिनु जीवन पृतान्त बहार पाडी लेखक नाहटाजीए एक सारी इतिहास सेवा करी छै । सरतरगच्छीय साधुओ ए जैन शासन अने साहित्य की घणी सेवा बजावी छै । अने हजु सुधी कालना प्रवाहमा सदोदित रही ते गच्छ विद्यमान छै । सामान्य रीते एम कही शकाय के प्राय-गूजरातमा, पश्चिम-हिंदमा तपागच्छना साधुओनो विहार अने प्रभाव जमी रह्यो त्यारं प्राय मेवाड भारवाड आदि राजपूतानामा अने उत्तर हिन्दमा सरतर गच्छना साधुओनो विहार अने प्रभाव थतो रह्यो । तपागच्छ वालानु साहित्य गूजरातना तपागच्छीय श्रावको अने सस्थाओए प्रकट करवानु सतत जारी राख्यु, ज्यारे दुर्भाग्ये सरतरगच्छीय साहित्यने विशेष प्रमाणमा सतत बाहर पाडवा अर्थे कोइ जवरी सस्था के श्रीमन्त हजु सुधी मती शकेलीनथी तेथी तेमनु साहित्य बहुअल्प प्रकट थयु छै । अने ते गच्छनी शासन सेवा प्रकाशमा पूरते रीते आवी नथी ।

લેલક શ્રી નાહટાજી સરતરગચ્છ પ્રત્યેના અનુરાગની પ્રેરાડ તે ગચ્છની શામનસેવા અને સાહિત્ય સમ્પત્તિ જનતા સમક્ષ મૂકવાના દૃઢ અભિલાષ સેવી રહ્યા છે । અને તેના પ્રથમ પ્રયાસ રુપે વે ત્રણ ગ્રન્થ વહાર પાઠી આ જીવન ચરિત્ર અનેક પ્રમાણો સહિત પરિશ્રમપૂર્વક લખી પ્રકટ કરે છે । અને 'ऐतिहासिक जैनकाव्यसंग्रह' નામ નો સંગ્રહ પોતાની માહિતી ભરપૂર પ્રસ્તાવના સહિત થોડા સમય પછી પ્રકાશિત કરશે તે સ્તુત્ય છે । તેમની શુભેચ્છા પાર પડે એ મૌ કોઈ ઇચ્છશે ।

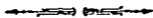
મને આ પ્રસ્તાવના લખ્યા માટે ઉચુત કરી જે તક આપી છે તે માટે શ્રીયુત નાહટાજી નો હૃદયપૂર્વક આભાર માનુ છુ ૨૨-૪-૩૫ ને દિને ડુઢ્કી પ્રસ્તાવના લખી મોકલ્યા પછી તેને જરા વિસ્તૃત કરવાની સૂચના થતા તેમ મેં કરેલ છે । છતાય હુ પૂરતો ન્યાય આપી ન શક્યો હોઉં તો તે ક્ષતવ્ય ગણી લેવાશે એટલી સ્તાનીભરી આશા સેવુ છુ ।

તવાવાલા વિલ્ડિંગ }
ત્રીજે માલે }
લોહારચાલ મુમ્બઈ }
તા૦ ૨૪-૬-૩૫ }

સત્પુરપ ચરણેચ્છુ
મોહનલાલ દલોચન્દ્ર દેશાઈ
B A, L L B ADVOCATE



॥ सहायक ग्रन्थ सूची ॥



ग्रन्थ नाम लेखक, सम्पादक और प्रकाशक रचनाकाल

संस्कृत—

- १ कर्मचन्द्रमन्त्रि वश प्रबन्ध उ० जयसोम गणि (स० १६५०)
- २ कर्मचन्द्रमन्त्रि वश प्रबन्ध वृत्ति उ० गुणविनय (स० १६५६)
- ३ अष्ट लक्ष्मी (प्रशस्ति) उ० समयसुन्दर (स० १६४६)
(अनेकार्थ रत्नमंजूपा मे प्रकाशित)
- ४ समाचारी शतक उ० समयसुन्दर (स० १६७२)
- ५ करपलता (प्रशस्ति) उ० समयसुन्दर (स० १६८५)
- ६ मध्यान्ह व्याख्यान पद्धति वादी हर्षनन्दन (स० १६७३)
- ७ जैन लेख सग्रह भाग १ वायू पूरणचन्द्र नाहर M A B L
- ८ जैन लेख सग्रह भाग २ वायू पूरणचन्द्र नाहर M A, B L
- ९ जैन लेख सग्रह भाग ३ वायू पूरणचन्द्र नाहर M A B L
- १० खरतरगच्छ पट्टावली सग्रह स० श्री जिनविजयजी ।
- ११ प्राचीन जैन लेख सग्रह भाग द्वितीय स० श्री जिनविजयजी ।
- १२ जैन धातु प्रतिमा लेख सग्रह भाग १ स० श्री बुद्धिसागर सूरिजी
- १३ जैन धातु प्रतिमा लेख सग्रह भाग २ स० श्री बुद्धिसागर सूरिजी

यह चिन्ह प्रकाशित ग्रन्थोंका सूचक है. इस चिन्ह बिनाके ग्रन्थ अप्रकट है।

- १४ घोफानेर जैन लेख संग्रह संपाहक—अगरचन्द भवरलाल
१५ अपभ्रंश काव्यत्रयी स० लालचन्द भ० गाधी
१६ भानुचन्द्र चरित्र सिद्धिचन्द्रजी
१७ विजय प्रशस्ति काव्य मू० हेमविजयटी०गुणाविजय(स०१६८८)
१८ प्रशस्ति सप्तद्वय P O हरिसागरजी
१९ आचार दिनकर प्रशस्ति हर्षनदन (१६६६)
२० पदस्थान प्रकरण प्रस्तावना सर० विठ्ठल मंगलमागरजी
२१ पञ्चनदी साधन विधि (हमारे समूहमे)

प्राकृत—

- २२ पार्श्वनाथ चरित्र (प्रशस्ति) देवभद्राचार्य (स० ११६८)

हिन्दी—

- २३ ओसवाल जातिका इतिहास, प्र० ओसवाल हिस्ट्री पब्लिशिंग
हाउस ।
२४ राजपूतानेके जैन वीर अयोध्याप्रसाद गोयलीय
२५ सूरेश्वर और सम्राट् मुनि विद्याविजयजी
(मूल गुजराती, अनुवाद हिन्दी)
२६ विजय प्रशस्ति मार मुनि विद्याविजयजी
२७ छुपारस कोष श्री जिनविजयजी
२८ गणपति सार्पशतक (भाषान्तर) स०श्री जयसागर सूरिजी
२९ श्रीजिनदत्तमृरि चरित्र भाग द्वि० श्री जयसागर सूरिजी
३० महाजनवश मुक्तावली महो० रामलालजी

- ३१ ऐतिहासिक जैन काव्य संप्रह स० अगरचंद भंवरलाल नाहटा
- ३२ यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन यतीन्द्रविजयजी
- ३३ विद्वान्नि त्रिपेणी स० जिनविजयजी
- ३४ अकवरी-दरवार प्र० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।
- ३५ जहाँगीर नामा मुन्गी देवीप्रसादजी
- ३६ खानखाना नामा मुन्शी देवीप्रसादजी
- ३७ वीकानेर राज्यका इतिहास प्र० वैकटेश्वर प्रेस, ले०-कन्हैयालाल
- ३८ भारतके प्राचीन राजवंश विश्वेश्वरप्रसाद रेड्ड
- ३९ सरस्वती (मासिक) सन् १९१२
- ४० नागरी प्रचारिणी पत्रिका स० १९८१

गुजराती ग्रन्थ—

- ४१ जैन साहित्य नो सक्षिप्त इतिहास मोहनलाल द० देसाई
B A , LL B ,
- ४२ जैन गूर्जर कविओ, भाग १ मोहनलाल द० देसाई
B, A,, LL B ,
- ४३ जैन गूर्जर कविओ, भाग २ मोहनलाल द० देसाई
B A , LL B ,
- ४४ जैन ऐतिहासिक गूर्जर काव्य संचय, श्री जिनविजयजी
- ४५ ऐतिहासिक (जैन)रास संप्रह भाग ३ स० श्री विजयधर्मसूरिजी
- ४६ ऐतिहासिक(जैन)रास संप्रह भाग ४ स० श्री विद्याविजयजी
- ४७ प्राचीन तीर्थमाला संप्रह स० श्री विजयधर्मसूरिजी
- ४८ श्री जिनचन्द्र सूरिजी सक्षिप्त जीवन-चरित्र, प्र०श्री जिनदत्त-
सूरि ज्ञान भण्डार वम्बई ।

- . ४६ सदा-सौमा गोकुलदास द्वारकादास रायचुरा
. ५० आनन्द काव्य महोदधि मौ० ७ प्र० देवचंद लाल० पुस्तकालय
फड सुरत ।
. ५१ धर्म देशना विजयधर्मसुरिजी
. ५२ समेत शिरिर स्पेशल ट्रेन स्मरणाक प्र० बडवाजैनमित्रमडल
. ५३ जैनयुग
. ५४ आत्मानन्द प्रकाश, (मासिक)
. ५५ "जैन" (साप्ताहिक पत्र) रौप्य महोत्सव अक
. ५६ कॉन्फरेन्स हेरल्ड (इतिहास-साहित्य अक)
. ५७ जैन साहित्य सशोधक (त्रैमासिक)

प्राचीन भाषा—

- . ५८ श्री जिनचन्द्रसूरि अकबर-प्रतिबोध रास लड्डि कल्लोल
(सं० १६५८) प्र० ए०- जैन का०स०
. ५९ युगप्रधान निर्वाण रास समयप्रमोद " "
. ६० श्रीपूज्य बाहण गीत कुशललाभ " "
. ६१ श्री जिनचन्द्रसूरिगीत न० १०८ अनेको सुकवि (हमारे स०में)
. ६२ श्री जिनसिंह मृरिगीत ३१ अनेको सुकवि (हमारे स० में)
. ६३ श्री जिनराज सूरि रास श्रीसार (स० १६८१) " "
. ६४ श्री जिनसागर सूरि रास धर्मकीर्ति (स० १६८१) " "
. ६५ श्री निर्वाण रास सुमतिवल्भ (स० १७००) " "
. ६६ श्री हीरविजय मृरि रास कवि ऋषभदास (स० १६८५)
प्र० आ० का० महो० मौ० ५वा

- ६७ प्रश्नोत्तर ग्रन्थ (विचार रत्न सग्रह) उ० जयसोमजी
६८ वेगड (सरतर) शांग्ना पट्टावली हमारे सग्रहमे
६९ सरतरगञ्ज पट्टावली श्री जिन कृपाचन्द्र सूरि
ज्ञान भण्डार
७० सरतर गच्छ पट्टावलियें वडा उपासरा, वृहन् ज्ञान भंडार
७१ जइत पद वेलि कनकसोम (स० १६२५)
७२ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन गुणरङ्ग (स० १६१६)
७३ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन गुणविनय (स० १६४४)
७४ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन हर्षनन्दन (स० १६७४)
७५ " " " " "
७६ वच्छावन (पद्य) वशावली हमारे सग्रहमे
७७ वच्छावन (गद्य) वशावली "
७८ " " वंश रज्यात श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभंडार
७९ वासुपूज्य स्तवन समयराज
८० " " अपूर्ण
८१ प्रशस्ति सग्रह समाहक—अगरचन्द, भंवरलाल नाहटा

English—

- ८२ Ain-i-Akbari. Trans by H Blochmann
८३ Akabar Nama
८४ Akbar the Great Moghul by Vincent A smith
८५ A short History of Muslim Rule in India
८६ Al-Badaoni
८७ The Jain teachers of Akabar by Vincent A
Smith (Commemoration Volumn)

बंगला—

८८ जहागीरैर आत्म जीवनो

कुमुदिनी मित्र

हस्त लिखित जैन ग्रन्थोकी सूचियें—

- . ८६ जैसलमेर भाण्डागारीय ग्रन्थाना सूचि स० लालचद भ० गाधी
- . ९० लौत्रडी भडार सूचि प्र० आगमोदयसमिती
- . ९१ जैन ग्रन्थावली प्र० जैन श्वेताम्बर कॉन्फरेन्स
- . ९२ जैन ग्रन्थाना सूचि कलकता सस्कृत कालेज
- ९३ वीकानेर वृहत् ज्ञानभडारसूचि अष्टकम् सू० अगरचन्द नाहटा
(१) जिनहर्षसूरि (२) महिमा भक्ति (३) दानसागर (४) अभयसिंह
(५) अत्रीरचदजी (६) महरचदजी (७) पनालालजी (८)
- ९४ श्रीपूज्य जिनचारित्र सूरि सग्रह सू० अगरचद नाहटा
- ९५ उपाध्याय क्षमाकल्याणजी भडार सू० श्रीगणाधीश हरि-
सागरजी, सशो० अगरचद नाहटा
- ९६ श्री जिन कृपाचद्रसूरि ज्ञानभडार सू० अगरचद नाहटा
- ९७ उपा० जयचन्द्रजी भडार (लक्ष्मीमोहन शाला) वीकानेर
- ९८ विकानेर स्टेट लायब्रेरी
- ९९ सोठिया लायब्रेरी (अगरचन्द भैरू दान)
- १०० वीरायसेरी खरतर गच्छ भडार सू० भवरलाल नाहटा
- १०१ अभयजैन पुस्तकालय सू० अगरचंद भवरलाल
- १०२ कुडालचद्र सूरि पुस्तकालय
- १०३ हेमचद्र सूरि पुस्तकालय
- . १०४ चुनीलालजी यति सग्रह अवलोकन नोटस्
- १०५ पुनमचद्रजी यति सग्रह० सू० अगरचद नाहटा
- १०६ जयपुर पंचायती भडार (खरतर) सू० गणाधीश हरिसागरजी

- १०७ हरिसागरजी पुस्तकालय, लोहावट
१०८ कोटा सरतर पचायती भटार सू० वीरपुत्र आनन्दसागरजी
१०९ वीरपुत्र आनन्दसागरजी पुस्तकालय कोटा,
११० अन्नाला भंडार सूचि सू० प्रो० वनारसीदासजी जैन, M A
१११ गुलाब कुमारी लायब्रेरी (P C) सूचि कलकत्ता
११२ नित्य मणि विनय जैन लायब्रेरी सूचि कलकत्ता
११३ राधवद्रीदासजी म्युजियम,,—अवलोकन नोटस्*
११४ प० प्र० सूर्यमठजी यति संग्रह, कलकत्ता
११५ रोजल एसोसिएटिड मोनायटी (जैन ग्रन्थ सूचि)
११६ नेमिबद्राचार्य—भंडार सूचि, काशी
११७ गेम्पिनायजी भंडार सूचि, अजीमगज
११८ ज्ञानचंद्रजी यति संग्रह (अजीमगज) अवलोकन नोटस्
११९ फतेसिंहजी कोठारी संग्रह (अजीमगज) अवलोकन नोटस्
१२० जिनदत्तसूदि ज्ञानभंडार सूचि० सूरत
१२१ भक्तिविजयजी भंडार—भावनगर (आत्मानन्द सभा)
१२२ जैनधर्मप्रचारक सभा पुस्तकालय
१२३ आणदजी कल्याणजी भंडार, पालीताना
१२४ हेमचंद्र सूरिपाठशाला पुस्तकालय, पालीताना
१२५ नरोत्तमदासजी M A , संग्रह—अवलोकन नोटस्
और भी अनेको हस्तलिखित ग्रन्थो, उनकी प्रशस्तियो,
पट्टावलियो, विकीर्ण पत्रो, डा० भांडारकर, पीटर्सन, बुल्हर आदि
कृत् रिपोर्टो आदि प्रकाशित अप्रकाशित सैकडो ग्रन्थोके अवलोकन,
अध्ययन और सहायसे इस ग्रन्थका सकलन किया गया है ।

॥ सांकेतिक अक्षरोंका स्पष्टीकरण ॥

अ०—अपूर्ण	जय०—जयचन्दजी	पृ०—पृष्ट
आ०—आचार्य	यति (धीकानेर)	प्र०—प्रकाशित
आ०—आपाठ,आ श्विन	जे०—जेठ (ज्येष्ठ)	प्रा०—प्रोफेसर
इ०—ईस्वी	जे० भ० सूचि०—	प०—पद्धित
उ०—उपाध्याय	जेसलमेर भाण्डागा-	फा०—फाल्गुन
उपा०—उपाध्याय	रीय गुन्थाना सूचि	वाला०—वालाबबोध
ऋ०—ऋषिमती	जे० गु० क०—जैन	वालाव०— ”
(तपा)	गूजर कविओ	दु०—दुधवार
ऐ०—ऐतिहासिक	ठि०—ठिकाना	भा०—भार्या
कौ०—कौकरिया	डा०—डाण्डा	भा०—भाग
फा०—फार्त्तिक	डौ०—डाकर	भ०—भडार
फा०—फारितम्	न०—नम्बर	महो०—महोपाध्याय
कृ०—कृष्णपक्ष	प०—पत्र	मा०—माघ
कृपा०—कृपाचन्द्रसूरि	प्र०—प्रति	मि०—मिगसर
र०—रत्तर	प्र०—प्रथम	सु०—सुंहता
गा०—गाथा	प्र०—प्रतिष्ठितम्	सु०—सुकाम
गु०—गुटका	प्र०—परिवार	मू०—मूल
च०—चउमास	प्रत्ये०—प्रत्येक युद्ध	मो०—मोहनलाल
चै०—चैत्र	प्रा०—प्राकृत	द०—दलीचद देसाइ
चौ०—चौपड़	पु०—पुस्तक	मौ०—मौत्ति

१२ निर्वाण	१५३
१३ विद्वत् जिज्य समुदाय	१६१
१४ आज्ञानुवर्ती माधु सघ	१८६
१५ भक्त श्रावक गण	२११
१६ चमत्कारिक जीवन और अवशेष घटनाएँ	२४६
१७ परिशिष्ट क (विहारपत्र १-२)	२५६
१८ परिशिष्ट ख (क्रियाउद्धार नियम पत्र, समाचारी पत्र)	२६७
१९ परिशिष्ट ग (शाही फरमानद्वय, परवाना)	२७६
२० परिशिष्ट घ (सावत्सरिक पत्र, वित्तपत्र, प्रशस्ति)	२८५
२१ परिशिष्ट ङ (जिनचन्द्रसूरिजी कृत स्तवनादि साहित्य)	२९७
२२ अभय जैन ग्रन्थमालाकी प्रकाशित पुस्तकें	३०३
२३ परिशिष्ट (च) चार शाही फरमान	३०५
२४ परिशिष्ट (छ) पूर्ति	३०६
२५ शुद्धाशुद्धि पत्रम्	३१६
२६ विशेष नामोक्ती सूची	३२३

चित्र सूची

- १ श्रीजिनरूपाचन्द्रसूरिजी महाराज
- २ श्रीमती आर्या विमलश्रीजीमहाराज
- ३ युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि मूर्ति
- ४ " " विहार मार्ग नक्सा
- ५ अकबर मिलन
- ६ युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरि
- ७ मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत
- ८ विहारपत्र प्रतिकृति
- ९ अष्टान्दिकामारि शाही-फरमान

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि



युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि मूर्ति (परिचय पृ० १५७-८)

ॐ

युग-प्रधान श्रीजिन-चन्द्रसूरि

पहला प्रकरण परिस्थिति



रतवर्षका प्राचीन इतिहास अतिशय उज्ज्वल और गौरवमय है। क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या राजनैतिक सभी क्षेत्रों में इस देशका अतीत गौरव—सर्वोपरि है। भगवान महावीर और बुद्ध जैसे प्रातः स्मरणीय परम तत्त्ववेत्ता महापुरुष इसी रत्नगर्भा भारत-वसुन्धरामें अवतीर्ण हुए हैं। जिनके गहन

तत्त्वज्ञान के अध्ययनसे विज्ञान और शिक्षाके सर्वोपरि धुरधर पाश्चात्य विद्वान भी चकित और मुग्ध हो जाते हैं। जिन आधुनिक आविष्कारोंको गहन तत्त्व-चिन्तन और निरन्तर परिश्रमसे पाश्चात्य विद्वानोंने आविष्कृत कर समस्त ससारको चमत्कृत किया है, इनका अस्तित्व, भारतके प्राचीन साहित्य में हजारों वर्ष पहिले ही

से इस देशमें होनेके प्रमाण मिलते हैं। अध्यात्म-तत्त्वकी चिन्तामें यह देश इतना समुन्नत था कि जिसकी समता करनेका सौभाग्य किसी भी देशको अद्यावधि प्राप्त नहीं हुआ है। आज भी उस विषयका भारतीय साहित्य इतना विपुल और गहन है कि जिसको पूर्णतः समझनेके लिये पाश्चात्य धुरन्वर विद्वान् भी असमर्थसे ज्ञात होते हैं।

आध्यात्मिक एवं धार्मिक तत्त्व चिन्ताकी इतनी समुन्नतिके साथ साथ यहाँ का सामाजिक उत्कर्ष भी किसी प्रकार न्यून नहीं था। शिशुपालन, शिक्षा, गृहस्थ-जीवन, कौटुम्बिक सम्वन्ध, पारस्परिक व्यवहार और सामाजिक संगठन बहुत ही सुव्यवस्थित था। मानव जीवनकी सफलताके प्रत्येक अङ्गका सौन्दर्य पूर्ण विकसित था। आचार विचारकी पवित्रता आदि भारतकी सामाजिक उन्नतिका उज्ज्वल अतीत गौरव इतिहासके पृष्ठोमें स्वर्णाक्षरोसे अङ्कित है।

राजनैतिक क्षेत्रमें भारत भूमिके उज्ज्वल रत्न सम्राट चन्द्रगुप्त, अशोक, सम्प्रति, विक्रमादित्य, भोज, कुमारपाल आदि प्रजावत्सल नृपतियोंका उच्च स्थान है। कौटिल्यके अर्थ-शास्त्र आदि भारतीय प्राचीन राजनैतिक ग्रन्थोंमें राज्यमर्यादा, राजनीति, राज्यव्यवस्था, युद्ध नीति, अधिकारियोंका कर्तव्य, जनसमुदायके सुखके प्रति लक्ष्य आदि राजकीय सभी अङ्गोंके सुव्यवस्थित होनेके उल्लेख पाये जाते हैं।

“किसीके सब दिन सरखे न होई” यह कहावत भी भारतवर्ष पर पूर्णतः चरितार्थ हुई। कालचक्रके प्रचल झकोरोने पारस्परिक फूट आदि दुर्गुण पैदाकर इस देशकी उन्नतिको दिनों दिन हीयमान करना

प्रारम्भ किया और क्रमज देगकी शक्ति इतनी क्षीण हो गई कि जिससे उसपर विदेशी लोगोंने आक्रमणकर अपना आधिपत्य जमा लिया ।

जवसे रत्नगर्भा भारत-सुन्धराकी राज्य सत्ता आर्य्य-शासकोसे नष्ट होकर यवनोके हाथमे चलो गई तन्से भारतकी प्राचीन सस्कृति मे विकृति-सूचक गहरा परिवर्तन होने लगा । मुसलमान बादशाहोंने अपनी कठोर राजनीति और असहिष्णुवृत्ति से भारतकी अनुपम न्यापत्य कला और विशिष्ट-विशालसाहित्यपर कल्पनातीत वज्राघातके साथ-साथ भारतवासो लोगोको असह्य यत्रणाए देना प्रारम्भ कर दिया था ।

इस्लाम धर्मकी एकमात्र वृद्धिके अभिलाषी अत्याचारी म्लेच्छोंने अपनी अन्याय प्रवृत्तिको चरम सीमा तक पहुचा दी थी । इस्लाम धर्म अस्वीकार करनेवाले आर्योंपर नाना प्रकारके कर लगा दियेगये थे । उनमेसे जजिया नामका कर बडा ही भयानक और अन्यायपूर्ण था । इस करको न देनेवाली आर्य्य-प्रजाके प्राण तक ले लिये जाते थे । जगह-जगह पर मुसलमानोंने आर्य्योके देव मन्दिरोको तुडवा कर उनके स्थान पर * मस्जिदें स्थापनकर आर्य्य प्रजाके हृदयमे मार्मिक वेदना उत्पन्न कर दी थी ।

जिस साहित्यके बिना समाजकी अवस्थिति भी सदेहपूर्णा है, उस सैकड़ो वर्षोंसे सचित्र प्राचीन साहित्य और धर्म-ग्रन्थोको इतनी प्रचुर-सख्यामे जलाकर व कुओमे डालकर नष्ट कर दिया कि जिनक

* इसके प्रमाण-स्वरूप आज भी कई मस्जिदोंमें आर्य्य मन्दिरोके खण्ड-स्तम्भ, और ध्वस्त-शिलालेख दिवारोंमें लगे हुये पाये जाते हैं ।

नाम भी अवशेष नहीं रहे। साहित्य प्रेमियोंसे यह ठिपा नहीं है कि सैकड़ों ग्रन्थोंके अस्तित्वके प्रमाण मिलनेपर भी वे ग्रन्थ अब नहीं मिलते।

आदर्श और उन्नत गिट्पकला के आगार हजारों देवमन्दिर तुड़वाकर टिन्न-भिन्न कर दिये गये। जिनका ध्वसावशेष अब भी कहीं २ अपनी प्राचीन गौरवगाथाका परिचय दे रहा है। उनके धराशायी होनेके एकमात्र कारण मुसलमान अधिकारी ही थे। यह अन्याय प्रवृत्ति पठान शासकोंके समयमें तो बहुत ही बढ़ चुकी थी, जिसका वर्णन श्रीयुक्त वकिमचन्द्र लाहिडी अपनी पुस्तक "सम्राट अकबर" में इस प्रकार करते हैं —

“पाठानदिगेर अत्याचारवे भावत अज्ञान अवश्य प्राप्त है, ये नाशित काना नित) नव नव कूशमेव मोर्ध) ७ अग्रेक आत्मोदित पाकित तादा ७ विरुद्ध है, अदेश शिठेठविडा, निवारणप्रता, छान ७ धर्म मकलह भावत हैते अशुर्हित है, अमथ देश विशाद ७ अरुमाहेश्व दस छात्राय आवृत है।”

अर्थात्—पठानोंके अत्याचारसे भारत श्मशान अवस्थाको प्राप्त हो गया, जो साहित्य वाटिका सर्वदा नये नये पुष्पोंके सौन्दर्य और सुगन्धिसे प्रफुल्लित रहती थी वह भी सूख गई। स्वदेश-हितैपिता, नि स्वार्थ परायणता, ज्ञान और धर्म ये सब भारतवर्षसे अलग हो गये। सारा देश विपाद और अनुत्साहकी काली घटाओंसे आच्छादित हो गया।

एक तो आर्य्य लोग पठानोंके त्राससे त्रस्त हो ही चुके थे दूसरे

तैमूरलङ्गके मयङ्कर आक्रमणसे तो भारतवर्ष को इतनी क्षति पहुची कि जिसका वर्णन किया जाय तो एक छोटा-मोटा ग्रन्थ बन जाय ।

सक्षेपमे इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि उन्होंने अपनी पाशविक लोभ और काम वृत्तिको पूरी करनेके लिये जनहत्या, लूटपाट, और स्त्रियोंका सतीत्व भग आदि अमानुषिक दुष्कृत्य करके भारतीय प्रजाको अत्यन्त कष्ट पहुचानेमे कोई कसर नहीं रखी । तैमूरके इस उपद्रवसे पठानोकी राज्य-सत्ताको धम्का अवश्य ही पहुचा, किन्तु तो भी उन्होंने अपना जाति-स्वभाव न छोडा ।

सिकन्दर लोदी आदि बादशाहोने मन्दिरोंको नष्ट करनेका काम चालू ही रखा । कबिर लावण्यसमय ने क्या ही मार्मिक शब्दोमे कहा है —

जिहा जिहा जाणइ हिन्दू नाम, तिहा तिहा देश उजाडइ गाम ।
हिन्दू नो अवतरियउ काल, जू चालि तू करि सभाल ॥

(स० १५६९ में रचित “विमल प्रबन्ध”)

उसके पश्चात् मुगल बादशाहो के समयमे भी यह अत्याचार ज्योंका त्यों बना रहा । सन् १५३० ई० में बाबरका देहान्त होजाने से उसका पुत्र हुमायूँ चाईस वर्षकी अवस्थामे दिल्लीकी राज-गद्दी पर बैठा, किन्तु अभागे भारतमे तो अज्ञान्ति ही रही । और तो दूर रहा स्वयं हुमायूँ भी कितने ही वर्षों तक पदच्युत होकर देश-देशमे भटकता फिरा इस प्रवासमे उसके एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसने “जलालुद्दीन अकबर” रखा । कुछ समयके पश्चात् हुमायूँ ने युद्ध करके दिल्लीका राज्य फिरसे ले लिया ।

उसकी मृत्युके पीछे अकबर राज-गद्दी पर बैठा, परन्तु इसकी बाल्या-वस्था होनेके कारण कुछ वर्षों तक तो राज्यमे अशान्ति ही रही। क्योंकि उसके विश्वस्त पुरुष वैरम खा के हाथमे ही राज्य व्यवस्थाकी सारी बागडोर थी। वह बड़ा क्रूर और अन्यायी था, इससे प्रजाको सुख मिलना तो दूर ही रहा, स्वयं अकबर ही के विरुद्ध उसने पडयत्रकी रचना की थी, परन्तु अकबरको मालुम हो जाने से उसने अपने सेनापति मुनीम खाँ को युद्धके लिये पजाब भेजकर सन् १५६० ई० मे वैरम खाँ को कैद करवाया।

अब दिल्लीका निष्कण्टक राज्य अकबरके हाथ आ गया। वह लगभग बारह वर्षों तक युद्ध करके अधिकांश भारतका स्वामी होकर सुखपूर्वक राज्य करने लगा। शताब्दियोंके कष्टसे उठी हुई भारत-जनताको उस समय कुछ शान्ति मिली।

भारतकी मध्यकालीन राजनैतिक परिस्थितिके विषयमे ऊपर सक्षिप्त प्रकाश डाला गया है। राजनैतिक और सामाजिक विषयमे परम्पर घनिष्टता होनेके कारणसे उस समयकी सामाजिक परिस्थिति भी अति शोचनीय और विकृत हो गयी थी। अपने पूर्वजोंके गौरवकी रक्षा करना तो दूर रहा, किन्तु अपना जीवन-निर्वाह भी करना आद्यर्थ प्रजाके लिये दुष्कार हो गया था। साहित्य रचनादिका कार्य तो मन्द गतिसे होता ही रहा, लेकिन आचार-विचारोमे वह प्राचीन पवित्रता न रह सकी। अपने-अपने धन, कुटुम्ब और धर्मकी रक्षामे ही जब वे समर्थ न हो सके, तब पारस्परिक प्रेम, संगठन, शिश्नादि आवश्यकीय बातोंका हास होना

स्वाभाविक ही था। बाल-विवाह, पर्देकी प्रथा आदि कतिपय घातक कुरीतियाँ भी इसी समयमें प्रचलित हुई थीं, जिनका खोत अद्यावधि अविच्छिन्न गतिसे चलना आ रहा है।

इस सकटावस्थामें वास्तविक धार्मिकता मुरझा गयी थी। उपरोपरि कष्टोंको सहन करते समय आध्यात्मिक-तत्त्व-चिन्ताका तो अवकाश ही कहा था ? धार्मिक * फिर्काबन्दियोंने बहद सत्ता जमा ली थी। शुष्क क्रियाकाण्ड और व्यर्थके आडम्बरोमें सच्ची धार्मिकता समझी जाने लगी। साधुओंके कठिन आचार-विचारोंमें भी क्रमशः शिथिलनाने प्रवेशकर अपना अड्डा जमा लिया था।

अवनतिके पश्चान् उन्नतिका होना, यह सहज स्वाभाविक नियम है, इसी अटल नियमके अनुसार समय-समयपर विकृत-परिस्थितिको सुधारनेके लिये महापुरुषोंका जन्म हुआ करता है। आवश्यकनानुसार उस समय भी कई महापुरुष अवतीर्ण हुए, जिनमें प्रातः स्मरणीय, पूज्यपाद, महोपकारी असाधारण प्रतिभासम्पन्न हमारे चरित्र-नायक स्वनामधन्य श्री जिनचन्द्रमूरिजी महाराजका एक उल्लेखनीय अग्र-स्थान है।

आर्य्य प्रजाके सुखके हेतु ही आपका मङ्गलमय जन्म हुआ था। आपने मात्र नौ वर्षकी अवस्थामें वैराग्यवासित होकर, भागवती-

* श्रीयुक्त मोहनलालजी देसाई बी० ए० एल० एल० बी० अपने 'चैन साहित्य नो सक्षित इतिहास' में इस प्रकार लिखते हैं —

एकद्वेरे द्वेरेक दर्शा मा—सम्प्रदाय मा भाग तोड—भिन्नता-विच्छिन्नता थएलठे। मुमलमानी काल इतो, लोकमा अनेक जात ना खलभलाट बहु-बहु धया करता, राजस्थिति, व्यापार, रहणी करणी बिगरे बदलावा।'

दीक्षा ग्रहण की, सतरह वर्षकी अवस्थामे गच्छनायक आचार्य-पद प्राप्तकर शीघ्र ही क्रिया-उद्धार करके दुष्कर चरित्रपालकोमे अमणोय हुए। सूरीश्वरने अपने अमित प्रभावसे एरतर गच्छके साधुओकी शिथिलताको दूर हटाकर दूसरोके लिये आदर्श-मार्ग प्रकाशित किया।

जैन शासनकी प्रभावनाके हेतु सम्राट अकबरके विनीत-आमन्त्रणसे सूरी महाराज लाहौर पवार, वहा सम्राटपर अपने सदुपदेशोसे अलौकिक प्रभाव डालकर समस्त भारतीय प्रजाको सुखी बनाया। सम्राटके द्वारा अमारि फरमान प्रकाशित कराकर हिंसा-प्रधान यवन-राजमे भी अहिंसा धर्मका अकथनीय प्रचार करके मूक प्राणियोका हितसाधन किया, विचारे जलचर और स्थलचर पशु भी निर्भय होकर सूरी महाराजका अन्तरङ्ग भावोसे यशोगान करने लगे।

आपने अपने लोकोत्तर प्रभावके कारण उस विगडे हुए समयमे युगान्तर-सा उपस्थित कर दिया, इसीसे आपके सद्गुणोपर मुग्ध होकर सम्राट अकबरने आपको “युग-प्रधान” पदसे अलंकृत किया। जैन तीर्थोकी रक्षाके निमित्त सम्राटसे फरमानपत्र प्रकाशित करवाकर जैन-शासनकी अनुपम सेवा की। आपके जीवनकी उल्लेखनीय घटना एक यह भी है कि स० १६६६ मे सम्राट जहागीरने जब साधु विहार-प्रतिबन्धक एक फरमान जारी किया, तब आप ही ने आगेरे पधारकर उस घातक फरमानको रद्द करवाके जैन शासनकी अभूत-पूर्व प्रभावना की थी। पाठकोको इन सब बातोका परिचय आपकी इस जीवनीसे भली भाँति मिल जायगा।

दूसरा प्रकरण

*सूरि-परम्परा



गवान महावीरकी अविच्छिन्न परम्परामे प्रभावक आचार्य श्री उद्योतनसूरिजी हुए। कहा जाता है कि एक समय उत्तम मुहूर्त देखकर आपने अपने पासमे रहे हुए चौरासी शिष्योंको एक ही समयमे आचार्य पद दिया। उन चौरासी आचार्योंसे चौरासी गच्छोकी स्थापना हुई। सूरिजीके

विनयी शिष्य श्री वर्द्धमान सूरिजी थे। उन्होने स० १०५५ मे

* इस प्रकरणमें सूरि-परम्परा बहुत ही सक्षिप्त लिखी गयी है, क्योंकि इसका हेतु केवल चरित्र-नायककी गुरुपरम्परा बतलानेका ही है। अतः इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंका विशेष परिचय “क्षरतरगच्छपट्टावली समग्र”, से कर लेना चाहिये। श्री वर्द्धमानसूरिजीसे श्रीजिनदत्तसूरिजी पथ्यंतका सविपेश घर्णन ‘गगधरसार्द्ध-शतक बृहद्बृत्ति’ में है, इसी ग्रन्थसे उद्धृत श्री जिन घलभ सूरिजी और श्री जिनदत्त सूरिजीका जीवनचरित्र अपभ्रंश काव्यत्रयी में विशेष ज्ञातव्यके साथ प्रकाशित हो चुका है। श्री जिनदत्त सूरिजीके पश्चात् श्री जिनघन्द्र सूरिजीसे जिनपद्म सूरिजी तकका प्रामाणिक विस्तृत-जीवन हमें उपलब्ध पत्र ८६ की पट्टावलीमें है। उस ग्रन्थसे सा

उपदेशपत्र टोका बनाई और गिरिराज आदूपर मन्त्रीश्वर विमल शाहके कराये हुए भव्य मन्दिरकी स० १०८८ मे प्रतिष्ठा की। आपके जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिमागर सूरिजी नामक दो विद्वान शिष्य थे। एक समय आप अपने शिष्य-मण्डलके साथ अणहिलपुर पत्तनमें पधारे। वहा चैत्य वासियोका विशेष प्रान्त्य

मात्र परिचय हमारे तरफसे प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह' में देयना चाहिये। श्री जिन भद्रसूरिजीका विशेष परिचय 'विपत्ति-त्रिप्रेणी' और 'जैसलमेर-भाण्डागारीय-ग्रन्थाना-सूचि' में प्रकाशित हो चुका है। नयाद्वीवृत्ति काव्यक श्री अभयदेव सूरिजीका जीवन-चरित्र प्रभावक चरित्रमें भी पठनीय है। भाषाप्रयोगमें श्री जिनदत्त सूरि जीवन-चरित्रके दो भाग और 'गणधरसार्द्धशतक भाषान्तर' रत्नमागर भाग दूसरा, 'जैन गूर्जर-कविओ भाग दूसरा आदि ग्रन्थ भी खरतर गच्छके आचार्योंके चरित्र जाननेमें सहायक है।

इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंके 'पद्मस्थापना' और स्वर्गवास-सघत आदि कई बातोंमें पाठान्तर पाये जाते हैं, लेकिन हमने ऐतिहासिक दृष्टिसे जितने तथ्य समझा है, उसे ही लिखा है। विशेष उदाहोद और उचित सशोधन भविष्यमें खरतर गच्छके विशाल इतिहास सम्पादनके समय करनेकी शुभाकाक्षा है।

भगवान महावीरसे श्री उद्योतनसूरिजी तकके आचार्योंके विषयमें गणधर-सार्द्ध-शतक वृद्ध वृत्ति और पद्यावलियोंसे देखना चाहिये। इस परम्पराके आचार्योंके नाम, क्रम और सत्पामे पाठान्तर होनेके कारण हमने नहीं लिखा है। विद्वान लोग इसे विशेष लोच-शोध करके उद्योतन सूरिजी तक की परम्परामें उचित सशोधन करें।

* जिन मन्दिरोंमें ही रहनेवाले, देवद्रव्य उपभोगी, पान खाना आदि माध्वाचारसे विपरीत आचरण करनेवाले थे। इनके विशेष परिचयके लिये देखो सघ पट्टक वृत्ति और सम्बोध सत्तरी प्रकरण।

था, सुविहित साधुओको वहाँ ठहरानेके लिये स्थान तक नहीं मिलता था। सूरिजी समुदाय सहित राज पुरोहितके यहा ठहरे, किन्तु वहा भी उन्हें न ठहरानेके लिये चैत्यवासियोन राजाजा प्राप्त की। सूरिजीके पाण्डित्य और सद्गुणोसे पुरोहितजी मुग्ध हो चुके थे। अतः उन्होंने दुर्लभ राजाको सूरिजीके कठिन साध्वाचार का वर्णन करते हुए उनके गुणोसे परिचित कराया। नृपवर्यने वास्तविक साधुताका निर्णय करनेके लिये चैत्यवासियोके साथ सूरि महाराजका शास्त्रार्थ कराना निश्चय किया।

सं० १०८० मे राजसभामे जिनेश्वर सूरिजीका चैत्यवासियोके साथ शास्त्रार्थ हुआ। फलतः चैत्यवासियोकी पराजय हुई, क्योंकि शास्त्रोक्त विधिको पालन करनेमे वे असमर्थ थे, उनका चरित्र जैनागमोसे विरुद्ध और दूषित था और सत्यकी विजय सन कालमे सुनिश्चित है। इससे महाराज दुर्लभने 'श्रीजिनेश्वर सूरिजीका पञ्च खरतर' अर्थात् सत्य प्रमाणित किया, तभीसे उनका समुदाय खरतर गच्छके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिमागर सूरिजी कठिन चारित्रवान होनेके साथ साथ प्रकाण्ड विद्वान भी थे। श्रीजिनेश्वरसूरिजीने

* खरतर गच्छकी उत्पत्तिका समय कई लोग सं० १२०४ लिखते हैं, लेकिन सं० ११६८ में रचिन पाश्र्वनाथ घग्गि (देवभद्रसूरिभृत) की प्रशस्ति (जेसलमेर भण्डारमे तादपत्रीय ग्रन्थाक २९६) और सं० १६७० की लिखित पट्टावलीमें जिनेश्वर सूरिजीको खरतर विरुद्ध मिलनेका स्पष्ट श्लेष है। इस विषयपर विशेष विचार हम एक स्वतन्त्र निबन्धके रूपमे प्रगट करगे।

मे ही आपके पुण्य प्रभावसे सरस्वती देवी प्रसन्न हुई, जिससे आपकी "वाल-धवल-कुर्वाल सरस्वती" विरुद्धसे प्रसिद्धि हुई। आपका स्वर्गवास स० १४०० के वैसाख शुक्ल १४ के दिन पाटणमे हुआ। आपकी कृतियोंमे "स्थूलिभद्र फाग" उपलब्ध है।

उनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी हुवे। सं० १४१५ मे स्थंभनरु तीर्थमे आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पट्टपर श्रीतरुण प्रभाचार्यने जिनोदयसूरिजीको स्थापित किया। इन्होने अनेक जिनालयोमे जिन-विम्बोकी प्रतिष्ठाये की और कई स्थानोमे अमारि-उद्घोषणा कराके जैन-शासनकी महती प्रभावना की।

उनके पट्टपर श्रीजिनराज सूरिजी हुवे, जो न्याय-शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान थे। श्रीस्वर्णप्रभाचार्य, सुवनरत्नाचार्य और *सागरचन्द्राचार्यको आचार्य पद भी आप ही ने दिया था। सं० १४६१ मे देवलवाडामे आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पट्टपर नार-चन्द्र टिप्पन कर्ता सागरचन्द्राचार्यने x श्रीजिनवर्द्धन सूरिजीको स्थापन किया जिनपर दंडी प्रकोप हो जानेके कारण सघकी आज्ञासे गच्छस्थिति रक्षणार्थ स० १४७५ मे श्रीजिनभद्र सूरिजीको गच्छनायक बनाया।

*इनकी परम्परामे अभी तक यतिवर्ष्य सुमेरमलजी और ऋद्धिकरणजी आदि हैं।

xछरतर गच्छकी विष्पलक शाखाके स्थापक आप ही थे। आपकी स० १४७४ में रचित सप्तपदायी वृत्ति और दूसरा ग्रन्थ वाग्मडालद्वार वृत्ति भी मिलती है।

श्रीजिनभद्रसूरिजी एक प्रतिभाशाली विद्वान व जैन साहित्यकी रक्षा ओर अभिवृद्धि करनेमे अग्रगण्य आचार्य हुवे हैं। आपने जेसलमेर, जालोर, देवगिरि, नागौर, पाटण, माडवगढ, आशापट्टी, कर्णावती, रम्भात आदि स्थानोपर हजारो प्राचीन ग्रन्थ और हजारो नवीन ग्रन्थ लिखा करके भण्डारोमे सुरक्षित किये, जिनके लिए केवल जैन समाज ही नहीं किन्तु सारा साहित्य-ससार भी चिरकृतज्ञ रहेगा। आपने जिन-विम्बोकी प्रतिष्ठा प्रचुर प्रमाणमे की थी, उनमे से सैकड़ो अब भी विद्यमान हैं।

इनका बनाया हुआ जिनसत्तरीप्रकरण (गा २२०) प्राकृत भाषा का उपलब्ध है। इनकी हस्तलिखित सुन्दर "योग-विधि"की प्रति श्रीपूज्यजी (वीकानेर) के संग्रहमे है। स० १५०१ मे तपारत्न कृत पण्डितशतक-वृत्ति का आप ही ने सशोधन किया था।

श्रीभावप्रभाचार्य और कीर्तिरत्नाचार्य को आपने ही आचार्य पदसे अलकृत किया था। स १५१४ मिगसर कृष्ण ६ को कुम्मल-मेरमं आपका स्वगवास हुआ।

आपके पट्टपर श्रीकीर्तिरत्नाचार्य * ने श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको स्थापित किया। श्रीधर्मरत्नमुरि, गुणरत्नसूरि आदिफो इन्होने ही

* आचार्य पद प्राप्तिके पूर्व आपका नाम कीर्तिराज उपाध्याय था। स० १४९९ (?)में आपने "नेमिनाथ महाकाव्य" बनाया। आपकी जीवनीके विषयमें हमारी ओरसे प्रकाशित "ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह" देखें। आपकी परम्पराम, परम गीतार्थ वयोवृद्ध भावार्थ श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजी आदि विद्यमान हैं।

आचार्य पद दिया। स० १५३० मे जैसलमेरमे आपका स्वर्गवास हुआ। इन्होंने अपने पट्टपर स्वहस्तसे श्रीजिनसमुद्रसूरिजीको स्थापन किया। उन्होंने पञ्च-नदी साधन आदि करके सरतर गच्छकी उन्नति की। स० १५३६ मे जैसलमेरके श्रीअष्टापदप्रामादमे प्रतिष्ठा की। स० १५५५ अहमदाबादमे इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनहससूरिजी हुए, जिन्होंने स० १५७३ में बीकानेर मे “आचाराग दीपिका” बनाई। सिकन्दर लोदी बादशाहको चमत्कृत कर पाचसौ (५००) बन्दीजनोंको कारागारसे मुक्त करवाया था। इनका स्वर्गवास स० १५८२ मे पाटणमे हुआ। अपने पट्टपर इन्होंने श्रीजिनमाणिक्यसूरिजीको स्थापित किया। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है —

इनका जन्म स० १५४६ मे कूकड चोपडा गोत्रीय सघपति राउलदेकी धर्म-पत्नी रयणादेवीकी कुक्षिसे हुआ। स० १५६० मे दीक्षा ग्रहण करके शास्त्राभ्यास किया। इनकी विद्वत्ता और योग्यताको देखकर गच्छनायक श्रीजिनहससूरिजीने स० १५८२ मिति माघ शुक्ल ५ को बालाहिक गोत्रीय शाह देवराज कृत नन्दी-महोत्सव पूर्वक आचार्य पद देकर अपने पट्टपर स्थापन किया। इन्होंने गूर्जर, पूर्व, सिन्धु-देश और मारवाडमे विहार किया। स० १५६३ माघ शुक्ल १ गुरुवारको बीकानेरके मन्त्रीश्वर कर्मसिंहके बनवाये हुए श्रीनमिनाथ स्वामीके मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। सिन्धु देशमे शाह धनपति कृत महोत्सवसे पञ्च नदीके पाच पीर आदिको

उस समय गच्छके साधुओंमें शिथिल-आचार बढ गया था। आपको यह असह्य हुआ। और परिग्रह त्यागकर क्रियोद्धार करनेकी तीव्र उत्कण्ठा आपके हृदयमें जागृत हुई। वीकानेरके मन्त्रीश्वर सधामसिंह जी बच्छावतको भी गच्छकी इस परिस्थितिसे महान् असन्तोष था, इसलिये उन्होंने भी सूरि-महाराजकी वीकानेर पधारकर गच्छकी सुव्यवस्था करनेके लिये विनती पत्र भेजा। मन्त्रीश्वरकी इस नम्र-प्रेरणाने सोनेमें सुगन्धका-मा काम किया। श्री जिनमाणिस्य-सूरिजीने भावसे क्रियोद्धार करके यह सोचा कि पहले देरानर जाकर दादा श्री जिनकुशलसूरिजीकी यात्रा करके समस्त परिग्रह

* आपके आज्ञानुवर्ती उपाध्याय कनकतिलक जी आदिने स० १६०६ में क्रिया-उद्धार किया था। परन्तु इससे गच्छके अन्य साधुओंपर प्रभाव न पडा। अतः सधामसिंह मन्त्रीने सारे गच्छकी स्थिति सुधारनेके लिये ही सूरिजीको विनतीपत्र भेजा था।

श्री कनकतिलकोपाध्यायजीका क्रियोद्धार-नियम पत्र हमें उपलब्ध हुआ है। जिसका आशयकीय अंश इस प्रकार है —

‘सर्वत् १६०६ वर्षे ढोवाली दिने श्री विक्रमनगरे ए उविहित गच्छ साधु मार्ग नो स्थिति सूत्र उपरि कीधो, ते समस्त ऋषिभरे प्रमाण करवो ॥’

‘उपा० कनक तिलक वा० भावहर्षगणि वा० श्रीशुभवर्द्धनगणिइ यद्मो साध्याचार कीधो छै।’

इसके बाद वाचन बोलोका वर्णन है, जिसमें साध्याचारकी कठिन क्रिया व्ययम्या लिखी है। उन बोलोको अमान्य करे, उसे ‘पासत्या’ नामसे सम्बोधन किया है। यह पत्र जर्जरित होकर, एव कई स्थानोंमें फटकर टूट हो गया है, इससे यहा सम्पूर्ण नकल न दे सके। यह जीर्ण पत्र मालहू साख दाद गोवा परमउप्रावकके पठनार्थ लिखा गया था और हमारे संग्रहमें है।

त्याग करुंगा और मेरे आज्ञानुयायी साधु-वर्ग को भी शुद्ध साध्व-
चार पालन करने को बाध्य करूंगा। प्रकट प्रभावी दादा कुशलसूरि
जी मुझे इस कार्यमें सफलता दे। इस हेतुसे देरावर पधारे, वहा
गुरु-दर्शन कर जेसलमेरको ओर वापिस आते हुए मार्गमें पिपासा-
परिस्थि ह् उपन्न हुआ, उम दिन आपके पञ्चमीका उपवास था।
किन्तु उस प्रान्तमें जलका बहुत अभाव होनेके कारण कहीं भी
जल न मिला। सन्ध्या हो गई, उमके पञ्चात् थोडा-सा जल मिला।
लोगोंने कहा महाराज ! इसे ग्रहणकर अपनी पिपासा शान्त करें।
उत्तरमें आपने दृढताके साथ कहा—वर्षों तक किये हुए चउविहार
व्रतको क्या एक दिनके लिये भङ्ग कर दू ? यह कदापि नहीं हो
सकता। आयुष्य घटाने-बढानेकी शक्ति तो किसीमें भी नहीं है,
जो भागी भाग सर्वज्ञ प्रभुने देसा है, वही होगा।

इस प्रकार शुभ अध्यवसायो द्वारा व्रत भङ्ग न करके स्वयं अन-
शन कर लिया। स १६१२ मित्ती आषाढ शुक्ला ५ को उपवासके
दिन गुरु महाराज स्वर्ग पधारे। जिस स्थानमें आपका अग्नि-
सस्कार हुआ, वहापर जैनसङ्घने एक सुन्दर स्तूप* बनवाया था,
जिसका अब कुठ पता नहीं चलता।

हमारे चरित्रनायक, श्री जिनचन्द्रसूरिजी आप के ही शिष्य-
रत्न थे। जिनका यथाज्ञात जीवन-चरित्र अगले प्रकरणोंमें 'लिया
जायगा।

* इस स्तूपका उल्लेख पद्मराज कृत "पंच नदी साधन जिनचन्द्रसूरि
गीत" में है सो आगेके प्रकरणमें दिपा जायगा। एक पट्टावलीमें आपका

तीसरा प्रकरण

सूरि-परिचय



रवाड प्रान्तके जोधपुर राज्यमे ग्नेतमर* नामक एक रमणीय ग्राम है। वहा ओसवाल जातीय रीहड गोत्रवाले श्रीवन्तशाह नामक श्रेष्ठि निवास करते थे। उनकी सुशीला धर्म-पत्नीका नाम श्रियादेवी था। आनन्द पूर्णक

आचरुधर्म पालन करते हुये, श्रिया देवीकी रत्नगर्भा कुक्षिमे एक पुण्य-

* सरसर गच्छकी अधिकाँश पटावलिश्रींम श्रीवन्त शाहका निवास-स्थान तिमरोके पार्श्व-वर्ती बडलो ग्राम कित्वा है, किन्तु उनसे भी अधिक प्राचीन, कवि कनकसोमकृत "श्रीजिनचन्द्रसूरि गीत," जो कि स० १६२८ में कविके द्वारा लिखित उपलब्ध है, उसमें इस प्रकार लिखा है—
"मारवाडि देश उदार, तिहा धरमको विस्तार, तिहा खेतसर मक्षारि।

ओम वश कड सिगगार, सिरवन्तशाह उदार, तस सिरिय देवी नार ॥२॥
सुख विलमता दिन-दिन्न, पुण्यवन्त गरभ उत्पन्न नव मास जिहीं पठिपुन्न
जनमिया पुा रतन्न, तिहा खरचिया बहु धन्न, सब लोक कइह धन घन्ना॥३

इसमें खेतसर नाम स्पष्ट लिखा है। प्राचीन होनेसे हमने भी खेतसर का ही उल्लेख किया है।

वान् जीव उत्तम गतिसे च्यवन करके अग्रतीर्ण हुआ । गर्भकाल व्यतीत होनेपर सम्प्रत् १५६५ के मिति : चैत्र कृष्ण १२ के दिन शुभ लग्ने कामदेवके सन्तान रूप-लावण्य वाला, सूर्यके समान तेजस्वी, शुभ लक्षणयुक्त एक पुत्ररत्न जन्मा । इस शुभ अवसरके उपलक्ष्यमें श्रेष्ठिने बहुतसा द्रव्य व्यय करके आनन्द उत्सव मनाया । दसवें दिन उम बालकका नाम "सुलतान कुमार"† रखा गया । वे "सुलतान कुमार" दिन पर दिन शुक्ल पक्षके चन्द्रमाकी भाति बढ़ने लगे । माता-पिताने उन्हें बाल्यकाल ही में सकल कलाओंका अभ्यास कराके निपुण बनाया ।

वि० स० १६०४* में सरतर-गच्छनायक श्रीजिनमाणिस्य सूरिजी महाराज अपने शिष्य समुदायके साथ वहा पधारे । उनके पधारनेसे खेतमरमे धर्मकी अच्छी जागृति हुई । वहाके श्रावक दत्त-चित्त होकर वर्मकार्यमें प्रवृत्त हुए । उनका उपदेश-वचनामृत श्रवण कर "सुलतान-कुमार"के निर्मल चित्तमें वैराग्य भावना जागृत हुई । वे ससारके सुखोंकी असारताको जानने लगे और उन्होंने सच्चे सुखको देनेवाले चारित्र्य धर्मका पालन करनेके लिये दीक्षा लेनेका दृढ निश्चय कर लिया ।

* विहार पत्र न० २ में मिति वैसाख शुक्ल १२ लिखा है ।

† नाम थापना सुलतान, नित नित घटतइ धान, जगमें अमली मान ।
(स० १६२८ लि० कनकसोम कृत जिनचन्द्रसूरिगीत)

* विहार-पत्र न० २ में स० १६०२ लिखा है, किन्तु रत्ननिधान कृत गीत, युगप्रधाननिर्वाण रास आदिमें सर्वत्र ही स० १६०४ लिखा है, अतः यही ठीक है । स० १६०२ छेत्तककी भूलसे ही लिखा गया ज्ञात होता है ।

अब सुलतान कुमार माताके पाम आकर दीक्षा लेनेकी आज्ञा मागने लगे । उन्होंने निवेदन किया "माताजी ! यह ससार असार है । समस्त पौद्गलिक सुख क्षणभंगुर हैं , इसलिए सच्चा आत्मिक सुख प्राप्त करनेके लिए मैं श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी महाराजके पास दीक्षा लेकर साधु हूँगा । अतएव आप कृपा कर अनुमति दीजिये ।" माताने कहा—“वेश अभी तुम बालक हो । यौवनावस्थामे प्रवेश करना है, चारित्र्यका पालन करना महान् दुष्कर्ष है ; यडे होकर पीछे चारित्र्य ले लेना,” इत्यादि वचनोसे साधु मार्गकी कठिनता बतलाई और दीक्षा लेनेकी मनाही की, किन्तु वैराग्य वासित हृदयवाले सुलतानकुमार अब माननेवाले थे । उन्होने युक्तियोसे माताके कथनोका उत्तर देकर अन्तमें अनुमति ले ही ली।

सुलतान कुमारने स० १६०४ मे श्रीजिनमाणिक्य सूरिजी के पाम दीक्षा ली उनका दीक्षा-नाम गुरुमहाराज ने सुमतिधीर रखा । उस समय उनकी अवस्था केवल ६ ही वर्ष की थी, किन्तु बिल्क्षण बुद्धिवाले और गुरुभक्त होनेके कारण वे अल्पकाल ही मे ११ अगादि पढकर सकल शास्त्रोके पारगत हुवे । शास्त्रवाद व्याख्यान कलादिमे निपुण होकर अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के साथ देश विदेशमे विचरने लगे ।

देराडरसे जैसलमेर आते हुए स० १६१२ मितो आपाठ शुक्ला पश्चमी को श्री जिनमाणिक्य सूरिजी का देहान्त हो जानेसे अन्य साधुओके साथ विहार करके श्री सुमतिधीरजी जैसलमेर पधारे । अन्त समयमे श्री जिनमाणिक्य सूरिजी के साथ २४ शिष्य वे परन्तु

वे संयोगवश किसीको अपने पट्ट पर स्थापित न कर सके थे। जैसलमेर आनेके पश्चात् इस विषयमें परस्पर मतभेद हुआ, अन्तमें समस्त सब और वहाके राजल श्रीमालदेवजी (राजकाल सं० १६०७ से १६१८ तक) ने वेगट गच्छके श्रीपूज्य - श्रीगुणप्रभ सूरिजी की

* श्रीगुणप्रभसूरि—परतर गच्छकी वेगट शाखाके श्रीजिनमेस्तूरिके शिष्य थे। इनके विषयमें उक्त शाखाकी पट्टावलीमें निम्नलिखित वर्णन लिखा है —

तत्पश्चे ६१षा श्रीगुणप्रभसूरि, तेपिण महागीतारथ थया, सवा करोड रूपीया खरची गागा गुगदत्त राजसीह पद ठवणो कियो, याचकाँ नै घूडा नै चूनडी पहिराया, पाच सोनैरी पुस्तक, पाच रूपेरो पुस्तक लिखावी गुरों ने विहराव्या एकदा जैसलमेर रा राजल हरराजकी राणी हरपम दे तेहनइ पुत्र कोइ नहीं, तिवारै गुरा आग आधी, दिन ३ हठ झाली बैठी, तिवारै तीजे दिन गुरे ओघानी दसी (फली) दीधी, कखो, जा पुत्र थास्यै। पिण नाम "भीम" दीजै तिवारै राणीइ उठता लोभ वशे बीजी फली तोडी लीधी तिवारइ गुरे कयो, मागी लेत तो रूडी पण अम्हारी दसी खाली नहीं जायइ पुत्र थास्यै नाम अजुंन दीजइ, आठ वर्ष जीवस्यइ। द्विचइ भीम पहिलो जायो एकदा परणवा गयो तिवारइ परणी पातिस्याइ पासइ आब्यौ, पातिस्या कखौ राणो नवरोजे मेल्हइ। तिवारइ भीमे न मोकली यत

“भीम न सूकी भाटिइ, नवरोजे नारी।

बीजाठाकुर वापडा करमूके दारी ॥”

पह्यौ भीम अवतारीक थयौ ए प्रथमज अवदात। द्विचइ एकदा श्रीजिन-माणिक्य सूरि देराउरनी यानाहं गया, चाटइ काल प्रापति थया, चेला साथइ चउथीस हुँवा पण पाट थापी सम्या नहीं, तिवारइ चेला पाछा, वाद करवा लाग़ा, तिवारइ सहू मिली गुणप्रभ सूर पासै आब्यो

सम्मतिसे श्री सुमतिधीरजी को ही आचार्य पद के सर्वथा योग्य समझ कर उन्हें ही इस पद पर स्थापित करना निश्चित किया। राउल श्रीमालदेवजी खरतर गच्छके अनन्य भक्त थे, इसलिए उन्होंने

कह्यौ जेहनड तुम्हे पाट धापस्यो ते प्रमाण। तिवारइ गुरे लहुडो चेलौ छत्तान नामि जाति रीहड तेहनड धाप्यउ, नाम जिनचदसुरि दीघउ। तिवारइ बडो चेलो धन्नउ नीसयो जाइ, पातिस्याइ नड मिली जेशलमेर ओलखी देसाडी, तदा जेशलमेर कागल आयो तिवारइ रावल सहु सर्व भावी गुरो नइ कख्यो। गुगे कख्यो “भाबिल तप घर घरि करउ अनइ ए जाप जपउ” “भाबिल अमृत धाणी, धन्नो हुओ धूल धाणी” ते तिमज धूल धाणी हुओ, ए बीजो भषटात। द्विवे एकदा श्रीजेशलमेरइ तीन वरसी दुकाल पड्यो, तिवारे राउल भीमइं गुरु धीनव्या, तिवारइ गुरे तीन उपवास करी घाम पदागुष्ट धारइ करी कायोत्तमर्ग करी २२००) रुपइया रौ दीप धूप होम जाग करायो, तीजै दिन घरणेन्द्र प्रत्यक्ष थयो, घर मागि। कख्यौ मेह कीजइ तिवारइ घरणेन्द्र कहै सवा पुहर दिन चढतै मेह आविस्यइ काइ निशधौ राखिजो पारणो करीजो, गुरु कख्यौ काठली भरिये गडिसर भरिये ए सकेत छै। इम कही देवता विसरज्यौ द्विवइ प्रभाते पारणो कीघो, सवा पुहर दिन चढते बादला उपइया गाज बीज घटा करि मूमलधार घरसवा लागो गुरे चेलो १ अने १ धावरु हाथे काठली देइ येसाइया इम आधो काठली थइ, काठली नाति पाछा उतरया हैवति खमि न सके गटोसर'ढोड घरस रौ पाणी आयो, तिवारइ रावल भीम गुरो नतेडी पटोली पन्व शन्टो पचोल दीधौ कख्यो जे बेगटा जिना पटोली करणी बीजो कोइ करण न पावै पन्व शन्टो बजावण न पावइ इम मान महत्व दीघउ एइवा प्रभाविक स० १५८५ पाटपतिथया स० १६५८ स्वर्ग हया।”

स्वयं वडे समारोहके साथ नदी महोत्सव कराके * श्री सुमतिधीरजी को सं० १६१२ भाद्रवा शुक्ल ६ गुरुवारके दिन आचार्य पद दिलाया । वेगड गच्छके आचार्य श्री गुणप्रभ सूरिजी ने एन्हें सूरि मंत्र दिया । श्री जिनहंससूरिजी के विद्वान शिष्य महोपाध्याय श्री पुण्यसागरजी ने सूरि पदके योग, तप आदि कराये इसका उल्लेख एक प्राचीन पत्र मे है —

स्वस्ति श्री ॥ श्री पूज्य जी नउ कागल १ हिवणाइज आव्यउ कागल १ श्रीसघ भणी आव्यउ । वाच्या, समाचार जाण्या । तत्र लिख्या जे पद स्थापना विधि लिगी मूकीज्यो । तप विगारि ॥ श्री पूज्य श्री जिनचन्द्रसूरि भणी भाद्रवा माहे जेसलमेर रइ धणी सूरि मन्त्र दिवराव्यउ । पठइ तप उपाध्याय श्री पुण्यसागरजी पासे बह्या ण वात वडाँ पासे साभली छइ ॥ परं हिवणा तत्र देश माँहे रहता भला नहीं छइ । हिवणा इज । राजनगर थी राजा पासइ ब्राह्मण १ सावलदास रउ मूक्तिउ लहणा लेवा भणी आयोउइ तियइ कहिउ । सावलदासउ अहम्मदाजाद रा भट्टारिकिया आवरु तेडि नइ कह्यो । गच्छ भेलो करउ सु गच्छ भेलउ करिस्यइ । आ वात थे पण साभलि हुस्यइ । अत्र लिखो नहीं सु किम । इस्या वाता भत्या नहीं तुरत विनती करिस्यइ । चउमास उनरी पठइ जोरावरी करी तुहा नइ

* सं० १६२८ लिखित “कनकसोम” कृत गीतमं लिखा है—

“सोलहसइ सघत वार, जिन मागिस्यसूरि पद धार, जिन सूरिमन्त्र उच्चार ।
धीरकलशकृत गहूलोमे भी —

“भाद्रवा छठि नवमी दिनइ, जेमलमेर मझारु हे

मघ सपल गुर भाइसइ, धापइ नाम अपारु हे ॥३॥”

राख्या तउ कुण आडो आवस्यइ । ते भई आ पिण तत्र आवी विरूप
 कीधउ तउ क्रिम थास्यइ । विचार पहिलउ कीजइ तउ भला छइ ।
 मारवाडि माहे । कोई एक आवक पद ठवणा कराविवा बालउ
 मिलाइज करिस्यइ । चउमास माहे नहीं वोळइ । चउमास उत्तरी
 तुरत विरूप करिस्यइ । थारा भाग्य उइ भला थास्यइ । पर अम्हा-
 नइ घणा मामला पड्या छइ । म्हे वीहा छा । तथा सुरि मन्त्र कियड
 पासि तत्र लेस्यउ । अश्वकीय (?) भट्टारक । आचार्य । इया पासड
 आपा नइ लेना भलउ नहीं । वीजउ कुण देस्यड । ते पिण समाचार
 देज्यो । विधि लिपता वेला काड नहीं लागती ॥ विधिप्रपा मॉहे
 विधि वात रूप लिपी छड ॥ डोंढ पत्र छड ॥ प० हर्षसोम योग्यम् ।
 पण्डित होज्यो । जउ जोरावरि माडइ तउ ठाणा २२ श्री पूज्या
 भणी चलाइ देज्यो । पउइ थे चालिज्यो । रखे ढीला थाड । इतरा
 सोम आवज्यो । तथा थे लिप्या जे फागुण चौमासा पळी आदेश
 देस्या । तत्रार्थे । अत्र आया पळी जोग्या जोग्य विचारो आदेशरी
 वात करज्यो प० भात प्रमोद भणी तेडाविज्यो । ते सर्व रूडी परड
 जाणिइ छइ । मइ पिण कागल दीधउ छइ । जाणा छा पारणइ तुहा
 पासि आवस्यइ । सदा वदना जाणिज्यो ॥ सात्रचेत रहिज्यो ॥
 तथा तुहा नइ गच्छ माहे जियइ यति रउ कागल नथी आव्यड ।
 जियइ सध रउ पिण नहीं आयो । ते लिपिज्यो । मारवाडि वेगा
 पधारिज्यो । कागलरा समाचार उत्तर सहु लिपिज्यो । सर्वोपि
 साधुगोंडुनम्य ॥ गुजरात रा जती गुजरात माहिंज रासिज्यो ।
 साधि मत आणउ ॥ सघाडा ७ छै ॥

आचार्यपद प्राप्तिके अनन्तर हमारे चरित्र नायक सुमतिधीरजी श्रीजिनचन्द्रसूरि नामसे प्रसिद्ध हुये । जिसदिन उन्हे आचार्यपद मिला उसी रात्रिको उनके गुरु श्री जिनमाणिक्य सूरिजी ने स्वप्नमे प्रत्यक्ष दर्शन दिया और समझरणको -- पुस्तकमे रहे हुए माम्राय सूरि मत्र पत्रकी ओर संकेत करके अदृश्य हो गये । स० १६१२ का चतुर्मास जैसलमेर हुआ । मंत्री श्री सप्रामर्म्मिह बच्छावत ने सूरिजी को वोकानेर पधारनेके लिये विनती भेजी ।

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे सूरिजी जैसलमेरसे विहार करके वोकानेर पवारे । स० १६१३ का चतुर्मास वहाँ किया । वोकानेर का प्राचीन-उपाश्रय शिथिलाचारी यतियोके द्वारा रोका हुआ देखकर मंत्रीशय ने अपनी अश्वशालामे ही सूरिजी का चतुर्मास कराया । वह स्थान आजकल राघडी चोकमे बड़ा उपाश्रयके नामसे प्रसिद्ध है ।

सूरि जी गच्छमे फैले हुये शिथिलाचारको देखकर सहम गये । जिम आत्म-सिद्धिके उद्देश्यसे चारित्र धर्मका वेप ग्रहण किया गया, उस आदर्शको यथावन् न पालना यह लोभ-वञ्चनाके साथ-साथ आत्म-वञ्चना भी है । गच्छका सुवार करनेके लिये गच्छनायकको क्रिया उद्धार करना अनिवार्य है । इत्यादि विचार करते हुये उनमें

* देखो क्षमाकर्याणजी कृत सरतर गच्छ पटावली आदि ।

x यह उपाश्रय, बाजारमें श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरके पास था, जहा आजकल मथेरण लोग निवास करते हैं । कहा जाता है कि (१) चिन्तामणिजीके मन्दिर (२) उपाश्रय और (३) वोकानेरके पुराने किलेकी नींव एक साथ ढाली गयी थी ।

आत्मवल और चारित्रकी अमोघ शक्तियोंका उद्गम होने लगा । अन्त में उनके हृदयमें क्रियोद्धार करनेकी प्रबल भावना जागृत हुई, उन्होंने मोचा त्यागके बिना सफलता नहीं है । शुद्ध चरित्र पालन करनेसे ही इष्ट ध्येयकी सिद्धि हो सकती है । परिगृह धारी रहनेवाला व्यक्ति कभी स्वतंत्र सत्योपदेश नहीं दे सकता । और न जनता पर प्रभाव ही जमा सकता है, उसे सदैव स्वार्थ-पश दबना पड़ता है । अनपेक्ष मुझे समस्त प्रकारसे सुगम और कल्याणका दायक क्रियोद्धार करना ही श्रेय है । इत्यादि विचार करके स० १६१४*मिती चैत्र(कृष्णा) ७ को क्रियोद्धार किया । इस शुभ अवसर पर मन्त्रीश्वर श्रीसंग्रामसिंह वच्छावत ने बहुतसा द्रव्य व्यय करके उत्सव किया । उस समय वीकानेरमें ३०० गृही-यति ऽ थे, जिनमें से १६ शिष्यों ने सर्वथा परिगृह त्यागकर सूरिजी के पास पंच महाग्रन्थ धारण किये, बाकी सन मथेरण × गृहस्थ मथे (मस्तरुपर) ऋण (पगडी धारण की) अर्थात् चारित्र पालनेमें असमर्थ=मथेरण हुव । वे अवतक लेखक और चित्रकारका काम करते हैं, किन्तु खेद है उनमेंसे कई लोग जैन धर्म छोड़कर विधर्मों भी हो गए हैं । स० १६१४ का चतुर्मास सूरिजी ने वीकानेरमें ही किया, उस समय गच्छकी सुज्यबस्था और साधुओंको उत्कृष्ट-चारित्र पालनेके लिये कई कठोर नियम बनाये उनका अवलोकन करनेसे तत्कालीन साधुआका चारित्र कितना उत्कृष्ट था यह भलीभांति ज्ञात हो जाता है । *

* खगतरगच्छ पट्टावली न० १ म क्रियोद्धारका स० १६१३ लिखत है, सभय है कि कत्ताने गुनरातो पद्धतिका अनुकरण किया हो, विहारपत्रम तो स० १६१४ लिखा है ।

+ ऐसा श्री जिन कृपाचन्द्र सूरिजी महाराजका कथन है ।

× ये लोग अपनेको मयेन या महात्मा लिखते हैं

* व्ययस्था-पत्रके लिये देखो "परिशिष्ट"

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे वहाँ से विहार करके आप महेवा पवारे । सं० १६१५ का चतुर्मास वहाँ किया । विहार पत्र न० २ में “तिहा छम्मासी तप” लिखा है, संभव है कि सूरि महाराज या और किसीने छम्मासी तप किया हो । सं० १६१६ का चतुर्मास जैसलमेरमें किया । विहार पत्र न० २ में “वीदा०” लिखा है, इसका आशय हमारी सभ्रममें नहीं आता । चतुर्मास पूर्ण हो जाने पर वहासे विहार करके आप गुजरात देशमें पवारे ।

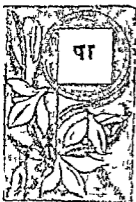
सं० १६१६ में माघ शुक्ला ११ को वीकानेरमें निकले हुवे यात्री-सघने महातीर्थ श्रीगन्धुख्यकी यात्रा करके वापस लौटते हुवे पाटण में श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराजके पुनीत दर्शन किये थे । जिसका उल्लेख कविगुणरगकन “चैत्य परिपाटी रतवन” में इस प्रकार है —
 “वडली नयर मझारि, दुइ चेइ नम्या पेरत्यउ पाटण सिर तिलउ
 ए ॥२३॥ तिहि जिणिवर ना वृन्द, देहरासर पुनि, चग्च्या चित्त
 चोसइ करी ए । तिहा श्रीजिनचन्द्रसूरि, विहरन्ता गुरु वद्या
 मनह उच्छन धरी ए ॥”

सं० १६१७ का चतुर्मास सूरि-महाराजने पाटणमें किया, इस चतुर्मास में एक महत्त्वकी घटना हुई, जिसका वर्णन अगले प्रकरणमें किया जायगा ।



चौथा प्रकरण

पाटणमें चर्चा-जय



टण नगर गुजरात प्रान्तकी प्राचीन राजधानी है। इस नगरको बसानेका श्रेय नरपति वनराज चावडाको है। गुजरातके इतिहासमें इस नगरका बहुत ऊचा स्थान है। धर्मिष्ठ महाराज दुर्लभराजके समक्ष श्रीजिनेश्वर-सूरिजी ने चैत्य-वासियोको शास्त्रार्थमें जीत कर "प्रतर" विरुद्ध भी इसी नगरमें प्राप्त

किया था, जिसका वर्णन दूसरे प्रकरणमें किया जा चुका है। सम्वत् १६१७ में हमारे चरित्र नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी महाराज ने पाटणमें चातुर्मास किया। उस समय तप गच्छीय फडाप्रही-शिरोमणि, और उप-स्वभावी उ० धर्मसागरजी* ने लोगोके समक्ष

* श्री मोहालाल द० देसाई BALLB अपने ग्रन्थ "जैन साहित्य नो सक्षित इतिहासके पृ० १६२ में इस प्रकार लिखते हैं — "तेओ घणा विद्वान् पण अति उप-स्वभावी अने दंड आप्रही (प्रखर स्वसम्प्रदायी) इता।" धर्मसागरे तपा गच्छ साचो नै धीचा गच्छो सोटा जगाघो तेमना

कहा कि नवाङ्गी-वृत्ति कर्ता श्रीअभयदेव सूरिजी सरतर गच्छमे नहीं हुए हैं, इस गच्छकी तो उत्पत्ति ही स० १२०४ मे हुई हे ।” उन्होने केवल यह कहा ही नहीं बल्कि सरतर गच्छ वालोको उत्सूत्र-भाषी सिद्ध करनेके लिये “ओष्ट्रक-मतोत्सूत्र दीपिका” व “तत्व-तरङ्गिणी वृत्ति” (कुमति-कद कुदाल) आदि खडनात्मक विपैला-साहित्य बना कर जैन शासनमे कलहका विष बोज अकुरित किया ।

इससे पहले* किसीने यह बात नहीं सुनी थी कि अभयदेवसूरि जी सरतर गच्छमे नहीं हुए । धर्मसागरजी के इस कुचेष्टा-पूर्ण अभूतपूर्व प्रतिपादनसे सारे जैन-शासनमे भारी हलचल मच गई । चारो तरफसे इसके प्रतिवाद होने लगे, सबके हृदयमे इस विष-वृषको

पर घगा प्रहारो उग्र-भाषा मा ग्रन्थोनामे तत्वतरगिणो, प्रवचन परीक्षा— कुमति मत कुदाल रचो कयो खरतरो साथे पाटण मा स० १६१७ मा अभयदेव सूरि सरतर गच्छना न हता—एवोप्रयल याद कयो ते घर्णे तेमने श्वेताम्बर सम्प्रदाय ना जुदा जुदा गच्छना आचार्यो ए उत्सूत्र प्ररूपणा ना कारणे जिन शासन थो वदिष्कृत कयो । तपागच्छ ना नायक विजयदान सूरि ए ‘कुमति-मत-कुदाल’ नै जल-शरण कराव्यो अने जाहिरनामु काढो सात बोलनी आज्ञा काढी । एऊ बीजा मन घालाने घाद विघादनो अथडा-मण करता बटकाव्या” “धर्म सागरे सूरि श्री नै चतुर्विधि संघ समक्ष मिच्छामि-दुक्कड आप्यो, तेमनो माफी मांगी ।”

* उस समय तक श्री अभयदेव सूरिजीको “खरतरगच्छीय” ही सब गच्छवाले मानते थे । दूसरोकी बात ही क्या ? स्वयं तपा-गच्छीय आचार्योने ही अपने ग्रन्थोमे श्री अभय देव सूरिजीको स्पष्ट खरतर गच्छीय सम्बो-धित कर गुणावदात गाये हैं । यथा —

उच्छेद करनेकी महत्वाकांक्षा लगी, ताकि भविष्यमें भगवान् वीरकी सन्ततिमें परस्पर द्वेष, कलह और अमन्तोप न फैले।

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को खरतर गच्छका सारा उत्तरदायित्व था, अतः खरतर गच्छके प्रति किये हुए,

सधत् १५०३ तपागच्छीय सोमधम गणि विरचित उपदेश सत्तरोम—

पुरा श्री पत्तने राज्य, कुर्माणे भीम भूपतौ ।

अभूवन् भूतला ख्याता, श्रीजितेश्वरसूय ॥२॥

सूरयोऽभयदेवाख्यास्तेषा पट्टे दिशि पर ।

तेभ्य प्रतिष्ठायापन्नो गच्छ खरतराभिध ॥३॥

तपागच्छीय कृत कल्पान्तवाच्यमें —

“नवागो वृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी ये स्थम्भगड सेडो नदी नह उपकण्ठ श्री पार्श्वनाथ तणी स्तुति करी धरणेन्द्र प्रत्यक्ष कीधउ । शरीर तणउ उत्कृष्टउ रोग उपशमावथो । तत्तिशप्य श्रीजिनवल्लभ सूरि हुवा । चारित्र निर्मल अनेक प्रथ तणउ निमाण कीधउ । इणि अनुक्रमि खरतर पक्षइ सूरिवर अनेक हुया सातिशय ।”

तप गच्छके आचार्य श्री विजयदान सूरिजी और श्री हीरविजय सूरि भी श्रीअभयदेवसूरिजीको खरतर गच्छमें हुए मानते थे । और इसके लिए लिखित सम्मति भी देनेकी प्रस्तुत हुए, किन्तु पीछे से धर्मसागरके कपट-प्रपञ्चमें आकर उन्होंने खरतर गच्छवालोंको लिखित सम्मति देना अव्योकार कर दिया । हम आशयको धर्मसागरजीक किसी शिष्यने इस प्रकार व्यक्त किया है —

“हे पूज्य ! श्री अभयदेव सूरि कुण गच्छ मध्ये हुआ ? तिनारइ श्री पूज्यजी आम कीधु जे प्रघोपइ तो खरतर कहवरावइ छइ, ते साभली खर-

धर्मसागरके अनुचित आक्षेपोका निराकरण करना उन्हें परमावश्यक जान पडा। क्योंकि ऐसे प्रमद्वमे मौन रहनेसे भविष्यमे विशेष अहित होना सुनिश्चित था। इसीलिये मित्ती कार्तिक शुक्ला ४ के

तर बोल्या जे पूज्य। एतलु लिखि आपउ। जेम दद नासइ इम कही कागल आप्यउ तिवारइ आचार्य श्रीहीरविजयसूरि नइ श्रीपूज्यजोइ आज्ञा दीधी जे लिखि आपो, तिवारइ श्री आचार्यजी ए कह्यु जे हिवणा तउ ध्यान बयसहु छु मध्यान्ह पछी लिखि आपउ इम कही पाट्या घाल्या पठइ मध्यान्ह पछी बलि सर्व खरतर मिलि आव्या श्री पूज्य श्री आचार्यजी पासे जे अम्ह नइ लिखि आपउ एहवइ समइ स० उदयकरण घ० पासदत्त प्रमुख श्रावक पूज्या लागी भगवन्जी स्यु लिखि आपो छो ? तिवारइ श्री पूज्यजी कहिवा लाग्या जे पाटण माँहि एरतर अनइ श्री उपाध्याय धर्मसागर गणिनइ माँहो माँहे चरचा अभय देवसूरि सम्बन्धी चरचा थाई छइ अनइ इहा ना एरतर लिख्यु मागइ छइ अनइ प्रबोपइ श्री अभयदेव सूरि एरतर कहवरावइ छइ ते लिख्यु मागइ छइ।”

×	×	×	×	श्री उपाध्यायजी
(धर्मसागर)	नौ नफरइ लेख आप्यो	×	×	श्री अभय
देव सूरि	एरतर नथी कहा	×	×	श्रीपूज्य श्रीविजयदान
सूरि आचार्य श्रीहीरविजय	सूरिए वाच्या पठइ	विचार	कीधो	×
×	×	एरतर नइ लिखि न आपवु ॥		

[आत्मानन्द प्रकाश वर्ष १९ अक ३—४ पृ० ८७।८८]

धर्मसागरकी नवीन प्ररूपणाके कारण अब भी कई लोग श्री अभयदेव सूरिजी एरतर गच्छमें नहीं हुए ऐसा मानते हैं उनको नि सार युक्ति यह है कि “श्री अभयदेव सूरिजीने अपने ग्रथोंमें अपना गच्छ एरतर नहीं

जिन आपने पाटणमे स्थित सभी गन्ठोके आचार्य व साधुओको एकत्र किया। वहा शास्त्रार्थ × के लिये घर्मसागरजी को बुलाया

लिखा"। किन्तु इस युक्तिसे उनका खरतर गच्छमें होना निषेध नहीं हो सकता। क्योंकि तपागच्छके देवेन्द्र सूरिजी आदिने भी अपने ग्रंथोंमें अपने गच्छका नाम तप गच्छ नहीं लिखकर चित्रवाल-गच्छ लिखा है। क्या तप गच्छवाले इन्हें तपागच्छीय नहीं मानते? स० ११६८ में अभयदेव सूरिजीके प्रशिष्य देव भद्र सूरिजीने जिनेश्वर सूरिजीको खरतर विरुद्ध मिला लिखा है। तब श्री जिनेश्वर सूरिजीके शिष्य श्री अभयदेव सूरिजीका खरतर गच्छमें होना स्वतः सिद्ध है।

× सवत सोल सतरोतरइ, पाटण नगर मझार।

श्रीगुरु पहुता विहरता, सहु भवियण मन इर्प अपार ॥ ७ ॥

केइ कुमति कलकिया, बोळइ सूत्र अरथ विपरीत।

निन गुरु भापित ओलवड तिहा, कणि श्रीगुरु पाम्यो जीत ॥ ८ ॥

ककाली मही मूलगो पण्डित तणो वहे अभिमान।

सागर छीलर सम थयो, जिहि उदयो खरतर गुरु भाण ॥ ९ ॥

[विधि-स्थानक धौपड]

सवत सोल सतरोतरइ, पाटण नगर मझार।

मेलि दरशन सहु सम्मत, ग्रन्थनी साखि साधार ॥९॥

पूरव विर उजवालियड, सापि दाखइ सहु लोकरे।

तेज खरतर सहगुरु तणड, नपिमति ते थयड फोकर ॥१०॥

ऋपि मति जे हुतो ककलो, बोलतो आल पपाल रे।

पष्ट कीधौ खरतर गुरे, जाणइ चाल गोपाल रे ॥११॥

(जिनचन्द्र सूरि गीत गा० ९ से)

पाटण सोल सतरोतरइ च्यार असी गच्छ साखिरे।

खरतर विरुद्ध दीपाविदठ आगम अक्षर दान्बि रे ॥११॥

गया, किन्तु वे नहीं आये, उपाश्रयके द्वार बन्द करके X छिप गये।

मिती कार्तिक शुक्ला ७ शुक्रवार को फिर सभा एकत्र हुई, वर्मसागरजी को बुलाया गया किन्तु 'चोर रा पग कच्चा हुवे' की कहावतके अनुसार वे कब आनेको ये। आखिर एकत्र महानुभावोके समक्ष श्रीजिनचन्द्र सूरिजी ने यह प्रश्न रखा कि "अभयदेव सूरिजी किम गच्छमे हुये हैं? आपलोग निर्णय करें। उपस्थित विद्वत् मण्डलीने ४१ प्राचीन ग्रन्थोके प्रमाणसे यही निश्चय किया कि जिन महान् प्रभावक आचार्यको चौरासी गच्छ वाले पूज्य दृष्टिसे देखते हैं, वे नग्राङ्गी वृत्ति कर्ता व स्थम्भनक पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रकट करने वाले श्री अभयदेव मूरिजी खरतर गच्छमे ही हुए हैं।"

इस निर्णयका एक मत-पत्र लिखा गया, जिसमे समस्त आचार्यों तथा मुनियोके हस्ताक्षर हुए। मिती कार्तिक शुक्ला १३ को सब गच्छवालो ने मिलकर धर्मसागरजी को असत्य, उत्सूत्र भाषी समझ कर निन्दव प्रमाणित किया, और वे जैन सघसे वहिष्कृत कर दिये गये।

उपरोक्त आशयके मत-पत्र की नकल यहा दी जाती है, जिससे इन बातों का भलीभांति परिचय मिल जायगा।

X पाटण मोंहि पचासरउ, पाढा पाखलि जे पोसाल।

पौल देइ पैसो रहउ, जे मुखि लावत आल पपाल ॥१०॥

गच्छ चौरासी मेलवी, पच शास्त्र नी साखि उदार।

जीत्यउ खरतर राजियउ, एस हु को जाणइ ससार ॥११॥

(विधित्थानक चौपाई गा० १७ से)

॥ मत-पत्रमिटम् ॥ *

स्वस्ति श्री सक्त् १६१७ वर्षे कार्तिक सुदी ७ सप्तमी दिने शुक्रवारं श्री पाटण महानगरे श्री खरतर गच्छ नायक वादि-कद कुहाल भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी चउमासी कीधी (रखा हुता) तिवारइ क्रपिमती धर्मसागरे कृडी चत्वा मॉडी जउ श्रीअभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्ति कारक श्री स्थभना-पार्श्वनाथ प्रकटकर्ता, ते खरतर गच्छि न हुवा । एहवी बात साभली तिवारइ खरतर श्री जिनचन्द्र सूरि, (ए विचारो बात) समस्त दर्शन एकठा कीवा पठइ समस्त दर्शन नइ पूछ्यो जे श्री अभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्तिकर्ता स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कर्ता कियइ (किसइ) गच्छइ हुवा ? तिवारइ समस्त दर्शन मिली अनइ घणा ग्रन्थ जोई पठइ (ए बात विचारि नइ) इम क्हा जे श्री अभयदेव सूरि (नवाङ्गी-वृत्तिकारक, स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कारक) खरतर गच्छे हुवा । सही । सत्य समस्त दर्शन घणा ग्रन्थ जोइ नइ सही कीधी । सहीवार१०८

* इपी प्रकार स्तम्भतीर्थ (लभात) में भी हती आशयका एक मत-पत्र लिखा गया था । जिसकी नकल इस प्रकार है —

स्वस्ति श्री स्थम्भनाधीश नस्वा श्री स्थम्भ तीर्थ मध्ये समस्त दर्शन लिखित श्रीअभयदेव सूरि नवागी वृत्तिकारक श्री स्थम्भणउ पार्श्वप्रगटकारक खरतर गच्छि हुवा । केइ एक एम नयी सहइता, राग द्वेष ना वाह्या कुतुब्धि लागा (वाह्या) ते बापडा गाढा दुलिया थास्ये (हुस्य) सही सही १०८

सिद्धान्त नइ मेलि नवाङ्गी वृत्ति नइ मेलि वृद्ध सम्प्रदाय अनुमारइ (नइ मेलि) जेइ न मानइ ते घणा कूडा पडै छे ।

- अत्र सासि भट्टारक कर्मसुन्दरसूरि मत १
- ” ” सिद्धान्तिया वडगच्छा श्री थिरचन्द्र सूरि मत २
- ” ” जावडिया गच्छे श्रीहर्षविनय मत ३
- ” ” निगमिया तपा गच्छे श्री भ० कल्याणरत्नसूरि मत ४
- ” ” वृहत् तपा गच्छे श्रीसिद्धसूरि मत ५
- ” ” विवदणीक वारेजिया रडखडता तपा गच्छे श्रीपरमाणन्द-
सूरि मत ६
- ” ” (सिद्धान्तिया) बड गच्छा श्रीमहीसागरसूरि मत ७
- ” ” काठेला पुनमिया गच्छे श्रीउदयरत्नसूरि मत ८
- ” ” पीपलिया गच्छे विमलचन्द्रसूरि मत ९

समस्त दर्शन (जैन) बहसी नवागीवृत्ति प्रशस्ति जोइ वृद्ध सम्प्रदाय जोइ नइ बीजा पणि विचारकर सही कीधी । जे श्री अभयदेव सूरि खरतर गच्छि हुवा सही सही ।

- अत्र सासि ओमपाल गच्छे प० साँहा मतम् १
- ” ” अञ्चल गच्छे प० लक्ष्मीनिधान मतम् २
- ” ” वृद्ध शालीय तपा गच्छेनायक श्री सोभागरत्नसूरि मतम् ३
- ” ” बडा गच्छे उ० विनयकुशल मतम् ४
- ” ” कोरटवाल गच्छे प० पद्मशेखर मतम् ५
- ” ” पूर्णिमा गच्छे प० रत्नधीर मतम् ६
- ” ” भरुभच्छा (तपगच्छे) प० रत्नसागर मतम् ७
- ” ” मरुघार गच्छे क्षमासुन्दर मतम् ८
- ” ” अञ्चलिया पूर्णचन्द्र मतम् ९
- ” ” सडेरा समयरत्न मतम् १०

- अत्र सारि त्रागडिया पुनमिया गच्छे श्रीविद्याप्रभ मूरि मत १०
 ,, ,, डडेरिया पुनमिया गच्छे ओसयमसागरसूरि मत ११
 ,, ,, कुनवपुरा तपागच्छे श्रीविनयतिलकसूरि मतं १२
 ,, ,, वोकडिया गच्छे श्रीदेवानन्द सूरि मत १३
 ,, ,, सिद्धान्तिया गच्छे पन्थास प्रमोहस मत १४
 ,, ,, पाल्हणपुरा गच्छे वा० विनयकीर्ति मत १५
 ,, ,, पाटहणपुरी सारजा तपा गच्छे वा० रंगनिधान मत १६

अत्र साख आगमिया गच्छे ऋषि रामा मतम् ११

,, ,, उधर्मघोष गच्छे ऋषि रत्नसागर मतम् १२

,, ,, कडुभामती पोमसी मतम् १३

श्री खरतर गच्छ अभयदेव सूरि स० ११११ श्री स्यम्भगठ पार्श्वनाथ प्रगट कीधड । स० ११२० वर्षे नवागीवृत्ति कीधी । स० १२०४ रुद्रपण्डित अभयदेवसूरिजी बीजा हुवा । न मानह ते अभागीया (उत्सूत्र-भापी कृडा थका धर्मनिगमो सत्तार मध्ये रुद्रपण्डिते मदी सदी) खोडु घोली नह चारित्र गमाडे छै । तथा कई कदाप्रदी इम कई जे श्री अभयदेवसूरि नवागी वृत्तिकता श्रीस्यम्भगठ पार्श्व प्रकट कारक खरतर गच्छे न हुवा ते महा उत्सूत्रवादी जाणिवा । जिणे कारणे तपागच्छनायक श्रीसोमउन्दर सूरि नी कीधो उपदेश सत्तरो ते माहँ बारमइ उपदेशि, ते कालना गीतार्थ सवेगी हुवा तिगइ खरतर गच्छी कइया छइ ते हुण्डो लिखीजडडे (इमने याद सस्कृतके २१ श्लोक उपरोक्त ग्रथसे उद्धृत किये है, उन्हें यहा अना-वश्यक समझकर हमने नहीं लिखा)

इत्यादि वृत्तान्त जाणी करी जे सम्बेगी गीतार्थ छइ ते सम्यन् सूधा कहिये । उत्सूत्र थो बीहता थका बीजाड पूषावार्ये अनेरइ गच्छे हुषा

अत्र सारि अंचल गच्छे पण्डित भावरत्न मत १७

” ” छापरिया पुनमिया गच्छे पण्डित उदयरज मतं १८

” ” साधु पुनमिया गच्छे वा० नगामत १९

” ” मलधारा गच्छे पण्डित गुणतिलक मतं २०

” ” ओसवाल गच्छे पण्डित रत्नहर्ष मतं २१

” ” धवल पर्वाया आचलिया (आगमिया) पण्डित रगा मत २२

” ” चित्रवाल गच्छे वा० क्षेमा मत २३

” ” चिन्तामणियापाडा वा० गुण माणिक्य मत २४

” ” आगमिया उ० सुमतिसेखर मत २५

” ” वेगडा सरतर पण्डित पद्ममाणिक्य मतं २६

(उ०धर्म मेरु मत)

” ” वृहत्खरतर वा० मुनिरत्न मत २७

” ” चित्रवाल जोगीवाडइ पं०राजा मत(मुनि जयरज मत)२८

” ” कोरण्टवाल गच्छे चेला हासा मतं २९

” ” विवन्दणीक खिरालुआ (चेला मोकल) मत ३०

” ” आगमिया मोकल मत ३१

” ” सरतर उपाध्याय जयलाभ मत ३२

एव काती सुदि ४ दिने (काती सुदि ७ शुक्रवार) सर्व दर्शन मिलि (सर्व सह समुदाये) मजलस कीधी । धर्मसागर ऋषि-मती तेडाव्यउ पुणि धर्मसागर दर्शन मॉहिन आव्यउ वार तीन मजलस करी

तेही इम कहा जे श्री अमयदेव सूरि नवागी-वृत्तिकर्ता स्थम्भना पार्श्व-नाथ प्रकट करणहार जयतिहुअण बत्तीसी कारक श्रीसरतसगच्छि हुवा सेही सही ॥ सन्देह नहीं ॥

तेडाव्यो पठ्ड छिपि रहो (ने श्याम मुख करिन्ड) पण नावड तिवारइ काती सुदि १३ दिने सर्व-दर्शन मिलि नइ चचायइ खोटो (कूडो, झूठ) जाणीनइ (सर्वथा) तिन्हव थाप्यो । जिन दर्शनि बाहिर कीधउ मही सहो १०८ सर्व दर्शन सम्मत श्री अभयदेवपुरि नवाजी वृत्तिकर्ता स्थभणा पाठर्न प्रकट कर्ना ते ररतर गच्छइ हुवा । पत्तनीय समस्त दर्शन विचारी मतं लिखन ॥*

अथ ग्रन्थ X माझि लिख्यते —

- १ श्री तपागच्छीय श्री हेमहससूनि कृत् कल्पान्तर वाच्ये ।
 - २ भाउडहरा कृत् गुरुपर्व प्रभावरु ग्रन्थे ।
 - ३ तपागच्छीय कृत् आचारप्रदीपे ।
 - ४ तपागच्छीय कृत् लघुशालीय पट्टावल्याम् ।
 - ५ सन्देह दोलान्ती ररतर ग्रन्थ प्रामाण्य साधकत्वेन ।
 - ६ कुमारगिरि स्थित तपा सामग्री साधु पट्टावल्याम् ।
 - ७ श्रीजिनपल्लभ सुरि कृत् माद्धगतक (डोढसया) कर्मग्रन्थ मध्ये
 - ८ चित्रवाल गच्छीय धनेश्वरसुरि कृत् वृत्ति परम्परा साधकत्वेन
 - ९ तपा कल्याणरत्नसुरि कृत् चरित्र छिप्पनद्वये ।
- (कल्याणरत्नसुरि प्रबन्ध ग्रन्थ)

+ महोपाध्याय श्रीजयसोमजी कृत “प्रश्नोत्तर-विवारसार” और महोपाध्याय श्रीसमयसुन्दरजी कृत “समाचारी शतक” से यहा प्रकाशित किया गया है । इस मत-पत्रसे उस समयके गच्छ और आचार्योंके विषयमें अच्छा ज्ञातव्य मिलता है ।

* इन ग्रन्थोंमेंसे अभी कई ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं । उनकी खोज-शोधकी पूर्ण आवश्यकता है ।

१० छापरिया पुनमिया पट्टावल्याम् ।

११ साधुपुनमिया पट्टावल्याम् ।

१२ गुरु पर्वावली ग्रन्थे ।

१३ प्रभावक चरित्र १५ (१३) सर्गे श्लोक ५५ थो ६५ पर्यन्त
श्रीअभयदेवसूरि चरित्रे ।

१४ पहीवाल गच्छीय भ० आमदेवसूरिकृत प्रभावक चरित्रे
(गद्यमये) ।

१५ पीपलिया उदयरवसूरि प्रारम्भेण जीवानुशासन वृत्ति ।

१६ तथा श्रीसोमसुन्दरसूरि राज्ये कृतोपदेश-सत्तरी ग्रन्थे ।

किम्बहुना ४१ ग्रन्थ मध्ये हुण्डो, रसरतर गच्छीय श्रीअभयदेव
सूरि नराङ्गीवृत्ति-कारक रथभना पार्श्वनाथ प्रकटकर्ता थया (वभूव)
मूल्या (लि) रसत सर्व दर्शानि (जैन रा मता) पाटण रा भण्डार
माहि मूक्या छै । ते उपरि ए परत लिखिउइ, जे न मानै ते निन्हव
जाणिवा ।

उम समयके तप-गच्छके आचार्य श्रीविजयदानसूरिजी भी पर-
स्पर पूर्वान् गच्छोमे प्रेम बना रहे, और उत्सूत्र-प्ररूपणाकी वृद्धि न
हो इसलिये धर्मसागरजीके चनाये हुए उत्सूत्र-रुद्र-कुदाल और
तत्त्वतरङ्गिणो ग्रन्थोको जलशरण करवाया । और धर्मसागरजीको
अपने गच्छसे वहिष्कृत कर दिया ।

उन ग्रन्थोको अमान्य ठहरानेके लिये सात बोल सर्वत्र प्रसिद्ध
कर दिये, जिससे भविष्यमें कोई भी उन ग्रन्थोको प्रमाणिक न
समझे ।

ग्रन्थोंको जल शरण करनेका उल्लेख तपगच्छकी पुस्तकमें
इस प्रकार है —

“सर्वत सोल सतोतरइ निसुणी अवदात रे ।”

×

×

×

“धर्मसागर तं पण्डित लगइ, क्यो नवो एक ग्रन्थ रे ।

नाम यी कुमति कुदालडो, माडी अभिनवउ पन्थ रे ॥१५५॥

आप वखाण करइ घणो निन्दइ पर तणउ धर्म रे ।

एम अनेक विपरीत पणु, ग्रन्थ माहि घणा मर्म रे ॥१५६॥

माडी तेणइ तेह परुपणा, सुणी गच्छपतिरायरे ।

वीसलनयरि विजयदानमूरि, आवी करइ उपाय रे ॥१५७॥

पाणी आणि कहइ श्री गुरु ग्रन्थ वोलावउ (डूवाओ) एह रे ।

नयर बहु सङ्गनी सारि सु, ग्रन्थ वोलियउ तेह रे ॥१५८॥

श्रीगुरु आण लही सही मूरचन्द्र पन्यास रे ।

हाथिस्युं ग्रन्थ जलि वोलियउ, रासि परम्परा अश रे ॥१५९॥

ग्रन्थ वोलि सागर कहनइ (कन्हइ?) लीधु लिखित तस एक रे ।

नवि एह मय प्ररूपणा, नवि घरवी वरि टेक रे ॥१६०॥”

(दर्शनविनय कृत विनयतिलकसूरि रास)

सुण्यो मरइ न पोतइ सागर राक तणी परि रोल्या ।

कुमति-कुदाल नइ तत्व तरङ्गिणी, सधि पाणी माहे वोत्या ॥२४॥

(सिंहविजय कृत सागर-वावनी स० १६७८)

उ० धर्मसागरने भी स्वयं उन वोलोको स्वीकार करके अपनी
की हुई उत्सृज-प्ररूपणाका “मिच्छामि दुक्कडम्” देकर अपने ग्रन्थ

कुमति (उत्सूत्र) कंद कुदाल को अश्रद्धेय, अमान्य, अप्रमाणिक रूप-से प्रसिद्धि की थी। उस पत्र की नकल मासिक 'जैन युग' वर्ष ५, पृ० ४८३ से लेकर यहाँ उद्धृत करते हैं —

“स्वस्ति श्री शान्ति जिन प्रणम्य ॥ तिरवाडा नगरत परम गुरु श्रीविजयदानसूरि सेवी ७० श्रीधर्मसागर गणि लिखति समस्त नगर साधु-साध्वी श्रावक श्राविका योग्यम् ॥ आज पछी अमे पाच निन्हव न कहउं पाच निन्हव कइया हुइ ते ‘मिच्छामि दुक्कडम्’ ॥ उत्सूत्र-कद-कुदाल ग्रन्थ न सहइउ, पूर्वइ सहइउ हुई ते ‘मिच्छामि-दुक्कडम्’ ॥ पट्-पर्वी । चतु पर्वी आश्री जिम श्री पूज्य आसि (आदेश) देइ छइ ते प्रमाण ॥ छ ॥ सात बोल जिम भगवन आसि छइ छइ ते प्रमाण ॥ चतुर्विध सघ नी आसातना कीयी हुई ते ‘मिच्छामि-दुक्कडम्’ ॥ आज पछी पाच ना चेत्य वादवा ॥ तिरवाटा माँहि श्री पूज्य परम-गुरु श्रीविजयदानसूरि नइ ‘मिच्छामि-दुक्कडम्’ ॥ दीधउ छइ सघ समक्ष ए बोल आश्री जिणइ खोटो सहइउ हुवइ ते ‘मिच्छामि दुक्कडम्’ देज्यो ॥ छ ॥”*

विजयदानसूरिजीके पट्टर श्री हीरविजय सूरिजीने भी वर्म-

† पूनमिया, खरतर, आचलिया, साठ पूनमिया और आगमिया ये पाच (देखे ऐतिहासिक रास सप्रह भा ४ पृ ७)

* धर्मसागरके अप्रमाणिक ग्रन्थोंका आश्रय लेकर आज भी कई महा-कदाग्रही गच्छोमें परस्पर वैमनस्य-वृद्धि कर रहे हैं, यह एक परम दुःखकी बात है। उस समयके प्रभावक तथागच्छीय आचार्य श्रीविजयदानसूरि, श्रीहीरविजयसूरि

सागरके उत्सूत्रका निराकरण करनेके लिये १० बोल निकाले थे, उसमे भी १० वा बोल यह है —

“तथा श्रीविजयदानसूरि वटुजन समक्ष जलशरण जे कीधु उत्सूत्र-कद-कुदाल ग्रन्थ तेह माँहिलु जे असम्मत अर्थ बीजा कोई ग्रन्थ माहिं आप्यउ हुवइ, तउ ते तिहाँ अर्थ अप्रमाण जाणिवउ ।”

और श्रीविजयसेनसूरिने भी १० बोल प्रकट किये थे, जो कि “जैनयुग” मे छप चुके हैं ।

इस प्रकार पाटणमे उ० धर्मसागरको परास्तकर श्रीजिनचन्द्र-सूरिजीने सरस्वर गच्छकी महान् सेवा की । इसी चातुर्मासमे आपन “पौषध-त्रिधि प्रकरण” पर एक विशिष्ट वृत्ति रची, जिससे आपकी प्रकाण्ड-विद्वताका भली भाँति परिचय मिलता है । उक्त ग्रन्थकी प्रशस्तिका आवश्यक अंग यह है —

आदि —

गोलदमलक्ष्य सुपलक्षित भाव लक्ष,

जाघन् प्रमान विदित कनकावदानम् ।

टान्तेन्द्रिय द्विरद वृद्धममद वाच,

वाचयमेन मनिश स्मरतादि देव ॥ १ ॥

नीय, अमान्य, अप्रमाणिक सिद्ध कर दिया था और स्वयं धर्मसागरने चित्त स्वीकृत कर “मिच्छामि-दुष्कृतम्” (दुष्कृतको मिथ्या स्वीकारकर उसकी आलोचना करना) किया था, आज उन्हींकी परम्परावाले उन्ग्रन्थोंको क्या उपादेय समझ प्रकाशित कर कलङ्कित हो रहे हैं ॥

x

x

x

अत्य प्रशस्ति —

तेषा गुरूणा शिष्येण, श्रीजिनचन्द्रसूरिणा
 श्री पौषध विधेर्वृत्ति श्रुके स्वेष्ट प्रसादत ॥ २४ ॥
 सयोज्य वृत्ति चूर्णी समाचारी विलोम्य सद्दृष्टया
 पुनरपि तस्मात्त्र भाव मत्वासत्सप्रदायमपि ॥ २५ ॥
 श्री पुण्यसागर महोपाध्यायै पठकोद्बधनराजै
 अपि साधुकीर्ति गणिना, सुशोधिता दीर्घ दृष्टेयम् ॥ २६ ॥
 मुनि शशि विद्यादेवी प्रमिते वर्षेऽणहिल्लपुर नगरे ।
 आश्विन विजयदशम्या सुमुहूर्ते पुण्य सयोगेन ॥ २७ ॥
 पूत्यक्षर गणनेन त्रिमहसी पञ्चशतक सयुक्ता ।
 चतुरधिकै पचाशत् श्लोकैरस्या प्रमाणमिदम् ॥ २८ ॥

इति पौषध विधि प्रकरण वृत्ति समाप्ता ग्र० ३५५४ पत्र ६७

[तत्कालीन प्रति, बीकानेर बृहत्ज्ञानभण्डारान्तर्गत श्रीजिनहर्षसूरि
 -भण्डारे]



पाँचवाँ प्रकरण

“विहार और धर्म-प्रभावना”



भात सघके मुख्य श्रावक, वच्छराजका पुत्र कम्मा ग्राह आदि सूरिजीको चतुर्मास रभातमे करनेके लिये आमन्त्रित करने आये। उनके विशेष आग्रहसे सरि-महाराज रभात पवारं, स्नम्भ-तीर्थकी यात्रा की और सब-आग्रहमे स० १६१८ का चातुर्मास रम्भातमे किया, वहाँकी धर्म-प्रभा-

वनाका वर्णन कवि “कुशललाभ” ने अपने “श्रीपूज्य वाहण गीत” मे इस प्रकार किया है—

“धर्ममार्ग उपदेयता करता विधइ विहार रे।

आब्याजी नगर ब्रम्बावती श्रीसघ हर्ष अपार रे ॥ ३५ ॥

पूज्य आब्या ते आशा फली, श्री सरतर गच्छ गणार र।

श्रीजिनचन्द्र मूरि वादियड साथइ साधु परिवार रे ॥३६॥

×

×

×

“प्रभु पाटि ए चउतीसमइ श्री पूज्य जिनचन्द्रसूरि।

उद्योतकारी अभिनवउ, उदयउ पुण्य अहूर ॥ ५५ ॥

शाह (आचरु) भण्डारी वीरजी, शाह राका नइ गुरु राग ।
 वर्द्धमान शाह विनयइ घणउ, शाह नागजी अधिक सोभागरे ॥५६॥
 शाह वच्छा शाह पदमसी, देवजी नइ जैत शाह ।
 आचक हरसा हीरजी, भाणजी अधिक उच्छाह ॥५७॥
 भण्डारी माडण नइ भगति घणी शाह जावड नइ घणउ भाव ।
 शाह मनुवा नइ शाह सहजिया, भडारी अमियउ अधिक उच्छाह ॥५८
 नित मिलइ आचक आचिका, सभलइ पूज्य वराण ।
 हियदउ उष्टइ उल्लसइ एम जीयउ जनम प्रमाण ॥५९॥
 आप्रह देरि श्रीसघ नउ पूज्यजी रह्या चउमास ।
 धर्म नउ भारग उपदिसइ इम पहुती मननी आश ॥६०॥
 प्रतिमा प्रतिष्ठा थापना दीक्षा दियइ गुरु राज ।
 टम सफल नर भव तेहनउ जे करइ सुकृन ना काज ॥६१॥”
 इम प्रकार रभामते जिन विम्ब-प्रतिष्ठा, शिष्य-दीक्षा आदि
 बहुतसे वर्मकृत्य हुए । वहासे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए सम्बन्
 १६१६ में श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराज “राजनगर” पधारे । वहा
 एक महाविद्वान् भट्ट अपनी विद्वताके अभिमानमे चूर हुआ फिरता
 था । उसे मन्त्रीश्वर “सारंगधर सत्यवादी” - उपाश्रयमे सूरि महा-
 राजके पास लाया । सूरिजीने उसकी समस्या पूर्ण कर पराजित
 क्रिया, जिसका वर्णन वीकानेर ज्ञान भण्डारकी एक १८ वीं शताब्दी
 में लिखिन पट्टावलीमे इस प्रकार है —

इनका नाम जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रथमें आता है, ये ग्तरतर गच्छ
 के परमन्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे । इनको सधपतिकी पदवी थी ।

“बली स० १६१६ राजनगरइ एक भट्ट महा विद्यावन्त नगर मड फिरड, माथे अकुश पेट्ट पट्टो वाध्यउ, एक चाकर रे माथे घडो पाणी रौ बीजा रै माथि खड रौ पूलो एहवउ अहङ्कार धरी नड फिरइ । तरइ सत्यग्रादी सारगधर मन्त्री उपासरइ लेड आयउ, पहिली जनिया सु याद्रका, बोल्या थाग न लाभइ, तरइ समस्या कही —

* “मक्षिका पादघातेन रुमित जगत त्रयम्”

एह समस्या नउ अर्थ (पूर्ति) भाग्य नड जोगड युगप्रधानजी ए कह्यो —

“सममित्तौ लिखित चित्र, वारिणा कुण्ड पूरितम्
मक्षिका पादघातेन, रुमित जगत त्रयम् ॥”

एम कही भट्ट नइ हरायउ (भट्ट) पगे लाग्यउ ।

वडासे विहार करक सूरे महाराज पाटण पथारे, स० १६१६ का चतुर्मास वहाँ किया । स० १६२० मे आयका चातुर्मास बीसल नगर^४

४ “मक्षिकाक पैरा क आघात से तीन जगत कापने लगा ।”

— “समान भाँत (दिवार) पर तीन जगतको चित्रित करके, उसके नीचे जलसे भरा हुआ कुण्ड-पात्र रखा । उसमें नि-जगतके चित्रकी छाया पडने लगी, उस पानीके ऊपर मक्षिका के बैठनेसे पानी हिलने लगा । पानी हिलनेके साथ साथ तीन जगत की प्रति-छाया (प्रति बिम्ब) भी हिलने लगी, इससे “मक्षिका क पैरो के आघात से तीन जगत कापने लगा ।

* विहार पत्र न० २ में बीसलनगरके स्थानपर बीकानेर लिखा है, किन्तु हमे बीसलनगर ही ठीक प्रतीत होता है ।

हुआ। वहा से, वीकानेरके, मन्त्रीश्वर श्री संप्राम सिंह वच्छावनके आग्रहसे वीकानेर पधारे। स० १६२१ का चातुर्मास वीकानेरमे किया।

वीकानेरके श्रीवासुपूज्यजीके मन्दिरमे श्री सुपाश्वर्चनाथजी की पञ्चतीर्थी वातु प्रतिमा स० १६२२ वैसाख शुक्ल ३ के दिन सूरिजीके कर कमलासे प्रतिष्ठित है जिसके लेखनी नकल इस प्रकार है —

“सवत् १६२२ वर्षे वैसाख सुदि ३ सोमवारे उपवेश वगे।
राखेचा गोत्रे शाह आपू तत्पुत्र साह भाडकेन पुत्र सा० नौवा माडू
मेपा। हेमराज धनु। श्री सुपाश्वर्ष विम्बं कारापितम्। खरतर गच्छे
श्रीजिनमाणिस्यसूरि पट्टाविष श्री जिनचन्द्र सूरिभि प्रतिष्ठितम्॥
शुभ भवतु॥”

यदि सूरिजीने उपरोक्त प्रतिमाजीकी प्रतिष्ठा वीकानेरमे की हो तब तो यह निस्मन्देह कहा जा सकता है कि सूरिजी अक्षय-नृतीयाके पश्चात् ही वीकानेरसे विहार करके जैसलमेर पधारे। स० १६२२ का चतुर्मास जैसलमेर किया। विहार पत्र नं० २ मे लिखा है “त्रिचिनागौर हसनकुलीखान जयलाम पडसारड” इसका आशय हमारे समझमे पूरा नहीं आया किन्तु अनुमान किया जाता है कि सूरिजी वीकानेरसे जैसलमेर जाते या आते समय नागौर पधारे। वहापर “हसनकुली खान” ने किसी युद्धादिके जयके लाभसे

* “हसन कुली खान” का नाम कर्मचन्द्रमन्त्री वश प्रबन्ध वृत्तिमें आता है। मन्त्रीश्वर सप्रामर्षिहजीने इसके साथ मन्धि की थी। उपरोक्त विहारपत्रके “जयलाम” का आशय सम्भव है, इसी उलटसे हो ?

लाभान्वित होकर सम्मान पूर्वक सूरि-महाराजका नगरमें प्रवेश कराया हो।

सम्बत् १६२२ का चतुर्मास जैसलमेर करके सूरिजी वीकानर पधारे। सम्बत् १६२३ का चतुर्मास यही किया। खेतासर ग्रामके रहनेवाले चोपडा गोत्रीय भा० चापसीकी भार्या चापल देवी* के पुत्र-रत्न मानसिंहको मित्ती मार्गशीर्ष कृष्ण ५ को दीक्षा दी, उनका दीक्षा नाम “महिमराज”— रखा।

वहासे विहार करके “नाडोलाड” पधारे, स० १६२४ का चतुर्मास वहीं हुआ। विहार-पत्र न० २ में लिखा है “लङ्करनड भय काती सुदी १० निवत्यैउ” इसका स्पष्टीकरण एक “वीकानेर ज्ञान-भण्डार” की पट्टावलीमें किया हुआ है——मुगल सेना उस नगर के बहुत ही निकट आ गई थी, लूटपाट और मारकाट के भयसे

* उपा० श्री क्षमाकल्याणजीगणि कृन खरतर गच्छ पट्टावलीमें मानसिंहजीकी माताका नाम “चतुरङ्ग दे” लिखा है, किन्तु उ० श्री शिव-निधान और लब्धिकलोल आदि कृत प्राचीन गईलिया ओर श्री जिनट्टपा-चन्द्रसूरि ज्ञान भण्डारस्थ तत्कालीन लिखित “खरतर गच्छ पट्टावली” में माताका नाम चापल देवी लिखा है। प्राचीन होनेसे यही ठीक प्रतीत होता है।

— ये महिमराजजी (श्रीजिनसिंहसूरि) बड़े प्रभावक ओर निर्मल, चारित्रवान् प्रकाण्ड पण्डित हुए। सम्राट अकबरने इनके गुणोंसे मुग्ध होकर सूरिजीसे इन्हें “आचार्य-पद” दिलाया था। इसके विषयमें यथा-स्थान क्षामेके प्रकरणोंमें लिखा जायगा।

व्याकुल होकर वहाके लोग चारो तरफ भागने लगे । संघने मिलकर सूरि-महाराजसे भी निवेदन किया , किन्तु महापुरुष स्वयं निर्भय और दूसरोके लिये भी अभयकारक हुआ करते हैं । सारा नगर खाली हो गया, परन्तु सूरि महाराज साधारण जनताको भौँति सम्भ्रान्त न होकर उपाश्रयमे ही निश्चल ध्यान लगाके बैठे रहे । उनके ध्यान-बल से मुगल-सेना मार्ग भूल कर अन्यत्र चली गई । सब लोग प्रमन्नता पूर्वक अपने अपने घर आये, सूरिजीके योग बलसे चमत्कृत होकर उनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे ।

उपरोक्त पट्टावलीमे इसका वर्णन इस प्रकार किया है —

“बलि जियड नडुलाई नगर मॉहि श्रीपूज्य जी हता, संघ मिली गुरु वीनव्या गुरु जी । मुगल नउ भय साभलियइ छइ । गुरे कश्यो महानुभाव । काइ विशेष नही । इम करता मुगल दूकडा आव्या, तिहारड सर्वलोक जीव लेइ दसोदिस नाठा (गयउ) पर श्रीपूज्यजी उपासरा मॉहि थो हात्या नहों ध्यान बइठा, गुणना नइ प्रभावि मुगला नउ कटरु मारग थकी चूकउ, बीजी ठामि गयउ । सर्वलोक आप आपणा घरे आव्या सघ मिली उपासरड आवि देसड तउ गुरुजी न्यान करइ छइ । सघ बादी, पूजी स्तवना करिवी माडी, सर्वलोक हर्षित थयउ ठाम ठाम शोभा थई ।

वहासे विहार करके सूरिजी वापडाऊ (? वापेउ, बीकानेर से ४४ मील) पधारे । स० १६२५ का चतुर्मास सघके विनीत आग्रहसे वहाँ किया । चातुर्मास पूर्णकर वहासे ग्रामानुग्राम विचरते हुए बीकानेर पधारे । स० १६२६ का चातुर्मास बीकानेर किया ।

स० १६२७ का चातुर्मास महिम किया, वहासे साधु-विहार करते हुए मेवात देशमे होकर आगरा पधारे । विहारपत्रो मे लिखा है —
 “स० १६२७ महिम—शा० कु० अ० म० यूम । चन्द्र० मू० स्थु०
 नेमि चैत्य विचि सौरीपुर यात्रा, चन्द्रनाडि हयिणाउरि पउइ
 आढ्या ।” इससे हस्तिनापुरमे शान्तिनाथ, कुन्धुनाथ, अरिनाथ और
 महिनाथजी के म्नुपो की और चन्द्रवाडमे श्री चन्द्रप्रभु भगवानकी
 यात्रा करना निश्चित है ।

आगरेमे बहुतस धर्मकार्य हुए वहा १ महीनेका माम-कल्प
 स्थिति करके आप सौरीपुर पधारे । वहापर श्री नेमिनाथ स्वामीकी
 यात्रा की, और चन्द्रनाडि हस्तिनापुरकी यात्रा करके वापिस आगरे
 पधारे । वहासे चातुर्मास करनेके लिये ग्वालेर जाते ये परन्तु आगराके
 श्रीसधने विजेष आपहसे म० १६२८ का चतुर्मास वहाँ किया ।
 पर्युपणा पर्व, धर्म ध्यान करते हुए सुग-पूर्वक व्यतीत हो जानेक
 पश्चात् सूरिजी ने एक पत्र “माभलि-नगर” के सत्रको दिया । यह
 असली मूल पत्र हमारे सग्रहमे है, इसम उपरोक्त तीर्थ-पर्यटन,
 विहार और धर्म कार्याका भी थोडा बणन है । उस पत्रकी नकल इस
 प्रकार है —

॥६०॥ स्वस्तिश्री शान्ति जिन प्रणम्य । श्रीआगरा नगरान्
 श्रीजितचन्द्र नरय प० आणदोदय गणि प० वीरोदय मुनि प०
 भक्तिरग गणि प० सकलचद्र गणि प० नयविलास मुनि प० हर्ष-
 त्रिमल प० कटयाणकमल प० महिमराज प० समयराज प० धर्म-
 निधान प० रत्ननिधान श्रीपाल प्रमुख साधु १६ त्रिदितोषाम्नय

श्री माभलि स्थाने श्रीदेव गुरु भक्तिकारक श्री जिनाज्ञा प्रतिपालक
 सा० मूला० सा० मामीदास सा० पूरू सा० पदू सा० वस्तू सा०
 गागू नाथू वम्मू पूरू लखू प्रमुख श्रीसघ समुदायक मादर धर्मलाभ
 पर्वक समादिगति श्रेयोत्र श्रीदेव गुरु प्रसादात् । उपदेशो यथा ॥
 वम्मो मगल मुक्किठ, अहिंसा सजमो तवो । देवावि त नमसति जस्स
 वम्मो मयामणो ॥१॥ इत्यादि धर्मोपदेश जाणी धर्मोद्यम करता लाभ
 उड तथा महिम हुती विहार करी साधु विहार करता मेवात देश
 माहि थद नड अत्र आव्या घणा धर्म ना लाभ थया । पउड मास कल्प
 क (री नइ ?) सौरीपुर श्रीनेमिनाथनो यात्रा करी नड अत्र
 आ (व्या) पछइ चउमासि उपरि ग्वालेर नइ चालना हुता
 प (र श्रीस) घनइ आप्रहइ अत्रेज रखा । धर्म ध्यान करता
 करावता श्री पर्यपणा पर्व आव्यइ सा० श्रीवच्छ सा० लक्ष्मोदासादि
 सपरिवारइ विधि पूर्वक पुस्तक बचाव्या वाचना प्रभावनादि धर्म
 करणी घणी हुई पोसहता १५१ हुया बीजाड दान शील तप भावनादि
 धर्म करणी हुई एव जाणी तुहे अनुमोदिवा । आ सामग्री साधु
 साव्वी विशेषड चिंता करवी । तथा तुम्हारा कागल आव्या समाचार
 परीठया । तुहे उत्तम सुश्रावक छउ सवली सामग्री आवइ तउ राखेज्यो
 ज्यु धर्म निर्वहइ एव समस्त संघ माहि धर्मलाभ कहेज्यो । एव
 परीठे • पारणइ पूर्व दिगइ तीर्थ यात्रा भणो विहार
 (करवाना भा ?) व छड वली वर्तमान जोगि जाणिस्यइ ॥ समस्त
 श्रावक श्राविका नड धर्मलाभ कहेजो ॥

इस पत्रके अनुमार यदि चतुर्मास पूर्णकर सूरिजी पूर्व देशीय

तीर्थोंकी यात्रा करन गये हो तत्र तो यथा-सभव सम्मत् शिरतरजी, पावापुरीजी, चपापुरीजी, राजगृह आदि तीर्थोंके दर्शनकर आये हागे । तत्पश्चात् स० १६२६ का चातुर्मास रुस्तक (रोहतक, दिल्लीके निकटवर्ती) किया । चातुर्मास पूर्णकर सूरि-महाराज ग्रामानुग्राम निचरते हुए वीकानेर पधारे । यहाके श्री रूपभट्टेय भगवानके मन्दिरमे सूरिजीके कर कमलोमे प्रतिष्ठित श्रीअजितनाथ स्वामीकी वातु-प्रतिमा विद्यमान है , जिसपर निम्नोक्त लेख है —

“संवत् १६३० वर्षे माह सुदि १० दिने श्री उपनेश वंशे छाजहड गोत्रे सा० झठा चा (?) तत्पुत्र सा० अमरसीकेन कारित श्रीअजित-नाथ विम्ब प्रतिष्ठित सरतर गच्छे श्रीजिनचन्द्र सूरिभि ।”

फाल्गुन मासमे “नयणा” नामक आधिकाने सूरिजीसे वारह व्रत ग्रहण क्रिये थे । तब साधुवर्द्धनके शिष्यने वारह व्रत रास बनाया जिन्मे लिखा है —

“सरतर गच्छ रउ राजियउ, जिनचन्द्र सूरि मुनि राय ।

तासु पासइ ए विरति लेइ, आविका नयणा आय ॥४॥

सवत मोल् श्रीसोत्तरइ, फागुण मासि विशाल ।

साधुवर्द्धन पसाउलइ, रची विरतवध रसाल ॥५॥

जिम शशि रवि ध्रु अछइ, धरणीधर सुप्रसिद्ध ।

तिमि अविचल होज्यो सही, एह विरत सम्बन्ध ॥६॥

[अन्तिम पत्र, श्रीपूज्यजी क सग्रहमे]

सूरिजीके वीकानेर पधारनेसे विन्ध्य-प्रतिष्ठा, घन ग्रहण आदि सूत्र धर्म कार्य होने लगे । लाभ जानकर सूरि-महाराजने स० १६३१ और १६३२ का चातुर्मास वीकानेर ही किया । वहाँमे विहारकर फलौधी पधारे, वहाँके श्रीपाद्वर्धनाथ प्रभुके प्राचीन भव्य मन्दिर पर द्वेष-वश तपगच्छ वालो ने ताले लगा दिये । सूरि-महाराज प्रभु दर्शनार्थ पधार, किन्तु मन्दिरपर ताले लगे देखकर उन्होने हाथका स्पर्श किया तब उनके प्रभावसे पिना चावी लगाये ही ताले खुलकर पड गये - ।

सूरिजी तीर्थ दर्शनकर वहाँसे विहार करके जैसलमेर पधारे । स० १६३३ का चातुर्मास वहाँ किया, मितो माघ शुक्ला ५ के दिन आशिका वींझूने सूरिजीसे १२ घत ग्रहण किये जिसका वर्णन वीकानेर ज्ञान भण्डार (महिमाभक्ति विभाग पोथी न० ६३) मे गा० ५५ के बने हुए रासमे है —

“शुभस्थान जैसलमेरु नयरइ, सुकृति करी हित कारणइ ।

सयत सोरु तेतीस वरसइ, माह सुदि पचम दिणइ ॥

गच्छराय श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरु, सइ सुखइ समासु ए ।

आशिका वींझू सुव्रत पालइ, धरि भनि उल्हासु ए ॥४५॥

• देखो ! क्षमाकल्याणजी कृत सरतर गच्छ पट्टावली और विहार पत्र आदि । एक प्राचीन पट्टावलीमे भी लिखा है —

फलौधी वीतराग देहरा नउ तालउ बिण कूची हाथ उपरि मूकी उदेल्यउ
(वीकानेर ज्ञान भण्डार, पट्टावली पत्र ७)

इसी वर्षमें मिनी फागुन कृष्णा ५ को श्राविका गेलीने सुरिजी से १२ व्रत ग्रहण किये व । जिसका उल्लेख एक बारह व्रत रामकी प्रशस्ति*में इस प्रकार है —

“सम्बत सोलसय तेतीमइ, फागन वदि पञ्चमि उद्गासि ।

खरतर गच्छि गरुयउ गुरु राजइ, श्रीजिनचन्द्रसुरि गुरु पासइ ॥६१॥

श्राविका गेली ए व्रत लीवा, कीधा नरभय सफल आज ।

पास पसायइ ए विधि करता, पामिम शिवनगरी नो राज ॥६३॥

बारह व्रत सूया पालेवा, एम कहइ परिग्रह-परिमाण ।

लीलविनाम मदा सुल पामइ, बाधइ दिन-दिन कलाविनाण ॥६४॥

इति श्री इच्छा परिमाण द्विप्पनके स० १६३३ वर्षे फागुन वदि ५ दिने श्रीमच्छ्री खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसुरि पट्टालद्वार श्रीजिनचन्द्र सुरि राजाना स्वहस्तेन गेली सुश्राविकया प्रहोतम् ॥

(इसकी प्रति आमोदके यति चन्द्रविजयजीके पास है)

* यह प्रशस्ति हमने “जेन-गृजर-कविओ भा० १” से उद्धृत की है । इस ग्रंथमें यह रास श्रीजिनचन्द्रसुरिजीकी कृतियोंमें नोंध किया ह, किन्तु इस प्रशस्तिसे यह सुरिजीकी कृति होनेका कोई प्रमाण नहीं मिलता । यथा-सम्भव अन्य बारह व्रत रासोको तरह यह राम भी किसी दूसरे कविने रचा होगा ।

इसके अतिरिक्त ‘जेन गृजर-कविओ’में (१) द्रोपदी रास, (२) बारह-भावनाधिकार, (३) शीलवती रास, (४) शाम्भ प्रद्युम्न चांपाइ (५) तिन बिम्ब-स्थापन स्वरन भो सुरिजीकी कृतिया लिखी है । हमें तो इन कृतियोंका भी सुरिजीकी रचना होनाम मन्दह है । कृतियोंको स्पष्टर इसका निर्णय करना आवश्यक है ।

वहासे विहार करके सूरिजी देराडर पधारे वहा श्रीजिनकुशल सूरिजीके “स्वर्गस्थान” का दर्शन करके सं० १६३४ का चातुर्मास वहाँ किया। इसके पञ्चात् सं० १६३५ मे जैसलमेर, सं० १६३६ मे वीकानेर, सं० १६३७ मे सेरूणा (वीकानेरसे २८ मील पूर्व), सं० १६३८ मे वीकानेर, सं० १६३९ मे जैसलमेर और सं० १६४० आसनीकोटमे क्रमशः चातुर्मास किये। “आसनी कोट” चातुर्मास कर सूरिजी जैसलमेर पधारे वहा मिति माघ शुक्ला ५ के दिन अपने विद्वान गिद्य महिमराजजी को “वाचक” पदमे अलङ्कृत किया।

जैसलमेरसे विहारकर सूरि महाराज जालोर पधारे सं० १६४१ का चतुर्मास वहाँ किया। इस चतुर्मासमें ऋषिमती-तपागच्छवालोके साथ शास्त्रार्थ हुआ, इस शास्त्रार्थ मे सूरिजी की विजय हुई। वहा से विहार करके पाटण पधारे, सं० १६४२ का चतुर्मास वहा हुआ, वहा भी तप गच्छवालोके साथ हुए शास्त्रार्थ मे सूरिजी विजय-लक्ष्मी* को प्राप्त हुए।

वहासे विहार करके अहमदाबाद पधारे। सं० १६४३ का चतुर्मास वहा किया। वहा धर्मसागर कृन् उत्सूत्र-मय पुस्तक रूपी विप-वृक्षका उच्छेद किया जैसा कि + सरतर गच्छ पट्टावली न० १ और न० ३ मे लिखा है —

“पुन सं० १६४३ वर्षे ताद्य धर्मसागर कृन् ग्रन्थोच्छेद कृन्”

* त्रयो विहार पत्र न० १, २

× त्रयो विहार पत्र न० २

+ त्रयो पूरणचन्द्रजी नाहरडी प्रकाशिन “सरतर गच्छ पट्टावली संग्रह”

सूरिजीने स० १६४४ का चातुर्मास खम्भात किया। वहाँ श्री रथम्भन तीर्थ और श्रीजिनकुशलसूरि-स्तूपके दर्शन किये। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे विहार करके अहमदाबाद पधारे। श्री गुण-विनय कृत, वीकानेरसे शत्रुशय यात्रार्थ निकले हुए सवके “चैत्य-परिपाटी-स्तवन” से जाना जाता है कि “वीकानेरसे स० १६४४ के माघ महीनेमे तीर्थाधिराज श्री सिद्धाचलजीके यात्रार्थ सङ्घ निकला, वह विशाल यात्री सङ्घ रास्तमे आये हुए समस्त तीर्थोंकी यात्रा करता हुआ क्रमशः सैरिसे, लोडण-पार्श्वनाथके तीर्थमे आया।

इधर अहमदाबादसे सङ्घपति योगीनाथ और सोमजीके सङ्घ सहित सूरिजी भी आकर सम्मिलित हुए। उम् सङ्घमे चारो दिशाओन यात्री आये ये, जिनमेसे—वीकानेर, मण्डोवर, सिन्धु देश, जैसलमेर, सीरोही, जानोर, सोरठ और चापानेरका नाम उल्लेखनीय है। इम विशाल यात्री सङ्घके साथ मित्री चैत्र कृष्णा ४ के दिन सूरि-महाराजने महातीर्थ, सिद्धक्षेत्र श्री सिद्धाचलजीकी यात्रा की॥

< “सवत सोलह सङ्घ चिम्माट्ट, बगसि सवि उपकार।

चतुस्रि चड्यी दिनट, बुध बल्लभ बुधवार ॥ १० ॥ मेरी० ॥

सङ्घपति योगी सोमजी, मन धरि हरए तरङ्ग ।

गच्छपति श्रीजिाचन्द्र नह, याग कगवी रङ्ग ॥ ११ ॥ मेरी० ॥

छविदित सरतर सव नट, श्री आदि देव प्रमग ।

रावनागारिग इम भणड, रत्ननिधान वचन ॥ १२ ॥ मेरी० ॥

। [वा० रत्ननिधान कृत स्तवन]

वहासे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज सूरत पधारे ।
उनके आगमनसे सधमे बहुत प्रमन्नता हुई, सब लोग अधिकाधिक
वर्म-व्यान करने लगे । वर्षाकाल सन्निकट होनेसे सूरिजीने सम्बन्
१६४५ का चातुर्मास सूरतमे किया ।

स० १६४६ का अहमदाबाद ओर स० १६४७ का चातुर्मास पाटण
किया । स० १६४७ मे श्राविका कोडाने आपसे बारह व्रत ग्रहण
किये थे, जिसका रास श्री० जयसोमर्जा कृन (कपडेपर लिखी हुई
प्रति) हमारे सप्रहमे है । आवश्यक अंग इस प्रकार है .—

“श्रीजिनचन्द्र सूरि श्रीमुसइ, श्राविका कौडा एह ।

आदरइ बारह व्रत इसा, शुभ दिनस रे मन हर्ष धरेय ॥१८॥

“हिव अहमदाबाद सुरम्न, योगीनाथ शाह उधम्म ।

शत्रुञ्जय भेटणि रणि, तेह्यागुए वेगि सुचगि ॥ १९ ॥

मेलि सहु सध गुए साधि, परघर एरचइ निज आवि ।

चाट्या भेटण गिरिराज, सधरति सोमजी सिरताज ॥ २० ॥

दोहा—पूरव पदिचम उत्तरइ, दक्षिण चिहुं दिशि जाण ॥

सध चाट्यउ शत्रुञ्जय भणी, प्रगटी महियल वाणि ॥ २१ ॥

विक्रमपुर मडोघरउ, सिन्धु जैसहमेर ।

सीरोही जालोर नउ, सोरठ चापानेर ॥ २२ ॥

सध अनेक तिहा आविया, भटण विमल गिरिन्द ।

लोकतणी सग्या नही, माधि गुरु जिनचड ॥ २३ ॥ ”

[युग प्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिशोध रास, स० १६५८]

सोलहसई सैंताल समई, वैसास सुदि दिन तीज ।

इम ढाल बन्धई गुथिया, श्रावरु व्रत रे जिह समकित वीज १९

जिनदत्तसूरि गुरु सानिधई जिन कुशलमूरि सुपसाइ ।

जयमोम गणि इणि पर कहई, शुभ भावइरे दिन दिन सुसथाइ २० ।

पाटण्मे विहार करके अहमदाबाद होते हुए सूरिजी सम्भात पधारे, वहा श्रीस्थभन पाश्र्वनाथ प्रमुक तीर्थके दर्शन किये । सम्भात के सघने आपको वहीं चातुर्मास करनेके लिये विशेष आग्रह किया । सघके आग्रहसे सूरिजीने वहाँपर अवस्थिति की ।

आचार्य पद प्राप्तिके पञ्चात् आपने निरन्तर सर्वत्र विहार करके अनेक जीवांका प्रतिरोध दिया, और हजारो श्रावकोको जैन दर्शनका सद्बोध देकर धर्ममे हृद किया । इससे अनेक स्थानोमे जिनालय व जिन मिम्बोकी प्रतिष्ठाए, उपधान, व्रत-ग्रहण, इत्यादि प्रशसनीय धर्म-कृत्य हुए । अनेक सघ निकाले गये, जिनके साथ सूरि-महाराजने मारवाड, गुजरात और पूर्व प्रान्तीय तीर्थोंकी यात्रा की । परपक्षियोंके किये हुए आक्षेपोका उत्तर देनेमे और विद्या-भिमानो पण्डितोको निरुत्तर करनेमे आपकी प्रतिभा बहुत बढी चढी थी । जैन दर्शनके तत्व-ज्ञानका प्रचार आपने खूब जोरोसे किया । आपके सद्गुण और विद्वताकी सौरभ सर्वत्र प्रसरित होकर मन्नाट अकरके दरवार तक पहुच गयी थी ।



छुड़ा-प्रकरण

सम्राट् अकबर-आमिन्तूरा



सम्राट् अकबर अमाधारण धर्म-जिज्ञासु और समस्त धर्मोंके प्रति सहिष्णुता रखने वाले थे। अपने दरबारमें सब धर्मके विद्वानोंको बुलाकर प्रत्येक धर्मका उपादेय तत्त्व ग्रहण किया करते थे। यद्यपि वे मुसलमान कुलमें उत्पन्न हुए थे, तौ भी उनके हृदयमें दयाके भाव अधिकाधिक थे। मुसलमान बादशाहोंमें उनके बराबर न्याय-प्रिय दूसरा कोई नहीं हुआ। सम्राट् अकबर दीन-दुस्त्रियोंका उद्धार करना अपना परम कर्तव्य समझते थे जिसके अनेक उदाहरण उनके जीवनमें पाये जाते हैं। उनके राज्यमें हिन्दू और मुसलमान प्रजा जिस प्रकार सुख शान्तिसे रही वैसी मुघी फरसी भी मुसलमान शासकके राज्य-कालमें नहीं रही* ।

*“बादशाह अपने दिलमें यही चाहता था कि किसी प्रकार मुझे धार्मिक सत्यकी बातें मालूम हो, बल्कि वह उनकी छोटी-छोटी बातोंका भी

वे शास्त्रार्थ, उपदेश, विद्वद्गोष्ठी आदिके खूब प्रेमी थे इससे उनके दरवारमें खुने हुए विद्वान रहा करते थे, उनमें जैन विद्वान भी कई एक थे। नागपुरीय-तपागच्छके यति पद्मसुन्दरजी भी सम्राट् की सभामें कई वर्षों तक रहे हैं। सम्वत् १६२५ में जब कि सम्राट् आगरामें निवास करते थे तब भी उन्हें विद्वानोंकी चर्चामें बहुत प्रमोद मिलता था। सरतर गच्छके वाचक दयाकलशजीन अपने विद्वान प्रशिष्य साधुकीर्तिजी आदिके साथ म० १६२५ का चतुर्मास आगरामें किया था उस समय शाही दरवारमें तपागच्छीय बुद्धि सागरजीक साथ पौषधके सम्बन्धमें साधुकीर्तिजीसे शास्त्रार्थ हुआ था। और पण्डित अनिरुद्धजी और पण्डित महादेव मिश्र आदि हजारों विद्वानोंके समक्ष सरतरगच्छ वालोंकी जीत हुई थी, इनके विषयमें आगे साधुकीर्तिजीके परिचयमें लिखा जायगा।

पूरा पता लगाना चाहता था। इसलिए वह प्रत्येक धर्मके विद्वानोंको एकत्र करता था और उनसे सब बातोंका पता लगाया करता था।”

(अकबरी दरबार पृ० ७६)

अकबर जैनियों और बौद्धोंके ग्रंथ भी पढ़ना करता था। हिन्दुओंके भी सैकड़ों सम्प्रदाय और हजारों धर्म-ग्रंथ हैं। वह सब कुछ सुनता था और सबके सम्बन्धमें वाद-विवाद किया करता था।

(अकबरी दरबार पृ० १३२)

जब उसने देशका शासन अपने हाथमें लिया, तब ऐसा उग निकाला जिससे साधारण भारतवासी यह न समझें कि विजातीय तुर्क और विधर्मी मुसलमान कहींसे आकर हमारा शासक बन गया है। इसलिए देशक लाभ और हितपर उसने किसी प्रकारका कोई बन्धन नहीं लगाया (पृ० ११८)

मम्बन् १६३६ मे तपागच्छके आचार्य श्रीहीरविजयसूरिजी भी सम्राटसे मिले थे उनके पश्चात् तो जैन विद्वानोका समागम उम निरन्तर रहा, जिमसे जैन दर्शनके प्रति उनका अनुराग दिनां दिन बढ़ने लगा था* ।

+ तप गच्छके प्रभावक आचार्य श्रीमान् हीरविजयसूरिजी के समागम से अक्षर पर अच्छा प्रभाव पडा था, जिसके फल स्वरूप उसने जजिया पर वगरह छोड दिया । कई दिनों तक अ-भारि उद्घोषणाके फरमान पर प्रकाशित कर अनेक जोधोको अभयदान दिया । उनके पश्चात् शान्तिचद्रजी, विनयसेनसुरिजी, भानुचन्द्रजी आदिने जैन धर्मका सदबोध दिया था, इन सब बातोको जाननेके लिये “सुरीश्वर और सम्राट” आदि ग्रन्थोको देखना चाहिये ।

वरतर गच्छके उ० श्री शिवनिधानजी के गुरु श्री हयसारजी भी सम्राटसे मिले थे जिसका उल्लेख शिवनिधानजी विरचित “सग्रहणी-बालाबोध” में इस प्रकार है —

“श्रीमदक्षर साहेर्मिलनाद्विन्तीर्ज वर्ण कीर्ति भर ।

वाक्पति वद गुररिह सक्रिय मुखो हर्षमार गणि ॥”

[बीकानेर वृहत् ज्ञान भण्डार]

महोपाध्याय श्री जयसोमजी भी सम्राट अक्षरसे मिले थे । और उन्होंने शाही-सभामें किसी विद्वानको परास्त करके विजय पाई थी जिमका वर्णन “जैन साहित्य नौ इतिहास” पृष्ठ न० ५८८ में इस प्रकार किया है —

“जयसोमे अक्षर शाहनी सभा मा जय मेलवयी हतो पुन तेमना शिष्य गुगविनय, पोताना रंड प्रशस्ति काव्यनी प्रशस्ति मां जगाये छे ।”

एक दिन लाहौरकी राज्यसभामे बैठे हुए सम्राट अकबरने उपस्थित विद्वानोसे (हमारे चरित्र नायक) श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी महती प्रशंसा सुनी । वे विद्वान लोग उनकी अत्यधिक श्लाघा करते थे इससे सम्राटको सूरिजीके दर्शन करने और जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्त करनेके लिये उत्कृष्ट इच्छा हुई । उन्होने पूछा “यद्वा सूरिजी का भक्त शिष्य कौन है ? जिससे उनका पता लगाया जाय ।” तब पण्डितोने कहा “मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र हैं ।” तब सम्राटने मन्त्रीश्वर को बुलाकर सत्कार सहित पूछा “हे मन्त्रीश्वर । तुम्हारे गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी अभी कहा विराजत हैं ? वे किसी भी प्रकार शीघ्र यहा पधारें ऐसा उपाय करो । तब मन्त्रीश्वरने विनयपूर्वक उत्तर दिया “वे अभी सम्भातमे विराजते हैं किन्तु अभी शीघ्र शत्रुमे दूर देशसे आना कठिन है क्योंकि वे किसी सजारीपर तो चढ़ते नहीं हैं और इस कडे धूपमे घृष्टावस्थाके कारण आनेमे उन्हें कष्ट होगा” तब सम्राटने कहा “अगर वे शीघ्र न आ सकें तो उनके शिष्यको तो यहा अवश्य बुलानेके लिए दो शाही पुरुषोको भेज

इसके अनुसार यदि खड प्रशस्ति-काव्यकी प्रशस्तिमें यह उल्लेख हो तो स० १६४१ के पहिले ही अकबरकी सभामें उनका विजयो होना सिद्ध होता है क्योंकि यह घृत्ति स० १६४१ में रची जानेका उल्लेख उषी ग्रन्थके पृ० ५८९ में है । इस घटनाका उल्लेख कर्मचन्द्र-मन्त्री-वश-प्रबध घृत्ति, जो कि स० १६५६ में इनके शिष्य उ० गुणविनयजी ने बनाई है, उसमें भी इस प्रकार है —

“श्री जयसोम गुण्णा, शाहि समा लब्ध विजय कमलानाम्”

दो" तब मन्त्रीश्वरने वाचक मानसिंहजी (महिमराज) को बुलानेके लिए शाही दूतको विनतीपत्र सहित सूरिजीके पास भेजा ।

सूरिजीने विनतीपत्र पाते ही वाचक श्रीमहिमराजजी को अन्य ६ साधुओके साथ लाहौर भेज दिया । वे निरन्तर विहार करते हुए कुछ दिनोंमे लाहौर पहुचे । वाचकजीके दर्शनसे सम्राट बहुत प्रसन्न हुआ । उसने उत्सुकतापूर्वक मन्त्रीश्वरसे पूछा कि वे जगद्गुरु जिनचन्द्र सूरिजी कत्र आवेगे ? जिनके दर्शनसे चित्त रंजित होता है और अनेक लोग जिनकी चरण सेवा कर सुखी होते हैं । तब मन्त्रीश्वरने कहा "अब चौमासा निकट आ रहा है अतएव उनका विहार नहीं हो सकता ।" तब सम्राट्ने कहा "मैं उनका दर्शन कर उनसे उपदेश ग्रहण करके अपना जीवन सफल करूंगा और अनेक जीवोको अभय दान देकर उन्हें सन्तुष्ट करूंगा । अतएव वे यहा अवश्य पधारे ।" ऐसा कहकर सम्राटने विनती-पत्र लिखाकर मन्त्रीश्वरको दिया । मन्त्रीश्वरने भी बहुत आग्रहपूर्वक लाहौर आनेके लिये विनती लिखकर शीघ्रगामी चतुर मेवडा दूतोके साथ सम्भात भेज दिया ।

कुछ दिनों मे वे दूत सम्भात पहुचे । वहा सूरिजी के दर्शन कर प्रसन्न चित्तसे उन्हें विनती-पत्र देकर लाहौर चलने के लिये विनयपूर्वक प्रार्थना की ।

सूरिजी विनती-पत्र पढकर विचार करने लगे कि मुझे अवश्य लाहौर जाना चाहिये, क्योकि सम्राट अकबर धर्मजिज्ञासु है, यदि वह जैन धर्मका अनुकरण करने लग जायगा तो "यथा राजा तथा

प्रजा”के नियमानुसार जैन धर्मकी बहुत उन्नति होगी। जब भारत-वर्षके राजा जैन-धर्मावलम्बी थे तब जैनोकी सरन्या भी बहुत थी और सर्वत्र शान्ति विराजमान थी। अब भी यदि गुरुदेवकी कृपासे अकबरके हृदयमें जैन धर्मके उच्च सिद्धान्त बैठ जायेंगे तो वर्तमान समय में आर्य्य प्रजापर होनेवाले अत्याचारों का सर्वथा विनाश हो जायगा। अतएव वहाँ जाकर सम्राट को जैन धर्मके सूक्ष्म तत्वोंका दिग्दर्शन कराना अति उपयोगी होगा।

सूरिजीके सम्भात में विहार करनेका दृढ निश्चय देखकर नमस्त सघने एकत्र होकर उनसे प्रार्थना की “हे गुरुदेव ! चातुर्मास निकट है आप दूर देश कैसे पहुँचेंगे, अतएव यहाँ विराजे।” तब सूरिजीने सघको समझाकर महान् लाभके कारण वहाँसे, मिति आपाठ शुद्धा ८ को प्रस्थान कर नवमी के दिन विहार किया। मार्गमें अच्छे शकुल मिले, जिससे सारा सत्र प्रसुद्धित हुआ। सूरिजी आपाठ सुदि १३ के दिन अहमदानाद पधारे। श्रीसघने उत्सव-पूर्वक नगरमें प्रवेश कराया। उपाश्रयमें आनेके पश्चात् सूरिजी श्रीसघ से परामर्श करने लगे कि चतुर्मास में साधु-विहार कैसे होगा ? उस समय फिर दो शाही फरमान आये, जिसमें मन्त्रीश्वरने भी आप्रहपूर्वक लिखा था कि “आप वर्षाकाल* और लोकप्रवाद की

* चातुर्मासमें निष्प्रयोजन साधुओंको विहार न करके एक ही स्थानमें रहनेकी जिनाज्ञा है लेकिन विशेष धर्म प्रभावना और अतिष्ठ कारक संयोग होनेसे आचार्य, गीतार्यादि महानुभावोंको देश, काल, भाव विचार कर विहार करनेकी भी अपवाद मार्गसे जिनाज्ञा है। पूर्व कालमें भी ऐसे संयोगोंमें चतुर्मासमें विहार करनेके कई प्रमाण मिलते हैं।

ओर लक्ष्य न देकर अति सत्वर लाहोर पधारे, आपके यहा पधारने से वर्मकी बहुत प्रभावना होगी।” तब सूरिजी ने संघ की सम्मति से वहासे लाहोर जानेके लिये विहार कर दिया। म्हेसाणा ग्राम होते हुए सिद्धपुर पधारे। वहा वन्ना शाहने नगर-प्रवेगोत्सव कराया और बहुतसा द्रव्य व्यय करके पूजा प्रभावनादि किये, वहा पाटणका सघ सूरिजी के दर्शनार्थ आया। वहासे विहार करके पाल्हणपुर पधारे, पाटणका सघ लाहण आदि करके वापिस चला गया। वहासे विहार करके सूरिजी गिवपुरी आये। उनके आग-मनसे महुँर और शिवपुरी का संघ बहुत हर्षित हुआ। सूरिजी के पाल्हणपुर पधारने के समाचार जब सीरोही के राव सुरतान*ने सुने, तब उन्होने जैन सघको एकत्रित करके आज्ञा दी कि “सूरिजी को पाल्हणपुर से यहा आमन्त्रित करने के लिए मैं अपने प्रधान पुरुषोको आपके साथ भेजता हूँ, तुम लोग जल्दीसे जाकर उन्हें यहा पधारनेके लिये विनती करो।” तब श्रीसघ और सीरोही-पतिके प्रेषित पुरुष पाल्हणपुर जाकर सूरिजी को आमन्त्रित कर आये। सूरिजी भी ग्रामनगर विचरते हुए सीरोही पधारे। उनका स्वागत करनेके लिये असंख्य जनता सामने आई, पचशब्द निशाण,

* ये सं० १६२८ में मात्र १२ वर्ष की अवस्थामें सीरोही की राज-गद्दीपर बैठे। ये बड़े वीर, उदार और महाराणा प्रतापकी भाति स्वाधी-नताके उपासक थे। इन्होने अपने जीवनमें ५१ युद्ध किये थे। इनकी घोरताके सामने बड़ी भारी सेना भी भय खाती थी। विशेष जाननेके लिये देखो सिरोही राज्यका इतिहास पृ० २१७ से २४४ तक।

नेजा, मादल, शह, झालर, भेरी आदि नाना प्रकार के वाजित्र बज रहे थे, सधरा न्रिया गुरु-गुण गाती हुई पीछे-पीछे आ रही थीं, भक्तियान् कुलवती म्रिया मुक्ताफलीसे बधा रही थी, जय-जय शब्दका उच्चारण, मधकी गर्जनासा प्रतीत होता था। इस प्रकार सूरिजी सीरोही नगरके राज-मार्गसे होत हुए श्रीनृपभदव स्वामीके मन्दिरमे पधारे। वहा प्रमुके दर्शन स्तुति आदि करके उपाश्रयमे पधारे, वहा स्वर्णगिरिका सध, सूरिजीके दर्शनार्थ आया। राय सुरतानने आडम्बर महित आकर सूरिजी को वन्दना नमस्कार करके पर्युपण पर्न सीरोहीमे करनेकी विनती की। सूरिजीने सध और नृप-आग्रहसे पर्युपण पर्वके ८ दिन सीरोहीमे ही बिताये। सूरिजी के सीरोही विराजने से बहुत धर्म ध्यान हुआ। जिनपूजन, तपश्चर्या आदि बहुत से धर्म कार्य्य हुए। आठ दिन तक अमारि उद्घोषणा करके अनेक जीवोको अभयदान दिया गया। समस्त सीरोही राज्यमे जीव-हिंसा वन्द करनेके लिये सूरिजीने राजाको उपदेश दिया, तत्र राजाने पूर्णिमा के दिन जीवहिंसा दूर करने के लिये उद्घोषणा कर दी और भी राजाने सूरिजी की बहुत भक्ति की। पर्युपणके पञ्चान् वहासे विहार करके सूरिजी जावालपुर (जालोर) पधारे। शाह वन्नाने उत्सवपूर्वक नगरमे प्रवेश कराया।

उस समय लाहोरसे सम्राटने दो व्यक्तियोंके साथ फरमान-पत्र सूरिजी को भेजा, जिन्मे लिखा था कि चातुर्मास मे आपको आनेमे कष्ट होता होगा ? अतएव चातुर्मास पूरा करके शीघ्र ही पधारे, किन्तु पीछे बिलकुल विलम्ब न करे। तत्र सूरिजी कार्तिक

चउमास तक जालोर ही विराजे । चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे मिग-सर महीनेमें पुष्प नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्तमें बहुतसे साधुओं के परिवार सहित विहार किया, उनके साथ चतुर्विध सघ और शाही पुरुष भी थे । विमल यशोगान करनेवाले भोजक, भाट, चारण और दक्ष गाधर्व प्रस्तावोचित सूरिजीका गुण-गान करके श्रीमन्त श्रावकोके पास समुचित पुरस्कार पाते थे । सूरिजी ग्रामानुग्राम विचरते हुए देउर, सराणउ, भमराणी, राडपरङ्गी वगैरह ग्रामोंमें आये । विक्रमपुरका सघ वदन्तार्थ आया और लाहिणीकी । वहासे द्रुणाडइ नगर पधारे, वहा जेसलमेरका सघ आया । वहासे विहार करके रोहीठ नगर पधारे, वहाके शाह थिरा और मेराने बहुत उत्सवपूर्वक नगर-प्रवेश कराया और याचकोको दाज देकर सन्तुष्ट किया । वहा जोधपुरका वडा (विस्तृत) सघ वंदन्तार्थ आया, सूरिजी के दर्शन कर लाहणी आदि करके स्वधर्मी-भक्ति करके वापिस चला गया । चार व्यक्तियोंने नन्दी महोत्सव आदि रचना कर सूरिजी से चतुर्थ व्रत अर्थात् ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया, और भी कईश्रावकोने यथाशक्ति व्रत प्रत्याख्यानादि किये । वहाके ठाकुरने अपने राज्यमें वारस तिथिके दिन सूरिजीके उपदेश से जीवो को अभयदान दिया । वहासे विहार करके पाली नगरमें पधारे, नंटी मंडा कर वृतादि दिये । वहाके सघने बहुत हर्षित होकर चारों प्रकारके धर्मकी विशेष रूपसे आराधना की । वहासे लाविया ग्राम होते हुए सोजत पधारे, प्रभुके मन्दिरके दर्शन किये । वहासे बीलाडा पधारे, वहाके सुप्रसिद्ध कटारिया जातिके श्रावकने नगर प्रवेशोत्सव कराया वहासे जयतारण नगर होते हुए मेडता नगर पधारे ।

उस समय मेडता बहुतसे समृद्धिशाली श्रावकोका लीला स्थान था, बहुतसे जैन मन्दिर नगरकी शोभा बढ़ाते थे। मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रके पराक्रमी और बुद्धिशाली पुत्र भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र वहा निवास करते थे, उन्होंने हाथी, घोडा, रथ और पैदल पुरपोके साथ पचशब्द ढोल, नगारा निशाणकी मधुर ध्वनि से समारोह पूर्वक सूरिजीका नगरमे प्रवेश कराया। मन्त्रीश्वरने महाजनोको एकत्रित कर फोफल दान नारियलकी प्रभावना की। सारे नगरमे लाहिणीकी याचकोको इच्छित दान दिया। जिन मन्दिरोमे बड़ी पूजाएँ और नदि महोत्सवादि कराये, बहुतसे भव्य श्रावकोने व्रत उच्चारण किये। वहा फिर शाही फरमान आया। वहासे समस्त मघके साथ फलोधी पधारे। वहा श्री पार्श्वनाथ प्रभुके प्राचीन मन्दिरमे प्रभुके दर्शन किये।

वहासे विहार करके सूरिजी नागोर पधारे, प्रसन्नचित्त से मन्त्रीश्वर मेहाने द्रव्य व्यय करके स्वागत पूर्वक नगर प्रवेशोत्सव क्रिया। वहा वीकानेरका सघ सूरिजीको बढ़ना करनेके लिये आया। उस सघके साथ ३०० सिजवाला (पालकी) और ४०० प्रवहण थे भक्ति पूर्वक स्वयं-वात्सल्यादि करके वापिसगया। वहासे सूरिजी विहार करके वापेऊ, पडिहारा, मालासर आदि ग्रामोसे होते हुए रिणी (वीकानेरमे १४४ मील) पधारे, वहाके लोग उत्साह पूर्वक

* यह रिणी शहर बहुत प्राचीन है, यहा आगे बहालिय रानाका राज्य था। यहा स० ९४६ के लगभग बना हुआ श्री शीतनाथ स्वामीका मन्दिर अब तक विद्यमान है। जो इतना सगीन और मजबूत है कि आजका मा बना हुआ प्रतीत होता है। कई जगह इसका निर्माणकाल सवत् ९९९ भी लिखा है।

सूरिजी का स्वागत करनेके लिये आये । समस्त सघके साथ मंत्री श्रीठाकुरसिंहके पुत्र मंत्री श्रीरायसिंहने प्रवेशोत्सवादि करके गुरु भक्ति की । वहा महिम का सघ सूरिजी के दर्शन करनेके लिये आया । श्रीशीतलनाथ स्वामीके प्राचीन भव्य जिनालयके दर्शन पूजन कर, सूरिजी को वदन कर वापिस गया । वहासे सूरिजी ने विहार किया, मार्गमे लाहौर तक भक्ति करनेके लिये शाह शाकर सुत वीरदास साथमें हो गया । सूरिजी क्रमसे सरस्वतीपत्तन (सरसा) ओर कसूर होते हुए हापाणइ पधारे, वहासे लाहौर केवल चालीस कोस रहा । सूरिजी के शुभागमनका सदेश लेकर जो व्यक्ति लाहौर गया उसका मंत्रीश्वरने बहुत ही सन्मान किया और उसे सोनेकी रसना (जिह्वा) और कर-ककण आदि बहुमूल्य वस्तुओंका पुरष्कार देकर सन्तुष्ट किया ।



युगप्रधानश्रीजिनचन्द्रसूरि



सुरजीका विहार मार्ग

सातवाँ-प्रकरण

अकबर-प्रतिबोध



रिजीके हापाणइ पवारनेके शुभ सम्वादको सुन कर लाहोरके सघको अपार हर्ष हुआ और न लोग मन्त्रीश्वरके साथ आपके दर्शनार्थ बहा गन । फिर सूरि-महाराजको वीनति करके भक्ति पूर्वक और समारोह सहित लाहौर ले आये । नगरक समीप पहुचने पर मन्त्रीश्वरने सम्राटको निन्दन

किया कि “आपके निमन्त्रित सूरि-महाराज पथांगे हें ।” जिसे मुनकर अकबर अति प्रसन्न हुआ और उत्सुकता पूर्वक उन्हे बुलानेको कहा । इस आशयको एक कविने इस प्रकार व्यक्त किया है —

पूज्य पधारथा जाणिकरि मेली तन सघात ।

पहुता श्रीगुरु वादवा सफल करइ निज आय ॥८३॥

तेडी डेरइ आणि करि कहइ शाह नइ मन्त्रीस ।

जे तुम सुगुरु नोठाविया, ते आव्या सुरीस ॥८४॥

अकरर उलतो इम भणइ तेडउ ते गणधार ।

दर्शन तसु कउ चाहियइ, जिम हुइ हर्ष अपार ॥८५॥

सूरिजीके साथ वा० जयसोम, कनकमोम, वा० महिमराज, वा० रत्ननिधान विद्वत् गुणचिन्तय और समयसुन्दर आदि बडे बडे प्रकाण्ड विद्वान यगस्त्री और निर्मल चारित्रको पालन करनेवाले ३१ साधु थे । स० १६४८ के फाटगुन शुक्ला १२ के दिन पुण्य-योगमे सूरिजीने लाहौर नगरमे प्रवेश किया । उस दिन मुसल-मानोके ईदका पर्व था ।

मन्त्रीधरने सूरिजीके स्वागतोपलक्षमे बहुत द्रव्य व्यय करके महोत्सव किया जिसका वर्णन किमी कविने इस प्रकार किया है —

घडी पन्नो मद गयन शीश सिन्दूर सवारै ।

चरर अमोलस चार चामरा चाचरा सुधारै ॥

घणीनाद वीर-घट इणि उपरि अंगारी ।

गूघर पातर पेसता जु थरहराए भारी ॥

परतिस घजा फगनिजा इम सामेले सचरे ।

जिनचन्द्रसूरि आया जुगति इम कर्मचद उच्छउ करै ॥२॥

*

~

~

~

*~

श्रीमहाराज पधारे लाहौर, अकरर शाह मतगत्र जूय समेला ।
चढे हैं नराव बडे उमराव, नगाराकी घूस सुहोत समेला ॥

घजे हैं आरब्ध थटे हं झिण्डा, फरांट निशान घुरे हं नौत
अरावा सचेला ।

पातिशाह अकबर देस प्रताप, रहे जिनचद्रका सूर्य उजेला ॥१॥

सूरिजीका स्वागत करनेके लिये राजा, महाराजा, मलिक, खान, शेख, सूबेदार, अमीर, उमराव, आदि सभी प्रतिष्ठित शाही-पुरुष और अमरय नागरिक आये थे । सम्राट अकबर स्वयं राज-महलके गवाक्षमें बैठे हुए सूरि-महाराजकी बात जोह रहे थे । वे दूरसे ही सूरिजीको आत हुए देखकर अत्यन्त प्रमन्नता-पूर्वक नीचे उतर आये और बहुत भक्ति और विनय पूर्वक सूरिजीको वन्दन करके उनके विहारकी सुर-शाता पूछने लगे, “हे भगवा ! आपको सम्भातसे यहा आनेमें मार्ग-श्रम तो हुआ ही होगा ! किन्तु मेने भविष्यमें जीव-दया प्रचारके हेतु ही यहा आपको बुलाया था । अब आपने यहा पधारकर मेरे पर असीम कृपा की है । मैं अब आपसे जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्तकर जीवोको अभय दानादि दे कर आपका श्रेय (मार्ग-श्रम) दूर करूंगा ।”

सम्राटके इन विनीत वचनोको सुनकर सूरि-महाराजने मृदु-वचनोसे कहा “सद् धर्मका प्रचार करना ही केवल हमारा ध्येय है और सर्वत्र विचरते रहना ही हमारा आचार है । अत हमे मार्ग श्रमका जरा भी श्रेय नहीं है । हम अपना कर्तव्य पालन करनेके लिये ही यहा आये हैं । आपकी धर्म-जिज्ञासुता देखकर हमे परम आनन्द हुआ ।

इस प्रकार वार्तालाप करते हुए सम्राट अत्यन्त हर्षित हुए। वे बड़े सन्मानके साथ सूरिजीसे हाथ मिलाये हुए उन्हें ड्यौढी-महल में ले गये। जिसका वर्णन एक कविने इस प्रकार किया है —

पहुता गुरु दीवाण देसी अकबर, आवइ साम्हा ऊमही ए।

बदी गुरुना पाय मोहि पधारिया, सइ हथि गुरु नौ करग्रहीए ८?

पहुता ट्योढी मोहि सहगुरु शाहजी, धर्म वात रंगे करइ ए।

चिन्ते श्रीजी देखि (ए) गुरु सेवता, पाप ताप दूरइ हरइ ए ॥८९॥

[यु० श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिबोध रास]

महलमें यथा-स्थान बैठ जानेके पश्चात् परस्पर धर्म-गोष्ठी करने लगे। सूरिजीने अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा प्रभावशाली शब्दोंमें इस प्रकार उपदेश देना आरम्भ किया —

आत्मा एक सनातन सत्य पदार्थ है, जिसका आस्तित्व अनुभवादि द्वारा सिद्ध है। वह ज्ञान, दर्शन, चरित्र आदि सद्गुणोंका समुद्र है, और चैतन्य उसका लक्षण है। जब वह अपने सद्गुणों में स्थित और लीन रहती है तब तक उसमें अति शुद्धता बनी रहती है। काम, क्रोध, मोह, अज्ञान, आदि गुणोंके सम्बन्ध होनेपर उसके साथ कर्मोंका बन्धन हो जाता है। उन कर्मोंके कारण ही विविध योनिमें नाना प्रकारके रूप धारण करके जीव कभी मनुष्य कभी पशु-पक्षी और कभी देव रूपमें अवतीर्ण होता है। अपने पुण्य पापके कारण कभी कभी रंक कभी सजल कभी दुर्बल कभी सत्ताधीश और कभी भिक्षुक आदि नामोंमें जगतमें अपना परिचय देता हुआ सुख दुःखका अनुभव करता है।

प्रत्येक आत्माने ऐसे अनेक पर्यायोको धारण किया है, और जब तक उसके साथ कर्मों का सम्बन्ध है, करता ही रहेगा। कर्मों का सर्वथा विनाश हो जानेसे आत्माका शुद्ध स्वभाव प्रकट हो जाता है। आत्माकी इस अवस्थाको ही जैन-दर्शनमें परमात्मा या ईश्वर कहते हैं। इस विवेचनसे यह स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव परमात्मा हो सकता है। अतः प्रत्येक प्राणीका यह कर्तव्य है कि वह परमात्मा बननेके कारणोंको समझकर उनके अनुकूल वर्तन करे।

आत्माके परमात्मा बननेके जो मार्ग हैं, उन्हें धर्म या साधक अवस्थाके नामसे सम्बोधित किया जाता है और दुर्भावोंको पैदाकर कर्म बन्धके जितने भी कारण हैं उनको पाप या बाधक अवस्था कहते हैं। प्रत्येक प्राणीको साधक और बाधक मार्गों का ज्ञान नहीं होता अतः जो तत्त्व-ज्ञानके गहरे अध्ययन द्वारा उन्हें यथावत् जानकर साधक-मार्गका आश्रय लेते हैं। और दूसरोंको सन्मार्ग बतलाते हैं उन्हें जैन-दर्शनमें गुरुके नामसे सम्बोधित किया है। वस्तुतः आत्मा न पुरुष है न स्त्री, न निर्मल है न सजल, न धनी है न शक, न्यो कि ये सब अवस्थायें तो कर्म-जनित हैं और आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द है। आत्माए, सत्ता, द्रव्य, गुण और शक्तिकी अपेक्षा से समान है अतः सभी जीव मित्रवत् होनेसे परस्पर प्रेम के पात्र हैं। जैसे अपनेको जीवन प्यारा है वैसे सभी जीवोंको जीवन प्यारा और मरण भयावह है। अतएव उन मनको सुख पूर्वक जीने देना ही आत्माका प्रथम कर्तव्य है। परमात्म-अवस्था प्राप्तिके साधनोंमें समस्त जीवोंके साथ मित्रता या प्रेम-भावका व्यवहार करना सर्वो-

सम प्रधान साधन या धर्म है। इसी धर्मको 'अहिंसा' नामसे भी पुकारते हैं।

जब एक सत्ता-प्राप्त प्राणी एक निर्बल और क्षुद्र जीवको सताने को उतारू होता है तब वह अपने आप ही दूसरेको, अपनेको सताने के लिये आह्वान करता है और उसके मनकी कठोर वृत्तियाँ पापमय व्यापारोकी ओर उसे झुकाती है। जहा समस्त आत्माओको मैत्री-भाव रूप समान स्थान दिया जाता है, वहा विश्व-प्रेम, सहिष्णुता, उदारता आदि सद्गुणोका श्रोत प्रवाहित होने लगता है। अपना आधिपत्य जमानेके लिये मनुष्यको विश्व-प्रेम द्वारा सर्व जन्तुओके कल्याणका ध्यान करना चाहिए, क्योंकि दूसरेको सता कर स्वयं कोई सुखी नहीं रह सकता है। अपने मनोभावो द्वारा किसी प्राणीका अहित चिन्तन किये जानेको जैनदर्शनमे "हिंसा" नामसे सम्बोधित किया गया है। जहा हिंसाका इतना सूक्ष्म-तया विवेचन है, वहा यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं पडती कि किसी जीवको मारनेमे अधर्म या पाप नहीं है।

जिस देश या ग्रामका शासक अपनी प्रजाको सुखी नहीं रख सकता, उसके प्रति वात्सल्य नहीं रखता और राज्यमें नाना प्रकारके कर लगा देता है, उस राज्यमे शान्ति और सुख-समृद्धिकी आशा ही नहीं की जा सकती, यह प्रत्यक्ष है। इसलिए अपने आधिपत्य मे रहे हुए प्राणी जिससे शान्ति-पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकें वैसा निरन्तर ध्यान रखना चाहिये। सारे जगतका कल्याण हो, सब सुखी हो, कोई भी दुःखी न रहे, इस प्रकारकी हितेच्छु-वृत्ति को

अहिंसा कहते हैं। जहा अहिंसा है, अर्थात् किसी प्राणीको दुःख न पहुचाना ही जहा का प्रयान लक्ष्य है, वहा अन्य कई गुण स्वतः आकर निवाम करते हैं। दयालु आत्माके समीप छल, प्रपच, चिंता आदि वासनाएँ और अमद् व्यवहार प्रवृत्तियें कभी नहीं फटकती। वह सज ससारको अपनाकर लेता है, जहा जाता है वहीं अन्य जीवों के अभयकारक होनेसे पूज्य रूपमे देखा जाता है। अहिंसा तत्वमें रमण करने वाले योगियोंके पास सिंह और बकरी वैर भावोका त्याग कर बैठते हैं। उनका दर्शन मात्रसे ही अद्भुत प्रभाव पडता है, बिना कहे सहस्रों नर नारी उनकी सेवामें उद्यत रहते हैं। अपने हृदयकी पवित्रता दूसरेके पाप भावोको भुलाकर हित चिन्तनकी ओर ही झुकाती है। जो दूसरोको अभयकारक होता है वह स्वयं सर्वदाके लिये अभय बन जाता है। ससारमे जहा जहा दूसरों को कष्ट पहुचानेकी नीति है वहा अज्ञान्ति, बलह सदाके लिये निवास करते हैं इसलिए प्रजापर अपना प्रभाव डालनेके हेतु उनके कल्याण-मार्ग और सुख शान्तिके उपायोकी ओर ही लक्ष्य रखना चाहिये। जहा स्वार्थ-साधनके हेतु मनुष्य अन्धा बन जाता है वहा असत्य भाषण, चोरी, परस्त्री ससर्ग आदि विकृत भावोकी लहरें लहराती हैं। किन्तु जहा अहिंसा रूपी सद्गुण का निवास होता है वहा ये दुर्गुण नहीं आ सकते, क्योंकि किसीकी चोरी करना, परस्त्रीके प्रति बुरे भाव रखना, हिंसा भावके बिना नहीं हो सकते। यदि सब मनुष्योपर हिंसा-भावकी अशुभ भावना अरूढ हो जाय तो जगत्-व्यवहारमे अनेक अडचनें उपस्थित हो जाँय इसलिये स्वकल्याण चाहने

वाले मनुष्यको हिंसा भावको सर्वदा त्याग करना चाहिये । राजनीति मे प्रजापर चात्सल्य रखना और उसे सुख शान्तिसे रहने देना ही प्रजापालकका धर्म कहा गया है । मनुष्य तो क्या पशु पक्षी भी जो अपने राज्यमे रहते हैं, वे भी प्रजा हो हैं उन्हें प्राण रहित करना राजनीति कदापि नहीं हो सकती अतः उन्हें भी निर्भर रहने देना चाहिये । धर्मके साथ आत्माका पूर्ण सम्बन्ध है । किसीको अपने धर्मसे छुडाना और धर्म-पालनमे बाधा देकर धार्मिक आघात पहुचाना भी प्रजाको विद्रोही बनाना है, अतः शासकको मत सहिष्णुताका गुण अवश्य धारण करना चाहिये । शासकका प्रजावात्सल्य ही एकमात्र प्रजाके हृदय-सम्राट बननेका हेतु है । अतएव सर्वदा उदार वृत्ति और हृदय निर्मल पवित्र रखना चाहिये । हृदय निर्मल रखनेके लिये मात व्यसनोका अवश्य त्याग करना चाहिये —जूआ खेलना, मास भक्षण, मदिरा पान, शिकार, प्राणी हिंसा, चोरी करना और परस्त्री गमन इन्हे त्यागने वालोको नदा जय होती है और कीर्ति फैलती है । अहिंसा रूपी सद्वृत्त धारण करनेसे सतत श्रीवृद्धि होती है, लाखो प्राणियोका आशीर्वाद मिलना है । प्राचीन इतिहाससे यह स्पष्ट है कि जिस समय जैनो और बौद्धोका अहिंसा प्रचार अति जोरो पर था तब राज्योंसे कलह, विग्रह और अशान्ति चिरकालके लिये अन्तर्ध्यान हो गई थी ।

सूरिजीके अमृत मय उपदेश श्रवण करनेसे सम्राटके चित्तमें अत्यन्त प्रभाव पडा और कर्तव्यका बीज परिपुष्ट हुआ । उनके प्रति पूज्य भाव और भक्तिका आदुर्भाव हुआ । उसने बल और स्वर्ण-

मुद्रायें लाकर भक्ति पूर्वक सूरिजीके मन्मुख रसकर निवेदन किया "हे गुरुवर्य ! आप इनमें से अपनी आवश्यकतानुसार कुछ लेकर मुझे अनुगृहीत करें ।" तब सूरिजी ने कहा "साधुओंको परिग्रह रखना उचित नहीं, अतः हम इन सबका त्याग करें ।" सूरिजी के इस निर्लोभीपनको देखकर सम्राट मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हें अपने हृदय मन्दिरमें आराध्य गुरु करके स्थापित किया । इसके पश्चात् सम्राट, सूरिजी के साथ महलसे बाहर आये, और समस्त सभाजन, दीवानो और काजियोको सरोधित कर कत्ने लगे "ये जैनाचार्य, धैर्यवान धर्मधुरन्धर और विशिष्ट गुणोके समुद्र हैं । हमारा आज अहो भाग्य है हमारी ऋद्धि धन और राज्य सम्पदा आज सफल है जो कि इनके दर्शन हुए ।"

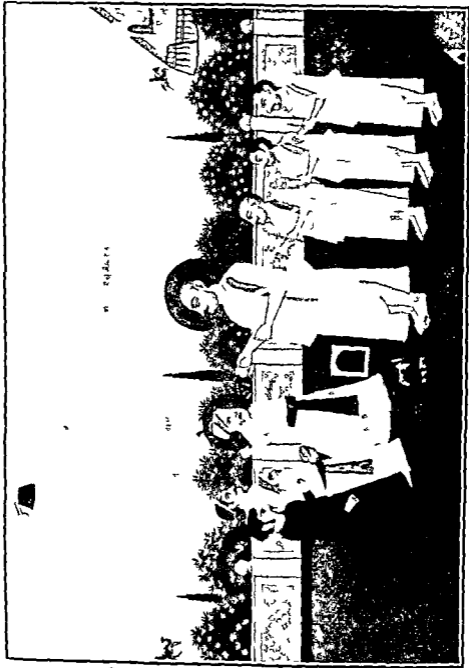
सम्राटने सूरिजीसे निवेदन किया "हे पूज्यवर ! आपने यहा पधारकर हमारे पर महती कृपा की है । अब प्रति दिन अवश्य एकवार धर्मोपदेश सुनाने और दर्शन देनेके लिये हमारे महलमें पधारा करें × । जैसी मेरी दया-धर्म पर स्थिर मति है वैसी मेरे अन्त पुर और सन्तानकी भी दया बुद्धि हो ऐसी मेरी अभिलाषा है । अब आप सुजीए उपाश्रय पधारे और सबकी आशा पूर्ण करें ।"

सम्राटने मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको आज्ञा दी कि हाथी, घोडा और वाजित्र परिवार ले कर उत्सव के साथ गुरु महाराज को उपाश्रय

× एकशोदर्शनं देयं शुष्माग्निं प्रति वासरम् ।

अहमाकं धर्मं वृद्धयर्थमवारितं गतागते ॥ ९० ॥

[कर्मचन्द्र मन्त्रिवश प्रबन्ध.]



२०५५२५

मुद्रायें लाकर भक्ति पूर्वक सूरिजीके सन्मुख रसकर निवेदन किया "हे गुरुवर्य ! आप इनमे से अपनी आवश्यकतानुसार कुछ लेकर मुझे अनुगृहीत करें ।" तब सूरिजी ने कहा "साधुओको परिग्रह ररना उचित नहीं, अत हम इन सबका क्या करे ।" सूरिजी क इस निलोभीपनको देखकर सम्राट मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हें अपने हृदय मन्दिरमे आराध्य गुरु करके स्थापित किया । इसके पश्चात् सम्राट, सूरिजी के साथ महलसे बाहर आये , और समस्त सभाजन, दीवानो और काजियोको सवोधित कर कहने लगे "ये जैनाचार्य, धैर्यवान धर्मधुरन्धर और विशिष्ट गुणोंके समुद्र हैं । हमारा आज्ञा अहो भाग्य है हमारी वृद्धि धन और राज्य सम्पदा आज सफल है जो कि इनके दर्शन हुए ।"

सम्राटने सूरिजीसे निवेदन किया "हे पूज्यवर ! आपने यहा पधारकर हमारे पर महती कृपा की है । अब प्रति दिन अवश्य एकवार धर्मोपदेश सुनाने और दर्शन देनेके लिये हमारे महलमे पधारा करें X । जैमी मेरी दया-धर्म पर स्थिर मति है वैसी मेरे अन्त पुर और सन्तानकी भी दया बुद्धि हो ऐसी मेरी अभिलाषा है । अब आप खुशीसे उपाश्रय पधारे और सबकी आशा पूर्ण करे ।"

सम्राटने मन्त्रीधर कर्मचन्द्रको आज्ञा दी कि हाथी, घोडा और वाजित्र परिवार ले कर उत्सव के साथ गुरु महाराज को उपाश्रय

X एकशोदर्शनं देय युष्माभि प्रति वासरम् ।

अस्माक धर्म वृद्धयर्थमवारित गतागत ॥ ९० ॥

[कर्मचन्द्र मन्त्रिवश प्ररन्ध,]

पहुँचाओ !” तब सूरिजी ने कहा “नहीं, राजन् । हमारे लिये उत्सव आडम्बरकी कोई आवश्यकता नहीं है । दयामय जैन धर्मका प्रचार ही हमारे लिये परम उत्सव रूप है !” परन्तु सम्राट अकबरने अत्यन्त आपद्द पूर्वक महान् उत्सवके साथ सूरि महाराज को पहुँचानेके लिये मन्त्रीश्वरको फिरसे आज्ञा दी ।

परम धर्मिष्ठ लाहौरके जौहरी “परवत शाह” ने मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रसे विनती की “यहासे उपाश्रय तक प्रवेशोत्सव करानेका लाभ मुझे लेने दें ।” फिर मन्त्रीश्वरकी आज्ञा प्राप्त करके उसने हाथी, घोडा, पैदल सिपाही और शाही वाजिन्त्रोके साथ सूरिजीको उपाश्रयमे पहुँचाया । अन्य श्रावकोने भी चित्त और वित्तसे धर्मकी प्रभावना की । सधवा स्त्रियोने मुक्ताफलोंसे वधाया और भक्तिसे गुरु-गुण-गर्भित गीत गाये । भाट, भोजक आदि याचकोने सूरिजीकी प्रशस्त कीर्तिका गुणानुवाद करके श्रावकोसे मनोवाञ्छित द्रव्य पाया ।

सूरि-महाराजने उपाश्रयमे पधारकर मधुर ध्वनिसे मङ्गलमय देशना दी, जिससे संघपर अनुपम प्रभाव पडा । सब लोग धन्य-धन्य, जय-जय करते हुए अपने-अपने घर गये ।

सूरिजीके लाहौर पधारनेसे प्रतिदिन अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे । यह सब श्रेय सम्राट अकबर और मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीको ही था, जिन्होंने दूर देशसे आमन्त्रितकर सूरि-महाराजको

सम्राटके विनीत-आग्रहसे सूरिजी प्रतिदिन शाही महलमे जाकर
देश देने लगे। जैन धर्मकी सर्वोत्तम विशेषताएँ और
आका स्वरूप सम्राटको भली भाँति बतला दिया, जिससे वे
उ धर्मपरायण और दयालु हो गये।

सम्राट अपने दरवारमें सूरिजीकी सतत प्रशंसा × किया करते
श्वेताम्बरादि यति साधु मँने बहुत-से देखे हैं। अनेक धर्मक
का सत्संग किया है, परन्तु इनके सदृश ज्ञान्त, त्यागी,
और निराभिमानी किसीको नहीं पाया। इनके दर्शन और
मसे हमारा जन्म सफल हुआ है।

सूरिजीको सम्राट 'बडे गुरु' * नामसे सम्बोधन किया करते थे,

दिन प्रति श्रीजी सु बलि मिलता, बधिउ अधिक सनेह ।

गुरनी सूरति देखी अकबर, कइइ जगि धन धन एह ॥ ७ ॥

केई क्रोधी केई लोभी कूटे, केइ मनि धरइ गुमान ।

पट् दर्शन भइ नयण निहाले नही कोई एह समान ॥ ८ ॥

[यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास]

जिनचन्द्रसूरि सम को नहीं रे, गच्छ चौरासी माहि ।

साग प्रधान मचे सुनो रे, कइइ अकबर पातिसाहि ॥ ३ ॥

×

×

×

श्वेतम्बर हम बहु मिले रे, इन सम और न कोई ।

अम्बर तारा गण घणा रे, दिनकर सम कुण होई ॥ ५ ॥

[विमलविनय कृत गीत गा ७]

बृहद् गुरु तथा पूज्या ख्याति माप्ता पुरेऽखिले ।

शाहि सम्मानतो यस्मा जना वृद्धानुगामिन ॥ ९४ ॥

इससे हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी 'बड़े गुरु' के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध हुए। राजा, महाराजा, सूवेदार, मुसाहिब और सम्राटका सारा परिवार उनके परम भक्त बन गये।

एक दिन सम्राटने सूरिजीसे धर्म-चर्चा करते हुए भक्तिके उल्लासमे आकर एक सौ स्वर्ण-मुद्राएं उनके सन्मुख रखी। उन्होने साध्वाचारका स्वरूप दर्शाते हुए कहा,—“सम्राट् ! द्रव्यग्रहण करना तो क्या उसे छूना भी साध्वाचारसे विपरीत है, क्योंकि द्रव्यसे ममत्वादि अनेक दुर्गुणोंकी उत्पत्ति होती है, जैन साधुओंके लिये वस्त्र, पात्र यावत् अपने शरीरपर भी मूर्च्छा—आसक्ति करना निषिद्ध है। अपने माता, पिता, कुटुम्ब, परिवार और धन-दौलत त्याग करनेसे ही जैन-दीक्षा ग्रहण की जाती है और आजीवन उन्हें पाच कठिन प्रतिज्ञाएँ ग्रहण करनी पडती हैं, जिनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है —

(१) समस्त प्रकारको हिंसा, मन बचन और कायासे, करने कराने अनुमोदन करनेका त्याग।

(२) सब प्रकारसे मिथ्या भाषणका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(३) किसीके बिना दी हुई छोटी-से-छोटी वस्तुके ग्रहणका त्रिकरण, त्रियोगसे त्याग।

(४) समस्त प्रकारको काम-वासनाओंका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(५) समस्त प्रकारके द्रव्योंकी मूर्च्छाका त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

इसीसे जैन साधु निग्रन्थ कहे जाते हैं । अतः हमारे लिए द्रव्य सर्वथा अग्राह्य है ।”

मूरिजीके इन निर्वाभी वचनोको सुनकर सम्राट् अत्यन्त चक्रित और हर्षित हुआ । उस द्रव्यको धर्म-कार्यमे खर्च करनेके लिये मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको सौंप दिया । उन्होंने उसे धर्म-स्थानमे व्यय कर दिया ।

एक समय सम्राट अकबरके पुत्र सलीम सुरत्राणके मूल नक्षत्रके प्रथम पादमे कन्याका जन्म हुआ । ज्योतिषी लोगोने कहा कि इसका जन्मयोग पिताके लिये अनिष्टकारक है । उसका मुल भी नहीं देखकर परित्याग कर देना चाहिये । तब सम्राटने शेर अजुलफजल आदि विद्वानोको बुलाकर मूल-नक्षत्रक जन्म-दोषका प्रतिकार पूजा । उनसे परामर्श करके मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको पूछकर सम्राटने आज्ञा दी,—हे मन्त्री ! जैन दर्शनके अनुसार इस दोषकी उपशान्ति करनेके लिये शान्ति-विधि आदिका उचित प्रवन्ध करो ।

सम्राटकी आज्ञा पाकर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रने विशेष विधिसे सोने-चाँदीके घडो द्वारा महान् उत्सवके साथ मित्ती चैत्र शुक्ला १५ - के

* इस चैत्री पुनम दिवस शान्तिरु, शाहि हुकूम मुहते कीयउ ।

जिनराज जिनचन्द्रसूरि वन्दो, दान दावरु नइ दीयउ ॥ १२ ॥

[यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिषेध रास]

पठी शेरजती गुण नी पेटी, तेह नइ आवी मूल मा वेटी ।

तेहया पण्डित जोशी जेहो, बोल्या जरमा मूको णहो ॥ ३८ ॥

इससे हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी 'बड़े गुरु' के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध हुए। राजा, महाराजा, सूबेदार, मुसाहिव और सम्राटका सारा परिवार उनके परम भक्त बन गये।

एक दिन सम्राटने सूरिजीसे धर्म-चर्चा करते हुए भक्तिके उल्लासमे आकर एक सौ स्वर्ण-मुद्राएं उनके सन्मुख रखी। उन्होने साध्वाचारका स्वरूप दर्शाते हुए कहा,—“सम्राट् ! द्रव्यग्रहण करना तो क्या उसे छूना भी साध्वाचारसे विपरीत है, क्योंकि द्रव्यसे ममत्वादि अनेक दुर्गुणोंकी उत्पत्ति होती है, जैन साधुओंके लिये वस्त्र, पात्र यावन् अपने शरीरपर भी मूर्च्छा—आसक्ति करना निषिद्ध है। अपने माता, पिता, कुटुम्ब, परिवार और धन-दौलत त्याग करनेसे ही जैन-दीक्षा ग्रहण को जाती है और आजीवन उन्हें पाच कठिन प्रतिज्ञाएँ ग्रहण करनी पडती हैं, जिनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है —

(१) समस्त प्रकारकी हिंसा, मन वचन और कायासे, करने कराने अनुमोदन करनेका त्याग।

(२) सब प्रकारसे मिथ्या भाषणका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(३) किसीके बिना दी हुई छोटी-से-छोटी वस्तुके ग्रहणका त्रिकरण, त्रियोगसे त्याग।

(४) समस्त प्रकारकी काम-वासनाओंका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(५) समस्त प्रकारके द्रव्योंकी मूर्च्छाका त्रिकरण, तीन याग-से त्याग।

मुसाहिवोके माथ वहा आए और १००००) रुपये जिनेन्द्र भगवानके सन्मुग भेंट कर प्रभु-भक्ति और जिन शासनका गौरव बढ़ाया ।

शान्तिके निमित्त मन्त्रीश्वरके कथनसे प्रभुके स्नात्रजलको सम्राटने मँगाकर अपने दोनो नेत्रोपर लगाया और अन्त पुरमे भी उस न्हवण-जलको भक्तिपूर्वक लगानेके लिये भेजा । इस अष्टोत्तरी स्नात्रके पवित्र दिवसमे समस्त श्रावक श्राविकाओने आम्बिलकी तपश्चर्या की । इस अष्टोत्तरी स्नात्रके अनुष्ठानसे सर्व दोष उप-शान्त हुए, जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ ।

सम्राट अकबरके मुसलमान होते हुए भी जैन-विधिसे शान्तिक स्नात्र कराना, जैन धर्मके प्रति उनकी विशेष श्रद्धा-भक्ति और अनु-पम आदरका परिचायक है ।

वर्म गोष्ठीपरायण सम्राट अकबर के आप्रह से सूरिजी ने भविष्यमें जैन वर्मकी विशेष प्रभावनाके हेतु स० १६४६ का चातुर्मास लाहौर मे करना निश्चित किया ।



दिन (श्री सुपाश्वर्चनाथजीका) अष्टोत्तरी स्नात्र कराया, जिसमे लगभग एक लाख रुपये खर्च हुए । वा० श्री मानसिंहजी (महिमराज) ने समस्त शास्त्रोक्त विधि सम्पन्न कराई । इस उपलक्ष्यमे श्रीजिनचन्द्रसूरिजीके आदेशसे श्री जयसोमजीने अष्टोत्तरी स्नात्रकी विधि गद्य भाषामे बनाई - ।

पूजन शेष हो जानेके अनन्तर मङ्गल दीपक और आरतीके समय सम्राट और उनके पुत्र शेखुजी (सलीम-शाहजादा) अनेक

सुनि करै इत्या नत्रि लीजै, स्नात्र अष्टोत्तरी कीजै ।

पातस्या हरल्यो तेणिवार, कुट्टण वामण बडे गवार ॥ ४० ॥

* * *

झूठे वामण ऋषि भली बात, करो अष्टोत्तरी स्नात्र ।

हुकुम करमचन्द्र नड दीधो, मानसिंहे अष्टोत्तरी कीधो ॥ ४२ ॥

थानसिंह मानुकल्याण करि स्नात्र उपासरइ जाण ।

पातस्या शेखनी आयइ, लाख रुपइया खर्चावै ॥ ४३ ॥

स्नात्र छपास नु करता, श्राद्ध श्राविका आम्बिल धरता ।

जिनशासन नी उन्नति थाय, विघ्नपातशाह केरू जाय ॥ ४४ ॥

[कवि ऋषभदास कृत हीरविजयसूरि रास]

इसके विषयमें विपेश जाननेके लिये "सूरीश्वर और सम्राट" पृ० १५४ कर्मचन्द्र-मत्रि-चक्ष प्रबन्ध पृत्ति और भानुचन्द्र-चरित्र देखो ।

- श्रीजिनचन्द्र गुरुणामादेशा (आ) लामपुरे लिखिता ।

जयसोमोपाध्यायै स्नात्र विधि पुण्य वृद्धि कृता ॥ १ ॥

इसकी हस्तलिखित प्रति बीकानेरके ज्ञानभण्डार और उ० जयचन्द्रजीके भण्डारमें है ।

मे तुरसम्राजान ने सीरोहीपर चढ़ाई की थी। तब १०५० धातुकी जैन प्रतिमाए बहासे लूटकर फतैपुर सीकरीमे सम्राटके पाम लाया। वह उन प्रतिमाओकी गलाकर मोना निकालना चाहता था, किन्तु नीति-परायण सम्राट अकबरने उसे ऐसा न करने देकर प्रतिमाओको सुरक्षित रखा। उसके पश्चान् स० १६३६ मे आपाढ शुक्ला ११ के दिन वीकानेरके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने सम्राटको प्रसन्न कर प्रतिमाए वीकानेर लाकर विराजमान की, जो अभी तक यहांके श्री चिन्ता-मणिजीके मन्दिरमे विग्रमान हैं, इस विषयमें विगेष आगेके प्रकरणमे लिखा जायगा।

जब हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी लाहौरमे विराजते थे, तब भी एक ऐसी दुःखद घटनाका समाचार मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको मिला कि नौरङ्गरान नामक किसी मुसलमान अधिकारीने द्वारिकाके जैन-मन्दिरका विनाश कर दिया है। यह सुनकर मंत्रीश्वरने सूरि-महाराजको निवेदन किया “हे भगवन् ! यदि सम्राटको उपदेश देकर तीर्थ-रक्षाके लिये कुछ उपाय न किया गया, तो बवन लोग द्वारिकाकी भाति अन्य तीर्थोंका भी विनाश करत देर नहीं लगावेंगे।”

सूरि-महाराजने इस कार्यको आवश्यक जानकर सम्राटके समक्ष शत्रुञ्जय प्रभृति तीर्थोंका महात्म्य बतलाया और साथ-साथ उनके उचित प्रबन्ध करनेकी भी सूचना दी। सम्राटने सूरिजीकी इस पवित्र आज्ञाको शिरोधार्य करके प्रसन्नतापूर्वक समस्त तीर्थोंकी रक्षाके लिए एक फरमान-पत्र लिखवाया और उसके उपर अपनी

आठवाँ प्रकरण

युग-प्रधान षट् प्राप्ति



र्यं देवमन्दिरोका विध्वंस करना मुसलमानोंका स्वाभाविक दोष था। यद्यपि सम्राट अकबरके सुख-साम्राज्यमें ऐसा दुष्कृत्य करना सर्वथा निषिद्ध था, तो भी “जाति स्वभाव न मुच्यते” नीति वाक्यके अनुसार ऐसी घटनाएँ बहुधा

हुआ करती थीं, यह तत्कालीन इतिहाससे स्पष्ट है। स० १६३३

* सम्राटके समयमें जिनप्रतिमाकी आसातना होनेका उल्लेख “हीर-विजयसूरि रास” में कवि ऋषभदास ने भी इस प्रकार किया है —

“पाटण थी पछइ करइ विहार, प्रम्बावती मा आवणहार ।

सोजितरै रखा कारणवती, आशातना हुई प्रतिमा अती ॥ १८ ॥

अहमदाबाद अकर शहा जिसै, पासे आजमखान सही तिसै ।

खडी प्रतिमा पास नी त्याहि, लख्यु आव्यु प्रम्बावती माहि ॥ १९ ॥

हाकिम हसनखान कर करी, आसातना प्रतिमाकी करी ।

सुणी हीर सोजितरै रखा, बोरमदें पछे गुहजी गया ॥ २० ॥”

[आनन्द-काव्य-महौदधि मौ० ९ पृ० ४८]

में तुरसमरान ने सीरोहीपर चढाई की थी। तब १०५० धातुकी जैन प्रतिमाएँ वहासे लूटकर फतैपुर सीकरीमे सम्राटके पास लाया। वह उन प्रतिमाओको गलाकर सोना निकालना चाहता था, किन्तु नीति-परायण सम्राट अकबरने उसे ऐसा न करने देकर प्रतिमाओको सुरक्षित रखा। उसके पश्चात् स० १६३६ मे आपाठ शुक्ला ११ के दिन वीकानेरके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने सम्राटको प्रसन्न कर प्रतिमाएँ वीकानेर लाकर विराजमान की, जो अभी तक यहाके श्री चिन्ता-मणिजीके मन्दिरमे विद्यमान हैं, इस विषयमे विशेष आगेके प्रकरणमे लिखा जायगा।

जब हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी लाहौरमे विराजते थे, तब भी एक ऐसी दुःखद घटनाका समाचार मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको मिला कि नौरङ्गरान नामक किसी मुसलमान अधिकारीने द्वारिकाके जैन-मन्दिरको विनाश कर दिया है। यह सुनकर मंत्रीश्वरने सूरि-महाराजको निवेदन किया “हे भगवन्! यदि सम्राटको उपदेश देकर तीर्थ-रक्षाके लिये कुछ उपाय न किया गया, तो ववन लोग द्वारिकाकी भाँति अन्य तीर्थोंका भी विनाश करत देर नहीं लगावेंगे।”

सूरि-महाराजने इस कार्यको आवश्यक जानकर सम्राटके समक्ष शत्रुञ्जय प्रभृति तीर्थोंका महात्म्य बतलाया और साथ-साथ उनके उचित प्रबन्ध करनेकी भी सूचना दी। सम्राटने सूरिजीकी इस पवित्र आज्ञाको शिरोधार्य करके प्रसन्नतापूर्वक ममस्त तीर्थोंकी रक्षाके लिए एक फरमान-पत्र लिखवाया और उसके ऊपर अपनी

मुद्रिका (मोहर) लगाकर मन्त्रीश्वरको समर्पित किया । उस फरमान-पत्रमे लिखा था कि आजसे ममस्त जैन तीर्थ मन्त्रीश्वरके आधीन कर दिये गये हैं † ।

सम्राटने अहमदाबादके तत्कालीन सूत्रेदार आजमखान x को शत्रुञ्जय, गिरनार आदि तीर्थों की रक्षा का सरस्त हुक्म देकर फरमान भेजा । जिससे महातीर्थ श्री शत्रुञ्जय पर म्लेच्छोंका किया हुआ उपद्रव निवारण हुआ ।

यह फरमान पत्र इलाही सन् ३६ के सहरयुर महीनेमे लिखा गया था, जिसका उल्लेख इसी आशयके एक फरमानके भाषानुवादमे है, जिसकी नकल चौकानेर “ज्ञान भण्डार” से लेकर इस पुस्तकके परिशिष्ट मे प्रकाशित की गई है ।

† अन्यदा द्वारिका सत्कचैत्य ध्वशेऽमुना श्रुते ।

श्री जैन चैत्य रक्षायै विज्ञप्त श्रीजलालदी ॥ ३९६ ॥

नायेनाथ प्रसन्नेन जेनास्तीथा समेऽपिहि ।

मन्त्रिमाद्विहिता (चक्रिरे) नून, पुण्डरीकाचलादय ॥ ३९७ ॥

आजमखानमुद्दिश्य मुद्रित निज मुद्रया ।

फुरमाणमज्ञात् शाहिर्यस्मे प्रीणित मानस ॥ ३९८ ॥

उद्धारान् सप्त चैत्याना कारणा द्विदधु पुरा ।

मदात् पुण्डरीकाद्रौ रक्षणात्स कृतोऽमुना ॥ ३९९ ॥

[कर्मचन्द्र मन्त्रिपत्र प्रबन्ध]

x यह आजमखान सन् १५८७ से १५९२ तक अहमदाबादका सूत्रेदार था । खानेआजम या मिर्जा अजीज कोकाके नामसे भी यह पहचाना जाता है । विशेष पन्चिकके लिए “मीरातें सिकन्दरी” का गुजराती अनुवाद देखना चाहिए ।

एक बार सम्राट अकबरको काश्मीर विजय करनेके निमित्त जानेकी इच्छा हुई, तब मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको कहा कि बड़े गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको बुलाओ। उनके दर्शनकर धर्मलाभ रूपी आशीर्वाद प्राप्त करनेकी मेरी अभिलाषा है, जिससे मेरी मनोकामना पूर्ण होगी।” सम्राटकी इस आज्ञासे मन्त्रीश्वरने सूरि-महाराजको शाही दरवारमे बुलाया *। उनके दर्शनकर सम्राट अत्यन्त प्रसन्न हुए। सम्राटके हृदयमे यह निश्चय हो गया कि हमारी अवश्य ही विजय होगी, क्योंकि सूरिजीपर सम्राटकी असोम श्रद्धा और भक्ति थी।

सूरिजीकी अमृतमय वाणी और अहिंसात्मक उपदेश श्रवणकर सम्राटका हृदय दयासे ओत-प्रोत हो गया और प्रति वर्ष आपाठ शुक्ला ६ से पूर्णिमा पर्यन्त १० सूत्रों — मे समस्त जीवोंको अभय-

* काश्मीरान् गन्तुकामेनान्यद्वा नौमध्यवर्तिना ।

शाहिना मुदितेनेवमुदितो मत्रि नायक ॥ ४०० ॥

जिनचन्द्रास्त्वया तूर्णं माह्वेया वचसा मम ।

धमलाभो महास्तेषा ममादेयोस्ति वाञ्छित ॥ ४०१ ॥

पूज्याभपि तथा हूता नायक श्री शाहि सन्निधा

श्री गुरोर्देशनादेष्वा नन्दितो भून्नराधिप ॥ ४०२ ॥

शुचि मासे शुचौ पक्षे प्रसन्नो दिन सप्तकम् ।

नवमीतो द्वौशाहि रमारि गुण पावनम् ॥ ४०३ ॥

[जयसोमत्री कृत कर्मचन्द्र-मन्त्रि वद प्रबन्ध]

— कई जगह ११ सूत्रोंका ही उल्लेख है, किन्तु समयछन्दरजी अपनी

“कल्पलता”की प्रशस्तिमें इस प्रकार लिखते हैं —

दान देनेके लिये १२ गाही फरमान (अमारि-घोषणा) लिखकर भेजे * ।

इन फरमानोमेसे मुलानानके सूत्रेका फरमान पत्र खो जानेसे स० १६६०-६१ (ता० ३१ खुरदाद इलाही सन् ४६) मे उसकी पुनरावृत्ति करते हुए फिरसे एक फरमान श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राटने दिया था, जिसकी नकल परिशिष्टमे दी गई है ।

अकबर रञ्जन पूरं द्वादश सूत्रेषु सर्व देशेषु ।

स्फुटतरममारि पटङ्ग प्रवादितो यैश्च सूरिवरै ॥ ७ ॥

* सद्गुरु घाणि उणी शाहि अकबर परमानद मनि पाए ।

द्वपत्तइ रोज अमारि पलण कु तिणि फुरमाण पडाए ॥ २ ॥

[समयसुन्दरजी कृत जिनचन्द्र० गीत]

सात दिवस जिनि सब जीवनकी हिंसा दूर निवारी ।

देश देशि फुरमाण पडाए सब जन कु उपगारी ॥ ३ ॥

[गुणविनयकृत जिनचन्द्र० गीत]

आठ दिवस आपाठ के अट्टाहि निरधारि ।

सब दुनिया माँहि शाश्वती पालावी अमारि ॥ ८ ॥

[श्रीसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत]

गुर्जर मण्डल ते बोलण, सतण मुख उणि जइ गुण गान ।

बहुत पडूर सगुरु पउधारइ, अपत योग लादोर उयान ॥ २ ॥

अर्थ विचार पूछि सहु विध विध, रीझे अकबर शाहि उजान ।

बहुत बहुत दर्शन मइ देले, को न कहू या सगुरु समाम ॥ ३ ॥

भाग सोभाग अधिक या गुरु कौ सूरति पाक अमृत सम दान ।

पेश करइ अकबर अण माँयि सथ दुनिया माहि अभयादान ॥ ४ ॥

[गुणविनय कृत जिनचन्द्र० गीत]

सम्राटक अमारि फरमान प्रकाशित करनेसे अन्य राजाओपर बहुत प्रभाव पडा । उन्होने भी सम्राटका अनुकरण करके अपने-अपने राज्योंमे किसीने १० दिन, किसीने १५ दिन, किसीने २० दिन, किसीने २५ दिन, किसीने १ महीने और किसीने २ मास तक भी मद्य जीवोको अभयदानकी उद्घोषणा करा दी * । जिसस सम्राटको परम हर्ष हुआ और जैन धर्मकी महान् प्रभावना हुई । सूरिजीके इस उपदेशके फल-स्वरूप असरय जीवोको सुख-शान्ति मिली ।

अपने काश्मीरके प्रवासमे भी धर्मगोष्ठो, धर्म-चर्चा होती रहे और वहा भी दया-धर्मका प्रचार हो इस हेतुसे सम्राटने मन्त्रीश्वर को निर्देश करके सूरिजीसे निवेदन किया “सूरिमहाराज लाहोरमे ही सुरसे विराजें और हमारे साथ धर्म-चर्चा करने और दयाका उप-देश देकर अनार्य देशको भी आर्य रूपमे करनेके लिये मानसिंहको अवश्य भेजें ! तत्र मन्त्रीश्वरने सम्राटके कथनका समर्थन करते हुए वाचकजीको भेजनेमे जो एक वादा थी उसका प्रतिकार करते हुए सूरिमहाराजसे विनय पूर्वक प्रार्थना की “यद्यपि वह अनार्य देश है इससे मुनियोको आहार-पानी मिलनेमे असुखिया

* पातिशाहि मनोल्हाद द्वेत्तये निग्विहेरपि ।

देशाधीशै स्वदेगेपु दश पञ्चाधिकान्दिनान् ॥ ४०५ ॥

दिनाना विंशतिं केश्रिदन्ये स्तु पचविंशतिं ।

मास मास द्वय याषद परैरभ्य ददे ॥ ४०६ ॥

[कर्मचन्द्र मन्त्रि पत्र प्रबन्ध]

होना संभव है, तथापि हम बहुतसे आवक लोग भी यात्रामे सम्राटके साथ रहेंगे। इससे साधु धर्मके पालन करनेमे किसी तरहकी बाधा नहीं होगी। उसदेशमे विहार करनेसे दया-धर्मके प्रचारका महान् लाभ और जैन-धर्मकी प्रभावना होगी। अतः उन्हें अवश्य भोजिये।” सूरिजीने लाभ जानकर स्वीकार कर लिया।

कश्मीर यात्राके लिये तैयारिया होने लगी, सम्राटने सारा सैन्य सुसज्जित करके स० १६४६ मिते आवण शुक्ला १३ (ता० २२ जुलाई सन् १५६२ :-) को प्रथम प्रयाण - राज श्रीरामदाम । की वाटिकामे किया। वहा उसी दिन सध्याके समय एक सभा एकत्र हुई, जिसमे सम्राट अकबर, गाहजादा सलीम, बड़े बड़े सामन्त, मण्डलिक राजा, महाराजा और अनेक वैद्याकरण तार्किक उद्भट विद्वान (भट्ट) भी सम्मिलित हुए। उस सभामे श्रीजिनचन्द्रसूरि-जीको अपने शिष्य-मण्डलके साथ अतिशय सम्मान और बहुमान पूर्वक निमन्त्रित किया गया।

* देखो अकबर नामा ।

* ये ५०० सेनाके स्वामी थे, “सुरीश्वर और सम्राट” में इनका प्रसिद्ध नाम करणराज कछवाहा भी लिखा है इन्हें राजाको उपाधि थो विशेष जाननेके लिये आईन-ई-अकबरीका अंग्रेजी अनुवाद देखना चाहिये।

* श्रीमोहनलाल द० देशाई B. A. L. L. B महोदयने यह सभा “काश्मीर देशपर विजय क्योते निमित्ते” लिखा है, किन्तु अप्टरक्षीकी प्रशस्तिमें “काश्मीर देश विजय मुद्दिय श्रीराज श्रीरामदास वाटिकाया कृत प्रथम प्रयाणेन” लिखा है। इस वाक्यसे काश्मीर विजय करनेके उद्देश्यसे प्रथम प्रयाण किया गया था तब सभा एकत्र होना सिद्ध है।

इससे पहले किमी समय सम्राटकी सभा में विद्वद्गोष्ठी करते हुए किसी विद्वानने जैन-धर्मके "एगस्स मुत्तस्म अनन्तो अत्थो" वाक्यपर उपहास किया । यह बात सूरिजीके प्रशिष्य विद्वद् शिरोमणि श्रीसमयसुन्दरजीको अरखरी । उन्होंने जैन-दर्शनके इस वाक्यकी सार्थकता दर्शानेके निमित्त "राजानो ददते सौरज्य" इम वाक्यपर व्याकरण-मिद्ध दश लाख बाईस हजार चार सौ सात (१०२२४०७) अर्थ किये । उनमे कहीं कोई अर्थ समझपर न हो या अर्थ योजनानामे युक्ति युक्त न हो इस लिये २२२४०७ अर्थोंको उनकी पूर्तिके लिये जोडकर उस प्रथका नाम "अष्टलक्षी" रखा । सम्राटको इस प्रथ-निर्माणकी सूचना मिलनेसे हर्षित होकर उन्होन उम प्रथको देखने और श्रवण करनेकी उत्कट इच्छा प्रकट की थी ।

इस सभामे उस प्रथको सुननेका सुअवसर प्राप्तकर कविपर समय-सुन्दरजीको वह प्रथ पढकर सुनानेके लिये सम्राटने आग्रह पूर्वक कहा । सूरि महाराजकी आज्ञा प्राप्तकर समयसुन्दरजीने उस विद्वत् सभाके समक्ष साहित्य समारामे अपूर्व और अनुपम प्रथ-रत्न "अष्ट लक्षी" को पढकर सुनाया । इस चमत्कृत अद्भुत प्रथको मनोयोगसे श्रवणकर सम्राट और उपस्थित विद्वानोंके चित्तमे अत्यन्त आश्चर्य और कौतुहल उत्पन्न हुआ । सब लोग समयसुन्दरजीकी विद्वानकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे । सम्राटने उस प्रथ-रत्नकी अत्यधिक श्लाघा की और उसे अपने हाथमे लेकर उसके सौभाग्यशाली निर्माता श्रीसमयसुन्दरजीके दर-कमलामे समर्पणकर

उस ग्रंथको प्रमाणिक सिद्ध किया। और उन्होने यह भी इच्छा प्रकट की कि इस अभूतपूर्व ग्रंथको पढा जाय, और बहुत सी नकलें कराके सर्वत्र प्रचार किया जाय * ।

सूरि महाराजने सम्राटके साथ काश्मीर प्रवासमे वा० मानसिंह जी श्रीहर्षविशालजी × आदिको भेजा। और सम्राटके निर्देश किये हुए साधु व्यापार, कि जो साध्वाचारसे विपरीत हो उन्हें परिशीलन करनेके लिये मत्र, तंत्रादिमे निपुण मेघमाली गुरुके विनयी गिण्य महात्मा पञ्चाननको भी साथ भेजा।

मन्त्रीश्वरने साधुओंको निर्वद्य अन्न-पानादि प्राप्त करने, और साधु-धर्मका सुखपूर्वक पालन करनेमे सुविधा हो इसलिये अपने साथ और भी बहुतसे श्रावक लिये ये। लाहौरसे क्रमशः काश्मीर को प्रयाण करते हुए रोहितासपुर पहुचे। सम्राटने अपने अन्तःपुरकी

* देखो 'अष्टलक्षी' ग्रंथकी प्रशस्ति, इस ग्रंथका दूसरा नाम 'अर्थरत्नावली' भी है। यह ग्रंथ और भी अनेकार्थ-साहित्य के साथ "अनेकार्थ रत्नमजूपा" के नामसे "देवचन्द्र लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंड" गोपीपुरा, सूरतसे प्रकाशित हुआ है। "अष्ट लक्षी" जैन साहित्यका एक महान् गौरवपूर्ण ग्रंथ है। इसकी समता करने वाला समस्त विश्व के अनेकार्थ साहित्यमें कोई दूसरा ग्रंथ नहीं है।

× कर्मचन्द्र मन्त्रि-चक्ष-प्रबन्धमें इनका नाम दुर्गरजी लिखा है किन्तु उसको वृत्तिमें दीक्षा नाम हर्षविशाल होनेके कारण हमने यही लिखा है।

रक्षा करने के लिए अपने परम विश्वासभाजन मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको वहीं रहनेकी आज्ञा दी। अतः मन्त्रीश्वरको वहीं ठहरना पडा *।

सम्राट सैन्यसहित क्रमशः प्रयाण करते हुए काश्मीर पहुचे। रास्तेमे जहा जहा पडाव डालते थे वहा वहा वाचकजीके साथ धर्म-गोष्ठी किया करते थे। उनके उपदेशसे सम्राटने कई जगह तालाबोके जलचर जीवोकी हिंसा बन्द कराई। मार्ग बहुत विपम था, पथ-रीले रास्तेमे उन्हें पैदल बिहार करते देखकर सम्राटके चित्तमे वाचकजीकी साधु-धर्मपर निश्चलता और क्रियाकी कठिनताका गहरा प्रभाव पडा।

काश्मीर देश पर विजय प्राप्तकर सम्राट 'श्रीनगर' आये। वहाँ अपनी विजयके उपलक्ष्यमे वाचकजी के कथन से आठ दिन तक अ-मारि उद्घोषणा की *।

- * तथेत्युक्त्वा सम मंत्री शाहिना चालयत्तराम ।
 मानसिद्धान् निराबाध समयन् हुंगरान्विताम् ॥ ४०९ ॥
 शाहि निर्दिष्ट सावद्य व्यापार परिशीलनात् ।
 मुनिना मा वृताचार विलोपो भवतादिति ॥ ४१० ॥
 विभाव्य मत्र तन्त्रादि निपुण दत्तवान् सम ।
 पञ्चानन महात्माना विनेथ मेघ मालिन ॥ ४११ ॥

* * * *

स्वयं तु शाहि वाक्येन रोहितासपुरे स्थित ।
 अवरोधस्य रक्षायै विश्वासास्वदमोशितु ॥ ४१४ ॥

- * श्रीगुरु वाणी श्रीजी नित सगद्, धर्म मूरति धन २ छद् भगद् ।
 शुभ दिनद् रिपुबल हेलि भजी, नयर श्रीपुरि उतरि ।
 अमारि तिहा दिन आठ पाली देश साधो जय वरी ॥

(जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास)

काश्मीर दिग्विजय करके क्रमशः प्रयाण करते हुए सन् १५० ई० ता० २६ दिसम्बर (स० १६४६ के माघ महीनेमें) को मद्रास लाहौर वापस आये । इस विजय के उपलक्ष्य में प्रजाने खूब हर्ष मनाया । नगरमें वाजित्र वजने लगे । सूरिजी भी वा० जयसोम, वा० रत्ननिधान, प० गुणविनय, समयसुन्दर आदि विद्वत् मुनि मंडलीके साथ सम्राटसे मिले और उन्हें धर्म-लाभ रूपी आशीर्वाद दिया । सूरिजी महाराज का दर्शन कर सम्राट अत्यन्त प्रसुद्धित हुए ।

एक दिन धर्मगोष्ठी करते हुए सम्राटने सूरि महाराजसे कहा कि मैंने आपके (जैन) दर्शन के मद्दश में किसी दर्शनको नहीं देखा, और आपके समान निर्मल चरित्रवान् साधु नहीं देखा । काश्मीर यात्रामें सुप्रसिद्ध श्रीमानसिंहजी के सदगुणों का भी बहुत कुछ अनुभव हुआ है । ऐसी पथरीले विकट मार्गमें जहा रथ बगैरह का जाना भी कठिन है वहा पैदल विहार करके इन्होंने अपने आचार को जिस दृढता के साथ पालन किया है, उसका मैं कितना वर्णन करूँ, अनेकों कष्ट सहन करके भी और हमारे बहुत कहनेपर भी ये अपनी प्रतिज्ञाओंसे विचलित नहीं हुए । इनकी कर्तव्य-निष्ठा और निरीहता हर समय मेरे हृदयमें आश्चर्य और आनन्द उत्पन्न करती है । इनके उपदेशसे काश्मीरमें मैंने तालाबोंके मठली आदि जलचर जीवोंको अभय दान दिया था । अतः कृपा करके आप इन्हे (मानसिंहजीको) अपने पद पर स्थापित करके जैन-शासनका सर्वोत्कृष्ट आचार्य पद प्रदान कीजिये । क्योंकि वे सर्वथा योग्य हैं, एवं दुष्कर्ष संयम पालनेमें निश्चल हैं ।

अकबरके इम आग्रह और वाचकजीको योग्यतापर विचार करते हुए सूरिजीने उन्हें आचार्य पद दना स्वीकार कर लिया। तब सम्राटने मंत्रीवर कर्मचन्दसे पूछा कि जैन शासनमे त्रिशिष्ट महत्त्व का कौनसा पद है ? (जिस पदसे सूरिजीको अलङ्कन किया जाय) तब मंत्रीवरने कहा जैन शासनमे सुप्रसिद्ध और हमार सरतर गच्छमे जो पहिले भो श्रीजिनदत्तसूरिजीको देवताने दिया था वह “युग प्रधान” पद है। यह सुनकर सम्राटने उत्सुकता पूर्वक पूछा कि वह पद देवता द्वारा कैसे ओर किस प्रकार दिया गया ? यह हमारी जाननेकी इच्छा है। मंत्रीवरने श्रीजिनदत्तसूरिजीका जीवन चरित्र सात्त्वोपान्त कह सुनाया और “युग प्रधान” पदके विषयमे विशेष स्पष्टीकरण करते हुए इम प्रकार कहा —

“एक बार नागदेव श्रावकने युग मे प्रधान सद्गुरुकी शोष करने के लिये श्रीगिरनारजी पर अप्टम तप करके “अम्बिका वती” की आराधना की। देवीने प्रकट होकर उसके हाथमे स्वर्णाश्रमेसे श्लोक * अङ्कित कर दिया और कहा कि जो इन अक्षरोको पढ सकेंगे वे ही “युग-प्रधान” हैं। उम श्रावकने सर्वत्र भ्रमण कर लिया किन्तु उसे कहीं भो श्लोक पढने वाला न मिला अन्तमें श्रीजिनदत्तसूरिजीके पास आकर हाथ दिताया। उनके वासनेप डालने पर शिष्यने पढके सुनाया कि यह श्रीगुरुमहाराज की स्तुति है और उन्हे देवताने “युगप्रधान” पदसे अलङ्कनकिया है।”

* यह श्लोक यह था —

दामानुदामा इष सयं देवा, यदीय पादाञ्जलं लुप्तो ।
मरुधली कल्पतह सत्रीयात्, युगप्रधानो जिनदत्तसूरि ॥

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि —



प्रकट-प्रभावी योगीन्द्र युगप्रधान दादा श्रीजिनचन्द्रसूरिजी
(जेसलमेर भाण्डागारीय प्राचीन ताडपत्रीय प्रति के कास्ट-फलक पर चित्रित)

अकरके इस आप्रह और वाचकजीकी योग्यतापर विचार करते हुए सूरिजीने उन्हे आचार्य पद देना स्वीकार कर लिया । तब सम्राटने मंत्रीवर कर्मचन्दमें पूछा कि जैन शासनमें विशिष्ट महत्व का कौनसा पद है ? (जिस पदसे सूरिजीको अलङ्कन किया जाय) तब मंत्रीवरने कहा जैन शासनमें सुप्रसिद्ध और हमार सरतर गच्छमें जो पहिले भा श्रीजिनदत्तसूरिजीको देवाने दिया था वह “युग प्रधान” पद है । यह सुनकर सम्राटने उत्सुकता पूर्वक पूछा कि वह पद देवता द्वारा कैसे ओर किस प्रकार दिया गया ? यह हमारी जाननेकी इच्छा है । मंत्रीवरने श्रीजिनदत्तसूरिजीका जीवन चरित्र माद्योपान्त कह सुनाया और “युग प्रधान” पदक विषयमें विशेष स्पष्टीकरण करते हुए इस प्रकार कहा —

“एक वार नागदेव आचरने युगमें प्रधान मद्गुरुकी जोय करने के लिये श्रीगिरनारजी पर अष्टम तप करके “अम्बिका देवी” की आराधना की । देवीने प्रकट होकर उसके हाथमें स्वर्णाक्षरोसे श्लोक * अङ्कित कर दिया और कहा कि जो इन अक्षरोको पढ सकेंगे वे ही “युग-प्रधान” हैं । उम आचरने सर्वत्र भ्रमण कर लिया किन्तु उसे कहीं भी श्लोक पढने वाला न मिला अन्तमें श्रीजिनदत्तसूरिजीके पास आकर हाथ दिखाया । उनके वामक्षेप डालने पर शिष्यने पढके सुनाया कि यह श्रीगुह्यमहाराज की स्तुति है और उन्हे देवाने “युगप्रधान” पदसे अलङ्कनकिया है ।”

* वह श्लोक यह था —

दासानुदासा इव सर्व दधा, यदीय पादाञ्जलं लुप्त्वा ।
मरन्धली कल्पतरु सजीयात्, युगप्रधाना निनदत्तसुरि ॥

दादा श्रीजिनदत्त-सूरिजी का चरित्र श्रवणकर सम्राट अकबरके चिन्तमे अद्भुत चमत्कार और कौतुहल उत्पन्न हुआ। अकबरने इस पदके सर्वथा योग्य हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को ही समझ कर उन्हें “युग-प्रधान” × पद दिया। और वाचक मानसिंहजी (महिमराज जी) को आचार्य पद देकर सिंह के तुल्य होनेके कारण ‘श्रीजिनसिंह सूरि’ नाम देनेका निर्देश किया। तत्पश्चात् मन्त्रीश्वरको आज्ञा दी कि जैन-दर्शन की विधि के अनुसार संघ की साक्षी से उत्सव-महोत्सव पूर्वक शुभ दिन देखकर अद्वितीय समारोह के साथ हर्ष उत्कर्षसे इस उत्सवकी तैयारी करो।

सम्राट की आज्ञा पाकर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र ने वीकानेर नरेश रायसिंहजीसे सारा वृत्तान्त निवेदन किया उन्होंने भी इस शुभ कार्य मे अपनी सम्मति और आज्ञा प्रदान की। इसके पश्चात् पौष-शालामे जैन भगवको एकत्र कर विनीत वचनोसे मन्त्रीश्वरने निवेदन

× अकरर शाहि हरख भरि कीनौ, युगप्रधान पदधारी ।

सभायत में शाहि हुकुम तइ जलवर जीव उवारी ॥ २ ॥

[गुणधिनयकृत जिनचन्द्रसूरि गीत]

उत्तम काम भवलिसे कीधो, युगप्रधान पद दीधो ।

तिणि अवसर सागाइत भावइ, सवा कोडि वित्त वावइ ॥

[रत्ननिधान कृत गहूली]

युगप्रधान पदधी भली आपइ अकबर राज ।

सइ सुग्य हररे इम कहइण, ए गुरु सख सिरताज ॥

[सं० १६४९ चै० कृ० ९ कृतसमयप्रमोद कृत जिनचन्द्र ० गीत]

किया "यद्यपि सद्यः सब कुछ कार्य करनेको समर्थ है तथापि इस महान् उत्सवका लाभ कृपया मुझे ही लेनेकी आज्ञा दें।" श्रीसधने मन्त्रीश्वर के इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर आज्ञा दे दी।

सब की आज्ञा प्राप्त कर मन्त्रीश्वरने महोत्सव की तैयारिया आरम्भ कर दी। अच्छा दिन देखकर मितो फाल्गुन वदी १०-से अष्टान्हिका महोत्सव मनाया जाने लगा। सधने सर्वत्र आनन्द उठा गया, भक्तिपूर्वक रात्रिजागरणमें श्राविकाओने एकत्र होकर देव, गुरु और धर्मके माङ्गलिक गीत गाये। मन्त्रीश्वर ने समस्त सार्धमि-योके घर पूगीफल, एक सेर प्रमाण मिश्री, और सुरगी चुनडियें भेजी।

अष्टान्हिका महोत्सव खून आनन्द उत्सव से मनाया गया, मितो फाल्गुन शुक्ला २ जया-तिथि को मध्याह्नके समय अच्छे मुहूर्त में आगमोक्त विधि से श्रीजिनचन्द्रसूरिजोमहाराज ने वाचक श्रीमहि-मराजजी को "सूरि मन्त्र" देकर आचार्य पदसे अलंकृत किया। सम्राट के कथन से उनका नाम "श्रीजि।सिंहसूरिजी" रखा गया। इसी समय वा० जयसोमजी और रत्ननिधानजीको "उपाध्याय पद" प० गुणविनयजी और समयसुन्दरजीको "वाचनाचार्य" पद प्रदान किया।

* संवत्नद समुद्र पद्मशशि मिते श्रीफाल्गुने मासिये ।
न प्राक् श्रीदशमो तिथौ (?) सत्पुण्या सतानदिन ॥
शाहि दत्त युगप्रधान विरुदा आनन्द कन्दान्विते ।
श्रीमच्छ्रीजिनचन्द्रसूरि गुरवो जीवन्तु विश्वश्रिरम् ॥२॥
हमे यह श्लोक भगुद्व ही मिला है ।

उस समय का दृश्य अत्यन्त मनोहर और दर्शनीय था, जिस सखवाल गोत्रीय श्रावक साधुदेव के बनवाये हुये उपाश्रय में उन्हें आचार्य पद दिया गया था, उसे रूब ध्वजा पताका-ओसे सजाया गया कीमती मोतियों के जडे हुए चन्द्रवे और पूठिये सजाये गये। भगवानका चतुर्मुख (नन्दि) समवशरण विराजमान कर उसके सन्मुख सर्व विधि सम्पन्न हुई। इस महोत्सवमें स्वगच्छ परगच्छ स्वधर्म और परधर्म के भेदभावों को त्याग कर असत्य नागरिक और राज्यके बडे बडे प्राय सभी अधिकारी सम्मिलित हुए थे। शाही वाजिनोंको वनसे सारा नगर आनन्द का निकेतन बन गया था।

सम्राट अरुण ने इस आनन्दोत्सव के उपलक्ष्य में सूरिजी के उपदेश से स्तम्भतीर्थीय समुद्रके असख्य जलचर जीवों को वर्षाविधि अभयदान देने के लिए फरमानपत्र प्रकाशित किया † और लाहौरमें भी उस दिन शाही-नौवत बजाकर अमारि-उद्घोषणा की गई।

इस धार्मिक हर्षोत्सव में मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी वच्छावतने अपने द्रव्यका मद्रव्यय करनेमें कोई कसर नहीं रखी। जिसने जो मागा वही प्रदान कर अपनी प्रशस्त कीर्ति चिर स्थापित और दिग्गत

† जग सगळे जम पामियउ, प्रतिबोधी पातशाह ।

खभायत दधि माछली राखी अधिक उच्छाह ॥

* * * * *

र भायत दरियावके जी रे जी पूज जी छोडाया सहु जाल ।

[श्रीमन्दर कृत गीतद्वये] ,

व्यापी को। "युगप्रधान" नाम स्थापनपर याचकोको नव हाथी, पाच सौ घोडे, नवग्राम ओर सत्रा करोड रुपयेका अभूतपूर्व दान दिया, जिसका उल्लेख तत्कालीन ग्रन्थ कर्मचन्द्र मन्त्रि वश प्रबन्ध वृत्ति (स० १६५०)-, जयमोमजी कृत्न प्रश्नोत्तर ग्रन्थ × (प्रश्न न०

* इस ग्रन्थमें इस प्रकरणमें उल्लिखित प्राय सभी बातोंका विस्तृत वर्णन है, ग्रन्थविस्तारके भ्रममे उमरु श्लोक यहाँ नहीं दिये गये हैं।

× इस ग्रन्थमें कई विशेष ज्ञातव्य बातोंके साथ इस प्रकार वर्णन है —

"दिव्या श्री लाहोर माहि श्रोअकर जलालुद्दी पातम्या श्री वृद्ध परतर गच्छतायक श्रीनिमगिस्सुरि पट्टालद्वार श्री जिनचन्द्रसूरिजी नै योग्यता जाणी गुनो थइ न युगप्रधान नामे बोलाव्या, श्रोअकर्मचन्द्र मन्त्रीश्वरे याचका ने ९ हाथी, ५०० घोडा, ९ ग्राम, एव सवा षोडि नु दान आप्या, महामहोत्सव कीधा। लाहोर माहि अमारि घोपाइ पाति-शाहि नोवति बजाइ घलोमुदते पातिशाहजीने १२००० रुपईया १२ हाथी १२ घोडा २७ तुस्कस पेस कीधा श्रीजीये १२(?) रुपईया राख्या बीना सर्व सुइताने ज अकम्या एव महामहोत्सव पूर्वक सर्व लोक समक्ष युगप्रधान थाप्या। तउ तेह ना शिष्य तथा श्राचरु युगप्रधान कहै तिशा स्यौ दूषण थाइ × × × घली युगप्रधान नामि दूहावो ते स्यु ? आज प्रभूत घली श्रीजिनशासन माँहि किणइ आचार्य नइ जगत्गुरु कहया हुषड तो तुम्हे दिखानो। तमारा ऋषिमतीना भट्टारक नै श्राचरु श्राविका जगत्-गुरु कइ गाये छे तुम्हे मामली खुशी थाओ छो श्रीजिनच द्रसूरिजी ना नाम युगप्रधान सामली दुहवाभा तेह स्यु ? जइ पातिशाह जगत्गुरु एइवा नाम मामलै (तउ) फतीत करे श्री मेल अनुलकतल हजूर जगत्गुरु नाम कहता शेते अम्ह हजूर रोस करी भानुचन्द्र पन्थाम नै जे योल कइया ते

१३४ के उत्तर) आदिमे मिलना है। इस विषयका एक प्राचीन कवित्त हीरकलश शिष्य हेमाणंद कृत “भोज चरित्र चौपड़”, जो कि स० १६५४ दीवाली के दिन ‘भहाणइ’ ग्राम मे बनाई है, उसकी प्रशस्ति मे इसप्रकार लिखा है —

“नव हाथी दिन्है नरेश, मदस्यौं मतवाले ।

ऐरासी पचसइ, लोकत पावइ नित हालइ ॥

नवइ गाव बगसीस, सइ त्त सहू को जाणइ ।

सवा कोडिका दान, “मल्लवि” साच बखाणइ ॥

को राइ न राणा करि सकइ, समाम नदन जो किया ।

युगप्रधान के नाम कु, कर्मचन्द इतना दिया ।”

सचमुच यह दान अभूतपूर्व था, पदस्थापनाके समय इस प्रकार का दान आगे किसीने नहीं किया। ऐसे दानी महानुभावोसे जैन शासन गौरवान्वित है।

लाहोरके सघने एकत्र होकर मंत्रीश्वरके घर जाकर उन्हें यश-स्तिलक करके सम्मानित किया।

सम्राट अकबरको भी इस महोत्सवके उपलक्ष्यमे मंत्रीश्वरने शेरस अबुलफजलको साथ लेकर (१००००) रुपये, १० हाथी, १२घोडे और २७ तुक्कस भेंट स्वरूप पेश किये। सम्राटने मङ्गलके निमित्त

भानुचन्द्र जाणे छै, धली लोका ना कहा तपा एहवा नाम मानौ छो एव विचारता तुमने ए प्रश्न अजाणवगो जणावै छै ।”

इमसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिजीका जगद्गुरु पद उनके भक्त भावक श्राविकाओंद्वारा रखा हुआ गुरु भक्तिसूचक मात्र था, किन्तु सम्राट अकबरने उन्हें जगद्गुरुका कोई विरुद् नहीं दिया था।

रु०१) रत्न कर बाकी सब मन्त्रीश्वरको वापिस दे दिये । इसी प्रकार शाहजादा सलीम और शेख अनुलफजल आदि सम्राटके आत्मीय-जनोका भेटपूर्वक सत्कार किया । मन्त्रीश्वर सम्राटके सामाजिकाध्यक्ष पदपर नियुक्त थे । इसलिये उस विभागके समस्त कर्मचारियो और अन्य अधिकारियो का भी उचित सम्मान किया ।

इस प्रकार यह महान् महोत्सव अवर्णनीय आनन्द, अनुपम उत्साह, असाधारण भक्तिके साथ सम्पन्न हुआ । उससमय के उलसित शुभभाव और हर्ष का अनुभव जो उस महोत्सव में सम्मिलित हुए वे ही कर सकते थे । इस जड लेखनी द्वारा उस आनन्द का वर्णन करना असमर्थ है । तो भी सक्षिप्तमे इतना तो अवश्य कहना होगा कि वह उत्सव अदृष्टपूर्व, परम गौरवसम्पन्न और जैन शासनकी उन्नति, उत्कर्ष करने में अद्वितीय था ।

सूरि महागजने पाक्षिक चातुर्मासिक और सावत्सरिक पर्वों के दिन “जयतिहुअण” पढने का शाश्वत आदेश बोद्धित्य वश की सन्तति को दिया और उन्हीं पर्वों के प्रतिक्रमण मे स्तुति बोलने का आदेश श्रीमालो को दिया †

† बोद्धित्य सतति नइ दियइ, युगप्रधान गणधारो रे ।

पक्ष चउमास पञ्जूसणइ, श्री जयतिहुअण सारो रे ॥ ७८ ॥

तिम चौमासइ पात्तियइ, संवत्सरियइ धुइ रे ।

पडिकमणइ सध्यातणै, श्रीमाला नइ हुइ रे ॥ ७९ ॥

[कर्मचन्द्र वशावली प्रबन्ध चौ०]

बीकानेरमें अभीतर एरतरगच्छ में बच्छावतों को धार्मिक कार्यों में अच्छा सम्मान है ।

शोकानेर महाराज रायसिंहजी * सूरि-महाराजके परम भक्त थे। हम पहले लिख चुके हैं कि इम उत्सव पर वे भी लाहोरमें ही थे। उन्होंने इमके १० दिन पश्चात् अर्थात् मित्ती फाल्गुन शुक्ला १२ को कई ग्रन्थ सूरिजीको आम्रहपूर्वक समर्पण किये थे। सूरिजीने उन ग्रन्थाको शोकानेरके स्थापित ज्ञानभण्डार-मे रखे थे, उनमेंसे दो ग्रन्थ हमे उपलब्ध हुए हैं, जिनका पुष्पिका लेख इस प्रकार है —

“स० १६४६ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्या श्री लाभपुर नगरे पातशाह श्री अकर प्रदत्त युग-प्रधान पद समलकृत रर (तर) गच्छेश भट्टारक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिराजाना। श्री जिनसिंह सूरि युवाना भूशक चक्र चर्चित चरणारविन्द महाराजाधिराज श्री

* इनका जन्म स० १५९८ आ० कृ० १२ को हुआ, स० १६२८ वसाख शुक्ल १ को शोकानेरको राजगद्दीपर बैठे। ये सूर वीर और दानी नरेश थे। बाइशाहने प्रपन्न होकर इन्हें ‘ राजा ’ पदवी, पाचहजारोका मनसब और ५२ परगने जागीरमें दिये। स० १६६८ में इनका स्वर्गवाम हुआ। विशेष जाननेके लिये “शोकानेर राज्यका इतिहास” “भारतके प्राचीन राजवंश” और ‘कर्मचन्द्र घश प्रग्रन्थ’ देखने चाहिये।

* साहित्यको रक्षा और अभिवृद्धि करनेके लिये सूरि महाराजने कई जगह ज्ञानभण्डार स्थापित किये थे। शोकानेर ज्ञानभण्डारमें रखी जानेका और भी कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे जाना जाता है, जिसमें अनेक भक्त श्रावकोंने ग्रन्थ लिखनाके रखे थे। कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे ज्ञात होता है कि आपने सम्भारके “ज्ञानभण्डार” में भी कई ग्रन्थ स्थापित किये थे।

रायसिधै कुवर श्री दलपतिप्रभृति परिवार युतै पुस्तकमिद
विहारित । तेञ्च ज्ञान वृद्धयर्थ श्रीविक्रमनगरे वित्कोपे स्थापितम् ।
शिष्यादिभिर्वाच्यमान चद्रार्क चिरनद्यात् ।”

[वनप्रामित्व पडगोतिवृत्ति पत्र ५० श्रीपूज्यजीके सप्रहसे]

“स० १६४६ वर्षे प्वालुन शुक्ल द्वादश्या गुरौ पुण्ययोगे श्री
लाभपुरे जतु जाता हि शाहि श्री अकरर प्रदत्त
युगप्रगान प० समलकृत श्री मत्पारतर गच्छाधिप भट्टारक

श्री जिनर्मिह सूरि सयुताना । सटा सुप्रमन्न वदनारविन्द
महाराजाधिराज श्री विहारित पुस्तकमिद ज्ञान वृद्धयर्थ
च श्री विक्रम पुरनरे तेञ्च भाण्डागारे स्थापितम् । शिष्य

[हमारे सप्रहमे, चूहोके काटे हुए पन्नवणामूर मे]

कहा जाता है कि सूरि-महाराज ने जब शाहीदरबार मे प्रवेश
क्रिया और वाइशाह स्वागतार्थ मन्मुग्य आया उम समय मार्गक
किमी नालेमे एक बकरी रखी गई थी । सम्राटने जब उन्हे आगे
पधारनेकी प्रीति को । तत्र सूरिजी ने अपने योगबलसे भूगर्भ-स्थित
बकरी का स्वरूप जान, रुककर कहा “नालेमे जीव रहे हुए हैं उन्हे
उल्लखन कर नहीं आ सकने” सम्राटने कहा “किनने जीव है ?”
सूरिजीने कहा “तीन जीव हैं” सम्राटने चकिन होकर सोचा इसने
नीचे एक ही बकरी रखी गई थी तीन कैसे हो सकनी है । परन्तु
जब उम नालेको उद्घाटन कर देया गया तो तीन ही जीव मिले ।
क्योंकि बकरीके सगर्भा होनेके कारण भूमिके ससर्ग दोबच्चे उत्पन्न

हो गए थे। इस आश्चर्यजनक घटनासे सम्राटके दिलमें सूरिजी के प्रति अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हो गई × ।

इसी प्रकार एक समय सम्राटको सूरि-महाराजका भक्त देखकर ईर्ष्यासे जले हुए काजीने सम्राटके समझ सूरिजीको नीचा दिखानेके लिए मन्त्रबल से अपनी टोपी उड़ाई। सूरिजीने अपने बुद्धि-वैभवसे काजीके अभिप्रायको जानकर जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिए टोपीको वापिस लानेके लिये मन्त्र-शक्ति द्वारा रजोहरणको उसके पीछे छोडा। सूरि-महाराजके प्रेषित रजोहरणने काजीकी टोपीको ताडित करते हुए वापस लाकर काजीके मस्तक पर रख दिया। इससे काजीने विफल प्रयत्न होकर अपना ईर्ष्या अभिमान त्याग दिया * ।

×स० १७१२ के लगभग लिखी हुई बीकानेर ज्ञानभण्डारकी एक पद्यावलीमें इस घटनाका इस प्रकार भी उल्लेख है —

“जियारउ अतिशय देखी नइ पातिशाहइ युगप्रधान पदवी दीधी ते अतिशय कहइ छइ एकदा कियइ एके शाहि नइ कह्यउ एइ गुरु ज्ञानी छइ का एक ज्ञान पूउउ तरइ पातसाइइ पोतारइ सिंघासण नीचे परवर्ती गर्भ-वती एक छाली घालि नइ आप उपरि बइठा तरइ गुरा नइ पूछउ—मेरे नीचे क्या है ? गुरे लग्न लेइ नइ कह्यो एक नर छइ वि मादो छइ, शाहि काढी जोयउ छाली व्याइ, ज्ञान मिल्यो तरइ युग-प्रधान पदवी दीधी ।

इसके अतिरिक्त और भी कई कवित्तोंमें तीन बकरियोंके भेदको बतलानेका जिह्न है ।

* बीकानेर स्टेट लायब्रेरीमें जिनसागरसूरि शाखाकी ए० १८ वीं शताब्दिमें लिखित पद्यावलीमें लिखा है कि जिनसिंहसूरिजीको बादशाहने

एक तीसरी चमत्कारिक घटना भी इस प्रकार कही जाती है कि आहार के लिये परिभ्रमण करते हुए सूरिजी के एक शिष्यने मौलवीके तिथि पूरनेपर अमावस्याके बदले भूलसे पूर्णिमा बतला दी। इस वाक्यपर मौलवी ने उपहास करते हुए उत्तर दिया “वाह महाराज ! मैंने सुना है कि जैन-साधु झूठ नहीं बोलते, किन्तु यह तो सरासर झूठ है, अब देखेंगे कि किस प्रकार आज पूर्णिमाका चाट प्रकाशमान होगा।” उन साधुजीको भी अपनी भूल स्मरण हो आई, किन्तु वचन मुखसे निकले बाद पराया हो जाता है अतः उन्होंने उपाश्रयमे जाकर सूरि-महाराजसे सारा वृत्तान्त निवेदन किया।

इधर मौलवी साहबने मन जगह यावत् सम्राटके दरबार तक यह खबर पहुँचादी कि जैन साधुओके कथानानुसार आज चाँद उदय होगा। तब सूरिजीने जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिये किसी श्रावक के यहासे स्वर्णथाल मगवा कर उसे आकाशमें उड़ा दिया। सूरिजीके प्रनापसे वह थाल पूर्णिमाके चंद्रमाकी भान्ति सर्वत्र प्रकाश करने लगा। सम्राटने इसकी जाच करनेके लिये अपने घुड़ सवार चारह चारह कोस तक भेजे किन्तु सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश हुआ मुन सम्राट अत्यन्त चकित और विस्मित हो गया।

करामात दिखानेको कहा तब उन्होंने कहा इस भिक्षु करामात क्या जानें ! इतनेमें काजीने अपनी टोपी मग्न शक्तिसे आसमानमें उड़ाई और जिनमिह सूरिजीने ओघेसे वापस आकर्षण की, इत्यादि।

* इस घटनाका हमें कोई प्राचीन प्रमाण न मिला। आधुनिक बीसवीं शताब्दिके प्रकाशित ग्रन्थोंमें—महो० रामलालजीगणि इत

सूरिजीके लाहौर विराजनेसे अनेक धर्मकृत्य हुए। लोगोंके हृदयमें सद्भावनाका श्रोत प्रवाहित होने लगा। जैन धर्मकी अति-शय प्रभावना हुई।

वहासे विहार करके मूरि-महाराज हापाणइ पधारे स० १६५० का चातुर्मास वहाँ किया। एक दिन रात्रिके समय उपाश्रयमें चोर आगए। किन्तु उनके लिये वहा कौनसा धन-माल रखा था। अगर था तो केवल साबुओ के पढने के ग्रथ और भिक्षाके निमित्त फाष्टके पात्र, किन्तु चोरोने तो उन्हें भी नहीं छोडा, पुस्तकें बटोर

“दादाजीकी पूजा” और आचार्य श्रीजयसागर सूरिजी सम्पादित “गगधर सार्ध शतक भाषान्तर”, श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान-भडार बम्बईसे प्रकाशित “श्रीजिनचन्द्रसूरि चरित्र” आदिमें इसका उल्लेख पाया जाता है। एव चित्रोंमें भी इस चमत्कारिक घटनाका भाव चित्रित मिलता है। खरतर-गच्छकी एक पट्टाघलीमें श्रीजिनप्रभसूरिजीके सम्बन्धमें “क्षम्मावश्या पूर्णिमा कृता येन द्वादश योजन यावत् चन्द्रोद्योतो जात ” लिखा है।

उपरोक्त तीनों चमत्कारिक घटनाभा सहित सूरिजी के अक्षर मिलनके प्राचीन चित्र, वीकानेर ज्ञान भडार, श्रीपूज्यजीके संग्रह, उ० जयचन्द्रजीका ज्ञान भडार, यति मुकुन्दचन्द्रजीके पास, बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके संग्रहमें ओर वीकानेर दुर्गान्तर्गत ‘गजमन्दिर’ में पाये जाते हैं। वह चित्र “श्रीजिन कृपाचन्द्रसूरे ज्ञानभण्डार” इन्दौर की तरफसे छप भी चुका है।

बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर M A B L के यहाँ अक्षर मिलन समय का सूरिजीका प्राचीन चित्र है उसमें उपरोक्त तीसरी चमत्कारिक घटनाका भाव न होकर उसके बदलेमें उस चित्रमें एक भँसा चित्रित है जो कि श्री जिनप्रभ सूरिजीके विषयमें “कियो महिप मुखि घाद नयर विखलइ

कर चम्पत होने लगे। परन्तु सूरिजीके योग-बलसे चोर दिग्मूढ और अन्धे हो गए और पुस्तकें वापिस आ गई।

इस चमत्कार पूर्ण घटनासे सत्र लोग सूरि-महाराजके तपोबल की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। सूरिजीके “हापाणा” विराजने से वहाँ अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे।

नरनारी।’ इस चमत्कारका स्मृति सूचक भाव जाना जाता है हमारे समक्ष में “अम्मावसका चन्द्रोदय” और “महिष मुक्त वाद” का चमत्कार जिनप्रभसूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाला ही है। उन चमत्कारोकी प्रसिद्धि होनेके कारण सभवतः सूरिजीके चित्रके साथ लगा दिये गये हों। उपा० जयचन्द्रजी गणिके पास जो चित्र है उसमें तो चारों ही चमत्कार सूरिजीके चित्रर्म चित्रित हैं।

* विहार पान० १ म ‘रातइ चोर पइठा पुस्तक सत्र ऐइ गया पर अन्धा थया, पुस्तक आया पाछा।”

बीकानेरके ज्ञान भण्डारकी एक पट्टावलीमें — हापाणि ग्रामे ध्यान बलइ जियइ चोर निपतेज कीधा।



नवमं प्रकरणं

सम्राट् पर प्रभाव



श्राट अकबर सूरि-महाराजके परम भक्त बन चुके थे। उनके हापाणामे चातुर्मास करनेके समय भी सम्राट उन्हे निरन्तर स्मरण किया करते थे। सूरिजीके आदेशसे परम गीतार्थ उ० श्री जयसोमजी आदिने स० १६५० का

चातुर्मास भी लाहौर ही किया = । वे बहुधा शाही दरबारमें जाया करते, सम्राट उनके साथ अनेक प्रकारकी धर्म-चर्चा करके ज्ञान प्राप्त किया करते थे। वे समय-समयपर उनसे सूरि-महाराजके सुल-शाताके सवाद पूछकर सुखी होते थे।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सम्राटने सूरि महाराजको लाहौर पधारनेके लिए विनीत-आमन्त्रण भेजा। सम्राटके आप्रहसे सूरिजी लाहौर पधारे। स० १६५१ का चातुर्मास भी उन्होने वहीं

* जयसोमजीने इसी चातुर्मासमें विजयादशमीके दिन "कर्मवन्द मत्रि वंश प्रबन्ध" नामक संस्कृत पद्य ग्रन्थ रचकर पूर्ण किया था।

रफिया । इनके समागम से सम्राट पर अलौकिक प्रभाव पडा था । मेडता के “ननामन्दिर” के शिलालेखों+ से ज्ञात होता है कि मूरि-जी के उपदेश से सम्राट ने गन प्रकरण मे उल्लिखित प्रति वर्ष आपाढी अष्टान्हिका अमारि, रम्भातके दरियाके जलचर जीवोकी रक्षा और युगप्रधान पद प्रदानके अतिरिक्त और भी कई महत्वपूर्ण कार्य किये थे, वे इस प्रकार हैं —

(१) प्रतिवर्षमे सत्र मिलाकर ७ महीनेपर्यन्त अपने समन्त राज्यमे जीवहिंसानिषेध ।

(२) शत्रुञ्जय तीर्थका कर-मोचन ।

(३) सर्वत्र गौ-रक्षाका प्रचार ।

जैन दर्शन के अहिंसा-तत्त्वका सूक्ष्म स्वरूप सूरिमहाराज ने सम्राटको भली भाँति बतला दिया । जिसके प्रभावसे सम्राटका हृदय इतना कोमल और दयाई हो गया x कि उन्हें जीव-हिंसाना

* श्री अकब्बर साहि प्रदत्त युगप्रधानपद प्रवरै प्रतिवपापाढीयाष्टा-डिकादि पाणमसिकामारि प्रवर्त्तकै । श्रोपत (? स्तभ) तीर्थोदधिमीनादि जीवरक्षकै । श्री शत्रुञ्जयादि तीर्थकरमोचकै । सर्वत्र गोरक्षाकारकै पचनदी पीर साधकै । युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि । आचार्य श्री जिनसिंहसूरि श्री समयराजोपाध्याय घा० इस प्रमोढ घा० समयसुन्दर वा पुण्यप्रधानादि साधुयुते ॥

[श्री जिनविजयती सपादित ‘प्राचीन जैन लेख संग्रह’ लेखाङ्क २४३]

x सम्राट अपने दयालु विचार सूरिजोको दिये हुए फरमान पत्रमे इस प्रकार प्रकट करते है —

“असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते भाति-भातिके पदार्थ उपजाये हैं, तब वह कभी किसी जानवरको दु ख न दे और अपने पेटको पशुभोका मरघट न बनावे ।”

नाम सुनना भी असह्य-सा हो गया और मास-भक्षणके प्रति उन्हे घृणा हो गयी थी। इस बातको सम्राट जहाँगीर, अपनी 'आत्म-जीवनी' में अपने राज्यारोहणके पञ्चात् प्रकाशित १२ आह्लाओमेसे ११ वीं आह्ला इस प्रकार लिखते हैं —

“आमाव छत्र गामे गमथ ब्राह्म्य मांशाशव निषिद्ध एव वत्समेव मध्ये एमन एक एक दिन निर्दिष्टे थाकिवे ये दिनसर्क प्रकार पञ्च उता निषिद्ध। आमाव ब्राह्म्यारोहणेर दिन बृहस्पतिवार, से दिन एव वरिवार केह मांशाशव करिते पारिते ना। देनना ये दिन खगल सृष्टि सम्पूर्ण हेशे छिन्न से दिन कान छोवेर प्राण उरण करी अछाय। ११ वत्समेव अधिक काल आमाव पिता एहे नियम पालन कविशाहेत एव एहे समयेर मध्ये वरिवार दिन त्रिणि कथनओ मांशाशव कवन नाहे। सुतरां आमाव ब्राह्म्य आमाव एहे दिने मांशाशर निषिद्ध बनिश घोषणा कवितेछि।”

[अशा.गीतेर आमाव जीवनी by कूर्मिनी मिश्र पृ० १०।१०]

अर्थात् —मेरे जन्ममासमें, सारे राज्यमें मासाहार निषिद्ध रहेगा। वर्षमें एक-एक दिन इस प्रकारके रहेंगे, जिसमें सर्व प्रकारकी पशु-हत्याका निषेध हो। मेरे राज्याभिषेकका दिन अर्थात् बृहस्पतिवार और रविवारके दिन भी कोई मासाहार नहीं कर सकेगा। क्योंकि संसारका सृष्टि-सर्जन सम्पूर्ण हुआ था उस दिन किसी भी जन्तुका प्राणघात करना अन्याय है। मेरे पिताने ग्यारह वर्षोंसे अधिक समय तक इन नियमोंका पालन किया है और उस समय रविवारके दिन उन्होंने कदापि मासाहार नहीं किया। अतः मेरे राज्यमें मैं भी उन दिनोंमें जीवहिंसा निषेधात्मक उद्घोषणा करता हूँ।

सम्राटके जीवहिंसा निषेध करनेका सारा श्रेय जैन साधुओंके समागमका ही है, यह बात प्रसिद्ध अमेज इतिहासकार श्री विलेन्ट ए० स्मिथ अपनी पुस्तक Akbar The Great Mogal के सन् १६१७ के सम्स्करणक पृ० १६७ पर लिखत हैं —

“Akbar's action in abstaining almost wholly from eating meat and in issuing stringent prohibitions, resembling those of Ashoka, restricting to the narrowest possible limits the destruction of animal life, certainly was taken in obedience to the doctrines of his Jain Teachers. The infliction of capital penalty on a human being for causing the death of an animal, was in accordance with the practice of several famous ancient and Buddhist and Jain Kings. The regulations must have inflicted much hardship on many of Akbar's subjects and especially on the Mahammadans.”

अर्थात् अकबर का लगभग पूर्ण रूपसे मांसका परित्याग करना, एव अशोकके समान अद्र-से-अद्र जीवहिंसाका निषेध करनेके लिए सख्त आत्राओंका जारी करना, अपने जैन गुरुओंके सिद्धान्तके अनुसार आचरण करने हीके परिणाम थे। हिंसा करनेवाले मनुष्योंको कड़ी सजा देना यह कार्य प्राचीन प्रसिद्ध बौद्ध और जैन सम्राटोंहीके अनुसार था। इन आज्ञाओंसे अकबरकी प्रजा मेंसे बहुत लोगोको और विशेष रूपसे मुसलमानोंको बहुत कष्ट हुआ होगा।

फिर भी डा० विसेन्ट स्मिथ अपनी पुस्तक "अकर" के पृष्ठ नम्बर ३३५ में स्पष्टतया लिखते हैं कि —

'He cared little for flesh food, and gave up the use of it almost entirely in later year's, of his life, when he came under Jain influence "

अर्थात्—“मासाहार पर सम्राट को बिल्कुल रुचि नहीं थी और अपने जीवन के अन्तिम भाग में तो जब से वह जैनो के समागम में आया, तभी से उसने उसको सर्वथा ही त्याग कर दिया।”

बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर M. A B L M R A S महोदयके सगहस्थ एक गुटकेमें प्राचीन कवित्त इस प्रकार लिखा मिला है —

आदरियो चडोजती ताइ अकर, लोक हुआ सह लवै लवै ।
 गढजिणि जवै कीजती गाया, जीनके को तटे जवै ॥१॥
 पति असुरा लागौ आइ, पाए कवे चरणा दिसि करि ।
 मडलि तियाले सुरहे मारता, सुरगा हीटला तेथ मर ॥२॥
 एहवो घरम आदरे अकर, जिण धर्म देखी चानडो जत्त ।
 भोजन किलला तिके भसता, पर मम सावा लियो परत्त ॥३॥

भावार्थ—सूरिजी को वन्दनार्थ सम्राट सामने गण उनके साथ उनकी प्रजा और अनुगामी अमीर उमराव भी थे । गुरुके चरणोमें सम्राटने दोनो हाथ जोड कर प्रणाम किया । उनके उपदेश से सम्राट जैन धर्म का इतना आदर करने लगा कि उसके फल स्वरूप

जिस किल्ले में गायें कत्ल होती थी, मुर्गे, हिले आदि जानवर मारे जाते थे अब उनका कत्ल होना बंद हो गया। इतना ही नहीं सम्राट ने मास भक्षण, जो पहले करता था उसका त्याग कर दिया।

सम्राट जहाँगीर कथित शेष ग्यारह वर्षसे अधिक समय तक और डा० विन्सेन्ट स्मिथका अपने जीवन के अन्तिम भाग के कथनसे स्पष्ट है कि सम्राट के हृदय में इतने गहरे दया-भाव के होने का प्रबल कारण जिनचन्द्रसूरिजी और उनके शिष्य श्रीजिनसिंहसूरिजी के धर्मोपदेश ही हैं। क्योंकि स० १६६२ में अकबर का देहान्त हुआ और स० १६४६ से अकबर को सूरिजी के सत्समागम का लाभ मिला। सूरिजी स० १६५१ में अकबर के पास ही थे। इससे ऊपर के उभय कथनों की परिपुष्टि होती है।

इस कथनकी पुष्टि करनेवाले और भी बहुतसे प्रमाण मिलते हैं। डा० स्मिथने आगे इस प्रकार लिखा है —

“But the Jain holy men undoubtedly gave Akbar prolonged instruction for years, which largely influenced his actions and they secured his assent to their doctrines so far that he was reputed to have been converted to Jainism

—“Jain Teachers of Akbar”

अर्थात्—मगर जैन साधुओंने क्यों तब अकबरको उपदेश दिया था अकबरके कार्यों पर उस उपदेशका बहुत प्रभाव पडा था। उन्होंने अपने सिद्धान्त यहाँ तक मनवा दिये थे कि लोग सम्राटको जैन समझने लग गये थे। लोगोकी यह समझ केवल अनुमानसे ही

नहीं थी किन्तु उसमें वास्तविकता भी थी। कई विदेशी मुसाफिरो को भी अकबर के व्यवहारो से यह निश्चित हो गया था कि अकबर जैन सिद्धान्तो का अनुयायी था।

इसके सम्बन्ध में डा० स्मिथ अपने "अकबर" नामक ग्रन्थ मे एक मार्को की बात प्रगट करते हैं। उसने उक्त पुस्तकके २६२ वं पृष्ठमें पिनहेरो (Pinheiro) नामके एक पोर्चुगीज़ पादरीके पत्रके उम अशको उद्धृत किया है जो उपर्युक्त कथनको प्रमाणित करता है। यह पत्र उसने लाहौरसे ता० ३ दिसम्बर सन् १५६५ को लिखा था, जो इस प्रकार है —

He follows the sect of the Jains (Vertel)

अर्थात्—अकबर जैन सिद्धान्तो का अनुयायी है (उसने कई जैन सिद्धान्त भी उस पत्र मे लिखे हैं)।

इस पत्रके लेखनका समय स० १६५२ (सन् १५६५) है। करीब उसी समय श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराज, श्रीजिनसिंहसूरिजी आदि लाहोर मे अकबर के पास थे। अत अकबर को जैन-धर्मानुयायी कहलाने का श्रेय सूरिजी को ही है। क्योकि यह प्रभाव सूरिजी के सतत धर्मोपदेश का ही है।

प्रोफेसर ईश्वरीप्रसाद अपनी पुस्तक *A short History of Muslim Rule in India* प्रथम संस्करणके पृष्ठ न० ४०६ पर लिखते हैं —

"The Jain teachers who are said to have greatly influenced the emperor's religions out-

Jook were Hiravijaya Suri, Vijayasena Suri, Bha-nuchandra Upadhyaya and Jinchandra From 1578 onwards one or two Jain teachers always remained at the court of the Emperor From the first he received instructions in the Jain doctrine at Fatehpur and received him with great courtesy and respect The last (i.e. Jinchandra) is reported to have converted the emperor to Jainism Yet the Jains exercised a far greater influence on his habits and made of life than the Jesuits The tax on pilgrims to the Shatrunjaya hills was abolished and the holy places of the Jains were placed under his control In short, Akbar's giving up of meat, the prohibition of injury to animal life were due to the influence of Jain teacher's

अर्थात्—वे जैनगुरु जिनके विषयमें किम्बदन्ती है कि उन्होंने सम्राटके धार्मिक विचारों पर भारी प्रभाव डाला, हीरविजयसुरि, विजयसेन सुरि, भानुचन्द्र उपाध्याय और जिनचन्द्र थे। सन् १५७८ के पश्चात् एक या दो जैन गुरु सम्राट की राज सभा में सदस्य रहते थे। प्रारम्भ से उसने (अर्थात् सम्राट अकबर ने) जैन सिद्धांतों की शिक्षा फतहपुर में प्राप्त की थी और जैन गुरु को वह अत्यन्त श्रद्धा एवं आदर के साथ स्वागत करता था। कहा जाता है कि जिनचन्द्र सुरिने सम्राटको जैन-धर्ममें दीक्षित कर लिया था

••• तिसपर भी जैन लोगोका सम्राटके आचरण और चालढाल पर जैसुएटलोगोकी अपेक्षा बहुत अधिक प्रभाव था •••।

शत्रु-अय पर्वतके यात्रियों पर का कर हटा दिया गया था और जैनो के तीर्थ-स्थान सम्राट की सरक्षता में रखे गये थे। सक्षेप में मासा-हारपरित्याग और जीव-हिंसा का विरोध जैन गुरुओं के प्रभाव के द्वारा ही हुए थे।

साहित्य महारथी श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देसाइ B A. L L B. (Vakil High-Court, Bombay) अपनी पुस्तक "जैन साहित्य नौ इतिहास पृ० ५५६में भी इस प्रकार लिखते हैं —

“तेमज खरतर गच्छ ना जिनचन्द्रसूरि आदि ए सम्राट अकबर पर धीमे धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाण मा-प्रभाव पाडी तेने जीव दया ना पूरा रगवालो कर्यो हतो तेमा किञ्चिन् मात्र शक नथी ए वात नी साक्षीते वादगाहं वाहर पाडेला फरमानो पर थी, तेमज अबुल-फजलनी 'आइन-इ-अकबरी', वदाऊतीना "अल-वदाउनि", 'अकबर नामा' वगैरे मुसलमान लेखकोण लखेला ग्रन्थोपर थी स्पष्ट जणाय छे।”

केवल अकबर पर ही नहीं, किन्तु उनके पुत्र सलीम आदि पर भी सूरिजीका प्रभाव यथेष्ट था। उनका सारा परिवार सूरि-महाराजका परम भक्त हो गया था। सम्राटके सभासद गण आदि पर भी सूरिजीका रसा प्रभाव था। जिनमें शेख अबुलफजल आजम

* अबुलफजलका जन्म स० १५५१ ई० (हि० स० ९५८ के मोहर्रम की छठी तारीखको) में हुआ था। सन् १५७४ में वह अकबरके दरबारमें दाखिल हुआ। धीरे-२ पद वृद्धि होती गई इ० स० १६०२ में उसे पाच हजातीका मनमस्र मिला। सम्राट उसके शान्तस्वभाव, निष्कपटवृत्ति

खान, खानखाना अब्दुरहीम* एव ननाथ मुकुरखान आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इसका उल्लेख तत्कालीन सूरिजी की गहूलियों में पाया जाता है†।

स० १६१७में पाटणमें धर्मसागर नामक तपागच्छीय उपाध्याय-को ८४ गच्छ ने एकत्र होकर सध से वहिष्कृत किया और उनके तत्व तरङ्गिणी वृत्ति* आदि ग्रंथोंको अप्रमाणिक ठहराया और अमभ्य ग्रंथोंको जलज्वरण कर दिये गये थे। एव धर्मसागरने उस दुष्कृत्य का सङ्घ के समक्ष "मिच्छामि दुक्कडम्" दिया। यह सत्र वर्णन हम

और स्वाभी-भक्ति पर विशेष स्नेह और विश्वास रखते थे। अबुलफत्तल अकबरका सर्वस्व था, इस कथनमें भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

* खानखाना का जन्म स० १६१३ मार्गशीर्ष शु० १४ को हुआ था इसका पूरा नाम 'खानखानान मिजा अब्दुरहीम' था, उसके पिताका नाम बैरम खॉं था। इसके गुजरात विजय करने पर सम्राटने प्रसन्न हो कर खानखानाका प्रिताय दिया और पाच हजार फौजका सेनापति बनाया इसके त्रिपयमें विशेष देखो "खानखाना-नामा" और भाइन पृ-अकबरी।

† अत्रलियड अकबर, तास अंगज, सबल शाहि सलेम।

शेख अबुल, आनम, खानखाना, मार्गसिंह सु प्रेम ॥१॥

गच्छपति गाइयह जिनचन्द सूरि मुनि महिराण।

[समयसुन्दर कृत जिनचन्द सू० गीत]

~ आ तत्वतरंगिणी वृत्ति नी स० १६१७ नी लिखित प्रत पाटण ना बाही पार्श्वनाथ भडार डा० १५ माछे तेमा जगाब्धु छ के आ ग्रंथ नो कर्ता सर्वगच्छ सूरिओ थी जिन शायन मा थी उत्सूत्र प्रदपगा करवा माट वहिष्कृत करेले धर्मसागर छे।

[जेन साहित्य नो सक्षिप्त इतिहास पृ० ५८२]

चौथे प्रकरणमे कर चुके हैं। इतना होनेपर भी सागरजीने अपनी कुटेव न छोडी, क्योकि जिसका जैसा स्वभाव और अभ्यास हो जाता है, उसे छोडना असाध्य नहीं तो दु साध्य अवश्य ही होता है। किसी राजस्थानी कविने क्या ही अच्छा कहा है —

“ज्यारा पडया स्वभाव क जासी जीय सु

नीम न मीठा होय सींचो गुड घीय सु ॥”

यह कहावत सागरजी पर पूर्णत चरितार्थ हुई। सं० १६२६ में उन्होंने फिर “प्रवचन-परीक्षा” नामक विपैला और साहित्यमे

सुप्रसिद्ध साहित्य-सेवी विद्वान मुनि श्री विद्याविजयजी “ऐतिहासिक रास समग्र भा० ४” में उत्सूत्र कद-कुदाल ग्रथको सं० १६८३ की लिखित प्रतिके पुष्पिका एखसे धर्मसागरजीका बनाया हुआ न होकर सदयवच्छ आत्मके भग्दार से संप्राप्त प्राचीन ग्रथ है। ऐसी अपनी सम्मति प्रकट करते है। लेकिन दर्शनविजयजी कृत “विजयतिलकसूरि रास” आदिके वाक्योंपर विचार करने से उक्त ग्रन्थ धर्मसागरजीका ही बनाया हुआ मुनिदिशत है। सं० १६८३ की प्रशस्ति लेखकने धर्मसागरजीके पक्ष या बइकाममे आकर ही उस ग्रन्थको प्राचीन प्रमाणित करनेका दुस्साहस किया ज्ञात होता है। और सागरजी के स्वभाव पर मनन करते हुए यह बात विशेष सम्भव पर है।

धर्मसागरजीके विषयमें विशेष जाननेके लिये देखें (१) धर्मसागर गणि रास और श्री जिनविजयजी का “महोपाध्याय धर्मसागर” नामक लेख (भात्मानन्द प्रकाश पु० १९) और उनकी उत्सूत्र-प्ररूपणाके लिए देखो तपागच्छीय कृत निम्नोक्त ग्रन्थ —

कलङ्कभूत ग्रन्थ निर्माण किया। जिसमें अनेक जैन सम्प्रदायोका खण्डन और केवल अपनी आचरणाको सत्य बतलानेका त्रिफल्य प्रयत्न किया। इस ग्रन्थके सिवाय और भी उन्होंने इसी वर्षमें 'इर्यापथिकी पट्टि शिक्षा' और स० १६२८ में "कल्प किरणावली" नामक वृत्ति बनाई। कहना न होगा कि सागरजी ने अपने स्वभावानुसार इन ग्रन्थोंको विकृत और खण्डनात्मक शैलीसे ही रचा था। अपनी विद्या के अभिमान में उत्तम होकर भयङ्कर अमत्य आक्षेपोंके साथ असभ्य और अति कटु-वचनोंसे श्री जिनदत्त सूरिजी आदि युग-प्रधान प्रभावक महापुरुषोंके अवरणवाद गाए।

(१) कुमुताहि विष जागुली (२) पट्टिशजल्प विचार (३) रव हितोपदेश (४) बारहबोल रास (५) सोहम कुल पद्यावली (६) कल्प सुशोधिका वृत्ति (७) विजयतिलकसूरि रास (८) पट्टिश मध्यस्थ जल्प विचार (९) लघुपट्टिश जल्प विचार (१०) १०८ बोल सहाय (११) छत्तीस बोल बारह बोल सग्रह (पाठन) (१२) केशली स्वरूप सहाय (१३) विजयदान, विजयहीर और विजयसेनसूरिके ७-१२ और १० बोल इत्यादि।

वरतर गच्छवालों ने अपने गच्छकी आचरणाको सिद्धान्त युक्त प्रमाणित सिद्ध करते हुए धर्मसागरजी के उत्सृष्टों का खंडन रूपमें (१-२) जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर द्वय (२६-१४१ प्रश्न), (३) गुणविनयनी कृत कुमति मत खण्डन (स० १६६९), (४) उन्हीं की ५१ बोट चौपट् सवृत्ति तथा (५) लघु तपोट विचार सार (६) धर्मसागर खंडन आदि ग्रन्थ बनाए।

सागरजी का 'मिथ्या दुष्कृत' भी कल्पसूत्रवृत्तिमें कुम्भारके "मिच्छामि दुष्कडम्" कथानकके सदृश्य ही हुआ, उनकी इस प्रवृत्तिसे जैन शासनमें द्वेषाग्निकी ज्वाला प्रज्वलित हो उठी जिसका कुफल आज भी गच्छोके पारस्परिक वैमनस्य रूप में भोगा जा रहा है। अन्य गच्छवालोंको इससे विशेष क्षति नहीं हुई किन्तु तप-गच्छवालोंके कितने ही विद्वानोंने उनका पक्ष लिया जिसके परिणाम स्वरूप इन गच्छकी सगठन शक्ति बहुत क्षीयमान हो गई और आपसी द्वेष इनका अधिक वृद्धिगत हुआ जिमसे 'आणन्द सूर' और 'देव सूर' के नामसे सदाके लिये गच्छ-भेद हो गया।

हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने सम्राट के सामने उपस्थित विद्वन् मंडली में उपरोक्त प्रवचन-परीक्षादि ग्रन्थों की नि साग्ता और असभ्यता को सिद्ध किया विद्वानों ने भी उसे अप्रमाणित और अमान्य प्रमाणित किया †।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने लाहोरसे विहार किया। उस समय उनके साथ बहुतसा सघ था। उसके साथ सूरि-

† चित्तवतया श्रीशाहिराज समक्ष निराकृत (दूरीकृत) कुमति कृतोत्सूत्राय कुत्रचनमथ (असभ्य मशनमय) प्रवचन परीक्षादि व्याख्यान विचारै ।

[स० १६६२ में प्रतिष्ठित श्रीबोकारनेर, ऋषभदेवजीकी प्रतिमापर लेख]

"उली तपास घगोवार पोथी नइ मामलइ पातल्या अकरर इजूरि पोथी खोटी करो जय पाम्प्रा ।"

महाराजने गुरु-मुकुट* स्थानमें मन्त्रीश्वरकर्मचन्द्रके वनगाण हुए श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्थानकी यात्रा की जिम्का छल्लेख रत्न-निधानजी कृन 'जिनकुशल सूरि स्तवन' में इस प्रकार है —

मत्तिसागर वर्मचन्द्र मन्त्रीश्वर मग्गिण जन दुस काटड ।

विरथानक गुरु पगला थापी महिमण्डलि जस खाटड ॥ ३ ॥

युगप्रदान जिनचन्द्र महानुनि जिनमाणिक सूरि पाटड ।

श्री लाहोर सफल सध सेती जातरा करत सुहु घाटड ॥४॥

वहासे प्रामानुप्राम विचरते हुए सूरि-महाराज हापाणइ पयारे ।
वहाके सवके विशेष आप्रहसे उन्होने स० १६५२ का चतुर्मास हापा-
णइ किया । सूरि-श्वरके विराजनेसे धर्म-जागृति एव प्रभायना-उन्नति
अच्छी हुई ।

* यह गुरु मुकुट स्थान लाहौरके समीप ही विद्यमान है दादाजी क
चरणोंके लेखके विषयमें श्रीमान् प्रो० बनारसीदास जैन एम० ए० से ज्ञात
हुआ कि वे अक्षर विषय जानेके कारण पडे नहीं जाते ।



दसवें-प्रकरण

पंच-नदी साधना और प्रतिष्ठाएं



होरमे सम्राट ने श्रीजिनदत्तसूरिजी के चरित्र को श्रवण करते हुए पंच नदी के पोरोंके साधन प्रसंगसे विशेष चमत्कृत हो सूरिजीको भी साधन करनेके लिये विनती की थी। सम्राटके कथन* एव सघकी उन्नति के हेतु सूरिजी ने पंच नदी साधन करनेका विचार किया। उस

प्रसंगकी विशेष अनुकूलता प्राप्तकर आपने वहासे विहार किया। ग्रामानुग्राम मे धर्म प्रभावना करते हुए सघ के साथ मुलतान पधारे

* पाटणके श्री वाडी पार्श्वनाथ मन्दिरके शिलालेख (स० १६९३) में इस प्रकार लिखा है।

श्री जिनमाणिस्यसूरि तत्पट्टालङ्कार सार दुर्वार वादि विजयलक्ष्मी शरण पूर्व क्रिया समुद्धरण स्थान-स्थान प्राप्त जय प्रतिदिन घट्टमानोदय सद्य सन्नय त्रिभुवन जन वशीकरण प्रवण प्रणव ध्यानोपशोभित पवित्र सूरि मत्र विहित भव दूरि कृत सकल वादिम्भय निज पाद विहार पाविता घनितल अनुक्रमेण सघत् १६४८ श्री स्तम्भ तीर्थ चतुर्मासक स्थान समुद्रूता मित महिम श्रवण दर्शनोत्कृष्टित जलालुदीन प्रभु पातिसाहि श्रीमदकव्वट

सूरिजीका आवागमन सुनकर नगरके सारे लोग जिनमे राज, मालिक और सेख आदि भी आये थे। सूरिजीके दर्शनसे हर्षित होकर खूब धूमधामसे उनका नगर प्रवेशोत्सव किया गया। धर्म प्रभावना करते हुए सूरिजी वहासे पच नदीके तटपर चन्दुवेलि पत्तन मे पधारे। इस प्रवासमें सूरिजीको सम्राटकी आज्ञा से सर्वत्र अनुकूलता रही। स्थान-स्थानपर आपको आदर, सन्मान मिला। अभयदानादि धर्म-तत्वोका अच्छा प्रचार हुआ x। सिन्धु देश और पजाव प्रान्तमे आपकी प्रशस्त कीर्ति फैली एव जैन धर्म की उन्नति और महती वृद्धि हुई।

समाकारण मिलन स्वगुण गण तन्मनोनुरञ्जन समासादित सकळ भूतलाखिल जन्तु सखकारि भापाडाष्टाहिकामारि पुरमान श्री स्तम्भ तीर्थ समुद्र मीन रक्षण फुरमाण तत्प्रदत्त श्री सत्तम युग-प्रधान पद धारक तद्वचनन च नयन सर रस रमा मित (१६९२) सवति माघ सित द्वादशी शुभ तिथी अपूर्ण पूर्व गुन्वाम्नाय साधित पच नदी प्रगटी कृत पञ्च पीर प्राप्त परम वरत दादि। विशेष श्री सधोन्नतिकारक विजयमान गुरु युगप्रधान श्री १०८ श्रीजिनचन्द्रसूरीश्वराणा ।

इमे इस शिलालेखका फोटु खरतरगच्छनायक श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजीके जिद्वान शिष्य प्रवर्तक मुनिराज श्री सुखसागरजी से मिला और इसकी नकले गणाधीश श्री हरिसागरजी और विद्वट मुनिवर्य्य श्री रत्न मुनिजीसे प्राप्त हुई हे।

हुकमि श्री शाहि नइ पच नदी साधि नइ, उदय कियो सध नो सवायो ।
सधपति सोमत्री सणो मुझ धीनति, सोय जिणद्ध गुरु आज आयो ॥

[लब्धिकलोल कृत गहूली]

x ठामि ठामि हुकम श्री शाहि ने, कहता धर्म विचार ।

अभयदान महियलि वरतावता, सध उय जयकार ॥ • ॥

[पन्नराज कृत पच नदी साधन-गीत]

स० १६५२ माघ शु० १२ रविवार पुष्प नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्त मे आयम्बिल और अष्टम तप पूर्वक निञ्चल ध्यानके साथ नौकामे बैठकर पंच नदियोंके संगम स्थानमें पधारे बहापर पाचो नदिये अपने तीव्र वेगसे प्रवाहित होतो हुई आ मिली थीं* । बहा सूरिजीके निञ्चल ध्यानसे नौका स्थम्भित हो गई । आपत्री परमपवित्र देवाधिष्ठित सूरि-मंत्र का व्यान करने लगे । आपके निर्मल ध्यान एव शील तपादि सद्गुणोसे आकृष्ट हो, माणिभद्रादि यक्ष, पंच नदीके पाच पीर, खोडियादि क्षेत्रपाल आपकी सेवामे उपस्थित हुए, और धर्मोन्नतिमे सहाय्य करने का वचन दिया ।

* पच नदी पाचे पीर साध्या, खोडिया क्षेत्रपाल ।

जल बहै जेथ अगाध, प्रवहण थाभिया तत्काल ॥

[समयसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत]

पच नदी साधनेकी विधिकी तत्कालीन लिखी हुई प्रति (प० ३) श्रीकानेर में श्रीपूज्यजी श्रीजिनचरित्रसूरिजी के सग्रह में है, उसकी नकल हमारे पास है उसमें पाच पीरों के नाम इस प्रकार लिखे हैं —

(१) खदिर (२) कान्हू (३) लजा (४) सोमराज (५) क्षज ।

ये पीर क्रमश इन नदियोंके अधिष्ठाता हैं —

१ विदित्य (क्षैलम), २ राव्य (रावी), ३ चिन्नाह (चिनाव), ४ व्याह (व्यास) ५ सिन्ध ।

इन पाचों के सिवाय बीबीरास्नी और माणिभद्र यक्ष खोडिया क्षेत्रपाल को भी साधा जाता है ।

सूरि महाराजका पच नदी साधते हुए भावका सुन्दर चित्र यात्रु पूरण-चन्द्रजी नाहर के सग्रह में है ।

सूरिजी पंच नदी (के अधिष्ठाता देवोका) साधन×फरके प्रात - काल पत्तनमे पधारे । वाजित्र वजने लगे, नगरमे अपार आनन्द छा गया । भक्त श्रावकोने याचको को मुह मागा दान दिया । घोरवाड कुलोत्पन्न शाह नानिगके सुपुत्र राजपाल ने अपने द्रव्यका सदुपयोग कर, सुयज्ञ प्राप्त किया । सूरिजी वहा से उच्चनगर आए । वहा शातिदायक मोलहवें तीर्थङ्कर श्री शातिनाथजी के दर्शन, वन्दन करके “दरावर” पधारे । प्रकट प्रभावी दादा साहेब श्री जिनकुशलसूरिजी के स्वर्गस्थान में चमत्कारि गुरु चरणो के दर्शन किए ।

× पंचनदी की साधना सब की समुन्नतिके लिये श्रीजिनदत्तसूरिजी ने सर्व प्रथम की थी । उनके पश्चात् जिनसमुद्रसूरिजी और जिनमाणिक्य सूरिजी के साधन करने का उल्लेख पद्यावलियोंमें मिलता है । पंच नदी साधना के विषय मे श्रीजिनविजयजी सम्पादित ‘सरतरगच्छपद्यावली संग्रह’ (पद्यावली नं० ३) में कुछ विशेष ज्ञातव्य मिलता है । यद्यपि इस साधनामे अप्यकाय के जीवों की विराधना का प्रश्न है तथापि कारणरक्ष नदी पार करने की जिनागमो मे आज्ञा है । इस प्रश्न का विशेष स्पष्टीकरण ड० जयसोमजी ने अपने ‘प्रश्नोत्तर ग्रन्थ’ के प्रश्न नं० १३९ के उत्तर में इस प्रकार किया है ‘—

“जे सरतर गच्छि पंचनदी साधै छै बली क्षेत्रपाल योगिनी नदी प्रसुग धमार्यो नइ साधवा नथी कहा ते पिण साधै छै बली इहा घणी जीव विगधना था(य)इ छै ते स्यु १ तत्रार्थे —श्रीसध नइ समाधान निमत्ति श्रीयुगप्रधान श्रीत्रिादत्तसूरिजी ए ५ नदीया ना दवता सूरि-मंत्र नइ गुणगे तथा तप संयमइ मतोप्या हुता देवताइ पिण सन्तुष्ट थए थके धाचा स्वीधी हुती जे इणइ देश माडि तुमारा गच्छनायक आबै ते इहा ५ नदी नइ एक-

वहाँसे विहार करके जैमलमेर आते हुए सूरिजीने मार्गमें अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के निर्वाण-स्थान पर उनके सुन्दर स्तूप का दर्शन किया। और नवहरपुर में पार्श्वनाथजी की यात्रा

ठह मेल थए सूरि मत्र जाप करे, अम्है पिण संघ ना विघ्न वारीत्या एतलै घर दीधै थके श्रावक श्राविकाए पुणि तेह देवता ने बलि बाकुलनी पूजा साहम्मी भणी कीधी एतलै मेलि संघ नइ कायें भाज पिण ५ नदी साथै छै ए-चालि छै तथा ठाणाग सूत्र माहि पाचमें ठाणै पाच महानदी नउ कारणे “उत्तरि-त्तएवा सतरित्तएवा” इत्यादि पाठ जोज्यौ जे ऊतरता पिण जीव विराधना थाता इरियावही प्रमुख पडिक्के एवं विचारिज्यौ तथा श्रुत देवता, क्षेत्र देवता, भुवनदेवता ना काउसग पडिकमणा माहि करी थुइ प्रमुख कहै छै ते विमासिज्यो छट्टिराग छोड़ेज्यो। बलि इम लोक कहावत सामली छइ जे ऋषीमती हीरविजयसूरि, गच्छ नइ उदय निमत्त उच्छिष्ट चण्डालिनी देवता महलै प्रकारि साधवी माडी हती पण किणहीक मेलि न सधाणो कित्तु कोपित थइ, पछी यति शत २ तथा २५० यती ना यान दीधा पठै घली फेरी साथी गच्छ प्रतिष्ठा पिण थइ इहा जूठ साच केवली जाणे घली धाणधार देशें मगरवाह गाम पालहणपुर ने पासि माणिभद्र नामें लोक प्रसिद्ध सिद्ध-क्षेत्रपाल छै सिंदूर तेल तिलवटीइ पूजाइ छै तिहा लहुडी पोसाल ना तपा आचार्य पद स्थापना नइ अधिकारि सवा मण गुल पापडी करी पूजी एक राति गुणगा करी तेहनइ आराधै छै पातिसाह पास जाता ऋषमती हीर-विजयसूरिइ पिण तेतली विधि गुल पापडी करावी पालहणपुर ना श्रावका पासे पूजा करावी गुणगा करी श्रीजीपातिसाह पास गया, समहता थया ए धात सर्व लोक जागै छै पालहणपुर ना लोक ने पूछी चौकस करिज्यो इम श्री मगरवाडि यक्ष आराधता मिथ्यात न थाइ एवं विमासिज्यो।

करके मिति फाल्गुन शुक्ला २ के दिन जैसलमेर पधारे । वहा के सध को हर्ष का पाराजार न रहा । स० १६३६ के पञ्चात् पूज्यश्री का जैसलमेर पधारना नहीं हुआ था, इससे लोगो के हृदयमे गुरु-दर्शन की अधिकाधिक अभिलाषा थी । वहा के रावल भीमजी X और

X ये रावल हरराजजी के पुत्र थे । इनका राज्यकाल सं० १६९० से १६६३ तक है । इनका कुठ परिचय पृ० २४ में लिख चुके हैं । ये सूरिजी क अनन्य भक्त थे जैसा कि बा० समयछन्दरजी कहते हैं —

रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय (इ?) छरतान ।

बडा बडा महीपति घयण मानइ, दिये आदरमान ॥ गच्छपति० ॥

इनके विषयमें बा० गुणविनयजी भी अपने जिनचन्द्र सूरि गईली मे लिखते हैं —

“राउल श्री भीम इम कहइ जी, यादव वश घदीत रे ।

पधारे जैसलमेर नइ जी, प्रीति धरी निज चित्त रे ॥ १ ॥

ये जैन साधुओ का खून आदर करते थे । बा० समयछन्दरजी ने इन्ह उपदेश देकर इनके राज्यमें मयणो (मीना-जगली जाति) द्वांग मार जाते हुए साँडोको छुड़ाया —

जीव दया जश लीध, राउल रजी हो भीम जेशल गिरी ।

करणी उत्तम कीध, साडा छोडाया हो देश में मारता ॥ ३ ७

[राजसोमजी कृत, मझो० समयछन्दरजी गीत]

साडा छोडाया मयणे मारता घी, राउल भीम हजूर ॥ समय० ॥

[हर्षनन्दन घादी कृत, समयछन्दर गीत]

बा० राजसमुद्रनी (श्रीजिनराज सूरि) ने रावलजी की सभामे तपा-गच्छवालो को शास्त्रार्थ में परास्त किया था । जिम्का उल्लेख श्रीसागर कृत 'जिनराजसूरि रास' में है —

“जैसलमेर दुरग गदि, राउल भीम हजूरि ।

वाद्द तपा हराविया, विद्या प्रश्न पड़ूरि ॥

सध ने सूरि-महाराज का प्रवेशोत्सव सूत्र धूमधाम से किया। संघ और रावलजी के विशेष आप्रह होने के कारण उन्होने सं० १६५५ का चातुर्मास जैसलमेर में किया :- ।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पञ्चात् शीघ्र ही प्राग्वाट द्वातीय जोगी शाहके पुत्ररत्न सधपति सोमजी के नव्य-निर्मित जिनालय की प्रतिष्ठा के हेतु विनती आने के कारण सूरि महाराज जैसलमेर से विहार कर प्रामानुग्राम विचरते हुए अहमदाबाद पधारे। वहाँ मिति माघ शुक्ला १० सोमवारको श्री आदिनाथजी आदि तीर्थंकरों के अनेक विम्बोकी प्रतिष्ठा की ×। आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्री समयराज उ० रत्ननिधान आदि अनेक विद्वान मुनि आपत्री के साथ में थे =। सधपति सोमजी, शिवाजी ने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था, एक पट्टाबलीमें इम प्रसंगपर ३६०००) रुपया व्यय करनेका लिखा है। उ० रत्ननिधानजी अपनी जिनचन्द्रसूरि गहूलीमें इस प्रकार लिखते हैं —

* सूरिजी के पंच-नदी साधन समयसे यहा तक का सारा वर्णन श्री० पदमराजनी कृत "पंच नदी साधन (जिनचन्द्र सूरि) गीत" गा० १५ से किया गया है।

× इसी समय सूरिजी की प्रतिष्ठित श्रीशान्तिनाथजी की धातु-प्रतिमा जयपुर के श्री समतिनाथजी के मन्दिर में है जिसका लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके सम्पादित "जैन लेख संग्रह" के लेखाङ्क ११९६ में छप चुका है।

= गणाधीश श्री० हरिसागरजी महाराज द्वारा सोमजी शिवा के मंदिर के लेख प्राप्त हुए हैं, उनमें इन मुनियोंका सूरिजीके साथ होनेका उल्लेख है

राजनगर प्रतिष्ठा करी, सरल मण्डाण गुरुराई रे ।

सघवी सोमजी लाछिउउ, लाह लियड तिणडाई रे ॥११॥

सूरिजी ने स० १६५४ का चातुर्मास अहमदाबाद में ही किया । उसके पश्चात् प्रामानुप्राम विचरते हुए सम्भात पधारे, स० १६५५ का चातुर्मास वहाँ किया । विहार पत्र न० १ में “श्रीराजाजी ना तेडाज्या” लिखा है । किन्तु प्रमाणाभावसे किस भक्त नृपति का आमन्त्रण था, यह नहीं कहा जा सकता ।

सम्भात से विहार करके सूरेश्वर अहमदाबाद पधारे । सन् १६५६ का चातुर्मास वहाँ किया । सम्राट अकबर उस समय बरहानपुर आये हुए थे, उन्होंने सूरिजी को स्मर्ग किया, पश्चात् ईडर आदि ग्रामों में बहुत सी धर्मोन्नति करते हुए राजनगर पधारे । यहाँ पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी का देहान्त हुआ इस से सारे सघ में शोक छा गया । क्योंकि मन्त्रीश्वर सतरहवीं शताब्दिके एक उज्ज्वल रत्न थे । वे जैन शासन और देशकी सेवा और उन्नति करने में अग्रगण्य थे ।

इन बातोंका उल्लेख विहारपत्र न० १ में इस प्रकार है —

“तत्र बरहानपुरि श्रीजीये चीताया पड्ड ईडर प्रमुख नामे यह घणा लाभ लेइ राजनगरि आब्या, अत्र श्रीकर्मचन्द्र मत्री परोक्ष थया ।”

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्युका नवान् साहित्य मसाल में अज्ञात है । इससे उनके सम्बन्धमें किम्बदन्तिया प्रचलिन

हैं, बिहार-पत्र के द्वारा इस महत्वपूर्ण संवत् के निर्गम्य के साथ-साथ अनेक भ्रम निवारण हो जाते हैं। इस विषय में विशेष उद्घोष मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रके जीवन-परिचयमें की जायगी।

श्रीसुन्दर कवि कृत "विमलाचल स्तवन" गा० ६ से ज्ञात होता है कि इसी वर्ष में माधव शुक्ला २ को सत्र के साथ सूरि-महाराज ने गिरिराज विमलाचल की यात्रा की थी ×।

सूरीश्वर ने स० १६५७ का चातुर्मास पाटणमें किया। वहा पर अनेक धर्म-कृत्य हुए। चातुर्मासके अनन्तर सूरिजी सीरोही पवारें, वहा के नरेश महाराज-सुरतान सूरिजीके परम भक्त थे उन्होने तथा सध ने आपकी अच्छी भक्ति की। मितो माघ शुक्ला १० के दिन सीरोही में प्रतिष्ठित अष्टदल कमलाकार श्रीपार्श्वनाथप्रभु की धातु-मूर्ति वीकानेरके श्री चन्द्रप्रभ स्वामी के मन्दिरमें है, उसका लेख इस प्रकार है —

स० १६५७ वर्षे माघ सुदि दसमी दिने श्री सीरोही नगरे राजा-धिराज श्री सुरतान विजय राज्ये ऊपकेश वगे बोहित्थराय गोत्रे विक्रमपुर वास्तव्य म० दस्तू पौत्र म० खेतसी पुत्र म० रुद्राकेन सपरिकरेण कमलाकार देव गृह मण्डित पार्श्वनाथ विम्बं कारित प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत् सरतरगच्छाविष श्री जिनमाणिस्य सूरि पट्टालकार दिहोपति

× सोल छप्पन माधव छदि बीजह, सध भदित परिवार।

युगप्रधान जिनचन्द्र लुहारिया, श्रीसुन्दर छप्पकार ॥ ९ ॥

वाचक साधु सयुतै पूज्यमान वद्यमान
चिरनदतु । लि० उ० समयराजै * ।

यहासे विहार करके सूरि-महाराज सम्भात पवारे स० १६५८ का चातुर्मास वहाँ किया । इसके पञ्चात् स० १६५६ का चातुर्मास अहमदाबाद किया । वहा से विहार कर के पाटण पधारे ।

स० १६६० मे पाटण चौमासा करके ग्रामानुग्राम विहार करते हुए महेवा पवारे । स० १६६१ का चौमासा वहा हुआ । श्रीनाकोडा पार्वनाथजी की यात्रा की एव नहुत से धर्मकार्य हुए । काकरिया गोत्र का कर्मा श्रेष्ठि वहा आपका भक्त आग्रक था उसने वहा सूरिजी के कर-कमलो से प्रतिष्ठा कराई § ।

* सूरिजी के प्रतिष्ठित अष्ट दल कमलाकार जिन प्रतिमाए षीकानेर के और भी कई मन्दिरोंमें है । इस कमलाकार देव गृह की ८ पलडियोंमें दो नहीं मिलने के कारण इस लेख का मध्यभाग अमम्पूर्ण रह गया है ।

§ विहार पत्र नं० १ में 'का० कम्मइ प्रतिष्ठा करावी' लिखा है । इसके साथ और भी कई जिन त्रिम्योंकी प्रतिष्ठा हुई थी जिनमे से एक मूर्ति षीकानेरस्थ कोचरोंकी गुवाड के आदिनाथ मन्दिर में है, जिसका लेख इस प्रकार है —

“स० १६६१ वर्षे मार्गशीर्ष मासे प्रथम पक्षे पंचमी वासरे गुरुवारे
ऊकेश वश बहुरा गोत्रे शाह अमरसो पुत्र साह राम पुत्रख

रेण श्री शान्तिनाथ विजकारित श्रीबृह संरे

युग प्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि ।

भरुच के मुनिमुग्रत जिनालय मे इसी मिति की प्रतिष्ठित विमलनाथ प्रभु की प्रतिमा है । जिसका लेख जेन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भा० २ में छपा है ।

स० १६३८ के बाद सूरिजीका बीकानेर चातुर्मास नहीं हुआ था, इससे बीकानेर का संघ उन के दर्शनो के लिये उत्कृष्टित था, सूरिजी को अपने निकटवर्ती आये जानकर अत्यन्त हर्ष के साथ वहा पधारनेके लिये “वीनति पत्र” लेकर सघके मुख्य भक्त-श्रावकगण महेवा गये। अति आग्रह-पूर्वक बीकानेर चतुर्मास करने के लिये प्रार्थना की। संघकी अतीव भक्ति एव आग्रहके वशीभूत हो कर आप बीकानेर प्यारे। आपके शुभागमनसे वहा के महाराजा रायसिंहजी और श्रीसघने हर्षान्वित होकर आपका नगर प्रवेश खूब समारोह के साथ कराया। बहुत वर्षोंके पश्चात् आनेके कारण सघमे प्रचुर भक्ति और धर्म-परायणता का श्रोत बहने लगा। चातुर्मास मे धर्म प्रभावना खूब अच्छी हुई।

सरतर संघ ने नाहटोकी गुवाड मे श्रीगुरुब्जयावतार श्रीरूपभ जिनालयका निर्माण कराया। जिसकी प्रतिष्ठा स० १६६२ चैत्र कृष्णा ७ के दिन सूरिजीने सविधि सम्पन्न की। उस समय पापाण की ४० जिन मूर्तियो की प्रतिष्ठा की, जिनमे से अधिकांश मूर्तिये वहा अद्यावधि विद्यमान है। कई मूर्तिये अन्यत्र भी पाई जाती हैं जिनमे तीन मूर्तियें श्रीमुपाडर्वनाथजी के मन्दिर मे और एक मूर्ति वीरोंसेरीके उपाश्रयस्थ देहरासरमे मूलनायक रूपमे विराजमान हैं।

* अडमठ अगुल प्रतिमा बडी, उज्वल दल आगसे घडी।

झिगमिग ज्योतितणो विस्तार, जय जय शत्रुजय अवतार ॥२॥

*

*

*

*

ढोइ रस शशि मित धरसैरे, चेत घदी सातम दिघसैरे।

युगवर श्रीजि न्द यतोशैरे, प्रतिष्ठा कीधी जगीशैरे ॥५॥

इस प्रतिष्ठाके समय सूरिजीके स्थ उनके शिष्य आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्रीममयराजजी उ० रत्ननिधानजी वाचक पुण्यप्रधानजी आदि थे । पापाण प्रतिमाओं के अतिरिक्त इसी समयकी प्रतिष्ठित कई अष्टदल कमलाकार मूर्तियों भी मिलती हैं जिनमें से १ आदिनाथजी के मन्दिर में और कई अन्य मन्दिरों में भी देखी गई हैं ।

इसके पहिले स० १६६२ मिति वैसाख वदी ११ के दिन प्रतिष्ठित धातु मूर्ति भी श्रीसुपादर्पनाथजी के मन्दिर में है जिनका लेख इस प्रकार है —

बलि श्रावक श्राविकारी रे, प्रतिमा वालीश विचारीरे ।

उच्छव करि इहा वित्त वावइ रे, निज रुद्धि तगो फल भावइरे ॥६॥

(स० १६६८ पोष सुदी ९ सुमतिकछोल कृत रूपभस्तवन)

“सवत सोल त्रासठि समइ, घेन सातमि बदि जेहो जी ।

युगप्रधान जिनचन्दजी विन्धप्रतिष्ठ्या एहो जी ॥८॥

मूलनायक प्रतिमा नमू, आदीसर निसदीसो जी ।

सुन्दर रूप सुहामणउ, बीजा बलि च्यालीसो जी ॥२ श्री॥

(समयसुन्दर कृत स्तवन गा-११)

* इन सबका नाम बीकानेरके श्री रूपभदेवजीके मन्दिर के लेखों में पाया जाता है । ये सब लेख हमारे संग्रह में हैं । मूलनायकजी का लेख विस्तृत होनेके कारण यहा नहीं दिया । बीकानेरके समस्त लेखोंको भविष्यमें पुस्तकाकार प्रकाशित करनेकी हमारी शुभाकांक्षा है ।

“स० १६६२ वर्षे वैसाख वदी ११ शुक्ले उ० जातीय शिवराज सुत पासा भा० सादिक सुत कुवरमी भा० • • • दि सपरिवारै श्रीमुनिसुव्रत विम्बं का० प्र० श्रीवृहत • • • श्रीजिनचन्द्र”

सूरिजीने स० १६६३ का चातुर्मास भी लाभ जानकर बीकानेर मे ही क्रिया विहारपत्र मे “तत्र प्रतिष्ठा” लिखा है। सम्भव है कि डागोकी गुवाडवाले श्रीमहावीर स्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई हो किन्तु वहा कोई शिलालेखादि न मिलने से हम निश्चय-पूर्वक नहीं कह सकते। इसी मन्दिर मे स० १६६४ मिति वैसाख सुदी ७ को प्रतिष्ठित धातु प्रतिमा है, जिसका लेख इस प्रकार है।

“स० १६६४ वर्षे वैसाख सुदि ७ गुरुवारे राजा श्रीरार्यसिंह विजयराज्ये श्रीविक्रमनगर वास्तव्य श्रीओसवाल ज्ञातीय बोहित्थर गोत्रीय सा० वणवीर भार्या वीरमदे पुत्र हीरा भार्या हीरादे पुत्र पास भार्या पाटम दे पुत्र तिलोकसी भार्या तारा दे पुत्ररत्न लक्ष्मसी केन अपर मातृ रंगा दे पुत्र चोला सपरिवार मश्रीकेन श्रीकुथुनाथ विम्बकारित प्रतिष्ठित च श्रीवृहत्परतरगच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्य सूरि पट्टालंकार युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि पूज्यमान चिर नदतु ॥ कल्याण मस्तु ॥”

‘श्रीचिन्तामणिजी’ मन्दिर के गुप्त-भंडार मे भी इसी दिन की प्रतिष्ठित धातु मूर्ति है, जिसका लेख यह है —

“स० १६६४ प्रमिते वैसाख सुदि ७ गुरु पुण्ये राजा श्रीरार्यसिंह जी विजय राज्ये श्री विक्रम नगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय गोलवच्छा गोत्रीय सा०रूपा भार्या रूपा दे पुत्र मिन्ता भार्या माणक

दे पुत्ररत्न सावन्नाकेन बहाटे पुत्र नथमल कपूरचन्द्र प्रसुप्त परिवार सश्रीकेन श्री श्रेयाम विनकारितं प्रतिष्ठित च श्रीबृहत्परतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिसूरि पट्टालकार हार श्रीगाहि प्रतिनोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि पूज्यमान चिर नदतु ॥ श्रेय ॥”

मिती वैसाख सुदि ७ के अनन्तर निहार कगके लरेरइ पधारे, स० १६६४ का चातुर्मास बहापर हुआ। जोधपुर से राजा सूर सिंहजी वंदनार्थ आये वे सूरिजी से वर्मगोष्टि कगके हर्षित हुए और युगप्रधान गुरुवर्य का सन्मान बढ़ाने के लिये अपने राज्य में सूरिजी को सर्वत्र वाजिप्र बजाते हुए आवक लोगो के ले जाने में कोई बाधा न दे, इसलिये परवाना लिखकर दिया, जिसकी नकल इसी पुस्तक के परिशिष्ट में छपी है। ये महाराजा सूरसिंहजी सूरि जी के प्रसिद्ध भक्त थे, जिसका नामोल्लेख समयमुन्दरजी अपने (अपूर्व) आलिजा गीत में इस प्रकार करते हैं —

* ये स० १६९२ के श्रावण महीने में लाहोर में अपने पिता उदयसिंह के उत्तराधिकारी हुए। माघ शुक्ल ५ जोधपुर में राज्याभिषेक हुआ। इन्हें सम्राट ने दो हजारी जात और सत्रामात हजारों का मानस्य दिया। ये बड़े वीर, दानी और नीतिचतुर विद्वान थे एक ही दिन में इन्होंने चार कविओं को १ लाख का दान दिया था। स० १६७० में इनका स्वर्गवास हुआ।

x एक पट्टावली में स० १६६८ माघ शुक्ल ५ तीयाधिराज श्रीशत्रुघ्न्य पर नव्य जिन प्रासाद में सूरिजी के करकमलों से अहत् रिम्भों की प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख इसप्रकार है —

ज्ञाहि सलेम सह उमरा, भीम सूर भूपाल ।

चीतारइ तुनइ चाह सु, पूज्यजी पधारो कृपाल ॥५॥

सूरिजी लपेरा से विहार करके मेडता पधारे । सं० १६६५ का चातुर्मास मेडता मे किया । अहमदावाद के विनीत आमन्त्रण से सूरिमहाराज राजनगर पधारे । वहा से ग्रामानुग्राम विचरते हुए रम्भात पधारे । सं० १६६६ का चातुर्मास रम्भात में किया । उमके पश्चात् सं० १६६७ का चातुर्मास अहमदावाद मे करके पाटण पधारे । सं० १६६८ का चातुर्मास पाटण मे किया । इन वर्षों में और भी बहुत-सी जिन मन्दिरों की प्रतिष्ठाएँ सूरिजी के कर कमलोंसे हुई ।

“सवत् १६६८ वर्षे माघ सुदि माहें श्रीशत्रुञ्जय उपरि नवीन प्रासाद-
तिडा इज प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कीवी, बोजी पणि घजी प्रतिष्ठा कीधी ।”

[बोकानेर ज्ञानभण्डार—पट्टावली]

इसी वर्ष में प्रतिष्ठित श्रीधर्मनाथ बिम्ब का लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के जैन लख सग्रह में भी इस प्रकार है —

“स० १६६८ श्रीधर्मनाथ बिम्ब कां० सा० हीरानंदेन प्र० श्रीजिनचन्द्र-
सूरिभि ”

उ० क्षमाकल्याणजी गणि कृत पट्टावली मे श्रीजिनसिंहसूरिजी के शिष्य राजमसुद्रजी (श्रीजिनराजसूरि) को इसी वर्ष मे आसावलीपुर में वाचक पद देनेका उल्लेख इस प्रकार है —

“स० १६६८ आसावलीपुरे श्रीजिनचन्द्रसूरिभि वाचक पद प्रदत्तम्”
श्रीसार कवि कृत “जिनराजसूरि रास” में नी वाचक पद देनेका इस प्रकार उल्लेख है —

“वाचनाचारज पद दियउ, श्रीजिनचन्द्रसूरिन्द ।

पाटोघर प्रतपउ पढा, रलिय रग भाणद ॥ ५ ॥

उत्कारहर्कं प्रकरण



महान् शासन-सेवा



सम्राट अकबर न्यायपरायणता में राज्यशासन करते हुए वि० स० १६६७ मिति कार्तिक सुदी १४ मंगलवारकी रात्रि को कालधर्म प्राप्त हुए। सम्राट के मरण परमापर समान भाव और प्रजावात्मल्य गुणपर प्रजा बड़ी प्रसन्न थी। मुसलमान शासकोंमें यही एक ऐसे

सम्राट हो गये हैं, जिनके समय में हिन्दू और मुसलमान दोनों सभ्य शान्ति से जीवननिर्वाह किया। सम्राट की मृत्यु के अनन्तर हिन्दू और मुसलमान दोनों के हृदय शोकाकुल हो गये, सर्वत्र हाहाकार छा गया, जिम्का कुल वर्गन "बनारसी-विलास" में पाया जाना है। सम्राट के देहावसान के अनन्तर उनके पुत्र शाहजादा मलीम "नूस्तीन जहांगीर" की उपाधिधारण के आगेके निहामनारूढ हुए। सूरिजी के लाहौर परारण के समय में ही शाहजादा मलीम उनको सम्मान की दृष्टि से देखा करता था और उनका भक्त हो गया था।

श.हि सलेभ सह उमरा, भीम सूर भूपाल ।

चीतारइ तुनइ चाह सु, पूज्यजी पधारो कृपाल ॥५॥

सूरिजी लपेग से विहार करके मेडता पधारे । सं० १६६५ का चातुर्मास मेडता मे किया । अहमदावाद के विनोत आमन्त्रण से सूरिमहाराज राजनगर पधारे । वहा से ग्रामानुग्राम विचरते हुए सम्भात पधारे । सं० १६६६ का चातुर्मास सम्भात में किया उमके पश्चात् सं० १६६७ का चातुर्मास अहमदावाद में करके पाटण पधारे । सं० १६६८ का चातुर्मास पाटण मे किया । इन वर्षों में और भी बहुत-सी जिन मन्दिरो की प्रतिष्ठाएं सूरिजी के क कमलोसे हुई ।

“सवत् १६६८ वर्षे माघे उदि माहें श्रीशत्रुञ्जय उपरि नवीन प्रासाद तिडा इज प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कीधी, बीजो पणि घगी प्रतिष्ठा कीधी ।”

[बीकानेर ज्ञानभण्डार—पट्टावली

इसी वर्ष में प्रतिष्ठित श्रीधर्मनाथ विन्ध्य का लेख बाबू पूरणचन्द्रज नाहर के जैन लल मगड में भी इस प्रकार है —

“स० १६६८ श्रीधर्मनाथ विन्ध्य का० सा० दीरानदेन प्र० श्रीजिनचन्द्रसूरिभि ”

उ० क्षमाकल्याणजी गणि कृत पट्टावली में श्रीजिनसिंहसूरिजी शिष्य राजसमुद्रजी (श्रीजिनराजसूरि) को इसी वर्ष में आसावलीपुर वाचक पद देनेका उल्लेख इस प्रकार है —

“स० १६६८ आसावलीपुरे श्रीजिनचन्द्रसूरिभि वाचक पद प्रदत्तम् श्रीसार कवि कृत “जिनराजसूरि रास” में जी वाचक पद देनेका इस प्रकार उल्लेख है —

“वाचनाचारज पद दियउ, श्रीजिनचन्द्रसरिन्द ।

पाटोघर प्रतपउ पदा, रलिय रग भाणद ॥ ५ ॥

यति-साधुओके चरित्रके विषयमे शकित होकर अपने शीघ्र कोपशील स्वभावानुसार यह हुकम सर्वत्र जारी कर दिया कि—मेरे राज्यमे

यावज्जन एनीर्य दण्ड करयो , समोचना ल्यालये ।
गोरक्षा जल जीव रक्षणविधि प्राप्त प्रतिष्ठाश्रये ॥३॥
देशाकर्षण साधु दु ख दलनात् कारण्यपुण्याशये ।
त तद्रूप विलोक रजितमन श्री नूरदी रञ्जनात् ।
श्री मच्छ्री जिनचन्द्र सूरि छगुरो योगप्रधाने चिर ।
राज्यं कुर्वति जैनसिंह छगुरो सद्योवराज्येकिल ॥४॥

जिनमागर सूरि रासमे—

मन्वत् सोल गुणहतरद्द, बृहवि साहि सल्लेम ।
जिनशासन मुगतउ कर्मा, सस्तरगच्छ मड खेम ॥१३॥

(ऐ० जै० का० सं० पृ—१७९)

नवत् १६७० चेत्र छदी १० को दिये परम भी साधु सधकी रक्षा करनेका उल्लेख हे, देखे परिशिष्ट न० (घ)

शिला-लेखोमें भी—“कुपित जहागीर साहिरजक तत्स्वमंडल यद्विष्टत साधुरक्षक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि ।”

(प्राचीन जैनलेख समूह लेखाक १७)

— कविवर समपछन्दर कृत सस्तरगच्छ पद्यावलीमें—

“पुन गुस्त्रणा ण्क दर्शनितोऽनाचार दृष्ट्या कुपितेन साहिना सर्व गच्छीय दर्शनिपु देशेभ्यो निष्कासितेषु पत्तनाद्विहत्य आगराया गत्वा श्री साहि समञ्ज अपराध मोचनेन सर्व दर्शनिना सर्वत्र विहार कारित ।

कविवर अपने छन्दमें भी यही स्पष्ट कहते हैं—“दर्शनी एरु आचार चको ।”

सम्राट जहाँगीर अत्यधिक मद्यपान न किया करते थे और शीघ्र क्रोधी स्वभावी थे, इन दोनोंमेंसे एक भी दुर्गुण हो तो मनुष्य अनेक अविचार और अनर्थमय कार्य कर डालता है, तो जहाँगीर की विद्यमानता हो वहाँ तो कहना ही क्या ?

स० १६६८× में एक— शिथिलाचारी वेपथारी दशनीको अनाचार संवन करते जान, सम्राटने उसे देश निकाला दे दिया और अन्य सर्व

* सम्राट स्वयं अपनी आत्म-जीवनी (जहाँगीर नामा) में इसे स्वीकार करते हैं।

× विहारपत्र नं० १ और लखिबेश्वर कृत जिनचन्द्रसूरि गीत (अवतरण पृष्ठ १४६) से यह घटना स० १६६८ में हुई थी, सिद्ध होता है। गीत से तो यह भी ज्ञात होता है कि स० १६६८ में, जब कि सूरिजी का चातुर्मास पाटणमें था आगरे सबका विज्ञप्तिपत्र (चातुर्मासके समय ही) आया था और चातुर्मासके सम्पूर्ण होनेपर शीघ्र ही विहार कर सूरिजी आगरे पधारे थे। सबत् १६६९ में तो सूरिजीने सम्राटको प्रतिबोध देकर साधुविहार प्रतिबधक हुक्मको उन्मू न करवाके साधुसङ्घकी महान् रक्षाके साथ जैन शासन को अपूर्व सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त किया था, यह स० १६६९ में ही रचित हर्षनन्दन कृत 'आचार दिनकर प्रशस्ति' से सिद्ध होता है—

“राज्ये राउल भीम नाम नृपते कल्याणमल्लस्य च ।

वर्षे विक्रम तस्तु षोडश शते, एकोनसत्ससते ॥१॥

बृद्धे सरत्तरगच्छे श्री मज्जिनभद्रसूरि सन्ताने ।

श्री जिनमाणिक्य यतीश्वर पट्टेलकार दिनकरि ।

जाग्रद भाग्यजये प्रबुद्ध यवनाधीश प्रदत्ताभये ।

साक्षात् पचनदीश साधन विधौ, सप्राप्त लोकम्मये ॥२॥

यति-साधुओंके चरित्रके विषयमें शक्ति होकर अपने शीघ्र कोपशील स्वभावानुसार यह हुम्म सर्वत्र जारी कर दिया कि—मेरे राज्यमें

यावज्जन उत्तीर्थ दण्ड करयो, समोचना ख्यालये ।
गोरक्षा जल जीव रक्षणविधि प्राप्त प्रतिप्याश्रये ॥३॥
देशाकर्षण साधु दुःख दलनात् कारण्यपुण्याशये ।
तत्तद्रूप विलोक रजितमन श्री नूरदी रञ्जनात् ।
श्री मच्छी तिनचन्द्र सूरि छगुगै योगप्रधाने चिर ।
राज्यं कुर्वन्ति जेनसिंह छगुरो सद्योवराज्येक्विल ॥४॥

जिनमागर सूरि रासमें—

सवत् सोल गुणहतरद्, वृक्षवि साहि सल्लेम ।
जिनशासन मुगतउ कर्मों, परतरगच्छ मड सेम ॥१३॥

(ऐ० जै० का० सं० पृ—१७९)

सवत् १६७० चैत्र सुदी १० को दिये पत्रों भी साधु सबकी रक्षा करनेका उल्लेख है, देखे परिशिष्ट नं० (घ)

शिरा-रेखांमें भी—“कुपित जहागीर साहिरजरु तत्त्यमंडल बहिष्टृत साधुरक्षरु युगप्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि ।”

(प्राचीन जैनग्रंथ संग्रह रेखाक १७)

— कविवर समयसुन्दर कृत परतरगच्छ पद्यालीमें—

“पुन गुण्या ण्क दर्शनितोऽनाचार इष्ट्या कुपितेन साहिना सर्व गच्छीय दर्शनिषु देशेभ्यो निष्कासितेषु पतनाद्विहत्य आगराया गत्वा श्री साहि समक्ष अपराध मोचनन सर्व दर्शनिना सर्वत्र विहार कारित ।

कविवर अपने उन्दमें भी यही स्पष्ट कहते हैं—“दर्शनी एरु आचार चको ।”

जहाँ कहीं दर्शनी, सेवडे हैं, उन्हें गृहस्थ-वेपधारक बना दिये जाय अन्यथा मेरे राज्यमेसे बाहर निकाल दिये जाँय -

इस कठोर और अन्यायपूर्ण आही हुस्म को सुनकर दर्शनी लोग इनस्तत भागने लगे, कइ जङ्गलोमे कइ गुफाओमें कइ अनान्य देशोमे चले गये। कुछ लोग तो भयके मारे पृथ्वीके भीतरी, तलपरोमे जा छिपे, इस प्रकार जिसने जिधर अनुकूलता देखी—

* खस्तगच्छीय साहित्यमें तो इस घटनाका विस्तृत वर्णन मिलता ही है, जिसके कई प्रमाण आगेकी फुट नोटमें दिये जायेंगे। तपागच्छीय साहित्यमें भी इस प्रकार उल्लेख है—

“पृहवइ पृथ्वीपति जहागीर, ढोपी घचने लागो वीर ।

वेपधारी उपर कोपीयो, मुतकलनइ देसोटो दियो ।

मरेठ न जाणइ तेह विचार, आचारी मोकल अणगार ॥ ४३६ ॥

नासगडु पडियो घहु देसि, भला हुता तेणे राख्या वेप ।

(विजयतिलक सूरि रास, पे० रा० ख० पृष्ठ ३३)

इस घटनाका विशेष ज्ञातव्य, भानुचन्द्र चरित्र, जहागीरनामा, क्षमा-कल्याणजी कृत पट्टाचली आदि में भी पाया जाता है ।

वास्तवमें सम्राट्का एक व्यक्ति विशेषके अनाचार से सारे साधुसबको अनाचारी मान सक्रो देश निर्वासनका हुक्म देना अन्यायपूर्ण था। हमार चरित्र नायकने सम्राट्को उसकी इस गहरी भूलको उजागर उस घातक हुस्मको रद्द या उन्मूलन करानेका गौरव प्राप्त किया था, यह तत्कालीन अनेको प्रमाणोसे भलीभाति सिद्ध है ।”

भाग निकले । उनमें से कितनों को पलायमान होते हुए दग्नकर यवनोंने पकड़कर गिरफ्तार कर लिये और उन्हें काल-कोठरीमें डाल दिया, जहापर अन्न-जल भी नहीं दिया जाता था ।

* पतिसाहि सलेम सटोप, क्रियठ दर्शनिवा सु कोप ।

ए कामगगारा कामी, दरबार थी दूरि दरामी ॥ १७॥

एकन कु पाग बन्धावो, एकन कु ना आस अणावो ।

एकन कु देसजटठ जगल दीजइ, एकन कु पनाली कीजइ ॥१८॥

ए साहि हुकम साभलिया, तए खडफ धकी खलभलीया ।

जजमान मिली सजतना, दरहाल करे गुर जतना ॥१९॥

क नामि हिन्दू पूढि पढिया, केइ मइवासइ जइ चडिया ।

केइ जगल जाइ बडठा, केइ दौडि गुफा माहि (जइ) पइठा ॥२०॥

जे नासत यवने शाहया, ते आगि भाससी घालया ।

पाणी नइ अन्न जल पाहया, वयरीडा वयग सु सालया ॥२१॥

इम साभलि शासन हीला, जिणचन्द्र खरीश खशीला ।

गुजरात धरा थी पधारइ, जिन शासन वान घधारइ ॥२२॥

अति आसति बलि गुरुघाली, असुग भय दूरइ टाली ।

उग्रसेन पुगइ पउधारइ, पूज्य साहि तण्ड दरवारइ ॥२३॥

पूज्य देखि दोठारइ मिलिया, पतिमाह तणा कोप गलिया ।

गुजरात धरा क्यु आए, पतिसाहि गुरु बतशाए ॥२४॥

पतिसाहि कु देण आशीस, इम आए शाहि-जगीश ।

काहे पाया दु ख शरीर, जाओ जउख करो गुरपीर ॥२५॥

इक साहि हुकम जउ पावा, बन्दिपडा बन्दि (घ) छुडावा ।

पतिशाहि खयरात करोजइ, दरशगिया पुरु (दूओ) दीजइ ॥२६॥

इस प्रकार की विकृत परिस्थिति के कारण आगरा सघ ने सूरि जीको समर्थ जानकर उनको पत्र द्वारा सकटनिवारणार्थ आगरा पधारने की विनती की † । इस पत्र से वहा की सारी परिस्थिति से ज्ञात होकर जैन शासन की अवहेलना दूर कर रक्षा करने के लिये सूरिजी ने महान् साहस करके आगरे की ओर विहार किया । त्वरासे विहार करते हुए थोडे दिनों मे सूरिजी अपनी शिष्य-मडली के साथ आगरा पहुचे, और शाहीदरबार मे जाकर सम्राट से

पतिशाहि हुतठ जे जूठउ, पूज्य भाग बलह् अति तूठउ ।

जाड विचरउ देश हमारे, तुम्ह फिरता कोइ न वारइ ॥२७॥

धन २ खरतरगच्छराया, दर्शनिया टढ छुडाया ।

पूज्य सपश करि जगि छाया, फिरि सह्रि मेढतइ आया ॥२८॥

[युग-प्रधान-निर्वाण रास]

अनुक्रमि श्रीगुरु विहरता सहि ए, आया पाठण माँई ।

चउमासो प्रभु तिहा करड सहि ए, मन आणी उच्छाह ॥२९॥

लेख आयड आगरा धकी सहि ए, जाणी सगली बात ।

साहि सलेम कोपइ चढइ सहि ए, कुमति बाध्या रात ॥३०॥

चउमासउ करि पागुर्या सहि ए, करता देश विहार ।

उग्रसेनपुर आविया सहि ए, वरत्या जय जय कार ॥३१॥

श्री पातिसाइ बोलाविया सहिए, जगम जुगइ प्रधान ।

धरम मरम कहि वृक्षव्यउ सहि ए, तुरत दिया फरमान ॥३२॥

जिन शासन उजवालियो सहि ए, दाह श्रीवत कुलचद ।

साधु विहार मुगता किया सहि ए, खरतर पति जिणचन्द ॥३३॥

[लब्धिदोखर कृत गहुली]

मिले। अपने पृज्य युगप्रधान गुरुको आये देखकर सम्राट जहागीर अत्यन्त प्रमुदित हुए, उनके दर्शनमात्र से सम्राट का क्रोध शान्त हो गया और नम्रनापूर्वक वार्तालाप करने लगा।

“आपने वृद्धावस्थामे रुजरात से यहा तक पधारनेका कष्ट क्यो किया, सेवा फरमावे।” जहागीरने कहा।

“सम्राट ! तुम्हे आशीर्वाद देने के लिये हम यहा आये हैं।”

“यह मेरा अहोभाग्य है, आपको इतनी दूर से पधारने में शारीरिक फट हुआ होगा, अत अभी जाकर विश्राम लें।”

“अभो विश्राम करनेका समय नहीं है। तुम्हारे फरमानसे जैनसभ मे जो अशान्ति फैल रही है, उसे निवारणार्थ ही मेरा यहा आगमन हुआ है। एक व्यक्ति के दोष से सारा समाज दण्डनीय नहीं हो जाता। सब मनुष्य एक समान प्रकृतिवाले नहीं होते, बडो-बडो की भी भूल हो जाती है। अत हे सम्राट ! विचार करो। तुमने जो साधु विहार बन्द किया है, उसे मुक्त कर दो।” सूरिजीने उद्देश्य स्पष्ट कर कहा।

“आपने जो कहा वह ठीक है, किन्तु मेरी समझ मे मुक्तभोगी होकर साधु बनना निरापद होता है।” सम्राटने अपना गन्तव्य प्रकट किया।

“सम्राट ! चिरकाल से आत्मा इन्द्रियोके विषयो में आशक्त बनी हुई है। अन गृहस्थावासमे रहकर उन विषय-वासनाओ से विरक्त होने की भावना का उद्भूत होना बहुत कठिन है। क्योकि आत्माको ये मदा से प्रिय हैं। अत विषय-वासना के साधनोको

पहले ही त्याग कर देना अच्छा है। ब्रह्मचर्य्य को जैन-दर्शन में बहुत ही ऊँचा स्थान दिया गया है। उसके पालन और रक्षाके हेतु नव कडी आज्ञाएँ शास्त्रकारोंने बतला दी हैं, जिन में सुखपूर्वक निर्विघ्नतया ब्रह्मचर्य्य व्रत स्थिर रख भक्ते, वे इस प्रकार हैं —

- (१) जहा स्त्री, पुरुष, पशु और नपुंसक निवास करते हो, उस स्थान में नहीं रहना ।
- (२) विषय विकारो की जागृति और अभिवृद्धि करनेवाली वार्ताएँ तक न करना और न सुनना ।
- (३) जहा स्त्री बैठी हो, उस स्थान व उस आसनपर दो घडी तक न बैठना ।
- (४) दीवाल की ओट में भी जहा स्त्री पुरुष काम-क्रीडा और प्रेम वार्ता करते हो, वहा न ठहरना और न उसे सुनना ।
- (५) पूर्वावस्था के मुक्त भोगो को स्मरण तक न करना ।
- (६) सरस स्निग्ध भोजन और कामोद्दीपक पदार्थों का उपभोग नहीं करना ।
- (७) स्त्री-पुरुष किसी को भी सराग दृष्टि न देना ।
- (८) सर्वदा आवश्यकता से भी कम भोजन करना, जिमसे आलस्य और विकार उत्पन्न न हो ।
- (९) शरीर को किसी भी प्रकार से शृङ्गार या शोभा न करना ताकि सराग दशा जागृत न हो ।

अब तुम स्वयं विचार कर देखो कि इन प्रतिज्ञाओ को निभाने वाला किम प्रकार आचारच्युत हो सकता है। हा ! जो भ्रष्ट

हुए हैं वे इन नियमों को यथावत् न पालन करने के कारण ही । जैन शासन उन्हें किसी भी हालत में उपादेय नहीं समझता और न सहानुभूति ही रखता है । अतः समस्त साधुओं पर अश्रद्धा ला कर उन्हें कष्ट पहुँचाना तुम्हारे जैसे विचारशोल न्यायवान और प्रजा हितेच्छु सम्राट के लिये उचित नहीं कहा जा सकता ।” सूरिजी ने सम्राट की युक्ति का निराकरण करते हुए कहा ।

‘अच्छा, मेरे राज्य में जहाँ इच्छा हो, बिना रोक टोक के विचरें, किसी को कोई विघ्न नहीं होगा ।”

“तो फिर शीघ्र ही गिरफ्तार किये हुए छोड़ दिये जाँय । और भविष्य के लिये अप्रतिबन्ध साधु विहार होने के लिये सर्वत्र शाही फरमान जाहिर कर दिये जाँय ।”

“हा गुरुदेव ! ऐसा ही होगा । आप निश्चिन्त रहिये ।”

इस प्रकार वात्सलाप होनेके अनन्तर सूरिजी उपाश्रय में पधारे । सम्राट के द्वारा फरमान जाहिर कर दिया गया । श्री सङ्घ के हर्ष का पारावार न रहा । सूरिजी ने सङ्घ के आग्रह से स० १६६९ का चातुर्मास वहीं किया । उपरोक्त घटना का वर्णन कविवर समयगुण्डरजी ने अपने उद्द इस प्रकार किया है —

सुगुरु जिगचट्र सौभाग्य मसरौ लियो,

चिहु दिशै चन्द्र नामौ सवायौ ।

जैन शासन जिक्के डोलतौ राखियो,

सागियो जगत सगलै कहायो ॥ १ ॥

एक दिन पातिशाह आगरै कोपियौ,

दर्शनी एक आचार चूकौ ।

शहर थी दूरि काढौ सबै सेवडा,

मेवडा हाथ फुरमाण मूक्यो ॥ २ ॥

आगरै शहर नागौर अरु मेडतै,

महिम लाहोर गुजराति माहै ।

देश दन्दोल सबलौ पड्यौ तिहा किणे,

तुरत ना पथिया तुनक वाहै ॥ ३ ॥

दर्शनी केई पर द्वीप में चडि गया,

केइ नासी गया कन्ठ देशे ।

केइ लाहोर केइ रह्या भूहि मा,

दर्शनी केई पाताल पैसे ॥ ४ ॥

तिण समय युगप्रधान जगि राजियौ,

श्री जिनचन्द्र तेजै सग्यौ ।

पूज्य अणगार पाटण थकी पागुर्या,

आगरै पातिश्या पास आयौ ॥ ५ ॥

तुगत गुरु राय नै पातशाह तेडिवा,

देसि दीदार अति मान दीघा ।

अजन की छाप फुरमाण करि आसिया,

केडला गुनहु सहु माफ कीधा ॥ ६ ॥

जैन शासनतणी टेक रासी सररी,

ताहरै आज कोई न तोले ।

सरतर गन्ठ नै शोभ चाढी करी,

समयसुन्दर पिरद साच बोले ॥ ७ ॥

सम्राट पर सूरिजी का क्रिना गहरा और जवरदस्त प्रभाव था यह इस घटना से भली भांति जाना जाता है। जैन शासन की अति प्रभावना करने के कारण आपत्री की "सवाई युगप्रधान" नाम से प्रसिद्धि हुई।*

कहा जाता है कि जब सूरिजी आगरा पधारे और सम्राट को युगप्रधान बडे गुरु के पधारने के समाचार मिले, तत्र उन्होने अपनी आज्ञाका भङ्ग न हो, इसलिये सूरिजी को राज-मार्ग से न पधार कर लोकोत्तर मार्ग से आने का कहलाया, तत्र शासन की प्रभावना के हेतु सूरिजी ने ऊनी कम्बल या लोपडी यमुना नदी मे बिठा कर मन्त्र-शक्ति द्वारा उमी के ऊपर बैठे हुए पार होकर सम्राट से मिले थे। इस अद्भुत शक्ति को देख कर सम्राट अत्यन्त चकित हो गये।

* श्री साहि सरेम राज्ये ताच (तपा) कृत जिगशासन माछिन्यत श्री माधु विहारो निपिद्ध साहिना तत्रावसरे श्री उपमेनपुरे गत्या साहि प्रतिबोध्य च साधुना विहार स्थिरी कृत तत्रा लब्ध "सवाई युग-प्रधान" बडागुहरिति विरुदो येन गुरुणा ।

[तत्कालीन पद्यावली]

एक दिन कोई विद्वान् भट्ट, जिसने काशी † के पण्डितों को विजय कर लिया था, जहागीर के दरवार में आया और गर्व-पूर्वक शास्त्रार्थ या वाद करने की उद्घोषणा करने लगा। तब सम्राटने अपने गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी को उससे वाद करने में समर्थ समझ कर उन्हें शास्त्रार्थ करने के लिये विनम्र निवेदन किया। सूरिजी ने अपनी असाधारण विद्वता से उसे परास्त करके प्रसिद्धि प्राप्त की। शास्त्रार्थ में भट्ट को हराने से “युगप्रधान भट्टारक” पद की ख्याति प्राप्ति की। इस विषय का एक (प्राचीन) प्रसिद्ध कवित्त यहाँ लिखते हैं —

“मसूर पठान (?) गरब्व कियौ भैया वाद वदू कोई पडित जागै ।
शाहि सलेम बुलाय श्रीपूज्य कु मोहि भगोसौ चन्द्र न भागै ॥
भट्ट हार गयो इक चोट शब्द की जीत भई यु जैन के तागै ।
वाद जित्यउ जिणचन्द भट्टारक यु पतिशाहि दिल्लीपति आगै ॥

सूरि-महाराज के आगरे में चातुर्मास करने से सध में खून धर्म-ध्यान होता रहा। उन्होंने सम्राट जहागीरपर अलौकिक और अनुपम प्रभाव डाल कर जो स्तुत्य शासन-सेवा की वह शब्दों द्वारा वर्णन नहीं की जा सकती। यह प्रकरण पढ़ने से पाठकों को श्री जिनचन्द्रसूरिजी की अनुकरणीय शासन सेवा, अदम्य उत्साह, अटूट साहस, निर्मल तप सयम और वैद्य-गम्भीरादि गुणों का कुछ परिचय हुआ ही होगा।

† “जित काशी जय पामियठ, करि गौतम ज्यु सिद्धि वाधी रे ॥ ११ ॥

[युगप्रधान निर्वाण रास]

कारहर्षा-प्रकरण

निर्वाण



गरे मे अद्वितीय शासन-प्रभावना करके सूरि-महाराज मेडता पधारे । वहा चोपडा गोत्रीय श्रेष्ठि आसकरण भादि अनेको धनवान और राज्यमान्य आवक सूरिजी के परम-भक्त ये । सूरि महाराज के पधारने से सघ मे अधिकाधिक धर्म ध्यान होने लगे ।

सूरिजी का मेडता नगर मे आगमन सुन कर वीलाडे के सघ को अत्यन्त हर्ष हुआ । उन्होने एकत्र होकर सूरिजी को वीलाडा मे चातुर्मास करने के लिये आमन्त्रित करने का परामर्श किया । वे मात्र विचार करके ही नहीं रह गये, परन्तु तत्काल ही सघ के प्रतिष्ठित व्यक्ति जिनमे कटारिया गोत्र के आवक प्रधान थे, मिल कर मेडता आये । सूरि महाराज को वन्दना करने के अनन्तर अत्यन्त अनुनय विनय पूर्वक वहा चातुर्मास के निमित्त पधारने की नम् विज्ञप्ति की । उनके आग्रह से सूरिमहाराज वीलाडा पगारे । उस समय आप के साथ वा० मुमति कडोल, वा० पुण्यप्रदान, प० मुनिवह्म, प० अमीपाल आदि साधु थे । स० १६७० का चातुर्मास वही किया ।

* जेसलमेर से वा० विमलतिलक आदि ने मिता घत्र शुभ १० को सूरि-

सूरि-महाराज के विराजने से वहा संघ मे अधिकाधिक धर्म-अभ्यास हुआ। मुनिगण स्वाध्याय, ध्यान, सयम और तपश्चर्या करने मे विशेष रूप से तल्लीन हुए। धर्मिष्ठ श्रावकगण पौषध, अतिक्रमण, शास्त्र-श्रवण और द्रव्य का सद्व्यय करने मे खूब प्रवृत्ति-शील बने। पर्यूपण पर्वधिराज के दिनो की तो बात ही क्या? सर्वत्र धर्म-भावना का श्रोत प्रवाहित हो चला, जिमका वर्णन करना ऐतदनशक्ति से बाहर है।

पर्यूपण पर्व सानन्द आराधन करने के पश्चात् सूरिजी ने ज्ञानोपयोग से अपना आयुष्य निकट जानकर शिष्य-वर्ग को विशेष रूप से शिक्षा देना प्रारम्भ किया—“तुम लोग जैन शासन की उन्नति करने के साथ-साथ आत्मोन्नति मे सदा कटिवद्ध रहना। गच्छ का भार आचार्य “जिनसिंहसूरि” निर्वाहो, तुम लोग सदा तत्परता से उनकी आज्ञा का पालन करना। इत्यादि।

स्थानीय श्रावक, श्राविका को भी उनके उचित हित-शिक्षा देते हुए चतुर्विध सङ्घ से क्षमत-क्षामणा को। अन्य देश-देशान्तरो के सङ्घ को भी पत्र द्वारा धर्मलाभ, क्षमत-क्षामणा लिखवाये। तत्पश्चात् चौरासी नक्ष जीवा योनि को शुद्ध मन से क्षमत-क्षामणा कर

जीके प्रति एक पत्र दिया, जिसमे ये नाम लिखे हैं, वह संस्कृत पत्र इसी पुस्तकके परिशिष्टमें छपा है। उसमें जिनसिंहसूरिजी का नाम नहीं है, इससे ज्ञात होता है कि उस समय वे सूरिजी के साथ नहीं थे। पीछे चातुर्मास के समय गुरु महाराज के पास बीलाडा आये हागे।

पापस्थानको की निन्दा करते हुए समाधि से अनशन ग्रहण कर लिया। चार प्रहर के अनशन को पालते हुए उत्कृष्ट धर्म ध्यान में लीन हो कर अपने पौद्गलिक देह को विसर्जन कर मितो आश्विन कृष्णा २ के दिन स्वर्गधाम विधारे।

वह जगत् की ज्योति मदा के लिये विलीन हो गई। दुर्देव कराल काल ने ऐसे महापुरुषों को भी न छोड़ा। पुद्गल की नि सारता ने आज अपना स्पष्ट परिचय दे दिया, उस सुन्दर और पूज्य देह ने सर्वदा के लिये रूखा उत्तर दे दिया। समस्त देश में विपाद और हाहाकार छा गया। सर्वत्र दिन होते हुए भी अन्धकार अनुभूत होने लगा। वह तेजमयी प्रभा सदा के लिये अदृश्य हो गई। वह दीप्त ज्ञानप्रदीप काल-वायु के उद्द झकोरो से अन्धकार के अन्तस्थल में जा ठिपा। गुरु-विरह की दारुण ज्वाला लोगोंके हृदय में प्रज्वलित हो उठी, नेत्रों से वह ज्वाला अश्रुओं का रूप धारण कर झड़ी-मी उमड़ पड़ी। उस समय का दृश्य अति दयनीय और नेत्रों से न देखे जाने योग्य हो गया। सब लोग म्लान मुख होकर शोक-सागर में डूबने लगे।

सूरिजी की अन्त्येष्टि क्रिया करने के लिये स्थानीय मङ्ग ने सुन्दर विमान के सदृश मढी बनाई और शोकाकुल हृदय से शव को निर्मल गगोदरु से प्रक्षालन कर चन्द्रनादि का विष्णोपन किया।

कृष्णागरके सुगन्धित धूपसे अर्चित करते हुए उसे विमानमें रखा। वाजित्रादिके साथ शवको उत्सव पूर्वक ग्रामके मध्य २ होकर ले जाने लगे। मार्ग में गुरु दर्शनार्थ लोगों की भीड़ से विस्तृत

रास्ते भी सकुचित्त मालूम होने लगे। क्रमसे वाणगङ्गाका तट निकट आनेपर पवित्र स्थान में सूरिजी का शव रखा गया। चन्दन की चिता सजाकर घृतादिसे देहका अग्नि संस्कार कर दिया गया वह पुद्गल पुञ्ज सत्रके देखते ० क्षारके रूपमें अवतीर्ण हो गया सूरिजीके अतिशय से उनकी मुहपत्ति (मुखवस्त्रिका) नहीं जली लोगोंने इस प्रकट चमत्कारको आश्चर्य सहित देखा। श्री ज्ञान्तिनाथ भगवानका नाम स्मरण करते हुए सघ वापिस स्वस्थान आया।

लोग अपने विरह दुःखको इस प्रकार प्रकट करने लगे —
 ‘हा गुरुदेव ! आप कहाँ चले गये ? हमसे ऐसा क्या अपराध हुआ। अब हमें किसका आधार है ? जैन सघकी विपत्ति अबहेलना आदि को कौन मिटावेगा। हे ज्ञाननिधान ! आपके बिना अब हमारा सङ्घ कौन दूर करेगा ? हे युगप्रधान ! अब हम गुरुजी कहकर किसे पुकारेंगे।’ इत्यादि ×।

× देखो निर्वाण रास और त्रयरग कृत पद्यावलीमें भी इस प्रकार लिखा है —

वेश्वानर केहनउ सगउ, पण अतिशय सजोग।

नवि टाक्षो पूज्य मुहपति, देखइ सगलो लोग ॥

(निर्वाण रास)

येषा विशिष्टातिमयेन देहे दग्धेष्वधाक्षीन्नदि चन्द्रवास ।

प्रोद्यत् प्रभाव प्रथिता जयन्तु युगप्रधान जिनचन्द्र पूज्या ॥ २ ॥

× यहाँ तक का सारा वृत्तान्त कवि समयप्रमोद कृत “युगप्रधान निर्वाण रास” से लिया गया है। यह रास हमारी ओर से प्रकाशित “ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह” में देखना चाहिये।

जिस स्थान पर सूरिजी का अग्नि सस्कार हुआ वहा पर वीलाडा के सध ने उनके स्मारक रूपमें एक सुन्दर स्तूप बनवाया और उसमें मूरिजी की चरण पादुकाए स्थापित कराई, जो अद्यावधि बाणगगा के तट पर विद्यमान है । जिसका लेख इस प्रकार है —

“संवत् १६७० मगसर सुदि १० गुरुवासरे सवाई युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसुरि चरणपादुके कारापित श्री वीलाडा श्री सधेन प्र० श्री जिनसिंह सूरिभि ।”

और भी अनेक स्थानों में आपकी चरण स्थापित किये गये थे, वीकानेरमें शहरके बाहर एक स्थान में आपकी चरण पादुकाए स्थापित हैं जिसे आजकल “रल दादाजी” कहते हैं । अनेको भक्त लोग गुरु दर्शनार्थ नित्य, (विशेषतया सोमवारको) जाया करते हैं । दादाजी श्री जिनचन्द्रमूरिजी भक्तोंके मन वाञ्छित पूर्ण करनेवाले हैं, अनेक चमत्कार भी सुननेमें आते हैं । वहा का पादुका लेख यह है —

“स० १६७३ वर्षे वैशाख मासे अक्षय तृतीयाया सोमवारे श्री सरतरगच्छे श्रीजिनमाणिस्यमूरि पट्टालकारहार युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिणा पादुके श्री विक्रमनगर वास्तव्य समस्त श्रीसधेन कारिते शुभम् ।”

वीकानेरके नाइटोंकी गराडमें श्री ऋषभदेव भगवान के मन्दिर में मूल गम्भारे के दाहिनी तरफ सूरिजी की पापाण-निर्मित अति सुन्दर मूर्ति है जिसका लेख इस प्रकार है—

“सं० १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने श्री ररतरगच्छाधीश्वर युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरिणा प्रतिमा का० जयमा आ० प्र० श्री युग-प्रधान श्री जिनराजसूरिराजै ।”

जैसलमेरमे भी शहरके उत्तरकी ओर १ मील पर देदानसर नामक तालाबके पास श्री जिनकुशल सूरिजी का स्थान है वहा भी आपकी पादुकाए हैं जिसका लेख इसप्रकार है —

स० १६७२ वर्षे वैशाख सुदि ६ सोमवारे भट्टारक सवाई युगप्रधान श्री श्री श्री । श्री जिनचन्द्रसूरि पादुका प्रतिष्ठिता ।
(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P C Nahar)

उसी दिनका लेख दादाजी के स्थानके पूर्व की तरफ स्वम्भके आले मे निम्नोक्त लेख छ पंक्तियो मे सुदा है —

सवन् १६७२ वर्षे वैसाख सुदि ६ दिने सोमवारे श्री जैसलमेर वास्तव्य राउल श्री कल्याणदासजी विजयराज्ये कुवर श्री मनोहर दासजी । सवाई युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीश्वर पादुके कारित युगप्रधान भट्टारक श्री जिनसिंहसूरि ॥ श्री ररतर सधेन तैव सर्वदा श्री सघस्य समुन्नति सुख श्रेयो वृद्धि । वाचयेतामिति ॥ प० उदयसिंह लिपि कृतम् ॥ श्री श्री श्री ॥

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P C Nahar)

स्तम्भ तीर्थ मे भी सूरिजीके चरण पादुके विद्यमान है जिसका लेख इस प्रकार है —

“स० १६७७ (१) वर्षे माघ वदि १० दिने गुरुवारे युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीणा पादुके कारित ररतरगच्छे ओस वशे

• • ते स० जसराज भाय्या जसल दे पुत्र मं० माडण केन प्रति० युगप्रधान श्री जिनसिंह सुरिवरै ।”

(जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भाग २ लेखाक ८८२)

इन स्थानोंके अतिरिक्त मुल्तान, अहमदाबाद, वाहडमेर, पाटण, आदि स्थानोंमें भी आपत्री को चरण पादुकाएँ और मूर्तिये प्रतिष्ठित होने का उल्लेख पाया जाता है ।

सूरिजी की स्वर्ग-तिथि मित्ती आश्विन कृष्णा ० (गुजराती भादवा वदि २) को अत्र भी वम्बई भाईयला, सूरत, भरुच, पाटण आदि नगरोंमें ‘गुरु दूज’ के नामसे दादा साहबके स्थान पर मेला होता है ।

* जससमुद्र कृत गीत में —

श्री जिनचन्द्र सूरीश्वर, खरतर गच्छ गणधार मेरे युगवर ।

धुम्भ सकल धिर थापना, विक्रमपुर सिणगार मेर युगवर ॥ १ ॥

कुम्भकरण कृत गीतमें —

मूलचक्र (मुल्तान) में धुम्भ मदानो, परतठ सहु नड पूरे ।

कुम्भकरण जपइ कर जोडी, दुष्मण फरि सहदूर ॥ ३ ॥

हेममन्दिर कृत गुरु गीत में —

जिहो मूल धम्भ अति उन्दरु, टादा वीलाडै धिर ठाम ।

जोहो राजनगर विक्रमपुरै, दादा पूर वछित काम ॥ ६ ॥ स० ॥

जोहो वाहडमेरइ दीपतड, दादा जेसाणइ मुल्तान ।

जोहो अणदिलपुर खभाइतइ, ”

॥ ७ ॥ स० ॥

यद्यपि सूरिजी का नञ्चर पौद्गलिक देह आज हमारे प्रत्यक्ष नहीं है तथापि उनकी मूर्तिमान् अमरआत्मा और अनुकरणीय गुण समूह आज भी हमे आदर्श मार्ग सुझाने को परम साधन-भूत हैं। उनके पावन कृत्य और प्रशस्त कीर्ति की गौरव-गाथा सारे विश्व में दीप्तमान आलोककी भाँति चिरस्थायी रहेगी।

कविवर समयसुन्दरजी क्या ही मार्मिक शब्दों में कहते हैं —

मुयइ कहइ ते मूढ नर, जीमइ जिनचन्द्र सूरि ।

जग जपइ जस जेहनो, पुहवी कीरति पडू ॥ ८ ॥

चतुर्विध सन चीतारस्यइ, जा जीविस्थइ ता सीम ।

वीसाग्या किम वीमरइ, हो निर्मल तप जप नीम ॥९॥



सैकड़ों नवीन जिन-प्रामाद और जिन-विम्बों की प्रतिष्ठाएँ हुईं। धार्मिक सप्त-क्षेत्रोंमें करोड़ों रुपये वितरण किये गए। सक्ति में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि उनके चरित्र के तेजोमय प्रताप से ही सम्राट अकबर और जहाँगीर आदि सुगंध हो गए और कठिन से कठिन कार्य भी सुगमता से सफल होने लगे।

कहा जाता है कि सूरिजी का आज्ञानुयायी साधु-समुदाय २००० से भी अधिक संख्या में था *। आपने इतने विपुल प्रमाण में साधु भाषिचियोंको दीक्षित किये थे कि उनकी संख्यामें बहुत ही कम आचार्यों ने दीक्षित किये होंगे। साधु बनने के पश्चात् पूर्वावस्थाका नाम परिवर्तन कर सरस्वर गच्छ में जिन ८४ नन्दियों * में से नाम स्थापना करनेकी प्रणाली है उन चौदासी में से ४४ नन्दियों में नाम स्थापना करने का सौभाग्य सूरि-महाराज को प्राप्त हुआ था। प्रत्येक नन्दि में २०।२५ साधुओं के दीक्षित होने का अनुमान किया जाय तो भी सूरिजी के हस्त-दीक्षित और उपसम्पदा ग्रहित साधुओं की संख्या लगभग एक हजार से ऊपर ही होती है।

यह बात केवल कल्पना ही नहीं, किन्तु तथ्य के बहुत सन्निकट है क्योंकि क्षमाकल्याणजी अपनी पट्टावली में आपके ६५ शिष्य होने का उल्लेख करते हैं। हमने भी बहुतसी खोज शोध करके

* 'श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान भण्डार' धम्पई से प्रकाशित 'यु० जिनचन्द्रसूरि जीवन चरित्र' पृ० ११ में है।

* ४४ नन्दिके नाम परिशिष्ट में 'विहार पत्र' के साथ देखिये। इसके विषय में कभी स्वतन्त्र लेख में आलोचना करेंगे।

उनमें से २५-३० शिष्यों के नाम एकत्र किये हैं, जिनका संक्षिप्त परिचय आगे लिखा जायगा। प्रत्येक शिष्य के अगर कमसे कम पाच-पाच शिष्य प्रशिष्य भी अनुमानित † किये जाय तो ५०० के लगभग उनकी संख्या भी हो जाती है। तो उमममय और भी कई शाखाओं के जैसे — जिनदत्तसूरि-सतानीय, जिनकुशलसूरि—क्षेमकीर्ति-शाखा, सागरचन्द्रसूरि-शाखा, जिनभद्रसूरि-शाखा, जिनहससूरि-शाखा और जिनमाणिक्यसूरि-शाखा× के विद्वान्,

† सूरिजी के समय में उनके प्रशिष्या के भी प्रशिष्य विद्यमान होने के प्रमाण मिलते हैं। जैसे—उ० श्रीसमयउन्दरजी आपके प्रशिष्य थे और उनके शिष्य घाटी हर्षनन्दनजी के शिष्य जयकीर्तिजी आदि भी सूरिजी के ही दीक्षित थे। सूरिजी के कई शिष्यों के शिष्य प्रशिष्यों आदि की संख्या १०-१५ तक की भी मिली है तथापि हमने साधारणतया गड में केवल ५ ही लिखी है।

× एक प्राचीन पद्यावली में लिखा है कि इन्होंने एक ही नन्दि में ६४ साधुओं को दीक्षा दी थी और १२ मुनियों को “उपाध्याय” पद प्रदान किया था। इसी ग्रंथ के २३ वें पेज में आपके २४ शिष्य होने का उल्लेख कर चुके हैं उनमें से हमें ६ नाम उपलब्ध भी हुए हैं —

(१) कविकनक —मेघ कुमार चौढालिया कर्ता।

(२) विनयसोम —इनका “कौघी पादर्व स्त०” गा० १७ का हमारे सग्रह में है।

(३) वा० विनयसमुद्र —इनका “ऋषभ स्त०” गा० २२ का हमारे सग्रह में है। इनके वा० हर्षशील (विशाल), गुणरत्न आदि कई शिष्य थे। हर्ष विशालजीके शिष्य उ० ज्ञानसमुद्रके शिष्य वा० ज्ञानराजके शि० लक्ष्मण-दयजी अच्छे कवि हुए हैं। इनकी “प्रभिनो चरित्र चौपई” (स० १७०७) चैत्री

उपाध्याय और साधु सैकड़ों थे उनके शिष्य प्रशिष्य भी सूरिजी ने

पूतम), गुणावली चौ० (उदयपुर) उपलब्ध है, इस चौपढ़ में आपके इससे पूर्व अन्य छ चौपढ़ों रचने का उल्लेख है । गुगरत्नजी ने स० १६३० में श्री जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से संयति सन्धि (पत्र ४ स्वामी नरोत्तमदास जी पृ० ५० के संग्रह में) बनाई । इनकी विशिष्ट कृति 'नमस्कार प्रथम पद अर्था' 'सनेकार्थरत्न मञ्जूषा' नामक ग्रन्थमें छपी है । इनके शिष्य घा-रत्नविद्याल शि० त्रिभुवनसेन शि० मतिहस शि० महिमोदय जी भी अच्छे कवि हुए थे, इनके धोपाल रास (स० १७२२ मिगवर तेरस जहानाबाद), गणित साठिसौ, जन्मपत्री पद्धति (पत्र ११४ श्रीपूज्यजी के संग्रह में), स० १७२२ ज्योतिष रत्नाकर, पट-पचा सकावृत्तिवाला० (श्रीपूज्यजी सं०) आदि ग्रन्थ प्राप्त हैं । त्रिभुवनसेनके गुरु भ्राता लब्धि विजय इनके विद्यागुरु थे ।

(४) भुवनधीर —इमांग संग्रह की आदिनाथ स्तोत्र की लेखन प्रशस्ति से पता होता है कि ये भी श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के शिष्य थे ।

(५) चा० कल्याणधीर —ये पारख गोत्रीय, अच्छे विद्वान थे । इनके शिष्य (१) धर्मरत्न कृत जयविजय चौपढ़ (सं० १६४१ विजया दशमी, आगरा) उपलब्ध है । (२) भणसाली गोत्रीय चा० कल्याण-लामनी थे इनके शिष्य (A) कमलकोर्ति ने जिनवल्लभसूरिजी कृत वीर चारित्र्य वाला० (स० १६९८ था० कृ० ९ जेपलमेर में कृत और लिखित प्रति बाबू भमरचन्द्रजी बोधरा नागपुर, के संग्रह में है), महीपाल चरित्र (स० १६७६ विजयादशमी हाजीखानदेरा—इनके शिष्य चारित्र्यनाम लिखित, जयचन्द्रजी के भण्डार में है) और कल्पसूत्र टथार्थ पत्र ९९ (स० १७०१ मरोट में शि० चारित्र्यनाम पठनार्थ लि० जयचन्द्रजी के भण्डार में है) । इनके शि० समतिलाभ, शि० मुमतिमदिर, शि० जयनदन शि० लब्धि सगर कृत ध्वजभुजग कुमार चौ (स० १७७० आश्विन वदी ९ चूगा) उपलब्ध है (B) कुशरजीरजी एक उत्तम कवि हुए हैं, इनके रचित (१) भाज चौपढ़ (स० १७२९ माघ वदि १३ सोजत, शि० धर्मसागर

दीक्षित किये थे — अतएव उन सब की सरया भी कम से कम उतनी ही मान ली जाय तो कोई अनिश्चय्योक्ति नहीं है ।

सूरिजी की दीक्षित साध्वियों के नाम की 'नन्दिशे' अद्यावधि हमें उपलब्ध नहीं हैं अतः हम उनकी सख्या का ठीक ठीक निर्णय नहीं कर सकते किन्तु माधु-सघ से साध्वियों की सरया भी कम नहीं कही जा सकती । इस आकडे से अगर सख्या की कुछ न्यू-

आग्रहात्) (२) लोलावती रास (सं० १७२८ सोजत) (३) पृथ्वीराज कृत वेलि बाला० (सं० १६९६ विजया दशमी शिष्य भाषसिद्ध के आग्रह से, नाहरजी के सग्रहमें गु० न० ९०) । (४) उद्यम कर्म सवाद और अनेक स्तवनाटि भी उपलब्ध है । (C) कनकविमल—इनका नाम वेलि बाला० की प्रशस्ति में है । (५) धर्मप्रमोद—इनकी कृति "महा-शतक श्रावक मन्धि" हमारे सग्रहमें है और दैत्यवन्दन-भाष्य वृत्ति (सत्त्वार्थ टीपिका सं० १६६४ पौ० ब० १०) धीकानेर ज्ञान-भण्डार में है ।

(६) क्षेमरग — इनके लिखित बन्धस्वामित्व-स्तवावधूरि श्रीपूज्यजी के सग्रह में है ।

श्रीजिनमाण्डिसूरि शाखा में ओर भी कतिपय धिदान और कवि हुए हैं । सं० १७०० में जिनरगसूरिजी से गच्छभेद हुआ उस समय ने कुशलधोगजी आदि के अतिरिक्त जिनमाण्डिसूरिजी का शिष्य परिवार उनका आज्ञानुगामी हो गया था ।

* 'त्रियोद्धार नियमपत्र' से ज्ञात होता है कि दीक्षा देने का अधिकार गच्छनायक को ही था यदि अन्य दीक्षित करते तो भी उनकी आज्ञा से, ओर खासकर बड़ी दीक्षा तो सूरिजी ही देते थे । जिनसिंहसूरिजी दीक्षित राजममुद्रजी ओर सिद्धसेनजी को बड़ी दीक्षा भी श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने

। धी ।

नता भी रही हो तो भो पूर्व टीकित आज्ञानुगतों साधु-साध्वियों की सख्या मिला देने से कुल २००० से ऊपर ही सिद्ध होती है।

‘विहार पत्र’ के साथ जिन ४४ नन्दियों के नाम हैं वे नाम भी अनुक्रम से लिखे गये हैं, यह एक महत्व की बात है। इससे उस समय के सारे विद्वानों के दीक्षा-समय का निर्णय करने में सुगमता और सहायता मिलती है, अगर इसके साथ सबतानुक्रम रहता तो सोने में सुगन्ध का सा काम होता, अस्तु।

हम इस प्रकरणमें नन्दि-अनुक्रम के अनुसार ही सूरिजी के शिष्य समुदाय का सक्षिप्त परिचय देंगे।

(१) सकलचन्द्र गणि—आप रोहड गोत्रीय, सूरिजी के प्रथम शिष्य थे। आगरे से दिये हुए सं० १६२८ के पत्र में, जो कि इसी प्रथके पृ० ५३ में छपा है, आपका नाम है। आपके रचित एक गहूली गा०७ † के अतिरिक्त अभी तक दूसरी कोई कृति नहीं मिली। आपके चरणपादुके बीकानेर से ४ कोश “नाल” नामक ग्राम में सूरिजी के प्रतिष्ठित विद्यमान हैं जिसका लेख इस प्रकार है—

“ वर्षे सुदि ३ दिने शनै सिद्धि
योगे श्रीजिनचन्द्रसूरि शिष्यमुख्य पं० सकल चरणपादुका

† सं० १९८६ में जब रतलाम से श्री० नथमलजी गादिया परमपूज्य आचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी के दर्शनार्थ बीकानेर आये थे तब उनकी धर्म-पत्नी ने ध्याख्यान के समय यह गहूली गाई थी, हमने वही सग्रह कर ली है, इसकी हस्तलिखित प्रति हमें नहीं मिली।

श्रीसरतरगच्छाधीश्वर युगप्रधान प्रभुश्री ** श्रीजिनचन्दसूरिभिः
प्रतिष्ठितं हृदयवत् लूणाभ्या कारिते ॥”

स्तूप के आले का मुरा सकीर्ण होने से यह लेख बहुत प्रयत्न करने पर भी सपूर्ण नहीं पढ़ सके इससे इनका स्वर्गवास का सवन् निर्णय न हो सका ।

प्रख्यात कविश्रेष्ठ महोपाध्याय समयपुन्दरीजी आपके ही शिष्यरत्न थे । उनका जन्म साचौर वास्तव्य पोरवाड शाह रूपसी की भार्या लीलादेवी की कुक्षि से हुआ था । लघुवय में आपने सूरिजी के पास चारित्र्य ग्रहण किया । इनके विद्यागुरु वा० महिमराजजी और वा० समयराजजी थे । आपकी विद्वताकी प्रतिभा बहुत बढी चढी थी । स० १६४६ में सूरिजीके साथ आप भी लाहौर पधारे थे । वहा अकबर की सभा में “अष्टलक्ष्मी” जैसा विद्वतापूर्ण ग्रथ सुनाकर मित्ती फाल्गुन शुक्ला २ को वाचरू पद प्राप्त करने का उल्लेख हम इसी पुस्तक के आठवे प्रकरणमें कर चुके हैं । सिन्धु देशमें विहार करके मखनूमशेर को प्रतिबोध देकर पाचनदी के जल-चर जीवों और विगेपतया गायों की रक्षाका प्रशसनीय कार्य किया था । जेसलमेर में रावल भीमजी को उपदेश देकर साडा जीवों को मॉनोसे मारते हुए छुडाया था । मण्डोवर व मेडताविपति को रजित करके शासन शोभा बढाई थी । स० १६७१ में जिनसिंहसूरिजी ने ‘लखेरे’ में आपको उपाध्याय पद दिया था । स० १६८७/८८ में दुष्काल के कारण साधु-धर्म में क्रिध्वित् शिथिलता आ गयी थी उसका परित्याग करते हुए स० १६६१ में क्रियोद्धार किया ।

आपने हजारों स्तवन सज्ञाय और सैकड़ों ग्रंथ रच कर साहित्य की अनमोल सेवा की थी। साहित्य-ससार में इनका नाम सदा स्वर्णाश्ररोसे अङ्कित रहेगा। आपका विस्तृत जीवन चरित्र भविष्य में हम आपकी कृतियों के साथ प्रकाशित करेंगे अतः यहाँ विशेष नहीं लिखा गया है। सं० १७०२ में चैत्र शुक्ल १३ को अहमदाबाद में आप स्वर्ग सिधारे।

सर्व अनुक्रम से आपकी कृतियों की सूची इस प्रकार है.—

“सं० १६४१ भावशतक (खभात), सं० १६४६ लाहौर में अष्ट-लक्ष्मी (अर्थ-रत्नावली), सं० १६५१ जिनकुशलसूरि-अष्टक और २४ जिन २४ गुरु नाम गर्भित पार्श्वस्तवन, सं० १६५२ विजयदशमी खभातमें जिनचन्द्रसूरि गीत, सं० १६५६ अक्षयतृतीया जेसलमेर में २७ राग गर्भित स्तवन, सं० १६५७ चैत्रवदी ४ आवूनीर्ययात्रा स्तवन, सं० १६५८ चैत्री पूर्णिमा शत्रुजययात्रा स्तवन, और विजय-दशमी अहमदाबाद में सघपति सोमजी अभ्यर्थना से चौबीसी और इसी संवत् में अष्टापद स्तवन, सं० १६५६ विजयदशमी खभात में शत्रुप्रभुम्न चौपड़, सं० १६६१ चैत्र वदी ५ नागोर में पार्श्वनाथ स्तवन, सं० १६६२ सागानेरमें दानादि चौढालिया, इसी संवत्के माघ महीने में घंघाणी पद्मप्रभु स्तवन, सं० १६६३ (४?) रूपकमाला चूर्णि (वृत्ति जे० भ० सू०) सं० १६६४ फाल्गुन-आगरामे करकंडु प्रत्येक बुद्ध रास, चैत्र वदी १३ को दुसुह प्रत्येक बुद्ध रास, जंजू रास (जेसल० भ०) और नमि प्रत्ये० रास, सं० १६६५ ज्येष्ठ शुक्ल १५ को नगई प्रत्ये० रास, इसी संवत् में चैत्र शुक्ल १० अमरसर में चातुर्मासिक व्याख्यान पद्धति,

स० १६६६ वीरमपुरमें कालिकाचार्यकथा, स० १६६७ मि० सु० १० मरोट मे पौषविधि स्तवन, इसी सवत् मे उच्चनगर मे श्रावकारा-धना, स० १६६८ मुलतान में मृगावतीरास और माघ शुक्ल ६ को यहा ही कर्म-उत्तीसी, स० १६६९ सिद्धपुर मे पुण्यउत्तीसी, यहा ही समाचारीशतक नामक विशाल ग्रथ रचना प्रारम्भ किया, स० १६६९ (?) शील छत्तीसी, स० १६७० आसोज अहमदाबाद मे नववाड शील सझाय, सं० १६७१ आवू स्तवन, स० १६७२ मेडता, समाचारी शतक की समाप्ति, इसी समय ही सिंहलसुत प्रियमेलक रास बनाया, इसी सवतमें पौषदशमी को यहा पर ही विशेषशतक, स० १६७२(३?) भाद्रवा मे पुण्यसाचौपड, स० १६७३ वसत मेडतामें ही नलदमयंती चौपड और कार्तिक शुद्ध ५ को गाथालक्षण, सवत १६७४ में भी यहीं विचारशतक, स० १६७६ मिगसर राणपुर यात्रा स्तवन, (स० १६७७ ज्येष्ठ वदो ५ प्रतिष्ठासमय मे मेडते में थे देखो 'जैनलेख सप्रह' लेख इ. ४४३) स० १६७७ माह महीना साचोरमे महावीर स्तवन, यहीं सीनाराम चौ० की १ ढाल, (स० १६७६ भाद्रवा वदि ११ गुर्वा वली पत्र १ स्वय लिखिन हमारे संप्रहमें) स० १६८१ नभ मास जैसलमेर मे गणधरवसदी स्तवन, इसी संवत में यहीं बकलचीरीरास और मौनएकादशी स्तवन, स० १६८१ कार्तिक शुद्धा १५ को लोद्वपुर यात्रा स्तवन, स० १६८० श्रावण नागोरमे अनुजयरास, इसी वर्ष तिमरीपुर मे वस्तुपाल-तेजपाल रास, सं० १६८३ मिगसर वीकानेरमें आदिनाथ स्तवन, सवत् १६८३ (८१-८६ पाठान्तर) यहा पर ही श्रावक १२ व्रत कुलक, स० १६८४ श्रावण लृणकरणमेर मे दुरियर

वृत्ति, इसी सवत मे यहीं सतोपठत्तीसी और कल्पसूत्र पर कल्प-
 लना नामक वृत्तिका प्रारम्भ, सं० १६८५ फाल्गुनमे यहीं विशेषसग्रह,
 इसी सवत् मे विसंवादशतक और वारह व्रत रास (जे० भ० सू०)
 सं० १६८५ रिणो मे 'यति आराधना' और यहीं कल्पलतावृत्ति
 सपूर्ण की, सं० १६८६ गाथासहस्री, सं० १६८७ पाटणमे जयतिहुअण-
 वृत्ति, इसी सवत् मे भक्तामर सुनोधनो वृत्ति, यहीं विशेषशतक
 लेखन समय दुष्काल वर्णन श्लोक, सं० १६८८ अहमदावादमे दुष्काल-
 वर्णन (गा० ३६) यहीं कार्तिक मास नवतत्त्वशब्दार्थ वृत्ति, सं०
 १६८९ अहमदावाद मे ही स्थूलिभद्र सज्ञाय और राजधानी मे दु रित
 गुरु वचनम्, सं० १६९० खम्भातमे सवैयाछत्तीसी, सं० १६९१मे यहीं
 पर दशवैकालिक सूत्र वृत्ति, काती वदी ३ थावच्चा चौ०, दिवाली को
 ४७ दोष सज्ञाय, सं० १६९२ माधव महीनेमे यहीं रघुवश वृत्ति, सं०
 १६९३ ज्येष्ठ मे अहमदावाद मे सदेहदोलावली पर्याय, सं० १६९४
 दिवाली जालोर मे वृतरत्नाकरवृत्ति, यही चौमासे में झुलककुमार
 रास, सं० १६९५ जालोरमे ही चम्पकश्रेष्ठि चौपइ, सप्तस्मरण वृत्ति
 (सुखबोधिका), सं० १६९५ फाल्गुण शुक्ल १५ को प्रल्हादनपुर में
 कल्याणमंदिर वृत्ति, आकेठ मे गौतमपृच्छाचौपइ, सं० १६९६
 नभमास वदि अहमदावाद मे टण्डकवृत्ति, आसोजमे धनदत्त चौपई,
 सं० १६९७ चैत्र मे वही साधुवदना, सं० १६९८ श्रावण शुक्ल ५
 को पुत्ररत्न ऋषि रास इमी संवत मे वही आलोयण छत्तीसी, सं०
 १७०० माह मासमें वहा द्रौपदीचौपइ की वृद्धावस्था होने पर भी
 रचना की। वही पर आपका स्वर्गवास हुआ।

बिना सवनकी बडी २ और उल्लेखनीय कृतिया निम्नोक्त हैं —

(१) समाचारीशतक (२) सोतारामचौपड (३) कल्पलता (इतका उल्लेख उपरोक्त नोध मे आ चुका है), (४) सारस्वत-रहस्य (५) मानिट वातु (६) रत्तरगच्छ पट्टावली (७) विमलयमल स्तुति वृत्ति (८) अटपानहुत्वगर्भितस्तव स्वोपज्ञटीका (९) ऋषभभस्तामर (१०) द्रौपदी सहरण (११) महावीर २७ भव, (१२) पडावञ्चक वालावबोध (१३) प्रश्नोत्तर पद (विचार जे० भ० सू०), (१४) वाग्भट्टा लकार वृत्ति (१५) भोजनविच्छनी, इत्यादि । छोटे बडे स्तवन सझाय अष्टक आदि मिलाकर सैकडो की सरण्या मे हमारं सग्रहमे हैं जिन्हें यथा-समय प्रकाशित करेगे ।

७० समयसुन्दरजी के अनेको विद्वान् शिष्य थे जिनका परिचय कविवर के जीवनचरित्र मे दिया जायगा । यहा मात्र उनके उद्भट विद्वान् शिष्य वादी हर्षनदनजी का कुछ परिचय दिया जाता है ।

वादी हर्षनदनजी प्रकाण्ड विद्वान् थे इनके विद्वता की प्रशम्भा कविवर भी अपनी कल्पलता-वृत्ति आदि मे करते हैं । न्याय और व्याकरणके विषय मे तो आपकी विद्वता विशेष उल्लेखनीय हैं । “चिन्तामणि महाभाष्य” जैसे महान् उत्कृष्ट ग्रथोको आपने अध्ययन किए थे । इनके बनाये हुए १ मध्यान्ह व्याख्या० पद्धति (स० १६७३ पाटण) २ ऋषिमडल वृत्ति ४ सण्ड (स० १७०५ वीकानेर) ३ स्थानाग गाथागत वृत्ति (स० १७०५ वा० मुमतिकट्टोल के साथ) लीवडी भ०, ४ उत्तराध्ययन वृत्ति स० १७११ वीकानेर ज्ञान०) ५ आदिनाथ-व्याख्यान ६ आचारदिनकरप्रशम्नि ७ शत्रुजय

यात्रा परिपाटी स्तवन सं० १६७१, तथा गौडीस्त० १६८३ एवं अन्य स्तवन गहुलिया इत्यादि उपलब्ध हैं।

(२) नयविलासः—इनका नाम भी आगरे से दिये हुए पत्र में आता है। इनका बनाया हुआ लोकरनाल-मालावत्रोध (सं० १६५४ लिखित) श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भंडार, वीकानेर में है।

(३) ज्ञानविलासः—आपके शिष्य समयप्रमोदजी कृत (१) जिनचन्द्रसूरि निर्वाण रास (२) चौपर्वी चौपई (सं० १६७३ जूठा ग्रामे पत्र १४ स्वयं लिखित) वीकानेर ज्ञान भण्डार में है, (३) अभय-देवसूरि कृत साहम्मोकुलक टवा (सं० १६६१ फा० कृ० ७ वीरम पुरे कृत व लिखित), (४) जिनचन्द्रसूरिजी गीत (सं० १६४६) इत्यादि, छोटी मोटी कई कृतिया उपलब्ध हैं।

हमारे समग्रस्थ भगवती सूत्र की प्रगति (सं० १६७६) से ज्ञात होता है कि ज्ञानविलासजी के लब्धिशेखर, ज्ञानविमल, नयन-कलस आदि और भी कई शिष्य थे।

(४) हर्षविमलः—इनका नाम सं० १६२८ के आगरे वाले पत्र में आता है।

इनके शिष्य श्रीसुन्दरजी ये जिनका बनाया हुआ अगडदत्त प्रबन्ध पत्र ६ हमारे संग्रह में है और छोटी-कृतिया भी कई उपलब्ध हैं। सं० १६६१ मि० व० ५ के लेख में भी आपका नाम आता है (जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भा० २)।

(५) कल्याणकमलः—इनका नाम भी उपरोक्त पत्र में आता है। इनका (१) “जिनप्रभसूरि कृत पट्टभाषा स्त० अवचूरि” (पत्र २

हमारे समक्ष में है) । (२) सनतकुमार चौपई तथा नेमिनाथ स्त०, ऋषभ स्त० आदि भी उपलब्ध हैं ।

(६) वा० तिलककमलः—इनके शिष्य वा० पद्महेम (गोलच्छा गोत्रीय) थे । जिन्होंने बाडीपाडवनाथ (पाटण), और जिनदत्तसूरि स्तूप (मुल्तान) की प्रतिष्ठा की । उनके शिष्य (१) वा० दानराज (गोलच्छा गोत्रीय) (२) वा० निलयसुन्दर (३) वा० नेमसुन्दर (४) प० आनन्दवर्द्धन (५) हर्षराज आदि बहुतसे शिष्य हुए । वा० दानराजजी के शिष्य वा० हीरकीर्ति—गोलच्छा गोत्रीय थे, इनका स्वर्गवास सं० १७२६ आ० शु० १४ को जोधपुर में हुआ । इनके शिष्य (A) वा० राजहर्ष (B) मतिहर्ष थे । (A) वा० राजहर्षके शिष्य वा० राजलाभजी अच्छे कवि हुए हैं, इनकी वन्ता-शालिभद्र चौपई (सं० १७२६ आ० शु० ५ वणाड, वीकानेर ज्ञान-भण्डार) भद्रानन्द संधि आदि अनेक कृतियाँ उपलब्ध हैं, जिनका परिचय स्वतन्त्र निबन्ध में देंगे । राजलाभजी के शिष्य प० राजसुन्दर, क्षमाधीर और उनके शिष्य गुणभद्र, नयणरग आदि थे । हीरकीर्तिजी के दूसरे शिष्य (B) मतिहर्षजी के वा० भुवनलाभ और महिमामाणिस्य नामक दो शिष्य थे । वा० भुवनलाभजी के तेजसुन्दर और महिमा-माणिस्यजी के महिमसुन्दर, मुक्तिसुन्दर, श्रीचन्द्रादि शिष्य थे ।

(७) नयनकमलः—इनके शिष्य जयमन्दिरजी के शि० कनक-कीर्ति अच्छे कवि हुए हैं । जिनका (१) नेमिनाथ रास (सं० १६६० माघ सुदि ५ वीकानेर), (२) द्रौपदी राम (सं० १६६३ वैशाख सु० १३ जैसलमेर) आदि उपलब्ध हैं ।

(८) युगप्रधान श्रीजिनसिंहसूरि—ये बड़े प्रतिभाशाली और दिग्गज विद्वान थे। गुरुदेव के साथ वर्षों तक रहकर इन्होंने विनय, विद्वता, व्याख्यानकलादि गुण प्राप्त किये थे। संक्षेप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि सूरिजी के अधिकांश गुण इन में आ गये थे। आपने सम्राट् अकबर के दरवार में सूरिजी से भी पहले जाकर उन्हें अपनी लोकोत्तर प्रतिभा से जैन-धर्मका अनुरागी बनाया था। स० १६२८ के आगरे के पत्र में सूरिजी के साथ आपका भी नाम पाया जाता है।

इनका जन्म स० १६१५ के मार्गशीर्ष शुक्ला १५ को खेतामर ग्राम में हुआ। इनके पिताका नाम चोपडा गोत्रीय शाह चापसी और माताका नाम चापल देवी था। इनका मूलनाम मानसिंह था, इससे सम्राट अकबर इन्हें इसी नाम से सम्बोधन किया करते थे। हम इस पुस्तक के “पाचवें प्रकरण” में लिख चुके हैं कि स० १६२३ में जब श्रीजिनचन्द्रसूरिजी बीकानेर पधारे थे, तब आपने केवल आठ वर्षकी अवस्था में वैराग्य वासित होकर सूरि-महाराजके पास भागवती-दीक्षा ग्रहण की थी। सूरिजी ने इनका नाम “महिमराजजी” रखा और विद्वान, निर्मल-चरित्रपात्र और विनयवान होने के कारण स० १६४० में माघ शुक्ला ५ को जैसलमेर में सूरिजी ने इन्हें वाचक पद से अलंकृत किया।

“श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास”से जाना जाता है कि सम्राट अकबर के आमन्त्रण से सूरि-महाराज ने अन्य ६ साधुओंके

साथ आपको ही सम्राट के दरवार में भेजा था। इनके दर्शन से सम्राट अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्रतिदिन धर्म-चर्चा करने लगे।

हम सातवें प्रकरणमें लिख चुके हैं कि जब शाहजादा सलीम के मूल नक्षत्र में फन्याका जन्म हुआ था, तब मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के प्रबन्ध से आपने ही दोपनिवारणार्थ 'अष्टोत्तरी-स्नात्र' सविधि सम्पन्न कराया था। सूरिजी की आज्ञा से सम्राट के साथ काश्मीर-विहार कर जैन धर्म की अतिशय उन्नति की। गजनी और गोलकुण्डा जैसे देशोंमें तथा काबुल पर्यन्त अमारि उद्घोषणा करवाई। रास्तेमें आये हुए तालाबों के जलचर जीवों की रक्षा की। काश्मीर विजय करने के पञ्चात् श्रीनगर में सम्राट को उपदेश देकर आठ दिनकी अमारि उद्घोषणा प्रकाशित कराई।

इनके सहवास से सम्राट पर अमित प्रभाव पडा उन्होंने सूरिजीसे निवेदन कर इन्हें आचार्य-पद दिलाया, अपने मुखसे "जिनसिंहसूरि" नाम स्थापन करनेका निर्देश किया तथा उस अवसर पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र ने जो करोड़ों रुपये व्यय कर उत्सव मनाया, वह सब अगले प्रकरणोंमें लिख चुके हैं। अतः यहा दुहराना अनावश्यक है।

इसके बाद कहीं सूरिजी के साथ और कहीं उनकी आज्ञा से अन्यत्र चातुर्मास किये, अनेक शिलालेखों और ग्रन्थ प्रशस्तियों में, आपका नाम मिलता है।

स० १६५६ के मित्ती मार्गशीर्ष शुक्ल १३ को बीकानेर में बोथरा गोत्रीय वर्मन्सी शाहकी भार्या धारलदेवी के पुत्र राजसिंह को दीक्षा दी। वहा से बिहारकर जब सूरिजी के पास आए, तब उन्हें बड़ी दीक्षा दिलाई और 'राजसमुद्र' नाम रखा।

सं० १६६१ के माघ शुक्ल ७ को वीकानेर के शाह बच्छरा के पुत्र चोला को अमरसर मे दीक्षा दी, उसके साथ उसके बड़े भाई विक्रम और माता मिरादेवी ने भी दीक्षा ली थी। थानसिंह श्रीमाल ने दीक्षा-महोत्सव किया। चोला को राजनगर मे श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने बड़ी दीक्षा देकर सिद्धसेन मुनि नाम दिया। उपरोक्त राजसमुद्रजी और सिद्धसेनजी दोनो जिनसिंहसूरिजी के पट्टधर आचार्य बने, वे “जिनराजसूरि” और “जिनसागरसूरि” नाम से प्रसिद्ध हुए।

सं० १६६०-६१ के लगभग (इलाही सन् ४६ ता० ३१ खुरदाद अषाढी अष्टाहिका फरमान के खो जाने से इन्होंने नया फरमान सम्राट अकबर से प्राप्त किया था, जिसका उल्लेख उमो फरमान में सम्राट ने किया है।

सं० १६६२ के चैत्र कृष्ण ७ को जब वीकानेर मे सूरिजी ने श्रीनरूपभदेवखामो के मन्दिर की प्रतिष्ठा की, उस समय आप भी सूरिजी के साथ थे, ऐसा यहां के लेखो से जाना जाता है। सं० १६६१ के लेखमे भी आपका नाम है।

सुप्रसिद्ध विद्वान कविवर समयसुन्दरजी के आप विद्या-गुरु थे और आपने सं० १६७१ मे लखेरे मे उन्हें उपाध्याय पद दिया था।

राजसमुद्र कृत “श्रीजिनसिंहसूरि गीत” से ज्ञात होता है कि सम्राट जहाँगीर को अपनी अलौकिक प्रतिभा से प्रतिबोध देकर अभयदान का पट्ट बजावाया था :-। सम्राट ने प्रसन्न होकर

* धवन चातुरी गुरु प्रति बूझवा, शाह सलेम नरिन्दो जी।

अभयदान नउ पट्ट बजावयो, श्रीजिनसिंह सरिन्दो जी ॥२॥

(राजसमुद्र कृत गीत)

अपने पिता का अनुकरण करते हुए आचार्य-महाराज को मुकरबखान नराव को भेज कर युग-प्रधान पद दिया था x ।

स० १६७० का चातुर्मास गुम्देव के साथ घेनातट (बीलाडा) में किया था । उसके पञ्चात् गच्छनायक-पद प्राप्त कर अनेक स्थानों में प्रिहार करने लगे । स० १६७१ में मेडता वास्तव्य चोपडा गोपीय शाह आसकरण ने शत्रुख्य महातीर्थ के यात्रार्थ सत्र निकालने का विचार किया तब आपको भी वीननि-पत्र भेज कर उम सव में सम्मिलित हो गिरि राज की यात्रार्थ बुलाए थे । मित्ती पौष शुद्धा १३ को मेडते से सव ने प्रयाण किया और गूढा आए वहा वीकानेर का विगाल सव भी इस सत्र के साथ हो गया । स्थानों २ पर देववन्दन पूजनादि कर आठू तीर्थ की यात्रा का लाभ लेने हुए मित्ती चैत शुक्ला १५ क दिन गिरिराज श्रीसिद्धाचलजी पर युगादि-जिनेश्वर के दर्शन किए ।

सवपति आसकरण को गच्छनायक श्रीजिननिहसूरिजी ने 'सत्रपति' पद प्रदान किया + ।

गिरिराज की यात्रा कर खभात आये वहा स्तभना पार्श्वनाथजी के दर्शनकर पाटण, अहमदाबाद होते हुए बडली पधार, वहा

x जेहनी गुग परपरा चित्तने विषे धरी जहागीर-सलेम सनुष्टहृदय थरुड श्रीमुकरबखानइ पोते माकलो महोत्सव पूरंक युगप्रधान पदवी (दीधी) इहवा श्रीजिनसिंहसूरि । [जिनरगसूरि राज्ये लि० चौमासो व्याग्यान]

श्रीनिध रे युगप्रधान पदवी लही, आया मुकरबखान रे ।

साजण मन चिन्ता हुआ, मटया दुरजन मान रे ॥ २ ॥

[हर्षनन्दन कृत गीत]

+ इस यात्राके घर्षनात्मक दो "चतुष परिपाटी स्तवन" हमारे सप्रहमें हैं ।

श्रीजिनदत्तसूरिजी के चरण-पादुकाओं के पुनीत दर्शन किए। वहा से विहार कर गच्छनायक श्रीजिनसिंहसूरिजी सीरोही पधारे। सघ ने हर्षित होकर उत्सव पूर्वक नगर-प्रवेश कराया। वहा के राजा राजसिंह ने आपकी खूब भक्ति की। वहा से विहार कर जालोर पधारे, श्रीसंघ ने समारोह पूर्वक आपका स्वागत किया वहा से खडप और द्रुणाडइ होते हुए घघाणी पधारे। वहा प्राचीन [इन मूर्तियों की प्राचीनता आदि के विषय मे "समयसुन्दरजी कृत घघाणी स्तवन" में अच्छा वर्णन है।] मूर्तियों के दर्शन किये। वहा से अनुक्रम से विहार कर वीकानेर पधारे।

शाह वाघमल ने आपका धूमवाम से प्रवेशोत्सव किया। सं० १६७४ का चातुर्मास वहाँ किया, धर्म प्रभावना अच्छी हुई।

सम्राट जहागीर बहुत वर्षों से आप के दर्शनाभिलाषी थे। आप का चातुर्मास वीकानेर मे जात होने से उसने अपने प्रधान उमरावों को शाही-फरमान देकर भेजे और उन को आग्रह पूर्वक दर्शन देने की विनती लिली। शाही-पुरुष वीकानेर मे आए और फरमान देते हुए आगरे पधारने को विनति की --। वीकानेर का सघ एकत्र होकर

* दिव श्रीशाहि सलेम, मानसिंह सुं धरि प्रेम।

बड बडा साहस धीर, मूकइ आपणा घजीर ॥१॥

तुम्ह बीकाणइ जाड, मानसिंहजी कु बुलावो।

इक घेर मानसिंह आवइ, तउ मन मुसु ख पावइ ॥२॥

ते बीकाणइ आया, प्रणमइ मानसिंह पाया।

दीघा मन महिराण, पतिशाही फुरमाण ॥३॥

मिलियउ सघ छजाण, बाच्या ते फुरमाण।

सेढाया पतिशाह, सहुको धरइ उच्छाह ॥४॥

[श्रीसार कृत "जिनराजसूरिगास" सं० १६८१]

फरमान पढ कर खून आनन्दित हुआ। आचार्य महाराज ने सम्राट का आग्रह जान कर वहा जाना आवश्यक समझा। वीकानेर से विहार कर मेडता पधारे, वहा के सच की अतिशय भक्ति देस कर एक महीन तक वहाँ बिराजे। उसके पश्चान् वहा से विहार कर सम्राट के पास जाने के लिये प्रयाण किया। परन्तु मनुष्य का विचारा कुठ नहीं होता दुदेव काल ने किसी को नहीं छोडा, आपका शरीर अस्वस्थ हो गया इस से आगे न बढ कर वापिस मेडता आना पडा। अपना आयुष्य सन्निकट जान कर उन्होंने अनशन भ्रष्टण कर लिया। चौरासीलक्ष जीवायोनि से क्षमताश्रमणा कर शुद्ध ध्यान में लीन हो स० १६७४ के मिसी पीप शुक्ला १३ को श्रीजिन-सिंहसूरिजी स्वर्ग सिधारे। सारे मध में शोक छा गया, क्योंकि वे एक प्रतिभाशाली और महान् प्रभावक आचार्य थे। श्रीमारजी कृत "जिनराजसूरि राम" में लिखा है कि आप प्रथमदेवलोक- में महर्द्धिक देव हुए।

आणदइ चउमामो करि, आया मेवडा वटु द्वित धरि ।

तेडावइ श्रीशादि सलेम, मेडता आया कुशले धेम ॥६६॥

[धर्मकीर्ति कृत "जिनमागरसूरि रास" स० १६८१]

विशेष जाननेके लिये हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिकजैनकाव्य-संग्रह' देखना चाहिये।

* सह मुखि लीधउ सथारउ, कीधउ मफउ जमारो ।

शुद्ध मनइ गइगइता, पहिलउ देवलोक पहुता ॥ १० ॥

सम्राट अकबर को जैन-धर्मानुरागी बनाने में जिनचन्द्रसूरिजी के साथ साथ आपका भी बहुत कुछ प्रभाव था। काश्मीर विहार में सम्राट पर इनके पवित्र चारित्र्य का जो प्रभाव पडा, उसी के फल स्वरूप सम्राटने सूरिजी से इन्हे आचार्य पद दिलाया था उसका हम शब्दों द्वारा वर्णन नहीं कर सकते। सम्राट जहागीर आपको बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। नवाब मुकरबखान आदि पर भी आपका गहरा प्रभाव था * ।

आपने कई जगह प्रतिष्ठाएं भी की थी जिनका लेख “जैन-धातु-प्रतिमा-लेख संग्रह” आदि में है। साध्वी विश्वासिद्धि कृत ‘गुरुणी-गीत’ से जाना जाता है कि उनकी गुरुणी को ‘पहुत्तणी’ पद आपने ही दिया था।

आपको स्तवन, सज्ञायादि कतिपय छोटी कृतिया भी मिली हैं। वोकानेर के श्री रेल दादाजी में आपकी पादुकाए एक स्तूप में प्रतिष्ठित हैं जिनका लेख इस प्रकार है —

“स० १६७६ वर्षे जेष्ट वदि ११ दिने युग-प्रधान श्री ६ श्रीजिन-सिंहसूरि सूरीठ्वराणा पादुके कारिते प्रतिष्ठिने च ॥ शुभ भवतु ॥”

वोकानेर में नाहटो की गुवाडके श्री ऋषभदेवजी के मन्दिर में आपकी पादुकाए हैं, जिनका लेख इस प्रकार है —

*समरह सगला उधरा, मुकरबखान नवाब हो ।

* * * *

ए पतिशाही मेवडड, ऊभउ करह अरदास हो ।

एक घडी पडखु नहीं, चालो श्रीजी पास हो ॥ ७ ॥

[वादी हर्षनन्दन कृत ‘आलिजा गीत’]।

“मन्त १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने युगप्रधान श्रीजिनसिंह मूरिणा पादुके कारिते जयमा आविकया भट्टारक युगप्रधान श्रीजिन राजसूरिराजे ।”

आपके बहुत से विद्वान शिष्य थे, जिनमे से कइयो के नाम भी हमे उपलब्ध हुए हैं । उन सब को बडी दीक्षा युगप्रधान श्रीजिन चन्द्रसूरिजी ने प्रदान की थी, इससे उनके नाम भी नन्दि अनुक्रम से लिखते हैं —

(१) हेममन्दिर—आप प्रकाण्ड विद्वान थे । वीरानेर ज्ञान-भट्टार मे, आपको आवक आविकाओ द्वारा बहराये हुए ग्रन्थो की कई प्रतियो विद्यमान हैं । आपका एक श्रीजिनकुशल सूरि स्थान स्तवन गा० ६ का उपलब्ध है ।

(२) हीरनन्दन—ये भी आपके शिष्य थे, इनके शिष्य लालचन्दजी अच्छे कवि हुए हैं, जिनकी (१) मौन एकादशी स्त० गा० १७ (स० १६६८ लि०), (२) अदत्तादानविषये देवकुमारचौपाई (स० १६७२ आ० सु० ५ अलपर, यति सूर्यमलजी के सग्रह मे), (३) हरिश्चन्द्र रास (स० १६७६ काती प्रत्नम, घघाणी, श्रोपज्यजी के सग्रह मे), (४) वेराग्य वावनी गा० ५३ पत्र २ (स० १६६५ भाद्रवा सुदि १५) आदि कृतिये उपलब्ध हैं ।

(३) श्रीजिनराजसूरि—आपका दीक्षा नाम राजममुद्र था । आप एक प्रतिभाशाली और अच्छे विद्वान आचार्य हुए हैं । इनके रचित (१) ठाणागवृत्ति (२) नैपथ काव्य वृत्ति (प्र० ३६०००) अलभ्य है और (३) धनाशालिभद्र रास (स० १६७८) (४) जगूराम (स० १६६६ अहमदाबाद) (५) चौबीसी (६) वीगी आदि बहुतसी

कृतिया उपलब्ध हैं। आपका विस्तृत परिचय हमारी ओर से प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह' में देखना चाहिये।

(४) पद्मकीर्ति—ये भी आपके विद्वान् शिष्य थे। इनके शिष्य पद्मरगजी के २ शिष्य थे। (१) पद्मचन्द्र—इनका जयूरस (स० १७१४ का० सु० १३ सरसा) उपलब्ध है। (२) रामचन्द्र—ये भी अच्छे विद्वान्, कवि और वैद्यक शास्त्र वेत्ता थे। इनकी कृतियों में वैद्य विनोद चौपाई (सं० १७२० मि० सु० १३ बुधवार, हमारे सग्रह में) और दस पञ्चमहाण स्त० (स० १७३१ पोपसुदि १०) उपलब्ध हैं।

(५) श्रीजिनसागरसूरि—इनका दीक्षा नाम सिद्धसेन था। इनका विशेष परिचय प्राप्त करने के लिए भी "ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह" देखना चाहिये।

(६) जीरग—ये भी आपके शिष्य थे। स० १६८२ के मितो भिगसर सुदि १३ को इनके लिखी हुई "मुनि मालका" पत्र ८ (हमारे सग्रह में अ० प्र० न० १२२) उपलब्ध है।

जिनसिंहसूरिजी के शिष्यों के नाम और भी कई ग्रन्थों एवं प्रशस्तियों में पाये जाते हैं, परन्तु स्मरतर गच्छ में इस नाम के तीन आचार्य भिन्न २ शाखाओं में उसी समय हो गए हैं। इस लिये अनिश्चित होने से उनका परिचय नहीं दिया गया है।

(७) समयराजोपाध्याय—आप सूरिजी के प्रधान शिष्या में से थे। आगरेके सं० १६२८ वाले पत्रमें आपका नाम भी है। आप अच्छे विद्वान् थे, "अष्टलक्ष्मी" की प्रशस्ति में इन्हें कविवर

समयसुन्दरजी अपना विद्यागुरु बतलाते हैं। इनके बनाई हुई कृतियों में (१) धर्ममजरी चौ० (स० १६६२ मा० सु० १० वीकानेर), पर्यूपण-व्याख्यान-पद्धति पत्र १२ (हमारं सग्रहमे), शत्रुजय ऋषभ-स्त० गा० १४ अवचूरि और सस्कृत व भाषा के कई स्तवन उपलब्ध हैं।

स० १६७७ ज्येष्ठ वदी ५ मेडता के शिलालेख में आपका नाम आता है। इनके शिष्य अभयसुन्दर, उनके शिष्य कमललाभोपाध्याय शि० लब्धिकीर्ति शि० राजहम शि० देवविजय शि० चरणकुमारके लिखी हुई "सारस्वत" की प्रति श्रीपूज्यजी के सग्रहमे है।

(१०) धर्मनिधानोपाध्याय—इनका नाम भी आगरा-वाले पत्रमें होनेसे स० १६२८ के पूर्व दीक्षित होना सुनिश्चित है। इनका "जीरावला पार्श्वस्त०" और "चतुर्विंशति जिन० स्त०" (प्राकृत) उपलब्ध हैं। इनके शिष्य (१) सुमतिसुन्दर का शान्तिस्तवन (स० १६५० का० सु० १३ वीरमपुर) और अन्य कई छोटी कृतिया उपलब्ध हैं। (२) वर्मकीर्ति—ये अच्छे कवि थे। इनकी कृतियों (१) नेमिरास (स० १६७५ फा० सु० ५ रवि) (२) मृगाङ्क पद्मावती चौ० (अपूर्ण हमारे सग्रह मे) (३) जिनसागरसूरि रास (सं० १६८१ पौष सुदी ५), (४) २४ जिन २४ बोल० स्त० (५) साधुसमाचारीवाला० (स० १६६६ मा० सु० ४ वीकानेर लि०) (६) सत्तरीसय वाला० (पत्र ४ क्षमाकल्याण भण्डार) और कई स्तवनादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य 'दयासार' ये, जिन्होंने इलापुत्रचौ० (दयासारचौ० स० १७१० नभसुदि६सुहावानगर) और अमरसेन वयरसेन-चौ०

(स० १७०६ विजया-दशमी शीतपुर) रची, क्षमाकल्याणजी के भण्डार में है। धर्मकीर्तिजीके विद्यासार, महिमसार, राजसार आदि और भी कई शिष्य थे जिनमें राजसार कृत कुलध्वज-राम (स० १७०४ आ० सु० ५ रवि०) उपलब्ध हैं। (३) समयकीर्ति, इनके लि० स० १६७५ मि० व० १० "पञ्चमखान-निर्युक्ति" वीरानेर ज्ञानभंडार में है। आपके शिष्य श्रीसोम ने "भुवनानन्द चौ०" (स० १७२५ मि० सु० ५ आसनीकोट में अपने शिष्य सुमतिधर्म के लिए) बनाई।

स० १६७५ वै० सु० २३ के शत्रुजय के शिलालेख में धर्मनिधान जी का नाम है। स० १६७४ मि० व० ५ जेसलमेरमें इनके साथ धर्म-कीर्ति जी भी थे ऐसा वहां के लेख से मालूम होता है

(११) रत्ननिधानोपाध्याय—आपका नाम भी स०

१६२८ के आगरेवाले पत्र में है। आपका सं० १६३३ का नवहरपाठर्व स्त० उपलब्ध है। सं० १६४६ में सूरिजी के साथ आप भी लाहौर गये थे, वहां मित्ती फालगुन शुक्ला २ को आपको उपाध्याय पद मिला, जिसका उल्लेख आगेके प्रकरणों में हो चुका है। आपका नाम कई प्रशस्तियों में मिलता है, जिनसे ज्ञात होता है कि आप अधिकांश सूरिजीके साथ ही रहे थे।

आप व्याकरणके प्रकाण्ड विद्वान् थे। वा० गुणविनयजी ने कर्मचन्द्रमणि वग प्रबन्ध वृत्ति (१६५६ स०) में इनको "सागहंमा-वदानुशासनाव्येतार" लिखा है। कविवर समयसुन्दरजी कृत रूपक-

मालाचूर्ण का आपने ही सशोधन किया था। आपके बनाये हुए चहुत से स्तवन उपलब्ध हैं।

इनके शिष्य रत्नमुन्दर ये जिनके भी कई स्तवनादि मिलने हैं।

(१२) रंगनिधान—इनका नाम 'नित्य-विनय-मणि जीवन जैन लायनेरी' की कालिकाचार्यकथा को प्रशस्ति में पाया जाता है।

(१३) कल्याणतिलक—इनके पठनार्थ स० १६३० का लिखा हुआ "मृगध्वजचरित्र" श्रीपूज्यजीके सग्रह में है।

(१४) सुमतिकल्लोल—इनकी (१) एक शुक्रराज चौ० (स० १६६२ चैत्र दममी—प्रथमाभ्यास, जय० भण्डार पत्र १४) (२) स्थानागसूत्रवृत्ति गत गाथा पर 'वृत्ति' वादी हर्षनन्दन क भाय स० १७०५ की रचित, लीबडी के भण्डार में है। (३) वीरानेर ऋषभ स्त० (स० १६६४) आदि कई कृतिया उपलब्ध हैं। आपके मशोधित पिण्डविशुद्धि की प्रति (शि० विद्यासागर पठनार्थ), श्री-पूज्यजी के सग्रह में है। इन्हीं विद्यासागर लिखित "प्राकृतव्याकरण दोधकावचूरि" उपलब्ध है।

(१५) वा० हर्षवल्लभ—आपकी मयणरेहा चौ० (स० १६६२ महिमावती) गा० ३७७ पत्र ९ हमारे संग्रह में है। दूसरी कृति उपासक दशाग बाला० (स० १६६२) उपलब्ध है।

(१६) पुण्यप्रधान—आप भी सूरिजी के विद्वान् शिष्य थे। वीरानेर आदिनाथ-प्रशस्ति लेखमें आपका नाम है। स० १६७७

ज्येष्ठ वदि ५ मेडता के शिलालेख में भी आपका नाम आता है। इनका गोडी पाठर्व स्त० मिलता है। आपके सुमतिसागरो पाव्याय नामक त्रिद्वान् शिष्य थे जिनका भिद्धाचल स्त० गा० १२ (स० १६८५ फा० कृ० १४) का उपलब्ध है।

सुमतिसागरजी के शिष्य (१) ज्ञानचन्द्र—ऋषिदत्ता चौ० (मुलतान, जिनसागरसूरि राज्ये) और प्रदेशी चौ०, ये दोनों कृतिया वीकानेर—ज्ञानभण्डार में हैं, अपूर्ण हमारे सग्रह में भी हैं। इनके शिष्य रगप्रमोद थे जिनकी “चम्पकचौपाई” (१७१५ वें वदि ३ मुलतान) उपलब्ध है। (२) साधुरंग—इनकी ‘दयाउत्तीसी’ (स० १६८५ अहमदाबाद) हमारे सग्रह में है। वा० साधुरगजी के शिष्य विनयप्रमोद शि० विनयलाभ (बालचन्द्र) थे इनकी बच्छराज देवराज चौ० (स० १७३० मुलतान), मिहासनवत्तीसी (स० १७४८ श्रावण वदि ७ फलोधी, पूनमचन्द्रजीयति के सग्रह में है), ‘मवैयाश्रावनी’ गा० ५६ हमारे सग्रह में है। वा० साधुरगजी के शि० महोपाव्याय राजसागरजी थे, इनके शिष्य ज्ञानधर्मजीके शि० टीपचन्द्र गणिके शि० देवचन्द्रजी हुए। ये सुप्रसिद्ध विद्वान और अध्यात्मतत्त्वके वेत्ता थे। इनके जीवन के लिए ‘देवविलास’ और कृतियोंके लिये ‘श्रीमद् देवचन्द्र’ भाग १-२-३ देखना चाहिए। उनके अतिरिक्त हमें (१) शान्तरस-भावना (२) सप्तस्मर्ण टवा (३) आत्म-शिक्षा और कई स्तवनादि उपलब्ध हुए हैं। श्रीमद् देवचन्द्रजीके मनरूप, विजयचन्द्र और रायचन्द्र आदि कई शिष्य थे। विजयचन्द्रके रूपचन्द्र नामक शिष्य थे।

(१७) महो० सुमतिशेखर—इनके शि० (१) ज्ञानहर्ष जी थे, जिन्होंने खेतसी शिष्यके साथ 'पर्यूपण व्या० पद्धति' पत्र (लिखा १२ स० १७०५, प्र० आ० कृ० १४ बुध जिनरत्नसूरि राज्ये), हमारे सग्रह में है। इन्होंने ज्ञानहर्षजी का पार्श्वस्त गा० १३ उपलब्ध है। (२) वा० चरित्रविजय (३) महिमाकुण्डल (४) रत्नविमल (५) महिमाविमल थे, इन्होंने स० १७३३ का चातुर्मास सक्तीग्राम में किया, उस समय महिमाकुण्डल के (मिति भाद्रवा सुदि ६) लिखित "नाहर जटमल कृत वावती" पत्र० श्रीपूज्यजीके सग्रहमें है।

(१८) दयाशेखर—इनके लिखा हुआ नवकार वाला० पत्र ४ श्रीपूज्यजीके सग्रहमें है।

(१९) भुवनमेरु—इनके शिष्य पुण्यरत्न शि० दया-कुण्डल शि० धर्ममन्दिर एक अच्छे कवि हुए हैं। उनकी कृतियोंमें (१) मुनिपतिचरित्र (स० १७२५ पाटण), (२) दयाढोपिका चौपाई (स० १७४० मुलतान), (३) मोह-विवेक रास (स० १७४१ मि० सु० १० मुलतान), (४) परमात्म-प्रकाश चौपाई (स० १७४२ का० सु० ४ मुलतान), (५) आत्ममदप्रकाश (६) नवकाररास (बृहन्तवनावलीमें मुद्रित), चौमासी व्याख्यान (जैन ग्रन्थावली इ० ३४३), सखेश्वर स्त० (स० १७०३) आदि कई उपलब्ध हैं।

(२०) लालकलश—इनके शिष्य ज्ञानसागर शि० कमलहर्ष के सं० १६६४ चैत्र सु० ७ राजनगर में लिखित "पुजराजी टीका" पत्र १११ श्रीपूज्यजी के सग्रह में है।

पृष्ठमे कर चुके हैं। सूरिजी आपको आदर की दृष्टिसे दर्शाते थे। समय-समयपर सैद्धान्तिक विषयो और विधि मार्ग के विषयो में आपसे परामर्श लिया करते थे *। आपके रचित निम्नोक्त ग्रन्थ उपलब्ध हैं —

(१) सुबाहुमन्वि (सं० १६०४ श्रीजिनमाणिक्यसूरि आदेशान्), (२) मुनिमालका (जिनचन्द्रसूरि उपदेशात्), (३) प्रश्नोत्तर काव्य वृत्ति (सं० १६४०), (४) जंबूद्वीप पन्नति वृत्ति (१६४५ जेमलमेर रा०भीम राज्ये), (५) नभि राजर्षि गीत गा० ५४, (६) पैंतीस वाणी अतिशय गर्भित स्त० गा० २७, (७) पचकल्याण स्त०, (८) पाठर्व जन्माभिषेक गा० १९ (९) महावीर स्त० गा० २१, (१०) आदिनाथ स्तवन गा० २६ (वीरानेर), (११) अजित स्तवन आदि छोटी कृतिया बहुत-सी उपलब्ध हैं। आपकी कृतियों की भाषा, प्रौढ और शैली प्राचीन है।

आपने सं० १६५० में जेमलमेरमें जिनकुशलसूरिजीकी पादुकाएँ प्रतिष्ठित की थी। सम्भव है कि इनके थोड़े समय पश्चात् वहीं आपका स्वर्गवास हुआ हो। क्योंकि उस समय आपकी अवस्था लगभग ८०-९० वर्ष की होगी। आपके उ० पद्मराज, हर्षकुल, जीवराज आदि कई शिष्य थे, जिनमें पद्मराजजी अच्छे विद्वान थे,

* देखो शिवनिधान कृत 'लघु विधिप्रपा'। चित्तमिहसूरिजी लि० सामाचारी विषयक पत्र हमारे संग्रह में है, जिसमें लिखा है —

ए व्यवस्था। श्रीजिनचन्द्रसूरिजी यह श्रीपुण्यसागर महोपाध्याय जी साधुकीर्त्यपाध्याय नह पूछी नह कीधी छह सुं० ॥

उनके बनाए हुए (१) भुवनहिताचार्य कृत रुचिरदण्डक वृत्ति (सं० १६४४), (२) अभयकुमार चौ० (१६५० जैसलमेर) (३) मननकुमार राम (सं० १६६६ जै० गु० क०) (४) क्षुद्रकृष्णपिप्रन्य (सं० १६६० मुलतान गा० १४१ हमारे सग्रह में) उपलब्ध है इनके अतिरिक्त छोटी-मोटी और भी कई कृतियाँ मिलती हैं। सं० १६४५ में जम्बूद्वीपपन्नति-वृत्तिकी रचनामें, अपने गुरुश्री को बहुत कुछ सहाय्य दिया था।

इनके शिष्य वा० ज्ञानतिलक जी भी अच्छे विद्वान् थे, सं० १६६० दीवालीके दिन उन्होंने “गौतम-कुलक” पर विस्तृत टीका रची थी। जम्बूद्वीपपन्नतिवृत्तिके प्रथमादर्शके लेखक आपही थे। इनके भी रचित कई स्तवनादि उपलब्ध हैं।

महोपाध्यायजीके विषयमें विशेष ज्ञातव्य “ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह” में देखना चाहिये। सं० १६१७ पाटणमें श्रीजिनचन्द्र-मूरिजी कृत “पौषध प्रकरण वृत्ति” का आपने सशोधन किया था।

(२) धनराजोपाध्यायः—आप अच्छे विद्वान् थे। सं० १६१७ में रचित श्रीजिनचन्द्रसूरिजी की ‘पौषधप्रकरण वृत्ति’ के सशोधकों में आपका भी नाम आता है। ‘आत्मानन्द प्रकाश’ में प्रकाशित ‘महो० धर्मसागर गणि’ नामक लेख में उनके शिष्य के लिखित पत्रोंकी नकल में सं० १६१७ की अभयदेवसूरि सम्बन्धी चर्चा में आपको धर्मसागरका प्रतिद्वन्दी लिखा है। आपकी चरण-पादुका बीकानेर (नाहटोकी गुवाड) के श्री आदिनाथजी के मन्दिरमें है, जिसका लेख इस प्रकार है —

“स० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पाटुके ।”

(३) महोपाध्याय साधुकीर्ति—जिनभद्रसूरिजीको परम्परामे वा० दयाकुशलजी के शिष्य वा० अमरमाणिन्यजी के आप नामाङ्कित शिष्यो मे से थे । आप ओमवाल-वज के मुचिती गोत्रीय वस्तुपाल जी की सुगीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे । स० १६१७ मे रचित ‘पौपय प्रकरण वृत्ति’ के सशोधको मे से आपभी एक थे । सं० १६२५ आगरे मे सम्राट अकबर की सभा मे पौपय के विषय मे शरत्रार्थ करके तपागच्छवालों को निरुत्तर किया था । सं० १६३२ मे भावप्र सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको ‘उपाध्याय’ पद से अलङ्कृत किया था । समय-समय पर सूरिजी आपसे सेद्धान्तिक विषयो मे परामर्श किया करते थे । सं० १६४६ मे माघ वदि १४ को जालोर मे आपका स्वर्गवास हुआ । वहा आपका स्तूप भी सच ने बनवाया था । इनके विषय मे भी विशेष जानने के लिए “ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह” देखना चाहिये । इनकी कृतिया निम्नाङ्कित उपलब्ध हैं ।

स० १६११ दीवाली, सप्तस्मरण वाला० (बीकानेर, मत्रोश्वर सग्रामनिह की अभ्यर्थना से), स० १६१८ आ० शु० ५ पाटण मे “सतरहभेदी’ पूजा, स० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली मे “आपाढ-भूर्ति प्रबन्ध” और ‘मौनेकादशी स्त०’ स० १६३५ ज्येष्ठ शुष्ठा ३ भक्तामर स्तोत्राञ्चूरि (शि० वच्छा पठनार्थ स्वयलिखित प्रति, हमारे सग्रहमे है) स० १६३६ नागौर मे जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिगजर्पि चौपड़ सं० १६३८ अमरसर शीतल जिन स्त०,

शेषनाममाला (पत्र ४२ श्री पूज्यजी के सग्रह मे) , दीपावहार-
घालात्रगोध और बहुतसे स्तवन आदि मिलते हैं ।

आपके शिष्य (१) वा० विमलतिलक, (२) साधुसुन्दर (३)
महिमसुन्दर आदि अच्छे विद्वान थे ।

(१) वा० विमलतिरुक्की—इनके शिष्य विमलकीर्ति-रचित
चन्द्रदूतकाव्य (स० १६८१), पद-व्यवस्था, दडक-बाला०, नरतरव
बाला०, जीवविचार बाला०, जयतिहुअण बाला०, प्रतिक्रमण विधि-
स्तवनादि उपलब्ध हैं ।

(२) साधुसुन्दर—ये व्याकरण के दिग्गज विद्वान थे, इनकी
कृतियों मे (१) उक्तिरत्नाकर (स० १६७०-७४), (२) धातुरत्नाकर
(स० १६८० दीवाली), (३) शब्दरत्नाकर (शब्दप्रभेदनाममाला)
तीनों ग्रंथ श्रीपूज्यजी के सग्रह मे हैं । (४) पाठवस्तुति (स० १६८३)
आदि उपलब्ध हैं । इनके शिष्य उदयकीर्ति कृत पदव्यवस्था-
टीका स० १६८१ मे रचित उपलब्ध है ।

(३) महिमसुन्दर—इनका (१) शत्रुञ्जयतीर्थोद्धार-कल्प गा०
११६ का (स० १६६१ ज्येष्ठ शुक्ला ८ जेसलमेर मे रचित)
वीकानेर ज्ञानभंडार मे, (२) नेमि-विवाहला (म० १६६५ भा०
मु० ६) उपलब्ध है । इनके शिष्य (१) नयमेरजी थे । उनके शिष्य
केशवदासजी थे जिनकी एक बावनी (स० १७३६ आ० मु० ५ म०),
वीरभाण उदयभाण रास (स० १७४५ विजयदशमी नवानगर)
उपलब्ध हैं । (२) ज्ञानमेरुजी थे, जिनकी गुणावली चौ० (स० १६७६
आ० १३ विगयपुर ? फनहपुर) और विजयसेठ-विजया-ग्रन्थ

“स० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पादुके ।”

(३) महोपाध्याय साधुकोर्ति—जिनभद्रसूरिजीकी परम्परामे वा० दयाकुशलजी के शिष्य वा० अमरमाणिक्यजी के आप नामाङ्कित ग्रियो मे से थे । आप ओसवाल-वश के मुचिती गोत्रीय वन्तुपाल जी की मुशीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे । स० १६१७ मे रचित ‘पौषव प्रकरण वृत्ति’ के सञ्चोवको मे से आपभी एक थे । स० १६२५ आगरे मे सम्राट अकबर की सभा मे पौषव के विषय में शारत्रार्थ करके तपागन्ठवालो को निरुत्तर किया था । सं० १६३० मे माघव सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको ‘उपाध्याय’ पद से अलङ्कृत किया था । समय-समय पर सूरिजी आपसे सैद्धान्तिक विषयो मे परामर्श किया करने थे । सं० १६४६ मे माघ वदि १४ को जालोर मे आपका स्वर्गवास हुआ । वहा आपका स्तूप भी सब ने बनवाया था । इनके विषय मे भी विशेष जानने के लिए “ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह” देखना चाहिये । इनकी कृतिया निम्नाङ्कित उपलब्ध हैं ।

स० १६११ दीवाली, सप्तस्मरण वाला० (बीकानेर, मन्त्रोच्चर सग्रामसिंह की अभ्यर्थना से), स० १६१८ आ० शु० ५ पाटण मे “सतरहभेदी” पूजा, स० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली मे “आपाढ-भूर्ति प्रबन्ध” और ‘मौनेकादशी स्त०’ स० १६३५ ज्येष्ठ शुक्ल ३ भक्तामर स्तोत्रावचूरि (शि० वच्छा पठनार्थ स्वयलिरित प्रति, हमारे सग्रहमे हैं) स० १६३६ नागौर मे जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिराजर्षि चौपड स० १६३८ अमरसर शीतल जिन स्त०,

शेषनाममाला (पत्र ४२ श्री पूज्यजी के सप्रह मे) , दोषावहार-
वालावरोध और बहुतसे स्तवन आदि मिलते हैं ।

आपके शिष्य (१) वा० विमलतिलक, (२) साधुसुन्दर (३)
महिमसुन्दर आदि अच्छे विद्वान थे ।

(१) वा० विमलतिलकजी—इनके शिष्य विमलकीर्ति-रचित
चन्द्रदूतकाव्य (स० १६८१), पद-व्यवस्था, ढडक-वाला०, नवतरुव
वाला०, जीवविचार वाला०, जयतिहुभण वाला०, प्रतिक्रमण त्रिधि-
स्तत्रनादि उपलब्ध हैं ।

(२) साधुसुन्दर—ये व्याकरण के दिग्गज विद्वान थे, इनकी
कृतियों मे (१) उक्तिरत्नाकर (स० १६७०-७४), (२) धातुरत्नाकर
(स० १६८० दीवाली), (३) शब्दरत्नाकर (शब्दप्रभेदनाममाला)
तीनों ग्रथ श्रीपूज्यजी के सप्रह मे हैं । (४) पाठर्वस्तुति (स० १६८३)
आदि उपलब्ध हैं । इनका शिष्य उदयकीर्ति कृत पदव्यवस्था-
टीका स० १६८१ मे रचित उपलब्ध है ।

(३) महिमसुन्दर—इनका (१) शत्रुखयतीर्थोद्धार-कल्प गा०
११६ का (स० १६६१ ज्येष्ठ शुक्ला ८ जैसलमेर मे रचित)
वीकानेर ज्ञानभंडार मे, (२) नैमि-विवाहला (स० १६६५ भा०
सु० ६) उपलब्ध है । इनके शिष्य (१) नथमरुजी थे । उनके शिष्य
केशवदासजी थे जिनकी एक वाग्नी (स० १७३६ आ० सु० ५ म०),
वीरभाण उदयभाण रास (स० १७४५ विजयदशमी नवानगर)
उपलब्ध है । (२) ज्ञानमरुजी थे, जिनकी गुणावली चौ० (स० १६७६
आ० १३ विगयपुर ? फतहपुर) और विजयसेठ-विजया-प्रबन्ध

“स० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पादुके ।”

(३) महोपाध्याय साधुकोर्ति—जिनभद्रसूरिजीकी पर-

म्परामे वा० दयाकुण्डलजी के शिष्य वा० अमरमाणिक्यजी के आप नामाङ्कित शिष्यो मे से थे । आप ओसवाल-धश के मुचिती गोत्रीय वस्तुपाल जी की सुशीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे । स० १६१७ मे रचित ‘पौपध प्रकरण वृत्ति’ के मशोधको मे से आपभी एक थे । स० १६२५ आगरं मे सम्राट अकबर की सभा मे पौपध के विषय में शास्त्रार्थ करके तपागच्छवालो को निरुत्तर भिया था । सं० १६३२ मे माघ सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको ‘उपाध्याय’ पद से अलङ्कृत किया था । समय-समय पर सूरिजी आपसे सैद्धान्तिक विषयो मे परामर्श किया करने थे । सं० १६४६ मे माघ वदि १४ को जालोर मे आपका स्वर्गवास हुआ । वहा आपका स्तूप भी सध ने बनवाया था । इनके विषय मे भी विशेष जानने के लिए “ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह” देखना चाहिये । इनकी कृतिया निम्नाङ्कित उपलब्ध हे ।

सं० १६११ दीवाली, सप्तस्मरण वाला० (बीकानेर, मंत्रोश्वर सप्रामर्निह की अभ्यर्थना से), स० १६१८ आ० शु० ५ पाटण मे “सतरहभेदी” पूजा, स० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली मे “आपाढ-भूर्ति प्रबन्ध” और ‘मौनेकादशी स्त०’ स० १६३५ ज्येष्ठ शुक्ला ३ भक्तामर स्तोत्रावचूरि (शि० बच्छा पठनार्थ स्वयलिखित प्रति, हमारे सग्रहमे है) स० १६३६ नागौर मे जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिगजर्पि चौपड़ स० १६३८ अमरसर शीतल जिन स्त०,-

(स० १६१६ फा० सु० १३ जैसलमेर), और (२) ढोला-मारवण चौ० (स० १६१७ वै० सु० ३ जैसलमेर) आनदकाव्य महोदधि मौ० ७ मे प्रकाशित हैं । (३) तेजमार रास (स० १६२४ वीरमगाव), (४) अगडदत्त रास (स० १६२६ वीरमगाव), (५) पूज्य वाहणगीत (देखो हमारी ओरसे प्रकाशित ऐ० जैन काव्य सग्रह) (६) स्तभ ना पार्श्व स्त० (७) नवकार छंद (८) भवानी उद (९) गौडी पार्श्व छंद आदि उपलब्ध हैं ।

(७) चारित्रसिंह—आप वा० मतिभद्र जी के शिष्य थे । विद्वान और कवि थे । इनकी निम्नोक्त कृतियों उपलब्ध हैं —

(१) चतु शरण प्रकीर्णक सन्धि गा० ६१ (स० १६३१ जैसलमेर), अन्तिम पत्र हमारे सग्रह मे) (२) सम्यक्त्व विचार स्त० वाला० (स० १६३३ झर्झरपुर—अन्तिम २ पत्र हमारे सग्रह मे हैं) (३) कातत्र-विभ्रमावचूर्णि (सं० १६३५ ? धवलकपुर—श्रीपूजजी के स० और कृपा० भ० में है), (४) मुनिमालका (स० १६३६ रिणी—हमारी ओर से प्रकाशित अभयरत्नसार मे) (५) रूपक-माला-वृत्ति पत्र ३ (जिनचन्द्रसूरिराज्ये—हमारे सग्रह मे), (६) शास्त्रन-चेत्य स्त० गा० ३८, (७) ररतर गच्छ गुर्वावली गा० २१, (८) अत्पावहृत्व स्त० गा० २० इत्यादि, कई स्तवन हमारे सग्रह मे हैं, एव श्रीपूज्यजी के सग्रह मे स० १६३७ के लिखे हुए गुटक मे आपके ११ स्तवन, सज्ञायादि हैं ।

(८) महो जयसोमजी—आप क्षेमगारजा मे प्रमोद-माणिक्यजी के शिष्य थे । श्री जिनमाणिक्यसूरिजी ने स० १६०५-१०

सशोध चरित्र (स० १६२४ विजयाडसमी, वालापताकापुरी), (४) केशी प्रदेशी सन्धि (गा० ७२, हमारे सग्रह मे), (५) गौतम पृच्छा गा० ५७ (हमारे सग्रह मे), (६) जिन प्रतिमा छत्तोसी गा० ३५, और (७) कल्याणक स्त० गा० ३१, दोनो श्री पूज्यजी के सग्रह मे है, और भी कई स्तवनादि छोटी कृतिये उपलब्ध हैं ।

इनके विमलविनयजी नामक शिष्य थे, जिनकी अनाथी सन्धि गा० ७२ (स० १६४७ फा० सु० ३ कमूरपुर, हमारे सग्रह मे है) एव कई स्तवनादि प्राप्त हैं । इनके राजसिंह, धर्ममन्दिर आदि कई शिष्य थे । जिनमे राजसिंह कृ० (१) आरामशाभा चौ० (स० १६८७ जे० सु० वाहडमेर) पार्श्व-स्तवन, विमल-स्तवन और जिनराजसूरि गीत हमारे संग्रह मे है । धर्ममन्दिरजी की भावारिवारण स्तोत्र, स० १६५१ सरस्वतीपत्तन मे लिखित प्रति प्राप्त है । धर्ममन्दिरजी के शिष्य महो० पुण्यकलश जी के भी कई स्तवन, हमारे सग्रह मे है । इनके शिष्य जयरग (जैतसीजी) अच्छे कवि हुए हैं, जिनके रचित (१) अमरसेन वयरसेन चौ० (स० १७०० दीवाली जेसलमेर) (२) कयवन्ना चौ० (स० १७२१ वीकानेर) और दशवैकालिक सज्ञायादि उपलब्ध है । जयरगजी के तिलकचन्द्र नामक शिष्य भी अच्छे कवि थे, इनकी प्रदेशी सम्बन्ध (सं० १७४१ जालोर) नामक कृति जैन गूर्जर कवियों के दूसरे भाग मे नौध की हुई है ।

(६) वा० कुशललाम—आप वा० अभयधर्मजी के शिष्य थे । आप अच्छे कवि थे, आपको कृतियें (१) माघवानल चौपई

(सं० १६१६ का० सु० १३ जैसलमेर), और (२) ढोला-मारवण चौ० (स० १६१७ वै० सु० ३ जैसलमेर) आनन्दकाव्य महोदधि मौ० ७ मे प्रकाशित हैं। (३) तेजसार रास (स० १६२४ वीरमगाव), (४) अगडदत्त रास (स० १६२६ वीरमगाव), (५) पूज्य वाहणगीत (देखो हमारी ओरसे प्रकाशित ऐ० जैन काव्य संग्रह) (६) स्तभ ना पाठ्य स्त० (७) नत्रकार छंद (८) भवानी छंद (९) गौडी पाठ्य छंद आदि उपलब्ध हैं।

(७) चारित्रसिंह—आप वा० मतिभद्र जी के शिष्य थे। विद्वान और कवि थे। इनकी निम्नोक्त कृतियों उपलब्ध हैं—

(१) चतु शरण प्रकीर्णक सन्धि गा० ६१ (स० १६३१ जैसलमेर), अन्तिम पत्र हमारे संग्रह में) (२) सम्यक्त्व विचार स्तव० वाला० (स० १६३३ झर्झरपुर—अन्तिम २ पत्र हमारे संग्रह में हैं) (३) कातत्र-विभ्रमात्रचूर्णि (स० १६३५ ? धवलकपुर—श्रीपूज्यजी के स० और कृपा० भं० में है), (४) मुनिमालका (स० १६३६ रिणी—हमारी ओर से प्रकाशित अभयरत्नमार में) (५) रूपक-माला-वृत्ति पत्र ३ (जिनचन्द्रसूरिराज्ये—हमारे संग्रह में), (६) शास्त्रन-चैत्य स्त० गा० ३८, (७) ररतर गच्छ गुर्वावली गा० २१, (८) अटपावहृत्व स्त० गा० २० इत्यादि, कई स्तवन हमारे संग्रह में हैं, एव श्रीपूज्यजी के संग्रह में स० १६३७ के लिखे हुए गुटके में आपके ११ स्तवन, सहायादि हैं।

(८) महो जयसोमजी—आप क्षेमशास्त्रा में प्रमोद-माणिस्यजी के शिष्य थे। श्री जिनमाणिस्यसूरिजी ने स० १६०५-१०

के बोच मे इन्हे दीक्षित कर जयसोम नाम रखा था, इससे पहले स० १६०५ की प्रशस्ति मे आपका पूर्व नाम जेसिंघ लिया है। ये असाधारण मेधावी और प्रकाण्ड विद्वान थे। स० १६४६ के पूर्व मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने आप के पास वीकानेर में ११ अग श्रवण किए थे। स० १६४६ मे सूरिजी के साथ आप भी अकबर के पास लाहौर गए थे। सूरिजी ने वहा मित्ती फाल्गुण शुक्ला २ के दिन आपको उपाध्याय पदसे अलङ्कृत किया था। इन्होंने सम्राट् की सभा मे किसी विद्वान को गद्यार्थ मे निरुत्तर किया था। स० १६७५ मे वैसाख सुदि १३ को शत्रुजय प्रतिष्ठा के समय आप भी श्री जिनराजसूरि-जी के साथ थे। आपने श्रीजिनचन्द्रसूरि विरचित पोषधविधि प्रकरण वृत्ति (रत्ना स० १६१७ पाटण) का पुन अवलोकन करके संशोधित प्रति लिखी थी। कविवर समयसुन्दरजी ने आपका "सिद्धान्तचक्रचक्रवर्ती" विशेषण लिया है। उपा० रत्ननिधानजी आदि भी आपसे सैद्धान्तिक विषयोमे प्रश्नोत्तर किया करते थे। आप कवि भी उच्च कोटि के थे, संस्कृत, प्राकृत और प्रचलित लोक भाषा मे बहुत से गद्य और पद्य ग्रंथो की रचना की, जिनकी सक्षिप्त सूची इस प्रकार है—

(१) डर्यावही पट्टिगिका (स १६४० जिनचन्द्रसूरि आदे-
गात्) प्राकृत गा० ३६, स्वोपज्ञ वृत्ति (स० १६४१), (२) पोषध
पट्टिगिका (स० १६४३) प्रा०, स्वोपज्ञवृत्ति (स १६४५), ये

* राधनपुर में २४ प्रश्न इन्होंने निवेदन किए थे जिसकी प्रति का समयसुन्दरजी लिखित प्रथम पत्र ज्ञानभण्डारमें है।

दोनों ग्रन्थ "जिनदत्तसूरि ज्ञानभण्डार" सूरत से छपे हैं। (३) स्थापनापट्टत्रिशिका (वृत्ति)—इसका उल्लेख कर्मचन्द्र मन्त्रि-वश ग्रन्थ वृत्ति में है। (४) कोडा आविकाग्रत ग्रहण रास, (स० १६४७ अश्वयुतीया), (५) अष्टोत्तरी-स्नात्र विधि (लाहोर में जिन-चन्द्रसूरि) कर्मचन्द्र-मन्त्रि-वश ग्रन्थ (स० १६५० विजयादशमी, लाहोर) जिनचन्द्रसूरि आदेशात् (६) आविकारेखा वृत-ग्रहण रास (स० १६५० कार्तिक सुदि ३), (७) २६ प्रश्नोत्तर-ग्रन्थ (मुल्तानवास्तव्य गोलडा ठाकुरसी कृत प्रश्नों के उत्तर, जिनसिंह-सूरिजी की आज्ञा से लाहौर में), (८) १४१ प्रश्नोत्तर, (विचाररत्नसंग्रह), (९) आदिजिन स्त० (स० १६५५ फाटगुण), (१०) चौबीस जिन गणधर सत्या स्त० (स० १६५६) (११) वयर स्वामी चौ० (स० १६५६), (१२) वारहभाजना सन्धि (बीकानेर स० १६७६-४६) और भी अनेक स्तवन, सझाय, प्रश्नोत्तर उपलब्ध हैं।

इनके बड़े गुरुभ्राता पद्ममन्दिर, गुणरंग और दयारग थे इनका नाम स० १६०५ में लिखित "सारस्वत-दीपिका" की प्रशान्ति मेआता है। वा० गुणरङ्ग कृत शत्रुजय यात्रा-परिपाटी (स० १६१६), सामायक वृद्धिस्त० (स० १६४६ कार्तिक) गा० ३२, अजितसमौसरण स्त०, और अष्टोत्तरशत नवकरवाली मनका स्तवन उपलब्ध हैं। इनके शिष्य ज्ञान-विलास के शि० लावण्यकीर्ति अच्छे कवि थे। जिनका (१) रामकृष्ण चौपई (स० १६७७ वै० सु० ५ बीकानेर वाधन भुवनकीर्ति के साथ), (२) गजसुकुमाल रास उपलब्ध है।

महो० जयसोमजी के ३० गुणविनयजी, तिजयतिलक, सुयगकीर्ति आदि कई विद्वान शिष्य थे। इनमें ३० गुणविनयजी इस शताब्दी के नामाङ्कित विद्वानोंमेंसे एक थे। जिनकी प्रतिभा लगभग समय-सुन्दरजी से समता रखनेवाली है आपकी कृतियोंकी सरलता भी बहुत विशाल है किन्तु उनके सद्ग प्रसिद्धि नहीं है। स० १६४६मे मूरिजी के साथ आप भोलाहोर पधारे थे, वहा आपको समयसुन्दरजी के साथ ही वाचक पद मिला था। स० १६७५ शत्रुजय प्रतिष्ठा के समय आप भी वहाँ पर थे। सवतानुक्रम से आपकी कृतियाँ निम्नाङ्कित हैं —

स० १६४१ रड-प्रशस्ति-काव्य वृत्ति (श्रीपूज्यजी स०), स० १६४४ नेमिदूतकाव्य-वृत्ति—वीकानेर (सेठिया लाय०), स० १६४६ नल-दमयन्ती चपूवृत्ति (सेठिया ला०) और रघुवश टीका (वीकानेर) स० १६४७ प्राकृतवैराग्यशतक वृत्ति०, स० १६५१ सवोध-सप्तति-वृत्ति० स० १६५४ कयवन्ता सन्धि (नेमिजन्म—महिमपुर), स० १६५५मा० व० १० सधरनगरकर्मचन्द्रमन्त्रि वशावलीरास, स० १६५६ तोसामपुर मे कमचन्द्रमन्त्रिवश-प्रबन्ध वृत्ति, स० १६५७ विचार-रत्नसग्रह लेखनम्, स० १६५७ आपाढपूनम पार्श्वस्त० गा० २७, स० १६५६ लघुशान्ति टीका (पत्र ४ हमारे सग्रह में), स० १६६० चार मंगल गीत गा० ३२, स० १६६२ चै० सु० १३ वृ० अजना-सुन्दरी प्रबन्ध, स० १६६३ फा० सु० १३ शत्रुजय यात्रा स्त०, स० १६६३ चे० शु० ६ सम्भात-ऋषिदत्ताचौ०, स० १६६४ इन्द्रिय-पराजयशतक वृत्ति, स० १६६५ गुणसुक्त

प्रबन्ध नवानगर व्या० कृ० ६ (हमारे सग्रह में) और कुमतिमन
खण्डन (नवानगर—जिनसिंहसूरि आदेशान्-‘ जिनदत्तसूरि ज्ञान-
भण्डार’ सूरत से प्रकाशित , स० १६७० आ० शु० १० वाहडमेर
जवूरास (हमारे सग्रह में), स० १६७२ जैसलमेर पार्श्व स्त० गा०
१६ सस्कृत, स० १६७४ कातोपूनम—वन्ता शालिभद्र चौ०
(श्रीमालमानसिंह आप्रहसे-श्रीकानेर ज्ञान भ०), स० १६७४ मात्र
सु० ६ बुध मालपुर—अचलमत स्वरूप वर्णन, स० १६७६
जिनराजसूरि अष्टक और इसी सन के चैत्र कृ० २ निजाजि पार्श्व-
नाथ स्त०, स० १६७६ राडद्रहपुर तथा ५१ बोल चौपड सटीक—
आपका यह अन्तिय ग्रन्थ समस्त कृतियोंके कलज या शिखरक
सदृश है, इसमें सैकड़ों ग्रथोंके प्रमाण उद्धृत करके तथा गच्छाला
के ५१ बोलों का निराकरण किया है ।

इस कृति के पत्र ८ से ४० स्वयं लिखित श्रीपूज्यजी क संप्रह में
है, मूल मात्र की सम्पूर्ण नकल हमारे सग्रह में है ।

बिना सक्त् की स्वयं लिखित पचासों छोटी कृतियों हमारे सग्रह में
है, किन्तु ग्रथ-विस्तारके भयसे उन सत्रका उल्लेख नहीं किया गया
है । कतिपय उल्लेखनीय अन्य कृतियों की सूची इसप्रकार है —

(१) लुपकमनतमोदिनकर चौ० (पत्र १३४ जयपुर ज्ञान-
भण्डार), (२) जिनरहभीय अजित-शान्ति वृत्ति, (३) सञ्चय
शब्दार्थ समुच्चय, (४) चरण-मत्तरी करण-मत्तरी भेद (हमारे
सग्रह में), (५) साधु समाचारी व्या० (प० १६ श्रीपूज्यजी स०)
(६) विजयतिलकोपाध्याय कृत आदिस्त० बालाग० (ज्ञानन्या

के आग्रह से बापडाड मे रचिन, अन्तिम पत्र सप्रह मे), (७) प्रणिपातवरदण्डकवाग (णमुत्थुण वाला० स्वयलिखित हमारे संप्रह मे है), (८) प्रश्नोत्तर (ज्ञान-भण्डार), (९) अगडदत्तरास (प्रथम पत्र सप्रहमे), (१०) शत्रुञ्जय-यात्रा परिपाटी स्त० गा० ३२ (सं० १६४४ वीकानेरी सब का—हमारे सप्रह मे पत्र २), (११) ररतर गच्छ गुर्वावली गीत इत्यादि ।

आपके गुरुभ्राता (१) विजयतिलक शि० तिलकप्रमोद शि० भाग्य विशाल थे, जिनकी लिखी हुई गुणावली चौ० पत्र ७ वीकानेर ज्ञान-भण्डार (महिमाभक्ति विभाग) में है । (२) सुयशकीर्ति का सखेश्वर पादर्व स्त० गा० २५ (स० १६६६) हमारे सप्रह मे है ।

वा० गुणविनयजी के मतिकीर्ति नामक अच्छे विद्वान शिष्य थे, जिनकी (१) निर्युक्ति स्थापन (स० १६७६ विद्वत् लावण्य-कीर्ति आग्रह, पत्र १८ क्षमाकृपाणजी-भण्डार में), (२) लख-मसो कृत्न २१ प्रश्नोत्तर (जिनराजसूरि राज्ये पत्र २६ वीकानेर ज्ञान-भण्डार), (३) गुणकृत्वशोडपिका (जयपुर-भण्डार), (४) ललिनाग रास (पत्र ७—अपूर्ग हमारे सप्रह मे है), (५) लुपकमतोत्थापक गीत गा० ६१, (६) धर्मबुद्धिरास (सं० १६६७) और भी कई स्तवनादि उपलब्ध हैं । वा० मतिकीर्तिजी के शिष्य सुमतिसिन्धुर रचित पादर्वस्तवन (स० १६६६ मा० सु० ८ जै० गु० क० पृ० ५७४ मे नौध है) सुमतिसिन्धुरजी के कीर्तिविलास आदि कई शिष्य थे, जिनके रचित कई स्तवनादि मिलते हैं । मतिकीर्ति के दूसरे शिष्य सुमतिसागर थे, जिनके शिष्य कनककुमार शि०

कनकविलास कृत देवराज वच्छराज चौ० (स० १७३८ जेसलमेर)
उपलब्ध है ।

उपाध्याय जयसोमजीकी शिष्य परंपरा १६ वीं शताब्दी तक
विद्यमान थी । उनके नामोकी सूची हमारे सप्रह में हैं ।

(९) ज्ञानविमलोपाध्याय—सुप्रसिद्ध उ० श्रीजयसागरजी
की शिष्य परंपरा में आप भानुमेरुजी के शिष्य थे । आपने स०
१६५४ में बीकानेर में शब्दप्रभेद नामक व्याकरण ग्रंथपर टीका
वनाई । इनके शिष्य उ० श्रीबलभजी भी उद्भट द्विद्वान थे उन्होने
(१) स० १६५४ शीलोब्धुनाम-कोष पर टीका, (२) स० १६६१
जोधपुर में लिङ्गानुशासनपर दुर्गपठ प्रबोध नामक वृत्ति, (३) स०
१६६७ जोधपुर में अभिवाननाममालावृत्ति (श्रीपूज्यजी के सप्रहमें),
(४) त्रिजयदेव महात्म्य—जो कि आपके आदर्श गुण-प्रादुर्भूतता का
परिचयक है यह ग्रन्थ श्रीजिनविजयजी के सपादकत्व में प्रकाशित
हो चुका है । आप बड़े मिलनसार और सब गच्छोके प्रति समभाव
रखनेवाले थे स० १६५५ में जब आप बीकानेर आये तब उपरुश
गच्छीय सिद्धमूरिजी के कथन से । (५) “उपदेश शब्द व्युत्पत्ति”
वनाई थी । डॉ० बृह्म साहवने अपनी रिपोर्ट में आपका एक
(६) अरनाथ स्तुति सवृत्ति नामक ग्रन्थ भी नोध किया है ।

(१०) हंसप्रभोद—आप श्री जिनदुर्गलसूरिजीकी शिष्य
परंपरा में हर्षचन्द्रजी के शिष्य थे । आपका सारंगसारवृत्ति
(स० १६६०) नामक ग्रन्थ ७ भाषा कृतियों में वरकाणा

स्त० (सं० १६५३ मिगसर) आदि उपलब्ध हैं। स० १६७७ मेडता के शिलालेखों में आपका नाम आता है।

आपके शिष्य चारुदत्तजी कृत् कुशलसूरि स्त० (सं० १६६६ मि० कृ० ७), सैत्रावा स्त० (सं० १६७६ श्रावणसु० १), मुनि सुव्रत स्त० (जोधपुर, सप्तवाल श्रीमलशाह कारित प्रासाद स्त० स० १६६६) आदि उपलब्ध हैं। इनके शि० कनकनिधान कृत रत्नचूडरास (स० १७२८ आ व० १० श्री पूज्यजी के संग्रह में है)।

३० हसप्रमोदजी के पुण्यकीर्ति नामक शिष्य अच्छे कवि थे, इनका (१) रूपसेनराज चौपड़ (स० १६८१ विजयादसमी मेडता), (२) मत्स्योदर चौ० (१६८२ कृपा भ०) (३) पुण्यसार रास (स० १६६६ विजयदशमी सागानेर) उपलब्ध हैं। इनके अतिरिक्त जैन-गूर्जर-कविओं प्रथम भाग में (४) धन्ना चरित्र (सं० १६८८ भा० सु० १३ रवि० वीलपुर) और (५) कुमार मुनिरास की भी नोंध है।

(११) सूरचन्द्र—आप श्रीजिनभद्रसूरि-शाखा में वा० वीरकलशजी के शिष्य थे। इनका बनाया हुआ (१) पचतीर्थी श्लेपालङ्कार चित्रो (अपूर्ण पत्र ६ वीकानेर ज्ञान-भण्डार), अलङ्कार साहित्य में एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है, [ग्रंथ अपूर्ण होनेसे रचना-काल अज्ञात है। (२) जैनतत्त्वमार (स० १६६६ आश्विन पूर्णिमा बुध० अमृतसर) यह उत्तम रचना-शैलीवाला ग्रन्थ हिन्दी और गुजराती भाषानुवाद सहित छप चुका है। (३) चौमासी व्याख्यान (जयचन्द्रजी का भण्डार), (४) वर्ष फला-

फल ज्योतिष सञ्जाय गा० ३६ और (५) जिनदत्तसूरि स्त० गा० १७ हमारे संग्रह में है। आपकी कविता बड़ी मुन्दर और रोचक है। सम्भव है कि कविवर ऋषभदामने प्रसिद्ध कवियों के नाम में जिन "सूरचन्द्रजी" का नामोद्लेख किया है, वे ये ही हों। लेकिन कृतियों की प्रचुर सख्या न मिलने से निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

(१२) उ० शिवनिधान—आप श्रीजिनदत्तसूरिजीकी शिष्यपरंपरा में, वा० हर्षसारजीके शिष्य थे। ये वे ही हर्ष-सारजी हैं, जिनके अकबर से मिलने का उल्लेख पृ० ६४ में कर चुके हैं। उ० शिवनिधानजीने उस समय की लोकप्रचलित गद्य भाषा में विधि विधान आदि ग्रन्थ रचकर उपकार किया है। इनके रचित (१) कल्पसूत्र वालावबोध, (२) समहणीवाला (३) चौमासी व्या०, (४) लघुविधिप्रपा—जिसमें २८ विधि-विधानों का सरल विवेचन किया है, (५) कृष्ण-रत्नमणी वैलि ट्या० और कई स्तवनादि छोटी कृतियाँ भी उपलब्ध हैं।

इनके (१) महिमसिंह (मानकवि) नामक शिष्य अच्छे कवि हुए हैं, जिनके (१) कीर्तिधर-मुकेशल ग्रन्थ (स० १६७० दीवाली, पुष्करण), (२) मंतार्यऋषि सम्बन्ध चौ० (स० १६७० पुष्करण), (३) क्षुद्रकुमार चौ०, (४) हसराज बच्छराज ग्रन्थ (स० १६७५—श्रीयुक्त मो० ट० देसाइ के संग्रह में), (५) अर्हदास सम्बन्ध (स० आसकरण पुत्र कपूरचन्द्र के आग्रह से—राय

बद्रीदास बहादुर के म्यूजियम कलकत्ता में प्रति है), (६) मेघदूतवृत्ति (सं० १६६३ शिष्य हर्षविजय पठनार्थ) आदि ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

उ० शिवनिवानजी के (२) मनिमिह नामक भी शिष्य थे। उनके शि० वा० रत्नजय कृत आदिनाथपञ्चकल्याणक स्त० गा० २४ और उनके शिष्य दयातिलक कृत धन्नारास (सं० १७३७ कार्तिक), 'भवदत्त चौ०' (सं० १७४१ जे० सु० ११ फतैपुर—कवि के स्वयं लिखित प्रति श्रीपूज्यजी के सग्रह में है), (३) सिंह-विनय—इनके रचित उत्तराध्ययन गीत (सं० १६७५ आ० व० ८) उपलब्ध हैं।

(१३) सहजकीर्ति—आप क्षेमकीर्तिशाखा में श्री हेमनन्दनजी (सं० १६४५ सुभद्रा चौ० कर्ना, जयपुर-भण्डार) के शिष्य थे। आप प्रकाण्ड विद्वान और उत्तम कवि थे। लौट्रवपुर के शिलापट्ट पर उत्कीर्ण "शतदलपद्मयत्रमय श्रीपाठर्व स्तव०" (सं० १६८३ कार्तिक शुक्ला १५) आप की ही अद्वितीय कृति है। जैन लेख सग्रह (भाग ३) में बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर एम० ए० बी० एल० लिखते हैं—शिला पट्टपर खुदा हुआ ऐसा उत्तम काव्य अन्यत्र देखने में नहीं आया। इससे आपके पाण्डित्य का अच्छा परिचय मिलता है। आपकी निम्नोक्त कृतियों उपलब्ध हैं —

(१) देवराज चौ० (सं० १६७२ जयपुर भ०), (२) वच्छ-राज चौ० (पत्र ३७ हमारंसग्रह में), (३) शत्रुञ्जय महात्म्य राम (सं० १६८४ आसनीकोट जय० भ०), (४) सागरसेठ चौ० (सं० १६७५ बीकानेर, श्रीपूज्यजी सं०), (५) हरिश्चन्द्र

चौ० (स० १६१७ जे० सु० १५ कर्णपुरी) जोडसहीर (स० १६२१ नागोर), उपलब्ध है। इनके शिष्य हेमानन्द थे, जिनके रचित वेतालपचीसी (स० १६४६ इन्द्रोत्सव दिन) और भोजचरित्र-चौ० (स० १६५४ भदाण्ड) आदि प्राप्त हैं।

(१७) जयनिधान—आप वा० राजचन्द्रके शिष्य थे। इनका बनाया हुआ (१) धर्मदत्त धनपति रास (अहमदाबाद) (२) सुरप्रिय रास (मुलनान) और कई छोटी कृतिएँ उपलब्ध हैं।

श्री कीर्तिरत्नसूरि परम्परा —

(१८) लब्धिकल्लोल—आप वा० विमलरगके शिष्य थे। श्री “जिनचन्द्रमूरि अकरर प्रतिबोध रास” और बहुतसी गहुलियें आपकी रचित उपलब्ध हैं। इनके २ शिष्य थे (१) गङ्गदास—इनके रचित वकचूलरास (स० १६७१ आ० सु० २ पातीग्राम) मिलता है (२) ललितकीर्ति—अगडदत्त रास (स० १६७६ जे० सु० १५ भजनगर), कर्त्ता, इनके शिष्य राजहर्ष थे जिनके रचित थावच्चा सुकोशल रास (स० १७०३ माघ सु० १३ वीकानेरमे) उपलब्ध है।

(१९) हृषिकल्लोल—इनके शिष्य ‘चन्द्रकीर्ति’ कृत यामिनी भानु मृगावती चौ० (स० १६८९ आषाढ सुदी ७ बाहडमेर) उपलब्ध है।

(२०) भावहर्षोपाध्याय—इनका नाम पृ०१६ की फूटनोट (त्रियोद्वार कर्त्ताओं में) आता है। आपके रचित कई स्तवनादि । स० १६२६ पर्यन्त आप सूरिजी के आज्ञानुयायी थे। पश्चात् आपसे “भावहर्षीय शारदा” नामक गच्छ-भेट

स्त० (गा० ७६), गुणस्थानक्रमारोह चाला० (स० १६७८) आदि छोटे बड़े और भी कई स्तवन उपलब्ध हुए हैं।

हेमनन्दनजी के यतिन्द्र (?) नामक भी एक शिष्य थे जिन्होंने दशवैकालिकचाला० स० १७११ में बनाया।

नोट —पृ० १९ में उल्लिखित उ० कनकतिलकजी (क्रियोद्धार कर्ता) के शि० लक्ष्मीविनय शि० रत्नसारके शिष्य उपरोक्त हेमनन्दन और रत्नहर्ष जी थे। इनकी परम्परा १९ वीं शताब्दि तक विद्यमान थी, नाम भी हमारे सग्रह में है।

(१४) शुभवर्द्धन—इनका नाम पृष्ठ १६ की फुटनोटमें क्रियोद्धारकर्त्ताओं में आता है। इनके शिष्य सुवर्मरुचि कृत (१) आपाढभूतिरास, (२) गजसुकुमाल रास, (१७ ढाल स० १६६६ लिखित) उपलब्ध है।

मागरचन्द्रसूरि परम्पराके विद्वान—

(१५) ज्ञानप्रमोद—सं० १६२१ वाग्भटालङ्कारवृत्ति कर्ता। इनके शिष्य विशालकीर्ति व्याकरण के अच्छे विद्वान थे। जिनका “सरस्वती” विरुद्ध था। इन्होंने ईडर राज सभामें जयप्राप्त की थी। इनके रचे ‘प्रक्रियाकौमुदी’ आदि कई ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं। आपके शिष्य हेमहर्ष के शिष्य (१) अमर (२) रामचन्द्र—शिष्य अभय-माणिस्य शि० लक्ष्मीविनय कृत अभयकुमार रास (सं० १७६१ फा० शु० ५ मरोट) और ढुढक मतोत्पत्ति रास मिलते हैं। आपकी परम्परा में भीनासर के यति सुमेरमलजी विद्यमान हैं।

(१६) होरकलश—आपका (१) सम्यन्त्व कौमुदी रास (सं० १६२४ मा० सु० १५ वु० सवालक्ष देग), (२) कुमतिविध्वंशन

पुनरुत्थां प्रकरण

भक्तश्रावक जग



म्राट अरुवरके शासनकाल मे जैन धर्मावलम्बी करोडो की सख्या मे थे । भक्तियाद का जमाना था, लोगो का हृदय धार्मिक श्रद्धा और भक्ति से ओत प्रोत था, स्वधर्मा बन्धुओ के प्रति वात्सल्य और सद्गुरु के प्रति आदरणीय पूज्य-भाव छलकता था ।

उस समय के अनेक सुश्रावक स्थान-स्थान मे प्रतिष्ठाप्राप्त, राजमान्य, आमात्यादि उच्चपदाधिकारी, वैभव सम्पन्न, दानी, वीर और धर्मिष्ठ थे ।

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के भक्त-श्रावको की सख्या लाखो २ पर थी । भारत-भूमि के प्राय सभी प्रान्तो मे

* यथा हस्त प्रभाषातिशयममिदधुर्मत्रिकर्मादिचन्द्रा ।

श्रोमत्साद्विश साहेरकर नृपते प्राप्त सभ्य प्रतिष्ठा ॥

स्थाने स्थाने प्रकृष्टा नरपति विदिता श्रावका ऋद्धिमन्त

सधाध्यक्षा विपक्षप्रतिभयजनका लक्ष सख्या विशेषात् ॥ ७ ॥

[षादी हर्षनन्दन कृत "मध्यान्ध व्याख्या" स० १६७३]

हुआ। इनका विशेष परिचय “ऐतिहास-जैन-काव्य-संग्रह” में देरना चाहिये।

(२१) विजयमेरु—इनके रचित “हसराज वच्छराज प्रबन्ध” (सं० १६६६ लाहौर) उपलब्ध है।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के आज्ञानुवर्तियों साधु सङ्घ में अनेक विद्वान और अनेक कवि थे। किन्तु विस्तार भय, विषय की निरसता एवं अधिक लिखना विषयान्तर हो जाने के कारण उनका परिचय नहीं लिखा गया है। उपरोक्त विद्वानों के परिचय में भी हमने बहुत ही संक्षेप किया है। वीकानेर ज्ञानभण्डार की सूचियों, नोटस् इत्यादि सामग्री परिचय लिखने के समय पास में न होनेसे बहुत सी अप्रसिद्ध कृतियों का परिचय भी नहीं लिख सके। भविष्य में हमारे सहृदय पाठकों की अभिरुचि हुई और तथाविध अवसर मिला तो गवेषणा-पूर्ण विस्तृत आलोचना करने की अभिलाषा है।



अश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ सवर्ण नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

धोसवाल जाति के पुनीत इतिहास में वच्छावत वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल फीर्ति-कौमुदी का “कर्म-चन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध से” विस्तृत वर्णन है। वीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। सक्षिप्त में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरखाओं की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

वच्छावत वंश को जैनवर्मानुरागी बनाने का श्रेय सरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफ़ी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिनका विशेष परिचय “कर्म-चन्द्र वंश प्रबन्ध” से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० मप्राम सिंहजी और कर्मचन्द्रजीका सक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र मप्रामसिंहजी सरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिला-चार को हटा कर सुग्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुराब थी।

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसुरि



राजमान्य मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ सवर्ण नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में वच्छावत वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल कीर्ति-कौमुदी का "कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध से" विस्तृत वर्णन है। धीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। सक्षिप्त में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि धीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरखों की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

वच्छावत वंश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय सरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफ़ी अद्वाञ्छलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध" से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० सप्राम सिंहजी और कर्मचन्द्रजीका सक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र सप्रामसिंहजी सरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के त्रिविध-आचार को हटा कर सुव्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि



राजमान्य मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ सवर्ण नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में वच्छावत वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल कीर्ति-कौमुदी का “कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध से” विस्तृत वर्णन है। वीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। सक्षिप्र में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरखों की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

वच्छावत वंश को जैतधर्मानुरागी बनाने का श्रेय सरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृपणता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी अद्वाञ्छलि समर्पण की है। जिनका विशेष परिचय “कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध” से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० सप्राम सिंहजी और कर्मचन्द्रजीका सक्षिप्र परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र सप्रामसिंहजी सरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिलाचार को हटा कर सुव्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि



राजमान्य मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनको महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ सवग्न नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में वच्छावन वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल फीर्ति कौमुदी का "कर्म-चन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध से" विस्तृत वर्णन है। वीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। मक्षिण में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरस्कारों की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

वच्छावत वंश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय सरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्म-चन्द्र वंश प्रबन्ध" से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले ३० सप्राम सिंहजी और कर्मचन्द्रजीका सक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र सप्रामसिंहजी सरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिल-स्वार्थ को हटा कर सुन्यमन्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।

स० १६१३ में जब सूरिजी ने क्रियोद्धार किया, तब आपने बहुत-सा धन शुभ कार्यों में विनोर्ण किया था * । जिसका उल्लेख हम तीसरे प्रकरणमें कर आये हैं । इन्होंने अपने मातुश्री के पुण्यार्थ पौषवशाला निर्माण कराई, और २४ बार बीकानेर में चादी के रूपयो की लाहण की । राय कल्याणसिंहजी के आप मन्त्री थे, और हसनकुलीखान से आपने ही सन्धि की थी । तीर्थाधिराज शत्रुञ्चय की यात्रा कर वापिस-आते हुए मेवाडाधिपति महाराणा उदयसिंह से आप सम्मानित हुए थे । चतुर्विध-संघ और श्रुत ज्ञान-की भक्ति में आपने बहुत-सा द्रव्य व्यय किया था । स० १६११ में इनके कथन से श्री० सायुकीर्तिजी ने "सप्तस्मरण-बालावबोध" रचा, जिसकी प्रति श्री पूज्यजो के रूपह में है ।

आपके सुरताण देवी, भगवता देवी और सुरुपा देवी नाम की सिद्धान्त श्रमण रक्ता और धर्मपरायणा भार्या त्रय थीं ।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र और जसवंत × आपके ही पुत्र-रत्न थे ।

* श्रीजिनचन्द्र सूरिणा, समप्र गुणशालिनाम् ।

क्रियोद्धार महश्चक्रे, येन वित व्ययेन वै ॥ २४ ॥

[कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध]

× बछावतो की पद्य वशावली से ज्ञात होता है कि कर्मचन्द्र के बीकानेर छोड़ने के पश्चात् ये राजा रायसिंह के पास रहे थे । एक समय थटा नगरको विजय करने के लिये सम्राट ने अपनी सभा में बीडा फेरा, अन्य किसी के न लेने पर राजा रायसिंह ने वह बीडा उठाया और बहुत-सी सेना लेकर युद्ध के निमित्त थटा गये । इस समय जसवन्त ने अपनी

वात्यकाल में ही कर्मचन्द्र की प्रतिभा के परिचायक हाथ-पावों की शुभ रेखाएँ और लक्षणों को देख कर राय कल्याणसिंहजी ने सम्राट सिंहजी की मृत्यु के अनन्तर इन्हें आमात्य पद दिया। इन्होंने शत्रुञ्जय, आवू, गिरनार, स्तम्भ तीर्थ आदि की सपरिवार यात्रा की। ये राजनीति, युद्धकला, मन्वि कराने में कुशल होने के साथ-साथ वीर, दानी और धर्मात्मा भी थे।

स्वामीभक्ति और धीरता का अच्छा परिचय दिया, जिससे महाराजा ने प्रसन्न होकर बहुत सम्मानपूर्वक इन्हें "मन्त्रि पद" पर नियुक्त किया। जयवन्त जैसे घीर थे वैसे दानी भी थे। सांकर को आपने बहुत सा दान दिया था। गद्य घशावलीमें आप को मृत्यु कुवर भीमराज की अकृपा के कारण हुई लिखा है। इनको सन्तति के विषय में पृ० २३४ में गद्य घशावलीका फूटनोट देखें।

* ये गद्य जैतसीनो क पुत्र थे। इनका जन्म स० १५७५ भाव सु० ६ को हुआ। स० १६०१ पोष सुदि १५ को बीकानेर की राज-गद्दी पर पर बैठे। इन्होंने शत्रुके हाथ में गण हुए बीकानेर राज्य को पुन प्राप्त किया। स० १६२८ के वसाख वदि ५ को इनका देहान्त हुआ।

इन्होंने कर्मचन्द्र को आमात्य पदपर नियुक्त किया, कर्मचन्द्र ने सम्राट की कृपा में इन्हें जोधपुर के राज्य गराक्ष में बेठाने का गौरव प्राप्त किया था, उस घटना को यदि कल्याणसिंहजी के स्वगवासते ३-४ वर्ष पूर्व मान ली जाय, तो कर्मचन्द्र के मन्त्री होने का समय स० १६२५ के पूर्व होता है। अगर उस समय उनकी अवस्था लगभग २०-२५ वर्ष की भी अनुमानित करें, तो कर्मचन्द्रजी का जन्म स० १६०० के लगभग होना सम्भव है।

एक धार राय कल्याणसिंहजीने जोधपुर के राज-गवाक्ष में बैठ कर कमल पूजा करने का अपने पूर्वजों के दुस्साध्य और चिर-कालीन मनोरथ, मन्त्रीश्वर के समक्ष प्रगट किया। उन्होंने अपने स्वामी की भक्तिवश कुमार रायसिंहजी के साथ सम्राट अकबर के पास जाके उनको प्रसन्न कर, इस विषय और कठिन कार्य को भी सिद्ध कर दिया। मन्त्रीश्वर की इस सेवा से प्रसन्न होकर राय कल्याणसिंहजी ने उन्हें मनोवाञ्छित मागने को कहा, किन्तु उन्हें तो वैभव से भी धर्म अधिक प्रिय था, इससे अन्य कुछ भी न चाह कर यह याचना की (१) चातुर्मास में कुम्भार, हलवाई, तेली वगैरह, अपने तिल पीडनादि हिंसात्मक कार्य न करें। (२) वणिकों से "माल" नामक कर लिया जाता है और जकात, जो कि चतुर्थांश ली जाती है, भविष्य में न ली जाय। (३) वकरी, भेड, उरभ्रादि का कर न लिया जाय। नरेश ने इन बातों की सहर्ष स्वीकृतिके साथ विशेष कृपा का परिचायक चार गाव का (वश परम्परा तक) पट्टा प्रदान किया।

दिल्ली पर आक्रमण करने जाने हुए 'इब्राहिममीर्जा' को नागौर के

* सम्राट को प्रसन्न करने का कारण "ओसवाल जाति के इतिहास" में लिखा है कि जिस समय कर्मचन्द्र दिल्ली (?) दरबार में गये, तब सम्राट सतरंज खेल रहे थे। सतरंज की चाल रुकी हुई थी, क्योंकि जो चाल चलते, उसी में वे हारते थे। कदा जाता है कि कर्मचन्द्र ने सतरंज की ऐसी चाल बतलाई कि बादशाह विजयी हो गए और मन्त्रीश्वर पर रूब प्रसन्न हुए।

पास कुमार रायसिंहके साथ मन्त्रीश्वरने सप्राप्त करके पराजित किया। सम्राट की मदद के लिये गुजरातपर चढ़ाई करके 'मीर्जा महमद हुसैन' से युद्ध कर विजय प्राप्त की। सन्धिबिप्रदादि में अपनी निपुणता और बुद्धि वैभवं से, सोजत समियाणा और आवू देश को सर किये। जालोर के अधिपति को वश कर रायसिंहजी के पाय नामी किया। सम्राट से आज्ञा प्राप्त कर मुगल सेना से आक्रमित आवू तीर्थ की रक्षा और वहां के चैत्यों की पुनः सुव्यवस्था की। शिवपुरी से आये हुए बन्दीजनोंको अपने घर लाकर सम्मानित किया। आवू-के मन्दिरों को स्वर्णदण्ड, ध्वज और कलश चढ़ाकर सुशोभित किये। समियाणा के बन्दीजनों को रायसिंहजी की कृपा से सैनिकों के हाथ से छुड़ाया।

स० १६३५ के महादुष्काल के समय १३ महीने तक मन्त्रीश्वर ने दानशाला खोल कर दीन, हीन, गोगमस्त व्यक्तियों को खान-पान, चरख औषध आदि देकर प्रशमनीय सहायता की। वह सहायता सकुचित क्षेत्र में न हो कर, जो कोई भी चाहे किसी धर्म और जातिका हो, प्रदान की गयी। स्वजातीय और स्वधर्मियोंकी तो बात ही क्या ? वर्षभर के खरब योग्य द्रव्य उनके घर गुप्त-रूप से पहुंचा दिया गया। १३ मास के पञ्चात्सुकाल हो जानेपर आश्रितों को अपने खरब से साथी ढेर स्वस्थान पहुंचा दिये।

स० १६३३ में तुरमम खान ने सीरोही लूटी। वहां से १०५० जिन प्रतिमाएं लेकर फतहपुर में सम्राट अकबर को पेश कीं। सम्राट ने अपने धर्म-सहिष्णुता गुण से कर सोने निकालना निषिद्ध

करके एक अच्छे स्थान में हिफाजत से रखने का आदेश दिया, और यह भी कहा कि मेरी आज्ञा के बिना किसी को मत देना। जैन सघ में उन प्रतिमाओं को पुनः प्राप्त करने की आतुरता बढ़ने लगी। लेकिन सम्राट से मिल कर उनकी आज्ञा प्राप्त करना भी तो कोई सहज नहीं था। ५-६ वर्ष बीत गये, किन्तु जिनविम्बो को छुड़ाने में कोई समर्थ न हो सका। जब यह बात मंत्रीश्वर कर्मचंद्र ने सुनी तो उनके हृदय में बहुत अलसरी और येनकेनप्रकारेण लाखों रुपये खर्च करके भी उन्हें प्राप्त करने के लिये अपने स्वामी रायसिंह से निवेदन किया। इस पर वे भी मंत्रीश्वर के साथ हो गये और सम्राट अरुण को बहुत सी भेंटें करके प्रसन्नता प्राप्त कर ली। उनके मागने पर सम्राट ने समस्त प्रतिमाएँ उन्हें सुपुर्द करने का फरमान दे दिया।

स० १६३६ के मिति आपाठ शुक्ला ११ गुरुवार के दिन उन प्रतिमाओं को प्राप्त करके, डेरे में लाए, जैन सघ बहुत हर्षित हुआ। मंत्रीश्वर ने इस कार्य से शासन की अपूर्व सेवा की। फतैपुर से समस्त प्रतिमाएँ अपने साथ बीकानेर ले आये और महोत्सवपूर्वक अपने घर देहरासर में स्थापित की ×।

× इस विषय के हमें दो तत्कालीन स्तवन उपलब्ध हुए हैं, उन्हीं के आधार से यह वृत्तान्त लिखा गया है, वे स्तवन भविष्य में हमारी ओर से प्रकाशित होनेवाले “बीकानेर जैन लेख संग्रह” में प्रकाशित होंगे।

इन प्रतिमाओं में मूलनायक श्री घामुपूज्य स्वामी की चौबीसी-मूर्ति आज भी “वासपूज्यजी के मन्दिरमें विद्यमान है। अन्य प्रतिमाएँ भी

सम्राट् अकनर ने प्रसन्न होकर बच्छराज के वंशजों की मन्त्रि-पत्नियों के पैरों में तुपूर आदि सोने के आभूषण पहनने की आज्ञा देकर बच्छावत वंश का महत्त्व बढ़ाया। इससे पहले ओसवाल वंशज 'साधु-सागर' के घराने की स्त्रियों के अनिरिक्त दूसरों के लिए यह आज्ञा नहीं थी।

तुरसमयान के गुजरात से लाए हुए वणिक्-कैदियों को बहुतसा द्रव्य देकर छोड़ाया, जैन याचकों को बहुतसा दान दिया, शत्रुञ्जय और मथुरा के जीर्ण चैत्यों का उद्धार कराया। प्रति-देश प्रतिग्राम प्रतिपुर में यावन कागुल पद्यंत सर्पत्र "लाहण" की। ७० श्री जय-मोमजो के पास ११ अग श्रीचंद्र के साथ बीकानेर में श्रवण किये, श्रुतज्ञान की भक्ति के निमित्त सिद्धान्तों के लिखाने में बहुत सा द्रव्य व्यय किया।

एक बार बीकानेर में सूरिजी से "भगवती सूत्र" श्रवण किया और भगवान महावीर के प्रति गणधर गौतमस्वामी के किए

कई वर्षों तक उक्त मन्दिर में प्रति दिन पूजा जाती थी। परचात् इतनी प्रतिमाओंका पूजन-प्रयत्न कठिन होने से या किसी अन्य कारण से जन-सघ ने श्रीचिन्तामणिजी के मन्दिर के भूमिप्रद में रख दी। उन प्रतिमाओं को समय-समय पर उपद्रव और महामारी आदि रोग उपशान्तिके निमित्त भूमिप्रद से निकालकर अष्टान्दिक मद्दोत्पत्तादि किया जाता है। हाल ही में स० १९८७ के मितो कार्तिक शुक्ल ३ को निकाल कर मितो मार्गशीर्ष कृष्ण ४ को घापिस भीतर रखी गई थी।

हुए प्रत्येक प्रश्नपर मुक्ताफल (मोती) चढाए। इस आगममे ३६००० प्रश्न होने से मोतिया की सख्या भी ३६००० ही हुई, जिनमे १६७०० मोती चन्द्रवे में, ११६०० पृथिवे मे अवशेष पूठा ठवणी, कवली, साज, बीटागणा आदि मे लगाए गए ।-

† क्षमाकल्याणोपाध्याय कृत भगवती सूत्र सज्ञाय में —

बोकानेर तणो बलि मन्त्री, कर्मचन्द्र इण नाम ।

तिण गौतम गुह ना नाम पूज्या, मुक्ताफल अभिराम ॥ १३ ॥

५० दीपविजय कृत भगवती सूत्रकी गहली में :—

“कर्मचन्द्र मोतीडे बधाई, कीन भगत गुह सेवा ।

भगवती सूत्र छणो बहु भाये, चाखो अमृत मेवा ॥ ६ ॥

* श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि-ज्ञानभण्डार की एक ख्यात में लिखा है —

“द्विने राजा रायसिंहजी रे घारे मुहते करमचन्द्र शहर उधेली ने बसायो, जात आप आप री बास (गुवाड) मे बसाया × × × × रायसिंहजी पातसा रे पगे लागा अर मुहते करमचन्द्र ने लेकर गुजरात चह्या उठे राड जीत्या । पछे पातसाह सु मुहते करमचन्द्र मुजरो कियो । तरे पातस्या कछो मांग कर्मचन्द्र ! मै तूठा, पछे पातस्या सुं अरज कर ५२ परगना राजा रायसिंह ने दराया × × × × उपासरो महात्मा नीचे देख के आपरी घोडा री घुडसाल री जागा उपासरो करायो । देहरो १ चौवीसटैरो, २ बासपूजजी रो, ३ नमिनाथजी रो इम तीन देहरा पचा रे छोटे घाल्या पछे श्रीपूज्यजी पासे भगवतीजी छण्या, पूण हुवा ३६००० मोती चढाया तरै श्रीपूज्यजी कछो माहरे कइ काम नहीं अर ज्ञान काम में लगावो । तरे १६७०० मोती रो चदरवो करायो, ११९०० मोती को पृथीषो करायो बाकी रा पूजा ठवणी साज बीटागणा र लगाया धणो द्रव्य खरच्यो”

मन्त्रीश्वर कमचन्द्र के उद्योग से बीकानेर-नरेश रायसिंह पाँच हज़ारी पद को प्राप्त हुए, 'राजा' पदसे विमूषित हुए। "राजपुताने के जैन वीर" नामक ग्रन्थ में लिखा है कि जयपुर के राजा अभयसिंह ने बीकानेर पर आक्रमण किया तब मन्त्रीश्वर ने ही अपनी प्रखर बुद्धि द्वारा शत्रु से सन्धि करके राज्य की रक्षा की थी। सक्षेपमें इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि मन्त्रीश्वर ने बीकानेर राज्य की सेवा और स्वामी-भक्ति करने में कोई कसर नहीं रखी। बीकानेर राज्य के इतिहास में लिखा है कि सं० १६४५ में बीकानेर का वर्तमान दुर्ग बनाना आपने ही प्रारम्भ किया था।

अन्यदा किसी कारण* से रायसिंहजी का चित्त-कालुष्य जान

* कर्मचन्द्रमन्त्रि-वश प्रबन्ध (१६५०) वृत्ति में — "अथ अनन्तर अन्यदा अन्यस्मिन् काले दैव शुभाशुभ कर्म दैव योगाद् विधि वशात् कलिकालस्य विक्षम्भित विलसित निजेशस्य आत्मीय प्रभो श्री रायसिंहस्य घैमनस्य चित्तकालुष्य निजे चित्ते ज्ञात्वा राज्ञ श्रीराजसिंहस्य आज्ञा आदेश समासाद्य प्राप्य निज जन स्वजन वर्ग समादाय गृहीत्वा मेदनी तट मेढतापुरेत्याख्यपाल्यात् अध्यास्त् अधपतिप्यत् अशीश्रयत्, किम्भूतो मन्त्री स्वामी एव धन, तेनधिक* अतिशायि स्वामीधर्मधनाधिक ॥३३५-३६॥

श्रीजिनचन्द्रसूरि अक्षर प्रतिबोध रास (सं० १६५८ रचित) में —

पिशुन तणे पग फेर, मूँकी बीकानेर ।

लाहौर जइय उऊठाहि सेव्यो श्री पतिसाह ॥ ३२ ॥

बच्छायतो की पद्य प्राचीन वशावली में —

"जागी न बात हुई जिकाय, रायसिंह करमचन्द्र पडी राय ।

यह कमो गयो पतिसाह पास, विशरियइ राय लियइ पास पास ॥१२॥

कर भावी के शुभ सप्रेत से उनका आदेश लेकर विचक्षण और बुद्धिमान मन्त्रीश्वर, दीर्घदर्शिता से अपने स्वजन परिवार के साथ

अथ इस विषय में आधुनिक इतिहासकारों के मत लिखते हैं —

(१) बीकानेर राज्य के इतिहास में लिखा है — ‘निदान अकर ने रायसिंहजी की स्वापलेपता को अधिक स्फूर्ति पाते देख फौरन भेद नीति का प्रयोग किया। यानी राजाजी के उद्भेष्ट पुत्र दलपतसिंहभाई, रामसिंह और दीधान कर्मचन्द्र को फोड़ कर राज्य में दो दल कर दिये। जब राजा रायसिंह को यह भेद ज्ञात हुआ, तो उन्होंने रामसिंह को तो विप्र-प्रयोग द्वारा शान्त कर दिया और दीधान कर्मचन्द्र बच्छावत को पठच्युत करके रियासत से निकाल दिया। यह सपरिवार दिल्ली जाकर बादशाह की सेवा करने लगा।

(२) “भारत के प्राचीन राज्यप्रश” में वैमानस्य का कारण रायसिंह को मार कर कुमार दलपतसिंह को गद्दी बिठाने की आकांक्षा लिखा है। रेजनी यह भी लिखते हैं कि स० १६५२ में कर्मचंद्र भागके अकर के पास गया।

(३) कर्नल पाघलेट ने “बीकानेर गजेदियर” में लिखा है कि जिस समय बादशाह कर्मचन्द्रजी से सतरज खेलते थे, उस समय कर्मचन्द्रजी तो बैठे रहते, लेकिन बीकानेर नरेश एडे रहते थे, यह भी उनकी नाराजी का एक कारण था।

(४) “राजपुताने के जैन धीर” में श्री गोयलीयजी ने लिखा है — कि एक बार शकर भाट को राजा रायसिंह ने एक करोड़ का दान देने के लिये मन्त्रीश्वर को आज्ञा दी, उनकी इस आज्ञा को मन्त्रीश्वर ने अनुचित

मेड़ते में आकर निवास करने लगे। वे प्राचीन तीर्थ फलवर्द्धि पार्व-

समझा × × × × कर्मचन्द्र ने बीकानेर के घराने से भक्ति और प्रेम के कारण अपव्ययी राजा को सचेत करने का फिर उद्योग किया, परन्तु उसका परिणाम बहुत भीषण हुआ।”

गोयलीयजी ने टाक साहब की राय देते हुए उपरोक्त दल्पतिसिंह के विषय में पडयन्त्र के दोष से कर्मचन्द्र के बिलकुल मुक्त होने का उल्लेख इस प्रकार किया है — गरज यह कि कर्मचन्द्र पडयन्त्र के दोष से बिलकुल विमुक्त था, उसने सत्य और न्याय के कार्यों के लिए अपने प्राण निछावर कर दिये। वह किसी पडयन्त्र का रक्षित नहीं था, वह रथ पडयन्त्र का शिकार हो गया। उसकी बुद्धिमानी और कर्तव्यतत्परता ही, जिनसे उसने राज्य को सम्भाल रखा था, उसके नाश का कारण हुई। जो राजा को अपव्यय और दुराचार में फसा देखना चाहते थे, उनका जोर बढ़ता गया और कर्मचन्द्र के तरफ से राजा के कान भरने शुरू कर दिये और पडयन्त्र रचने का दोष लगाया।

मुशी देवीप्रसादजीने रायसिंहजी की नाराजी का एक अन्य ही कारण बतलाया है, लेकिन इस आधुनिक इतिहासकारों के किसी भी कारण से सहमत नहीं हैं। मन्त्रीश्वर के पक्षिण हृदय, उनकी स्वामीभक्ति और राज्य-सेवाएँ देते हुए उनके राज-विद्रोही आदि होने का दोष केवल कपोलकल्पना और मनगढन्त किम्बदन्ती ही ज्ञात होती है।

हमारे इस कथनके मुख्य हेतु ये हैं —

मन्त्रीश्वर स० १६४७ के साल में लाहौर पहुँच चुके थे। स० १६४८ में अश्वरने सुरिजी को आमंत्रित किया, उस समय मन्त्रीश्वर भी वहाँ थे। अतः रेऊजी का “स० १६५२ में कर्मचन्द्र भागकर दिल्ली गया” लिखना

नाथ और जिनदत्तसूरिजी की भक्ति सहित पूजा किया करते थे ।

विलकुल गलत है । स० १६९० में “कर्मचन्द्रमन्त्रिवशप्रबन्ध” छाहौरमें रचा गया था । उसमें मन्त्रीश्वरका महाराजा रायसिंह के आदेश से मेड़ता जाना, घद्दासे सम्राट के पास भी उन्हींकी आज्ञा से आना, स्पष्ट रूप से लिखा है । इतना ही नहीं, किन्तु सम्राट क सम्मान पात्र हो, छाहौर में रहते हुए भी मन्त्रीश्वरने श्रीजिनचन्द्रसूरिजी का “युगप्रधान पद” महोत्सव भी रायसिंहजी की आज्ञा प्राप्त करके ही किया था । जैसा कि —

तत्रश्च सचिव स्वामी, धर्म धोरयता धर ।

श्री रायसिंह भूपाल, पादजाह्न समागमत् ॥ ४२९ ॥

सर्व वृत्तान्त माख्याय, साहयुक्त साहसाग्रणी ।

प्राप्यसेह महादेशं, सिंह प्रक्षरितो भवत् ॥ ४९० ॥

अत उक्त घटना के २१६ मास पश्चात् लिखित, ऐतिहासिक प्रमाण से किम्बदन्तिया को अधिक महत्त्व देना बड़ी भारी भूल है । “उक्त वश प्रबन्ध” से, गोयलोजीका कर्मचन्द्र जी को निर्दोष और शेषयव्यन्त स्वामी-भरित-परायण लिखना, प्रमाण ओर युक्ति पुरस्सर ज्ञात होता है । यह सम्भव है कि किसी घुगलखोर ने कर्मचन्द्र क उत्कर्षते असह्यमान होकर उनके विरुद्ध असत्य या व्यर्थ आक्षेप लगाकर राजासाहब की अपसन्नता उत्पन्न करा दी हो । “श्रीजिनचन्द्रसूरि अक्षर प्रतिबोध रास” का “पिशुन तणे पा फेर” वाक्य भी हमारे इस कथनकी पुष्टि करता हैं । सारांश यह है कि कर्मचन्द्र जी राजविद्रोही नहीं थे ।

न० ३ आं ४ के कारण भी कोई महत्त्व के ओर विश्वसनीय ज्ञात नहीं होते ।

आधुनिक सभी लेखक, सम्राट अक्षर की सेवा में मन्त्रीश्वरका दिखी

मंत्रीश्वर के वोकानेर छोडकर मेडता जाने का समय सं० १६४६ और ४७ के बीच मे है क्योकि गुणवितयजी ने सं० १६४६ में "रघुवश वृत्ति" वीकानेर में रची थी, उसकी प्रशस्ति मे उस समय कर्मचदजी के वहा ही मंत्रीश्वर पद पर होने का ऐसा उल्लेख है —

“श्रीरायसिंह भूभुजि निज भुजवल निर्जितारि नृप राज्ये ।

सन्ध्यादि गुण विचक्षण मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र वरे ॥”

और उन्होने हो सं० १६४७ मेडते में 'दमयन्ती चंपूवृत्ति' की रचना की, उसकी प्रशस्ति में भी मंत्रीश्वर का नाम है ।

जब मंत्रीश्वर मेडते मे थे, तब उन्हे बुलाने के लिए राणा मारसिंह आदि (बनेक स्थानों के) नृपतियो के आमन्त्रण आये । लेकिन वे चञ्चल न होकर धीरता से, साधारण नृपतियो की सेवा करना अनुचित समझ कई मास वहीं रहे ।

सम्राट अकबर उनके गुणसमूह से भली भाति परिचित थे । क्योकि राजा रायसिंह के साथ मंत्रीश्वर कई बार सम्राट से मिल चुके थे । सम्राट ने इनके वाक्चातुर्य, युद्धकौशल और परम राजनैतिज्ञता आदि सदगुणोंकी प्रशंसा रायसिंहजी के मुख से सुनी थी और स्वयं अनुभव की थी । इस प्रसंग पर सम्राट ने मंत्रीश्वर को अपने पास

जाना लिखते हैं किंतु उस समय सम्राट लाहौरमें ही रहते थे, और उसके पश्चात् भी कई वर्षों तक लाहौर रहे । अतः उनका यह लिखना बिल्कुल अयुक्त और भ्रमपूर्ण है । न मालूम किस तरह आधुनिक इतिहासकारों(१) ने वेसिर-पैरकी बातें लिख डाली हैं ।

लाहोर भेजने के लिए राजा रायसिंहजी को फरमान-पत्र भेजा । तब रायसिंहजी ने सम्राट के फरमान के साथ अपनी ओर से अद्भुत कृपा वाक्यों मय सम्राट के पास जाने के लिए आदेश-पत्र भेजा* ।

मन्त्रीश्वर अपने स्वामी रायसिंह की आज्ञा प्राप्त कर हाथी, घोड़े, पैदल सेना और महान् श्रद्धि के साथ* वहा से रवाना होकर अजमेर पहुचे । वहा श्रीजिनदत्तमूरिजी की निर्वाणभूमि का स्पर्शन और चरणपादुकाओं का दर्शन करके ऋमग लाहोर पहुचे । अपने प्रणल भाग्योदय से किसी उमराव आदि के प्रयास, सहाय्य और सेवा के बिना स्वय ही सम्राट से जा मिले और बहुमूल्य भेटना करके मधुर प्रस्तावोचित और युक्तियुक्त वचनों से सम्राट के हृदय को अपने आधीन कर लिया । सम्राट ने उनके प्रति सहा-

* प्रसादात्पार्श्वनाथन्ध, गुरोश्च कुशल प्रभो ।

साहे जलाल दीनस्य, श्रुत दृष्ट गुणावले ॥ ३२० ॥

महाराजाधिराज श्री, राजसिंह निज प्रभु ।

प्रेपितास जनोत्कृष्ट, फुरमान ममन्वितम् ॥ ३२१ ॥

समाजगाम सप्रेम, प्रसाद वचनाद्बभुतम् ।

फुरमान त्वयात्रा गन्तव्या मेवोति भाववत् ॥ ३२२ ॥

[कर्मचन्द्र मन्त्रि-वश प्रबन्ध स० १६५०]

x उनका पुत्र आदि परिवार भेटतेमे ही रहा । “अकबर प्रतिशोध राम” से ज्ञात होता है कि लाहोर जाते हुए सूरिजी जब भेटते पधारें, तो मन्त्री पुत्राने उनका प्रवेशोत्सव किया था । जिसका उल्लेख हम इसी ग्रन्थके पृ० ७१ मे कर आये हैं ।

नुभूति और कृपा प्रगट करते हुए कहा "तुम किसो तरह की चिन्ता मत करो, जैसे वारिवाह-मेव अंकुर को बढ़ाता है वैसे ही मैं तुम्हें सब राजाओं से अधिक सन्मानित होने का गौरव दूंगा।" वे केवल यह कहके ही-नहीं रह गये, किन्तु मंत्रीश्वर को अपने परिपट के सामाजिक लोगो का अध्यक्ष बनाया और अपना निजी हाथी, सोने के आभूषणो से सुसज्जित शिकारी घोडा समर्पण किया, इतना ही नहीं थोडे दिनों मे वे सम्राट के इतने विश्वास-पात्र हो गए कि उन्होंने मंत्रीश्वर को अपने भण्डार (गञ्ज) अर्थात् रजजाने का अधिकारी (रजजाब्ची) और तोसाम देश का गवर्नर नियुक्त किया।

उसके पश्चात् मंत्रीश्वरका सम्राटके पुत्र शाहजादा शेरू (सलीम)के मूल नक्षत्रमे उत्पन्न पुत्रीके जन्म दोपकी शान्तिके निमित्त अष्टोत्तरी-स्नात्र कराना, वा० महिमराजजी और पीछे सूरिजी को सम्राट के विनीत आमन्त्रण से लाहौर बुलाना, काश्मीर यात्रा मे सम्राट के साथ जाना, जिनसिंहसूरिजीके पद स्थापन समय सवाकरोडका दान देना और अनेक सत्कार्यों मे विपुल धनराशि व्यय कर शासन शोभा बढ़ाने का विस्तृत वर्णन हम इसी पुस्तक के छठे, सातवें और आठवें प्रकरण मे लिख चुके हैं, अतः उन्हें यहा दुहराना अनावश्यक है। 'अक्रूर प्रतिबोध-रास' से ज्ञात होता है कि आपका प्रभाव सर्वव्यापी था। सभी देशोके राजागण, अमीर उमराव, मीर, मलक, खोजा और खान आपका बहुत सम्मान करते थे। सम्राट अकबरसे आपकी प्रगाढ़ प्रीति थी। देखें ऐ० जैन काव्य संग्रह पृ० ६१

मन्त्रीश्वर सरतर गच्छ के अनन्य भक्त थे। तपा-गच्छीय सुप्रसिद्ध विद्वान सिद्धिचन्द्रजी ने “भानुचन्द्र चरित्र” में मन्त्रीश्वरको “श्वरतरगच्छ श्राद्धमुद्रय और भूभुजमान्य” लिखा है। आपने फरोधी तोसाम† लाहौर आदि अनेक स्थानों में श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्तूप बनवा कर उनकी चरण पादुकाए प्रतिष्ठित कराई थीं।

वा० गुणविनयजी ने “कर्मचन्द्र वश प्रबन्ध” की वृत्ति आपके ही आपस से रची थी ×।

श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डारस्थ पट्टावली में, स० १६५३ के दुष्काल में मन्त्रीश्वर के दानशाला खोलकर अनाथों की रक्षा करने का उल्लेख इस प्रकार है —

“मन्त्री करमचदइ पइत्रीसइ नइ* त्रिपन्नइ, गामि गामि सत्रूकार मढावी पृथ्वी डुलती रली, पतिसाह पास थी पीतलभय प्रतिमा धणी छोडावी, बलि जिण नगरि मुहतउ गयो तिण नगरी रुपइया वि नी लाहण कोधी”

† श्री तोसाम पुरेवर याछिन दान प्रधान सर वृक्षे ।

श्री मन्त्रिराज कारित जिनकुशल स्तूप कृत रक्षे ॥६॥

(कर्मचन्द्रवश प्रबन्ध वृत्ति)

× श्रीकर्मचन्द्र राजाग्रहेण, सद्नुग्रहेण कुशल गुरो ।

* कविचर समयछन्दरणी कृत कल्पलता वृत्तिकी भन्त्य प्रदास्ति में —

“पदारे किल कर्मचन्द्र सचिव , श्राद्धोभव दीप्तिमान् ।

येन श्री गुहराज नदि महसि,द्रव्य व्यया निर्ममे ॥

कोटे पाट युज क्षरामि (३५) समये, दुर्भिक्ष वेलाकुले ।

क्षत्राकार विधानतो बहु जना , सजाविता येन च ॥ ९० ॥

और भक्तवर प्रतिबोधरास, जिनराजसूरि रास, जिनसागरसूरि राम

इस प्रकार अनेकानेक लोकोपकार और धर्म प्रभावना द्वारा अपने प्रशस्न कीर्ति को दिगन्त-व्यापी और अमर करके मन्त्रीश्वर सं० १६५६ मे अहमदाबाद मे स्वर्ग सिधारे । जिसका उल्लेख हम इसी ग्रन्थके १३४ वें पृष्ठ में कर चुके हैं ।

आधुनिक प्राय सभी इतिहासकार और लेखक-गण मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्यु, सम्राट अकबर के देशान्त के कुछ समय पश्चात् ही (स० १६६२-६४) दिल्ली मे होना लिखते हैं । और यह भी लिखते हैं, कि उस समय महाराजा रायसिंहजी भी जहागीर से मिलने के लिए वहीं गए हुए थे, उन्होंने मन्त्रीश्वर की अन्त्य अवस्था मे उनकी हवेली मे जाकर शोक प्रकट किया, महाराजा के नेत्रो से नीर वहने लगा । जब वे वापस चले गए, तब कर्मचन्द्र के पुत्रो ने महाराजा के प्रेम की बहुत प्रशंसा की, परन्तु मन्त्रीश्वर ने कहा पुत्रो ! तुम भूल कर रहे हो । ये आँसू प्रेमके नहीं थे । वे तो इस बातके थे कि मैं सुर और सुयश से स्वर्ग सिधार रहा हू—और राजाजी जीतेजी मुझसे बदला न ले सके । तुम भूल कर भी वीकानेर मत जाना ।” तदनन्तर कर्मचन्द्र की जीवन ज्योति निर्वाण को प्राप्त हुई , परन्तु प्रतिकार-परायण महाराजा रायसिंह ने अपनी अन्तिम अवस्था मे अपने विशेष प्रेमभाजन कुमार सुरसिंह के समक्ष वच्छावत-पुत्रो से बदला लेने की इच्छा प्रकट की । तत्पश्चात्

एव बहुतसी गृहलियो में मन्त्रीश्वरके उक्त्योका धर्णन है, वे रास “ऐतिहासिक-जैन काव्य-संग्रह”में देखने चाहिये ।

राज्य सिंहासनारूढ हो कर सूरसिंह दिल्ली गए और कर्मचन्द्र के पुत्रो को अत्यन्त विश्वास दिला कर बीकानेर में ले आये। महाराजा ने उन्हें सन्मान पूर्वक मन्त्री-पद पर नियुक्त किये। कई (२-४-६) मास तक तो रून कृपा बतलाई। एक समय महाराजा स्वयं इनकी हवेली पर पधारें, बच्छावत-भाइयो ने एक लाख रुपये का चौतरा करके उनको सन्मानित किया। इसके पश्चात् एक दिन, रात्रि के समय उनका मकान सूरसिंह जी के ३००० सिपाहियोने घेर लिया। वे दोनो बड़े वीर थे, अपने पाच सौ सैनिको के साथ सामना किया, अन्तमे राज्य की बड़ी-शक्ति के सामने टिके रहना कठिन समझ कर अपने सार परिवार को मारकर स्वयं जौहर कर वीरगति को प्राप्त हुए। इनके कुटुम्ब की एक गर्भवती स्त्री रघुनाथ सेवक को साथ लेकर भागी और श्रीकरणी माता के मन्दिर में जाके शरण ली, वह राज्यके नियमानुसार रक्षा पाकर अपने पीहर में उदयपुर चली गई, उसीके पुत्र "भाण" से बंश पम्परा चली जो अभी भी उदयपुरमें आजाद हैं।"

"महाजन बंश मुक्तावली"में महो० रामलालजी गणि लिखते हैं, कि इनका रगतिया नामक नौकर इस युद्ध में रून वीरता से लड़ कर जूझार हुआ जो आज भी "रिगतमलजी" नामसे (प्रसिद्ध क्षेत्रपाल) लोगो द्वारा पूजा जाता है। वर्तमान राघडी के चौक का नाम पहले "माणकचौक" था। परन्तु वहा इस युद्धमें बहुत से रागड (राजपूत) मारे जाने से, उक्त स्थान 'रागडी'के नाम से प्रसिद्ध हो गया। उक्त पुस्तक में भाट-मथेरणो की दशावलियों कर्मचन्द्रजी के द्वारा कुएमें

इस प्रकार अनेकानेक लोकोपकार और धर्म प्रभा अपने प्रशस्न कीर्ति को दिगन्त-व्यापी और अमर करके सं० १६१६ मे अहमदाबाद मे स्वर्ग सिधारे । जिसका इसी ग्रन्थके १३४ वें पृष्ठ में कर चुके हैं ।

आधुनिक प्राय सभी इतिहासकार और लेखक-गण कर्मचन्द्रकी मृत्यु, सम्राट अक्षवर के देहान्त के कुछ समय ही (स० १६६२-६४) दिल्ली मे होना लिखते हैं । और लिखते हैं, कि उस समय महाराजा रायसिंहजी भी जहाँ मिलने के लिए वहाँ गए हुए थे, उन्होंने मंत्रीश्वर की अन्त्य मे उनकी हवेली मे जाकर शोक प्रकट किया, महाराजा के नीर बहने लगा । जब वे वापस चले गए, तब कर्मचन्द्र के महाराजा के प्रेम की बहुत प्रशंसा की, परन्तु मंत्रीश्वर पुत्रों ! तुम भूल कर रहे हो । ये आँसू प्रेमके नहीं थे । इस बातके थे कि मैं सुख और सुयश से स्वर्ग सिधार रहा महाराजाजी जीतेजी मुझसे बदला न ले सके । तुम भूल बीकानेर मत जाना ।" तदनन्तर कर्मचन्द्र की जीवन ज्योति को प्राप्त हुई , परन्तु प्रतिकार-परायण महाराजा रायसिंह अतिम अवस्था मे अपने विशेष प्रेमभाजन कुमार सूरसिंह वच्छावत-पुत्रो से बदला लेने की इच्छा प्रकट की ।

एव बहुतसी गहूलियों में मंत्रीश्वरके सृकृत्योंका धर्णन है "ऐतिहासिक-जैन काव्य-समूह"में देखने चाहिये ।

पासाणी बहु वित्त वावई, पइसारइ साम्हा आनइ ।

सोलह शृंगारे सारी, श्री कलश धरी बहु नारी ॥ ८० ॥

श्री भागचन्द्र सुत आवइ, मनोहरदास निजदास ।

बलि सघ सहगुरु वदइ, श्री खरतरगच्छ चिरनदइ ॥८१॥

उपरोक्त प्रमाण से धीकानेर जाने के पञ्चात् भाग्यचन्द और लक्ष्मीचन्द कई महीनो नहो, बलिक कई वर्षो तक धीकानेर में सुखपूर्वक रहे यह सद्ध होता है ।

(३) भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र की मृत्यु के सम्बन्ध में हमें १८ वीं शताब्दि के पूर्वार्द्ध में लिखित बच्छावत-वंशावली* की दो प्रतियें उपलब्ध हुई हैं, जिनसे स० १६७६ के फाल्गुन मासमें सूरसिंहजीका कुपित होना और मन्त्रीश्वरके पुत्रोका मारा जाना सिद्ध है । बशावलीका आवश्यकीय सार इस प्रकार है —

*मुहता बछावतां रो बशावली लिखीये छै, देवडा गौप्र रजपूत चौवाग सांघत सी रो । सगरा रो । घोदध । देवलयारइ रो उपनो । घोदध । भावक हुवा । अभयदेवसूरि प्रतियोध दीयो भावक कीयो । प्र० सगर १ घोदध २ रांगो ३ समधर ४ तेजपाल ५ विजयराज ६ कडवो ७ मेरो ८ नांदा ९ ऊरो १० नागदे ११ जेमऊ १२ बछो । बछा छ सिरदार हुआ, बछइ छं बछावत कहाना । बच्छावत रो प्र० (परिवार) पुत्र ५ करमसी १ चरसिंह २ नरसिंह ३ रतो ४ । करमसी निपट सिरदार हुआ । करमसीइ बछावता रो प्र० । घेटा २ । राजमी १ सूगो २ । मुहतोगो सूगो । राव हूणकण आगे दोसीरी पठ (७१) मोहे काम

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के भाग्यचन्द्र और लक्ष्मीचन्द्र दो पुत्र थे, जिन में भागचन्द्रजी के पुत्र मनोहरदास थे। राजा सूरसिंह ने कुपित होकर उनके घर के इर्द-गिर्द १००० सैनिकों का घेरा डाल दिया। उस समय भाग्यचन्द्र सोये हुए थे, लक्ष्मीचन्द्र और मनोहरदास दरवार में गये थे। भाग्यचन्द्रजी जगे, बहू मेवाडीजी

घडावत रो प्ररवार वेटा ६ नगो १ अमरो २ मेघो ३ हुगरसी ४ भोज ५ हरो ६ नगै (ने) टोको दियो। अमरो सिरदार हुआ। टीकायत नगो। नगो वरसिधतरो परवार। सागो १ देघो २ राणो ३ सागो टीकायत। साग नगावत रो प्र०वेटा २ मु० श्रीकरमचद जी १ जसवत। २ जसवत नु कू मर भोंवराज चूक करनइ मारीयो।

करमचद सागावत रो० प्र० वेटा २ भागचद १ लक्ष्मीचन्द २ भागचन्द रो वेटा १ मनोहरदास १, राजा सूरजसिध मुहता उपरि कोपीयो तिवारै फोज विदा कीधो, माणस १००० मेली साथ घर दोलो फिरियो, भागचन्द पौढोया था लक्ष्मीचन्द अनै मनोहरदास दरवार गया था, भागचन्दजी सूता जागोया तिवारै बहू मेवाडीजी मालिम कीयो राज उपरि फोज आइ। बहू कहयो राज रो हुकम्म हुने तो मरदो चागो करि नै हाथ जोवडा, भागचदजी घहूजी नु मनहि कीधो। आप जुहर कीधो घायर ३ मारी, माता १ मनोहर दासरो मानु मारी २ वेटारी बहु मारी ३ आप, भादमी ४ कामि आया। खवास १ मु० राजसी रो घडो जुहर कीधो। सबत् १६७९ हुकम्म हुवो फागुण छदि माहे १ लिखमीचद करमचद, वत रो प्र० वेटा २ रामचन्द १ रुनाथ २ प्रवार उदयपुर छै १ लिखमीचद वतरो प्र० केसरोसिध १ सबलसिध २ पोथो ३ कोह नहीं, प्रवार १ ए करमचद सागावत

ने उनके ऊपर कौज चढ़ने की खबर दी, और यह भी कहा कि आप की आज्ञा हो तो मैं भी मर्दाना वेश पहन कर राज्य सेना को हाथ दिखाऊ। इस पर भाग्यचन्द्र ने निषेध किया। तत्पश्चान् (१) माता, (२) मनोहरदाम की मा, (३) पुत्र-वधू (मनोहर-दास की बहू) को मार कर स्वयं युद्ध करते हुए काम आए।

इसी प्रसंग पर मु० राजमी के खवाम ने बड़ी वीरता से युद्ध (वडो जुहर) किया। लक्ष्मीचन्द्र के दो पुत्र थे। (१) रामचन्द्र (२) रुघनाथ, उनका परिवार उदयपुर में है। रामचन्द्र के केसरीसिंह, सजलसिंह और पीथा नामक तीन पुत्र थे। खुनाथ निसन्तान रहे।

स० १६७६ के फाल्गुन शुक्ला में यह भयानक घटना हुई थी। किसी कविने क्या ही मार्मिक शब्दों में कहा है —

वेदा २ आसकरण १ अखैराज । २ आसकरण जसवतरो प्र० नरसिंघ दास १
अखैराज जसवतरो प्र० वेदा १ दुरगदास १, दुरगदास अखैराजवतरो प्र०
उ दुरदास १ कल्याणदास २ प्र० २ जसवत सागावतरी विगति इतरो प्र०
१ अथनगावत माहे प्र० २ भाइ रो २ मुं० देवो नगावत रो प्र० इत्यादि
(इसके बाद नगावत परिवार की विस्तृत परम्परा लिखी है)।

इस घटायली से मन्त्रीधर वर्मचन्द्र के भाई जसवन्त की मृत्यु और सतति परम्पराके विषय में भी नवीन ज्ञातव्य मिलता है, जो कि आज तक बिलकुल अज्ञात था।

मन्त्रीधर के पुत्रों की तो बात ही क्या ? परन्तु भागवन्त जी की वीराङ्गना पत्नी के उदगार भी रोमाञ्चित करनेवाले हैं। उनमें सच्चे जैनत्व के साथ क्षत्रियत्व का पूरा ओज था, जिसका यह ज्वलन्त

मरिस्यइ अशत घणा महे ऊपरि, शत साहिस रिण समघरीयउ ।
 भागचन्द भिडतइ भारथ, सुवउ नहीं जगि उधरियउ ॥ १ ॥
 लाखा जम हरि कीयउ लोह बलि, रीसाणइ मारावइ राय ।
 सागाहरइ कियउ दम समहर, जुग जासी पिण नाम न जाइ ॥२॥
 कान्हड(दे) वीरमदे कलि हूती, शाकउ ज्यू जालोर कीयउ ।
 चच्छाहरइ वीकाणइ विडतइ, दो मज दु जने मरण दीयउ ।३।इति
 परमाणंद ते अघला, हीया थून (?) आखा जोह ।

अर्द्ध कहइ न बुझइ, सब कुण देखइ तोह ॥ १ ॥

× × × × ×

रीमाणइ सूरिजसिंघ महारिण, हूतिल जिनलइ वाहिआ हाथ ।
 कीयउ न को बले इम करिस्यइ, भागचद साखिउ भाराथ ॥१॥
 आवे ग्रहट निहट उथडे, घणा, घाघरट पाखरा घेर ।
 जमहर समहर तइ कीयउ, सागाहरा गृहे समसेर ॥ २ ॥
 बल छाडी पहिरी नहि वेडी, परनाले थयउ रगत प्रवाह ।
 करतइ कलिह भागचन्द कीयउ, सींगाला महुता बड (?) साहा ३।

उदाहरण है ।

इस वशावली में “बोहित्य” को प्रतिबोध देनेवाले श्रीअभयदेव
 सूरिजी लिखे हैं, और “वश प्रबन्ध” में जिनेश्वरसूरिजीका उल्लेख है ।
 घटना प्राचीन होने के कारण ऐसे पाठान्तर और वैपम्य हो जाते हैं, किन्तु
 हमें “वश-प्रबन्ध” का कथन ही विश्वसनीय ज्ञात होता है ।

अग्रहिचे बोथरा महारिण, तइ कीयउ करमेत तणा ।

साकउ बीकानयर तणइ तिर, घणु सरिहस्यइ दीह घणा ॥ ४ ॥

[हमारे सप्रहस्थ एक विकीर्ण पत्र से]

इनके वंशकी प्रशंसामे किसी कविने कहा है —

प्रथम राज पृथ्वीराज, धुरा साभर तिरसधर ।

हुवो रिणथम हमीर, विभै राजेन्द्र नरेसर ।

जन्मतीय जालोर, कुमर वीरम कहाणो ।

चौथे गढ गागरण, बलि अचलेश बलाणो ।

करमचद तणो चहुआण कुल,यिग सनाम पचेथियो ।

भागचद उही पृथ्वीराज भिड, जिण कलि उपरसाको कियो ? X

उपरोक्त वातों से ज्ञात होता है कि (१) यह घटना रात में न होकर शायद दिन में हुई थी, क्योंकि उस समय लक्ष्मीचंद्र और मनोहरदास दरवार में गये हुए थे, लिखा है। (२) लक्ष्मीचंद्र और मनोहरदास दरवार में ही वीरगति को प्राप्त हुए हो, क्योंकि वे दरवार में ही थे, और घर पर मारे जानेवालों की नामावली में उनका नाम नहीं है। (३) उनके मारे जाने का मुख्य कारण करमचन्दजी पर महाराजा रायमिहजी की अग्रकृपा न होकर किसी कारण से भाग्यचंद्र, लक्ष्मीचंद्र पर महाराजा सूरसिंहजी

X वच्छावत वंशका आदिम चौहाण कुल है, अतः कविने उस कुलमें हुए पररहोकी प्रशंसामभित यह पद्य रचा है। इस पद्यमें उल्लेखित पृथ्वीराज चौहाण और हमीर उपसिद्ध ही है। जालोरके कान्दड़ वीरम दे का नाम करमचन्द्र वंश प्रबन्धमें आता है, उनका विनोप परिचय साप्ताहिक पत्र जैन-क सौम्य महीन्पत्र भङ्गके पृ १४ में देखना चाहिये।

के कुपित होनेका हो। हमारे इस अनुमान के दो कारण हैं — एक तो बच्छावत * भाइयोका कई वर्षों तक वीकानेर मे रहना प्रमाणित है, यदि पहले का घैर ही कारण होता, तो उनका कई वर्षों तक सुख-शांति से रह सकना कम सम्भव है। दूसरा वशावली मे “राजा सूरसिंह मुहता उपर कोपियो” लिखा है। यह वाक्य भी महत्व का ज्ञात होता है।

(४) कर्मचंद्रजी का वंश, इस घटनास्थल से भगी हुई गर्भवती स्त्री † से न चल कर, पहिले से ही उदयपुर मे रहे हुए लक्ष्मीचंद्र के पुत्र रामचंद्र और रुवनाथ से चला था। क्योकि सं० १६८०-८१ में श्रीजिनसागरसूरिजी उदयपुर पधारे, तब उन्हें वन्दनार्थ रामचंद्र और रघुनाथ अपनी दादी अजायबदे के साथ आये थे, जिसका उल्लेख सं० १६८१ मे रचित श्रीजिनसागरसूरि रास मे इस प्रकार है —

* भागवन्दजीके लिये लिखी हुई “पृथ्वीराज रासो”की गुटकाकार प्रति वीकानेर-स्टेट लाइब्रेरीमें विद्यमान है, जिसकी अंत्य प्रशस्ति यह है—

“मन्नीश्वर मण्डल (ण?) तिलक, वच्छा वश (घ) खाण।

करमचद उत करम बड, भागचद खव ? जाण । १ ।

तस कारण लिखियो सही, पृथ्वीराज चरित्र ।

पढता छल सम्पत्ति सकल, मम छल होये मित्र । २ ।

† गोयलीयजी लिखते हैं—यह महिला उदयपुर के भामाशाह की पुत्री थी। ओझाजी भी भाण को भामाशाह की पुत्री का छड़का होने का लिखते हैं। मेहताओं की तवारीख में “भाण” को भोजराज का पुत्र लिखा है, किन्तु अनुमान है कि मन्नीश्वर कर्मचन्द्रजी का विवाह भामाशाह की पुत्री से हुआ

“कुम्मल मेरइ जिन थुणि ए मेवाडइ गुण गान ।

उदयपुरा नउ राजियउ ए “राणउ करण” वइमान ॥९४

लसमीचन्द सुत परगडा ए, रामचन्द्र रघुनाथ ।

चित धरि वदइ प्रहसमइ ए, अजायबदे सुत साय ॥९५॥

इम अवतरण से स० १६८० मे रामचन्द्र रघुनाथ की अवस्था कमती-से-कमती भी हो, तो भी वे १०-१२ वर्ष के तो होने चाहिये । इससे गर्भवतीका भागना और उमसे वंश चलने की बात बिल्कुल कल्पित और नि सार ज्ञात होती है ।

(५) हमे जहातक की वशावली उपलब्ध है, उसमे ‘भाण’ का कोई उल्लेख नहीं मिलता ।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के जीवनसे उनके अनेको सदगुणों और असाधारण बुद्धि वैभव का परिचय मिलता है । इनके वंशज वर्तमान समय मे भी उदयपुर राज्य के उच्च पदाधिकारी और प्रतिष्ठासम्पन्न हैं, उनके विषय मे विशेष जाननेके लिये ‘ओसवाल जाति का इतिहास’ देखना चाहिये ।

अब सूरिजीके श्रावकरत्र स० “सोमजी शिवा” का सक्षिप्त परिचय दिया जाता है ।

हो, और उसीका नाम अजायबदे हो, और वह उपरोक्त दारुण घटनाके समय अपने पुत्रशूष उभय पौत्रोंके साथ अपने पीठर में उदयपुर आई हुई हो । हमें उपलब्ध वशावली में भोजराज का कोई नाम नहीं मिलता । कर्मचन्द्रजीके प्रभावसे रायसिंहजीको पाचहजारी पद मिलनेका उल्लेख इस प्रकार है—

अकर जलालादीना प्रसादतीनेक कोट बर कलित
रुत्रि कृत मय योगा त्प च सहस्री ततिर्जेशे ॥३४॥

संधपति सोमजी शिवा

जगत्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वंश × मे संधपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन्द्र दोनो भाइयोका जन्म हुआ था । ७० क्षमाकल्याणजी अपन

व्याख्या — श्री राजसिंह अकबर जलालदीनस्य सादे प्रसादतोनु प्रहात् अनेको बहधोये कोटा दुर्गाणि बलें च सैन्येन कलित सहित अनेको कोट बलकलित मन्त्रिण कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तस्ययोगात् सयोगात् मन्त्र अ (१ प्र) भावादित्यर्थ पचाना सहस्रांश अश्ववार सबन्धिन समाहार पच सहस्री तस्या पति स्वामी जज्ञे बभूव । पच हजारीति एयार्ति प्राप्त इत्यर्थ ॥३४॥

× शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में —

वस्तुपाल मन्त्रीश्वर वंश, शिवा सोमजी कुल भवतदा ।

शत्रुञ्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव लाहो तिण लियउ ॥

बम्बईसे प्रकाशित “श्री जिनचंद्रसूरि जीवन चरित्र”में आपके धनवान होने की एक किम्बदन्ती लिखी है —

ये दोनों भाई चिभडे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिबोध दिया । लाभ जान कर सूरिश्वरने इनके नवीन घर पर सप्रभाव वासक्षेप डाला । बहुत-से खरबूजे खरीदकर व भाई फलों के ऊपर उस बखको आच्छादित कर व्यापार करने लगे । सी समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किमी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहा ही चिभडे खरबूजे एक-एक स्वर्ण मुहरके मूरय में खरीदने पडे, क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले । इस व्यापार में सोमजी-शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया ।

रचित 'सरतर पट्टावली' में लिखते हैं कि अहमदाबाद में ये दोनो भ्राता चिर्मटि(फल)का व्यापार करते थे । सूरिजीने इन्हें प्रतिबोध देकर जैन धर्ममें दृढ़ किये । इन्होंने तीर्थयात्रा, नवीन विम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार और स्वधर्मा वात्सल्य आदि शुभकार्यों में लाखो रुपये व्यय करके जैन शासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी ।

स० १६४४ में जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुजय का विशाल सभ निकालकर सूरिजी के साथ शत्रुजय गिरिराजकी यात्रा की थी, जिसका उल्लेख इसी ग्रंथ के ५६ वें पेज में कर चुके हैं ।

सं० १६५३ अहमदाबाद में आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिनालय की सूरिजीके कर-कमलो से प्रतिष्ठा करवाई । इन्होंने राणपुर, गिरनार, आवू, गौडी-पार्श्वनाथ और शत्रुजयपर बड़े-बड़े सभ निकाल कर यात्राएँ कीं, प्रत्येक स्थानमें लाहणकी, करोडो रुपये खर्च हुए, जिसका उल्लेख कविवर समयसुन्दरजी 'कल्पलता' में इस प्रकार करते हैं —

यद्वारे पुनरत्र सोमजि सिना, श्राद्धौ जगद्विश्रुतौ ।

याभ्या राणपुरश्च रैरतगिर, श्री अर्बुदस्य स्फुटम् ।

गौडी श्री विमलाचलस्य च महा ।, सद्यो नय कारितो

गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुर , रुक्मा द्विमेक पुन

एक पट्टावली में लिखा है —

“स० सोमजी शिवइ शत्रुञ्चय नी पहली यात्रा करी, ३६००० रुपइया खर्च्या, बली बडी प्रातिष्ठाथइ ३६००० रुपइया खर्च्या, गिरनार आवू ना सभ कराव्या, अनेक दिहरा कराव्या, विम्ब भराव्या, सरतरगच्छ मा लाहण फीधी”

संधपति सोमजी शिवा

जगत्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वश x मे संधपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन दोनो भाइयोका जन्म हुआ था । उ० क्षमाकल्याणजी अपनी

व्याख्या — श्री राजसिंह अकरर जलालदीनस्य सादे प्रसादतोलु-
ग्रहात् अनेको बहघोये फोटा दुर्गगणि बलेंन घ सैन्येन कलित सहित अनेक
कोट्ट बडकलित मत्रिण कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तस्ययोगात् सयोगात्
मन्त्र अ (? प्र) भावादित्यर्थ पधाना सहस्राश अश्वार संबन्धिना
समाहार पच सहस्री तस्या पति स्वामी जज्ञो बभूव । पच हजारीति
व्याति प्राप्त इत्यर्थ ॥३४॥

x शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में —

वस्तुपाल मन्त्रीश्वर वश, शिवा सोमजी कुल अवततश ।

शत्रुज्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव लाहो तिण लियउ ॥

बम्बईसे प्रकाशित “श्री जिनचन्द्रसूरि जीवन चरित्र”में आपके धनवान होने की एक किम्बदन्ती लिखी है —

ये दोनों भाई चिभटे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिरोध दिया । लाभ जान कर सूरिश्वरने इनके नवीन घख पर सप्रभाव घासक्षेप डाला । बहुत-से खरबूजे खरीदकर व भाई फलों के ऊपर उस घखको आच्छादित कर व्यापार करने लगे । सी समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किसी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहा ही चिभटे खरबूजे एक-एक स्वर्ण मुहरके मूल्य में खरीदने पडे, क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले । इस व्यापार में सोमजी-शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया ।

‘सरतर पट्टावली’में लिखते हैं कि अहमदाबादमें ये दोनो भ्राता (फल)का व्यापार करते थे । सूरिजीने इन्हे प्रतिबोध देकर जैन दृष्ट किये । इन्होंने तीर्थयात्रा, नवीन विम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार स्वधर्मों वात्सल्य आदि शुभकार्यों में लाखो रुपये व्यय करके शासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी ।

१० १६४४ में जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुजय का विशाल उत्सवकालकर सूरिजी के साथ शत्रुञ्जय गिरिराजकी यात्रा की थी, जो उल्लेख इसी ग्रंथ के ५६ वें पेज में कर चुके हैं ।

१० १६५३ अहमदाबाद में आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिना-रामजीके कर-रुमलो से प्रतिष्ठा करवाई । इन्होंने राणरु-गिरनार, आवू, गौडी-पार्श्वनाथ और शत्रुजयपर बड़े-बड़े उत्सवकाल कर यात्राएँ कीं, प्रत्येक स्थानमें लाहणकी, करोडो रुपये खर्च हुए, जिसका उल्लेख कविचर समयसुन्दरजी ‘कल्पलता’ में प्रकाश करते हैं —

यद्वारे पुनरत्र सोमजि शिव, श्राद्धो जगद्विश्रुतो ।

याभ्या राणपुरश्च रैतगिर, श्री अर्चुदस्य स्फुटम् ।

गौडी श्री त्रिमलाचलस्य च महान्, सधो नय कारितो

गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुर, रुम्मा द्विमेक पुन

इक पट्टावली में लिखा है —

‘स० सोमजी शिवइ शत्रुञ्जय नी पहली यात्रा करी, ३६०००
ता सरच्या, बली बडी प्रतिष्ठायइ ३६००० रुपइया सरच्या,
र आनु ना सघ कराव्या, अनेक देहरा कराव्या, विम्भ भराव्या,
रगच्छ मा लाहण कोधी”

संघपति सोमजी शिवा

जगन्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वश X में संघपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन दोनो भाइयोका जन्म हुआ था। ७० क्षमाकल्याणजी अपनी

व्याख्या — श्री राजसिंह अकबर जलालदीनस्य सादे प्रसादतोनु-
ग्रहात् अनेको यद्घोये कोट्टा दुर्गाणि बल्लेन च सैन्येन कलित सहित अनेक
कोट्ट बडकलित मत्रिण कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तल्ययोगात् सयोगात्
मन्त्र अ (? प्र) भावादित्यर्थ पंचाना सहस्राश अश्ववार सबन्धिना
समाहार पच सहस्री तस्या पति स्वामी जज्ञे बभूव । पच हजारीति
ख्यातिं प्राप्त इत्यर्थ ॥३४॥

X शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में :—

वस्तुपाल मन्त्रीश्वर वश, शिवा सोमजी कुल अवतत ।

शत्रुञ्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव छाहो तिण लियउ ॥

बम्बईसे प्रकाशित “श्री जिनचन्द्रसूरि जीवन चरित्र”में आपके धनवान होने की एक किम्बदन्ती लिखी है —

ये दोनो भाई चिभडे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिबोध दिया। लाभ जान कर सूरिश्वरने इनके नवीन बख पर सप्रभाव घासकेव डाला। बहुत-से खरबूजे खरीदकर न भाई फलों के ऊपर उस बखको आच्छादित कर व्यापार करने लगे। सो समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किसी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहा ही चिभडे खरबूजे एक-एक स्वर्ण मुहरके मूल्य में खरीदने पडे, क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले। इस व्यापार में सोमजी-शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया।

रचित 'सरतर पट्टावली'में लिखते हैं कि अहमदाबादमें ये दोनों भ्राता चिर्भट्टि(फल)का व्यापार करते थे । सूरिजीने इन्हे प्रतिबोध देकर जैन धर्ममें दृढ किये । इन्होंने तीर्थयात्रा, नवीन विम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार और स्वधर्मा वात्सल्य आदि शुभकार्यों में लाखों रुपये व्यय करके जैन शासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी ।

स० १६४४ में जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुजय का विशाल सघ निकालकर सूरिजी के साथ शत्रुञ्जय गिरिराजकी यात्रा की थी, जिसका उल्लेख इसी ग्रंथ के ५६ वें पेज में कर चुके हैं ।

स० १६५३ अहमदाबाद में आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिनालय की सूरिजीके कर-कमलो से प्रतिष्ठा करवाई । इन्होंने राणकपुर, गिरनार, आवू, गौडी-पार्श्वनाथ और शत्रुजयपर बड़े-बड़े सघ निकाल कर यात्राएँ कीं, प्रत्येक स्थानमें लाहणकी, करोड़ों रुपये खर्च हुए, जिसका उल्लेख कविवर समयसुन्दरजी 'कल्पलता' में इस प्रकार करते हैं —

यद्वारे पुनरत्र सोमजि शिवा, श्राद्धौ जगद्विश्रुतौ ।
याभ्या राणपुरञ्च रैतगिर, श्री अर्बुदस्य स्फुटम् ।
गौडी श्री विमलाचलस्य च महान्, सघो नय कारितो
गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुर, रुम्भा द्विमेक पुन
एक पट्टावली में लिखा है —

“स० सोमजी शिवइ शत्रुञ्जय नी पहली यात्रा करी, ३६००० रुपइया खर्च्या, बली बडी प्रातप्यायइ ३६००० रुपइया खर्च्या, गिरनार आवू ना सघ कराव्या, अनेक दिहरा कराव्या, विम्ब भराव्या, खरतरगच्छ मा लाहण कीधी”

अहमदाबादकी दस्सापोरवाड जातिमे आपने कई अच्छे रीति-रिवाज प्रचलित किये थे। अब भी विवाहपत्र के लेख मे “शिवा सोमजीकी रीति प्रमाणे” लेन देनकी मर्यादा लिखी जाती है। आपके निवासस्थान धनासुतार की पोल मे, जिनालय के वार्षिक दिवस और अन्य प्रसंगो में जब कभी जीमनवार होता है, तब निमंत्रण भी ‘शिवा सोमजी’ के नाम से दिया जाता है।

आपने अहमदाबाद में तीन जिनालय बनवाये। (१) धनासुतार-नी पोल (शिवा सोमजी की पोल) मे, आदिनाथजीका मन्दिर—जिसमें अपने उपकारी गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी मूर्ति स्थापित की। (२) झवेरी वाडाके चौमुखजी की पोल मे.—श्रीशान्तिनाथजी का चौमुख मन्दिर (जिसका जीर्णोद्धार सं० १६२० मे जवेरी श्रीमोहनलाल-मगनभाई के पिता मगनभाई-हकमचन्द ने कराया था)। (३) हाजा पटेलकी पोल के कोने मे श्रीशान्तिनाथजी का मन्दिर।

गिरिराज श्रीसिद्धाचलजी पर “खरतरवसही” मे चौमुखजी का मन्दिर निर्माण करवाया, जिसमे ५८ लाख रुपये खर्च हुए।*

इस मन्दिर की प्रतिष्ठा कराने के पूर्व ही आपका स्वर्गवास हो जानेसे सोमजीके पुत्र रूपजी ने सं० १६७५ मे श्रीजिनराजसूरिजी के करकमलोसे प्रतिष्ठा करवाई।

*मीराते अहमदा में लिखा है कि इस मन्दिरको बनाने में ५८०००००) रुपये खर्च हुए, कहते हैं ८२०००) रुपये की तो केवल रस्सी, डोरियाँ ही लगी थी। मन्दिरकी विशालता और छन्दरता देखते, इसमें किसी प्रकारका सदेह ज्ञात नहीं होता।

शेठ सोमजी शिवाजीका स्वधर्मीवात्सल्य बहुत ही प्रशसनीय और अनुकरणीय था। एक बार किसी अज्ञात, अपरिचित स्वधर्मी-वन्दु ने विपत्ति के समय आपके उपर साठहजार रुपये की हुडी कर दी। जब वह हुडी भुगतान के निमित्त आपके पास आई, तब इनके मुनीम, कर्मचारियों के सारा खाता दूढ लेने पर भी हुडी करनेवाले का कहीं नाम तक न मिला। विचक्षण सोमजीको उस हुण्डीके गौर पूर्वक देखने मात्र से उस पर अश्रुनिन्दुका दाग देखकर रहस्य समझ में आ गया और अपने किसी स्वधर्मी वन्दु के विपत्तिका अनुभव कर अपने निजी खातेमे खर्च लिखनाके हुण्डी सिकार दी। कुछ दिनोंके पश्चात् वह अज्ञात स्वधर्मी भाई वहा आया और आपह पूर्वक हुडीके रुपये जमा करनेकी प्रार्थना की। किन्तु सोमजीने, "हमारा आपके (नाम से) पान एक पैसा भी लेना नहीं है", यह कहते हुए रुपया लेना सर्वथा अस्वीकार कर दिया। आरिख सघकी सम्मतिसे श्रीशान्तिनाथ प्रभुका जिनालय निर्माण करानेमे वे समस्त रुपये व्यय कर दिये गए। इस वृत्तान्त से सोमजी के उदार हृदय, और अभूतपूर्व, आदर्श स्वधर्मी-

हुण्डी सिकारनेका विस्तृत वर्णन "सवा सोमा" नामक टूक में है जिसके लेखक हैं, श्रीमान गोकलदास द्वारकादास रायचुरा (तत्री शारदा)। उन्होंने इस टूकमें सोमा पर हुण्डी करनेवाले व्यक्ति "सवा" को वामन-स्थली निवासी सेठ लिखा है और शिवा-सोमाकी टूक भी उन दोनों भिन्न २ व्यक्तियों के नामसे प्रसिद्ध होनेका उल्लेख किया है किंतु उन्होंने यह गम्भीर भूल की है। शिलालेखोंसे यह भली भाँति सिद्ध है कि शिवा-सोमजी दोनों सगे भाई थे और उन्हीं दोनों भाइयोंने यह उक्त किया था।

वात्सल्यका अच्छा परिचय मिलता है। ऐसे नर रत्नका जितना गुणानुवाद किया जाय, थोडा है।

सूरिजीके उपदेशसे आपने बहुतसे नवीन ग्रन्थ लिखवाकर, ज्ञान-भक्तिका महान लाभ लिया था, उन ग्रन्थोमे १ ग्रन्थका उल्लेख 'जैन साहित्य नो मक्षिप्त इतिहास' मे इस प्रकार है —“स० १६५२ मा स० जिनचन्द्रसूरि ना उपदेश थी अहमदावाद ना प्राग्वाट संघपति सोमजीए ज्ञानभंडार माटे सिद्धान्त नी प्रत लखावी ते पैकी राज-प्रश्नोय टीका नी प्रत गु० नं० १६२७ मले छै।” (पृ० ५६१)

स० १६६३ चैत्र सुदि ६को रचित ४० गुणविनयजी कृत ऋषिदत्ता चौ० से ज्ञात होता है, कि सभातमे भी इन्होने बहुतसा द्रव्य व्यय करके जिन-विम्बोकी प्रतिष्ठा कराई थी।

श्री सभायत थमण पास, धरण पउम परतिख जसु पास ॥६६॥

श्री खरतरगच्छ गगन नभोमणि अमयदेवसूरि ऋगटित सुरमणि ।

धन खरची बहु विम्ब भराविय, साह शिवा सोमजी कराविय ।६४

अचरजकारी पूतली जसु ऊरि, शरणाइ बड (२?)मेरि विविह परि ।

पास भगति वस जिहा वजावइ, गुरु परसाद रह्या शुभ भावइ ॥६५

आपकी वंश परम्परा के जौहरी वालाभाई चकलदास, लगभग ४-५ वर्ष पूर्व (अहमदावाद से) बीकानेर आए थे। उन्होने अपनी परम्परा का बहुत-सा इतिहास अपने पास होने का भी कहा था। किन्तु उसके कई मास पश्चात् ही आपका स्वर्गवास हो गया, अतः वह इतिहास अप्रकाशित अवस्था मे ही रहा। उन्होने “खरतर-वसही” सम्बन्धी झगडे के समय “खरतर वसही अने सेठ आणदजी

कल्याणजी वच्चे झगडो" नामक विज्ञापन x प्रकाशित किया था, उसमे भी शिवा सोमजीके विषयमे ज्ञातव्य इतिहास भविष्यमे प्रकाशित करने के विचार प्रकट किये थे । किन्तु दु स है कि दुदेव काल ने उन्हे अपने पूर्वजोका इतिहास प्रकट करनेका मौका नहीं दिया ।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के भक्त श्रावको मे अहमदाबाद के मंत्री सारगधर सत्यवादी, खभात के भण्डारी वीरजी, राका, वर्द्धमान, नागजी, वच्छा, पद्मजी, देवजी, जैतमाह, भाणजी, हररा, हीरजी, माडण, जावड, मनुआ, सहजिया, अमियाशाह, साभलिनगर के सा० मूला० सामीदास, पूरू, पदू, वस्तू, गागू-नाथू, धरमू, लखू आगरे के शाह श्रीवच्छ और लक्ष्मीदास, सिद्धपुर के शाह वन्ना, रोहीठ के शाह थिरा मेरा, विलाडा के स० जूठा* कटारिया, रिणीके मन्त्री राजसिंह और साकर सुत वीरदास, लाहोर के जौहरी पर्वतशाह, सिन्धु देसके धोरवाड वगज शाह नानिगके पुत्र शाह राजपाल, जेसलमेर के भणसाली थाहरू*शाह, नागौर के मन्त्री मेहा, वीकानेर के मन्त्री दसू बोथरे की सतति, महेवा के वाकरिया शाह कम्मा, मेडता के शाह आसकरण* चोपडा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है । श्राविकाओमे भी बहुत-सी धर्म-परायणा और घृत धारिणी थीं, जिनमेसे नयणा, वींजू, गेली, कोडा, रेखा के व्रत गहण करने का उल्लेख पिउले प्रकरणो मे लिखा जा चुका है ।



x इस विज्ञापन के आधार से हमने भी कितनी ही बातें इस "सोमजी शिवा के परिचय में लिखी है ।

* कृपाधन्द्रसूरि ज्ञानमदारकी पटावलीमें लिखा है —

"श्री शत्रु जे उपरि स० जूठइ कटारियइ रुघ करावी प्रतिष्ठा करावी"

* इनका परिचय पै० जैन० काव्य सग्रह में दिया जायगा ।

† इनका विशेष परिचय पै० जैन काव्य सग्रहमें लिखा जायगा ।

सोलहवां प्रकरण

चमत्कारिक-जीवन और अवशेष घटनाएं



छले प्रकरणों में सूरिजी के जीवन-चरित्र सम्बन्धी सभी विषयों पर काफी लिखा चुके हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई ऐतिहासिक और जनश्रुति में प्रचलित बातों का उल्लेख न करने से “जीवन-चरित्र” की असम्पूर्णता अनुभव कर इस प्रकरण में उन

सब बातों को बहुत ही संक्षेप से लिखते हैं।

जब सूरि महाराज रम्भात में थे, तब मालकोट से हर्षनन्दन, रत्नलाल, मुनि वर्द्धमान, मेवा, रेखा आदि ने सस्कृत में एक विस्तृत सावत्सरिक पत्र × दिया था, उसमें सूरिजी के गुणानुवाद में आगे के

× इस पत्र को नकल दमार पास है, विस्तृत होने के कारण यहाँ प्रकाशित नहीं की गई। स० १९०८ या स० १९६६ में यह पत्र सूरिजी को दिया गया था। उस समय सूरिजी के साथ उ० रत्ननिधान उ० जय-प्रमोद, श्रीछन्दर, रत्नछन्दर, धर्मसिन्धुर, हर्षवल्लभ, साधुवल्लभ, पुण्यप्रधान,

प्रकरणों में लिखित जीवन की मुख्य-मुख्य घटनाओं का वर्णन करत हुए “दिल्लीपुर्या पुनर्योगिनी साधका सूरिमन्त्र स्फुटाम्नायसंमाधका” लिखा है। इससे जाना जाता है कि आपने स० १६२६ में जब कि रुस्तक में चातुर्मास किया था, वहा से दिल्ली निकटवर्ती होने से दिल्ली पधार कर ६४ योगिनीएँको अपने सूरिमन्त्र के प्रभावसे साधित की होगी।

आपकी आज्ञा से बहुत-से विद्वानों ने अनेक ग्रंथों की रचना की थी, जिसका उल्लेख विद्वानों के परिचय में कर चुके हैं। ग्रंथ-रचना के अतिरिक्त आपके आदेश से कई जगह प्रतिष्ठाएँ भी हुई थीं। जिनमें स० १६५० आषाढ शुक्ला ६ को मद्दो० पुण्यसागरजी प्रतिष्ठित श्रीजिनकुशलसूरिजी के पादुका का लेख “जैन लेख रुप्रह भा० ३” लेखाङ्क २४६४ में उप चुका है। और सं० १६६६ वै० शु० १३ “समदा नगर” में प० राजप्रमोद के शि० प० नन्दिजय के प्रतिष्ठित महावीर चैन्यका लेख “यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन” भा० १ में छपा है।

स० १६६१ अक्षय तृतीया को जब सूरि-महाराज, जिनसिंहसूरि, ६० समयराज, ३० रत्ननिधान, प० पुण्यप्रधान आदि शिष्यों के साथ नागौर पधारे। उस समय वहा के निवामी कातेला गोत्रीय स० सहसा, स० सुरतान सकर ने अपने पुत्र तेजसी, जोधा डुगरसी, स्वणलाम, जीवर्षि और भीम मुनि आदि थे। यह पत्र पाण्डित्यपूर्ण और प्रौढ संस्कृत भाषा में लिखा गया है। इस पत्रका आवश्यक अंश परिलिखित में देते,—

पूरचन्द्र, पूरणमल, आदि ने सपरिवार सागैकादशाग आगम बहराये थे, जिनमेसे “स्थानाग सूत्र वृत्ति” पत्र ३७१ * “श्रीजिन-
रूपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भण्डार वीकानेर” मे विद्यमानहै ।

सं० १६५५ कार्तिक सुदि १३ को जब आप उपरोक्त शिष्य-
ण्डल के साथ खभात मे थे, तब हापाणक ग्राम वास्तव्य सघ ने
“ज्योति करण्ड वृत्ति” नामक ग्रन्थ बहराया । सूरिजी ने उस ग्रन्थ
को स्तम्भतीर्थ के ज्ञान-भण्डार में स्थापित किया था । यह ग्रन्थ
(पत्र १२०) भी अब उपरोक्त ज्ञान-भण्डार में हैं ।

इसके अतिरिक्त और भी सैकड़ो § ग्रन्थ भक्त श्रावको ने बहरा
कर ज्ञान-भक्ति और गुरु भक्तिका लाभ लिया था । सूरिजी ने उन
सबको खभात और वीकानेर के ज्ञान-भण्डारो मे सुरक्षित कर दिये ।

* यह प्रति सूरिजी ने अपने शिष्य वा० सुमतिकलोल गणिको दी,
उन्होने अपने शिष्य विद्यासागर के पठनार्थ सशोधित की ।

§ खभात भण्डारके ग्रन्थ देखनेसे सम्भव है, कुछ नया ज्ञातव्य भी
मिले । खभातमें प्राग्वाट ज्ञाति घालोंकी लिखाई हुई सं० १६५६ व० शु० ५
महानिशीय की सूत्र पत्र प्रति २६ (न० २१६६) बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के
सम्ग्रहमें है ।

सूरिजीकी ल खवाई हुई प्रतिया यत्र-तत्र प्रचुर प्रमाणमें मिलती है ।
‘जेसलमेर भाण्डागारीय ग्रथाना सूचि’में सं० १६३५ भाषाढ शुक्ला ५ की
लिखित प्रतिकी प्रशस्ति उक्त ग्रन्थके परिशिष्ट पृ० ५ में देखें ।

विकानेर स्टेट लायब्रेरी ग्रथाङ्क ४८३२ की प्रशस्ति इस प्रकार है —

जिनमें वोफानेर क ज्ञान-भण्डारो में अब भी बहुत-स वस्तुतः X प्रशस्तियाँवाले ग्रन्थ विद्यमान हैं। विस्तार-भय से हमने उन सबका उल्लेख नहीं किया।

आपके प्रतिष्ठित बहुत-से जिन-विम्ब यत्र तत्र उपलब्ध हैं, जिनके कई लेख हम आगे दे चुके हैं। अवशेष स० १६१६ और १६६७ के लेखों की नकल नीचे दी जाती है —

(१) “सवन् १६१६ वर्षे वैशाख वदि ६ दिने ओसवाल ज्ञातीय राखेचागोत्रे म० हीरा भार्या हासू भा०हीरादे पुत्र देवदत्त भा० देवल-दे सुत उदयसिंघ रायसिंघ कुटुंब युतेन म० देवदत्तेन श्री वासुपूज्य चतुर्विंशति पट्ट कारापित श्री खरतरगच्छे श्री जिनचन्द्रसूरिभि प्रतिष्ठित ॥ श्री ॥ (श्री गौडी पाठर्वनाथ मन्दिर—व्रीकानेर)

(२) “स० १६१६ वर्षे श्री पाठर्वनाथ विम्ब प्रतिष्ठित श्रीजिन-चन्द्र सूरिभि ।”

(श्री महावीरजीका मन्दिर—आसानियो का चौक, व्रीकानेर)

शत्रुजय तीर्थ पर प्रतिष्ठित —

“स० १६६७ वर्षे फाट्गुन सुदि पचम्या गुरो स० रत्ना पुत्र स० जुगकेन का० श्रीचन्द्रप्रभ विम्बं प्र० श्री वृहत्खरतर गच्छेशाऽकबर साहि प्रतिशोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि । आ० जिनसिंह

“श्री शाहि प्रतिशोध कारक श्रीमजिनचन्द्र सूरि युग प्रधानाना प्रतिरिथ लिखिता संवत् १६५६ वर्षे धन्य त्रयोदश्या ।

(सूरिमन्नादि साम्नाय कल्प पत्र ११)

x उनमेंसे एक प्रशस्तिकी नकल परिशिष्टमें दी गयी है ।

सूरि युतै वा० पुण्यप्रधान वा० राजसमुद्र स्या । व्यलेखि प्रतिष्ठापया
(म) मौलि विम्बमेतत्" * ।

म० १६६७ वर्षे फाटगुन शुक्ल पंचमी गुरो श्रीविक्रमनगर
वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय फसला गोत्रीय सा० हीरा । तत्पुत्र
सा० मोकल । तत्पुत्र० अज्जा । तत्पुत्र दत्तू । तत्पुत्र सा० अमीपाल
भार्या अमोलिक दे पुत्ररत्नेन सा० लीलाकेन । भार्या लखमा दे
लाछल दे पुत्र सा० चन्द्रसेन । पूनसी सा० पदमसी प्रमुख पुत्र
पौत्रादि परिवार सहितेन श्री पार्श्वविम्ब अष्टदल कमल सपुट सहित
कारित, प्रतिष्ठित श्रीशत्रुंजय महातीर्थे श्री बृहत्पारतर-गणाधीश श्री
जिनमाणिक्यसूरि पट्टालकरक, श्री पातिसाह प्रतिबोधक युगप्रधान
श्री जिनचन्द्रसूरि पुज्यमान चिरंनदतु । आचन्द्रार्क ॥

(अष्टदल कमल पर श्री महावीरजी के मन्दिर मे (वैदो का),
वीकानेर ।)

श्री शत्रुंजय महातीर्थ की आपने कई बार यात्रा की थी । वहा
रतरगच्छके सघने आपके उपदेश से कई नए मन्दिर निर्माण
कराये थे × । और भी सौरीपुर, हस्तिनापुर, गिरनार, आवू,
आरासन, राणकपुर, वरकाणा, संरेश्वर आदि बहुत-से तीर्थों की
यात्राएँ की थी । जिसका उल्लेख रत्ननिधान कृत गीत और अपूर्ण

* यह लेख हमें प्रकरण लिखते समय पालीताना से प्रघर्षक मुनिवर्य श्री
छलसागरजी महाराज से प्राप्त हुआ, इस सधत् के और भी कई लेख
आप श्री ने हमें भेजनेकी कृपा की है, [परन्तु वे अपूर्ण होते से यहाँ नहीं
दिये गये हैं ।

× देखो परिशिष्टान्तर्गत प्रशस्ति में ।

बड़ी गहली में है -। स्वर्गीय श्रीजिनदत्तसूरिजी और जिनकुशल-सूरिजी, शासन-सेवा में आपको पूर्ण सानिध्य करते थे।

सूरिजी के रचे हुए कई स्तवनादि भी हमें उपलब्ध हुए हैं।

सूरिजी उच्च चारित्र्यान और निष्पृही थे, उनके किसी भी प्रकार का अनुचित प्रतिबन्ध नहीं था। कहा जाता है कि वीकानेर में जब आप भगवतीसूत्र वाचते थे, एक दिन व्याख्यान के समय में कर्मचन्द्रजी कार्यवश उपस्थित न हो सके। सूरिजी ने व्याख्यान देना प्रारम्भ कर दिया, कर्मचन्द्र की मातुश्री ने निवदन किया "भगवन् ! मेरा पुत्र आपका परम भक्त और आगम श्रवणका अभिलाषी है, इसलिये आपको उसके आने के पश्चात् ही व्याख्यान प्रारम्भ करना उचित था।" सूरिजी ने अपनी उच्च चारित्र की प्रभा का इन शब्दों में परिचय दिया "मे इस प्रकार किसी भी व्यक्ति का प्रतिबन्ध नहीं रख सकता। मैं अपने विचारों में किसी को ऊच नीच दृष्टि से नहीं देखना। समा में उपस्थित सभी सज्जन गण मेरे लिये कर्मचन्द्र ही हैं। एक व्यक्ति के लिये व्याख्यान का समय आगे-पीछे करना साधुओं का कल्प नहीं है।" सूरिजी का यह स्पष्ट वक्तव्य सुनकर कर्मचन्द्र की माता ने कुछ रोप दृष्टि से चारों ओर दृष्टा, तो उन्हें सबत्र कर्मचन्द्र ही कर्मचन्द्र बैठे दृष्टि-गोचर हुए। वस तभी से उन्होंने समझ लिया कि हमारी ओर से जो भक्ति है, वह अपने आत्मकल्याण के निमित्त ही होनी

चाहिये, मूरिजी तो निष्पृष्ट हैं। उपस्थित जनता पर सूरिजी के इस सचोटे उत्तर का काफी प्रभाव पडा †।

“गणधर शार्द्धशतक भाषान्तर” * मे लिखा है कि एक बार सूरिजी किसी नगर मे पधारे। वहा एक धर्म-द्वेषी कापालिक योगी, लोगो को डराने के लिये काले साँप का रूप धारण कर उपाश्रय मे आ धमका। सब ने इस उपद्रव निवारण के लिये सूरिजी से निवेदन किया, सूरि-महाराज ने शेषनाग का आकर्षण कर, उपद्रव दूर किया।

कापालिक ने सूरिजी से ईर्ष्या धारण कर और अपनी मन्त्रशक्तिते गर्वान्वित होकर उन्हे छलने के लिये अनेक प्रकार के प्रपञ्च रचे और सूरिजीको करामात प्रकट करने के लिये घोषणा की। सूरिजी ने मृदु वचनो से शान्तिपूर्वक समझाने का बहुत प्रयत्न किया, और यह भी कहा “अहो योगी ! इन भिख्या प्रपंचो मे क्या रसा है ? यह सब छोड, परमात्मा का भजन करो ! जिससे आत्मकल्याण हो।” किन्तु योगी सोधे ही कब माननेवाला था, उसने अधिकाधिक उपद्रव और उत्पात करना प्रारम्भ किया। इतना ही नहीं कई चमत्कार दिखाकर लोगोको धार्मिक श्रद्धासे विचलित करनेका भी दुस्साहस किया। बहुत-से आडम्बर रचे, तब सूरिजीने शासन प्रभावना के हेतु सूरिमन्त्र के प्रभाव से उन सब उपद्रवो का विनाश कर उससे अधिक चमत्कारिक बातें दिखाकर श्रावको को धर्म मे दृढ किये। कापालिक

† यह प्रवाद सक्षेप से (बम्बई से प्रकाशित) जिनचन्द्रसूरि चरित्रमें भी लया है।

* यह ग्रन्थ इन्दोर के “श्रीजिन कृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भंडार” से छप चुका है।

भी आपकी असाधारण प्रतिभा से प्रभावित होकर भक्त बन गया।

एक बार सूरिजी और योगी के मंत्रविद्या सम्बन्धी वार्तालाप होत हुए कोई अपूर्व कार्य कर दिखाने का परामर्श हुआ। इसके फलस्वरूप सूरिजी ने वडनगर से जैन मन्दिर को आकाश मार्ग से उड़ा कर रतलाम से १० मील पर स्थित सेमलिया नगर में स्थापित किया। वह शान्तिनाथजी का मन्दिर अब भी मालव देश का एक तीर्थ माना जाता है, इस मन्दिर में सूरिजी की चरण पादुकाएँ भी हैं। वहाँ प्रति वर्ष भाद्रपदा सुदि २ को मन्दिर में वर्षा होती है, यह प्रत्यक्ष चमत्कार है। योगी क लाया हुआ महादेवजी का मन्दिर भी अरणोद के पास विद्यमान होनेका सुना जाता है।^{१५}

एक बार सूरिजी गोडवाल दश में पधार, वहाँ के श्रावको को धार्मिक तत्त्वों से अनभिज्ञ और विवेकहीन देखकर धर्मका मद्द्नीय दिया, जिसकी एक कथावत प्रसिद्ध है—जिनचन्द्रसूरि बावो भले ज आवियो, साठे वरसे हाथ में पाणी † लरावियो।

एक बार सूरिजी सेत्रावा पधारे, वहाँ के सघ ने आपका खूब स्वागत किया। उस नगर में महर्द्धिक चोपडा गोत्रीय धन्ना शाह निवास करते थे, सन्तान न होने के कारण वे सदा उदासीन रहते

* ऐसी ही चमत्कारिक किम्बदन्ती नाटोल क मन्दिर के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है। देखें—बडवा जैन मित्रमडलका सम्मेलनसिलर स्पेशल ट्रेन 'स्मरणाक' ओर का/० हेरलड के 'इतिहास साहित्य' अंक में यशोभद्रसूरिजी का चरित्र।

† उन भद्रतपानोंको व्रतधारक बनाये।

थे। सूरिजी को समर्थ जानकर उन्होंने अपना दुख प्रकट किया। सूरिजी ने उत्तर में कहा कि धर्म ही इच्छित पदार्थदायक है, अतः निःशक होकर विशेष रूप से धर्मारोपण करो। जिससे ऐहिक और पारलौकिक समस्त कार्य सिद्ध हो। सूरिजी के उपदेश से वे विशेष मत्तयोगके साथ धर्मध्यान करने लगे। क्रमशः उसके सात पुत्र हुए। एक बार जब सूरिजी फिर सेत्रावा आये तब उनके पुत्र चोलाजी और भोलाजीने उनसे दीक्षा ग्रहण की। कई वर्षों बाद उन्होंने सूरिजी की आज्ञा से सेत्रावा में चातुर्मास किया, उस समय में महामारी का रोग फैला, तब उन्होंने उपद्रव शान्त कर लोगों को चमत्कृत किया। समाधि-मरण से वहीं दोनों दिवंगत हुए, सब ने उनके स्तूप बनाये। आज भी वे स्तूप विद्यमान हैं और चमत्कारिक हैं।

उपरोक्त चमत्कारी बातों को हमने बहुत ही संक्षेप करके लिखा है, विस्तार से जानने के लिये उपरोक्त ग्रन्थ देखना चाहिये।

वास्तव में महापुरुषों का जीवन ही चमत्कार-मय होता है। उनके पवित्र आचार और अमोघ वाणी जन समुदाय को मंत्रमुग्ध कर लेती हैं, और भक्तों के कार्य अपने आप ही सिद्ध हो जाते हैं। सूरिजी जहाँ विचरते थे, वहाँ दुष्काल में भी वर्षा हो कर सुकाल हो जाता था, महामारी रोग आदि उपशान्त हो जाते थे, ऐसी बहुत-सी बातें पट्टावलियों में पाई जाती हैं।

“महाजन वंश मुक्तावली” में लिखा है कि सूरिजीने १८ गोत्रों को प्रतिबोध देकर जैन बनाए और यह भी लिखा है कि जेसलमेर में किसनगढ़ के राठौर मोहनसिंह और पाचीसिंह को प्रतिबोध दे

कर व्रतधारी श्रावक बनाए, उनसे 'मुहणोत' और 'पींचा' गोत्र प्रसिद्ध हुआ।

पट्टावलियों में लिखा है कि आपने प्रतिमोत्थापक लुम्पकमन का सूत्र जोरो से उच्छेद कर के श्रावको को शुद्ध श्रद्धावान् बनाए।

गणाधीश्वर श्री हरिसागरजी महाराज स० १६६० वै० व० १० के कार्डमें लिखते हैं कि—“अहमदावादमें ओसवाल जातिमें एक 'कडीया' नामक गोत्र है। उस गोत्रवालोको श्रीजिनचन्द्रमूरिजी महाराजने सुतो बनाए हैं। श्रीयुक्त चिमनलालजी * कडीया ठि० सेरनापाडा मा मु० अहमदावाद गुजरातको पत्र देनेपर जरूर विशेष हकीकत मिलेगी, इन लोगा का बनाया हुआ मन्दिर अहमदावाद में है। धर्मशाला पालीतानेमें है, मोतो कडिया की धर्मशाला के नाम से प्रसिद्ध है।”

सूरिजी का आदर्श और पुनीत जीवन हमें सन्मार्गगामी बनने में सहायक हो यही अभिलाषा रखते हुए कविवर समयसुन्दरजी रचित सुगुरु महिमा छन्द द्वारा सूरिजीका विमल यशोगान गाते हुए चरित्र सम्पूर्ण किया जाता है।

नोट—चमत्कारी घटनाओं और गोत्र प्रतिबाध के विषय में प्रमाणा-भाव से हम कुछ नहीं कह सकते। ओसवाल जाति के इतिहास में “मुहणोत” गोत्र स० १३५१ कार्तिक छद्दी १३ को सेढनगर में मोहनजी के प्रतिबोध पाने से प्रसिद्ध होना लिखा है।

* गणाधीशजीके लिखे अनुसार हमने इन्हें Reply कार्ड दिया था, लेकिन उसका कोई उत्तर न मिला।

॥ सुगुरु महिमा छंद ॥

अवलियो अकवर तास अगज, सबल शाहि सलेम ।

शेरु अवुल आजम खानखाना, मानसिंह सु प्रेम ॥

रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय सुरतान ।

वड वडा महिपती वयण मानइ, दियइ आदर मान ॥१॥

गच्छपति गाइयेंजु, जिनचदसूरि मुनि महिराण

अकवर थापियोजी, युगप्रधान गुण जाण ॥आ०॥

काश्मीर कावुल सिन्व सोरठ, मारवाड (मेवाड ।) ।

गुजरात पूरव गौड दक्षिण, समुद्रतट पय लाड ॥

पुर नगर देश प्रदेश सगलै, भमइ जेति भाण (भानु०) ।

आपाढ मास अमीय वर्षे, सुगुरु पुण्य प्रमाण ॥२॥गछ०॥

पच नदी पाचे पीर साध्या, खोडिया क्षेत्रपाल ।

जल वहै जेथ अगाध प्रवहण, थाभीया तत्काल ॥

...

फित किता कहु बखान ।

परसिद्ध अतिशय कला पूरण, रीझवण रायाण ॥३॥गछ०॥

गच्छराज गिरुयो गुणै गाढो, गोयमा अवतार ।

बड बखतवत बृहत्खरतर, गच्छकौ सिणगार ॥

चिरजीवो चतुर्विध सघ सानिध, करउ कोडि कल्याण ।

गण 'समयसुन्दर' सुगुरु भेटया, सफल आज विहाण ॥४॥गछ०॥

इति परम प्रभावक युगप्रधान सुगुरु महिमा छन्द सम्पूर्ण ।

परिशिष्ट

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
॥ इच्छ ॥

॥ १६ ॥
भाद्रवा सुदि ६
नाम ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ इच्छ ॥
॥ १६ ॥
भाद्रवा सुदि ६
नाम ।

॥ १६ ॥
भाद्रवा सुदि ६
नाम ।

सूरि

५६	अहिमदीवहि	५५	वत्रय	लिनगुमिणीसंवालाकाएवइच्छे
५७	पठलि	५६	गमेश	पणजासहेइतिनगहिसावाअसथाकम
५८	धलाइत	५७		भक्षिपसेइसथा =
५९	अहमदावादि	५८	का	कामदसखिष्टाकगवा
६०	पटलि	५९	ननु	विश
६१	महिधइ	६०	न	अलिष्ट
६२	वीकानेर	६१	पना	रुमिवादिवाअप्योजोधुमवकी॥
६३	वीकामेर	६२	असि	दावासंघरइतेइदराअनगमिअपथा
६४	जेदेरइ	६३		
६५	मिनवइ	६४		
६६	पनाइ	६५		
६७	आसदावादि	६६		
६८	पटलि	६७		

निम...

परिशिष्ट (क)

विहार पत्र नं० १

॥युगप्रधान चन्द्रसूरि कृत नांदि अनुक्रम 'इच्छड'॥

- १ चन्द्र स० १५६५ चैत्रवदि १२ जन्म नाम 'सुरताण' स० १६
दीक्षा 'सुमतिधोर' नाम, स० १६१२ भाद्रवा सुदि ६
गुरो पद स्थापना 'श्रीजिनचन्द्रसूरि' नाम ।
- २ मटण
- ३ विलास
- ४ मेरु १२ जेसलमेरु चउमास १सूरिपद राउल 'मालदे' दिवराव्यो
- ५ विमल १३ वीकानेर चउमास २
- ६ कमल १४ वीकानेरि च० ३ परिग्रह त्याग विक्रमपुरं ।
- ७ कुजल १५ महेवइ चउमास ४
- ८ विनय १६ जेसलमेरु ५
- ९ हेम १७ पाटणि ६ ऋ० चर्चा जय अभयदेव सूरि
- १० राज १८ रमभाइत ७
- ११ आनद १९ पाटणि ८
- १२ निधान २० वीसलनगरि ९
- १३ रत्न २१ वीकानेर १०
- १४ विजय २२ जेसलमेरु ११
- १५ तिलरु २३ वीकानेर १२
- १६ सिंह २४ नहुलाइ १३

३६ दत्त ४५ सूरति ३४

३७ पति ४६ अहमदानाद ३५

३८ कल्याण ४७ पाटणि ३६ तिहा चउमास करि अहमदानाद आची सघ वडावी सभाइति आव्या, तत्र श्रीजी X ना तेडा आव्या, अमाड सुदि ८ प्रस्थान ६ चाल्या । फागुण सुदि १० दिनि पटुता

३९ शेरर ४८ जालोर ३७

४० कीर्त्ति ४९ लाहोरि ३८

४१ मेरु ५० हापाणइ ३९ रातड चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया पर अव थया पुस्तक आव्या पाठा ।

४२ सेन ५१ लाहोरि ४०

४३ सिंह ५२ हापाणइ ४१ ऋषिमती - कृन कुमतिकुदाल ग्रन्थ (सो) टउ श्रीजी हुजूर कीधउ फुरमाण (काट्या ?)

४४ कलग ५३ जेमलमेर ४०

* श्रीजी बादशाहका सकेत वाचक है यहा सम्राट अकबर और इसके बाद सम्राट जहांगीरके लिये यही सकेत लिखा है ।

* ऋषिमती शब्द "तपा गच्छीय" का संकेत वाचक है ।

श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देशाडने 'युगप्रधान निर्वाण रास' के सार ऋषिमती से लु का मतका निर्देश किया है, लेकिन परतर गच्छीय ग्रन्थों में अनेक जगह 'ऋषिमती' विशेषण तपागच्छालो के लिये ही प्रयुक्त किया है ।

- १७ हप २५ वापडाऊ १४
 १८ प्रमोद २६ वीकानेरि १५
 १९ विगाल २७ महिम १६ आ०कुं०अ०म०धू०चढ०मू०स्यु०नेमिचैत्य
 विचि सौरोपुर यात्रा, चन्द्रवाडि हथिणाउरि आव्याः
 २० सुंदर २८ आगर १७
 २६ नारनउलि १८
 २१ नन्दि ३० रुस्तकि १६
 २२ सिंधुर ३१ वीकानेर २०
 २३ मदिर ३२ वीकानेर २१ वीकानेरथो जेसलमेरु आवता
 फलवधी चैत्य ताला उवाड्या
 २४ कल्लोल ३३ जेसलमेरु २२
 २५ धरम ३४ देराउरु २३
 २६ वल्लभ ३५ जेसलमेरु २४
 २७ नदन ३६ वीकानेर २५
 २८ प्रधान ३७ सेरुणा २६
 २९ लाम ३८ वीकानेर २७
 ३० वर्द्धन ३९ जेसलमेरु २८
 ३१ जय ४० आसणिकोटि २६
 ३२ प्रभ ४१ जालोर (३०) ऋपिमती चरचा जय ३०
 ३३ सागर ४२ पाटणि ३१
 ३४ समुद्र ४३ अहमदावि ३२
 ३५ कुजर ४४ खंभाइत ३३ सघ आग्रहि अहमदावाड आवी
 श्रीशत्रुजय यात्रा

- ३६ दत्त ४५ सूरति ३४
- ३७ पति ४६ अहमदाबाद ३५
- ३८ कल्याण ४७ पाटणि ३६ तिहा चउमास करि अहमदाबाद आवी
सघ वदावी रभाइति आव्या, तत्र श्रीजी X ना तेडा
आव्या, अमाड सुदि ८ प्रस्थान ६ चाल्या । फागुण
सुदि १२ दिनि पहुता
- ३९ शेरर ४८ जालोर ३७
- ४० कीर्त्ति ४९ लाहोरि ३८
- ४१ मेरु ५० हापाणइ ३९ रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया
पर अव थया पुस्तक आव्या पाठा ।
- ४२ सेन ५१ लाहोरि ४०
- ४३ सिंह ५२ हापाणइ ४१ ऋषिमती - कृत कुमतिमुद्दाल ग्रन्थ (रो)
टउ श्रीजी हुजूर कोधउ फुरमाण
(काड्या ?)
- ४४ कलज ५३ जेमलमेरु ४२

* श्रीजी बादशाहका रुकेत वाचरु है यहा सम्राट अकबर और इसके बाद सम्राट जहांगीरके लिये यही रुकेत लिखा है ।

* ऋषिमती शब्द "तपा गच्छीय" का सकेत वाचक है ।

श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देशाहने 'युगप्रधान निर्वाण रास' के सार ऋषिमती से लु का मतका निर्देश किया है, लेकिन खरतर गच्छीय ग्रन्थों में अनेक जगह 'ऋषिमती' विशेषण तपागच्छीयों के लिये ही प्रयुक्त किया है ।

- इति नादि।५४ अहमदाबादि ४३ माह सुदि १० वडी प्रतिष्ठा सोमजी
 ५५ सभाइत ४४ श्री राजाजी ना तंडा .
 ५६ अहमदाबादि ४५ तत्र वरहानपुरि श्रीजोयें चीनारया,
 पठइ ईडर प्रभुए गामे थइ घगा लाभ लेड राजनगरि
 आव्या, अत्र श्री कर्मचन्द्र मन्त्री परोक्ष थया
 ५७ पाटणि ४६
 ५८ सभाइत ४७
 ५९ अहमदाबादि ४८
 ६० पाटणि ४९
 ६१ महेवइ ५० का० कम्मइ प्रतिष्ठा करावी
 ६२ वीकानेर ५१ तत्र प्रतिष्ठा
 ६३ वीकानेर ५२ तत्र प्रतिष्ठा
 ६४ लपेरइ ५३ राजा 'सूरि'वादिवाभाव्यो जोधपुर थकी ।
 ६५ मेडतड ५४ अहमदाबा (ठ) सत्र रइ तेडड राजनगरि
 आव्या
 ६६ सभाइत ५५
 ६७ अहमदाबादि ५६
 ६८ पाटणि ५७ जिनशामन नै कामै आगरै श्रीजी कन्हइ
 पधारया, पछै पट्दर्शन मुगता कराव्या
 ६९ आगरइ ५८
 ७० वीलाडै ५९ स्वर्ग

इसके पश्चात् जिनदत्तसूरिजी सम्बन्धी कई बातें लिखी हैं लेकिन अप्रासंगिक होनेसे उसकी नकल भी नहीं दी गई और न ब्लाक ही बनाया गया ।

(पत्र १ हमारे संग्रह में तत्कालीन लिखित)

* जोधपुर के तत्कालीन नरेश सूरसिंहजी (सूर्यसिंहजी) ।

विहार पत्र नं० २

सवन् पनरड ६५ वैशाख (र) वदि १२ जन्म । जन्मनाम	
	'सुरताण' दीघा ।
सवन् १६०२	दीक्षा लीधी ॥ 'सुमतिधीर' नाम दीघउ ॥
सवन् सोलडसड वारोतरड भादवा सुदि ६ गुरुवारड पद दीघउ	
सवन् वारोतरड	श्री जेसलमेरु चउमास
सवन् तेरोतरड	वीकानेर चउमास ।
सवन् १४	वीकानेर चउमास, परिग्रह त्याग । म०
	सागड महोच्छव कीघउ ।
सवन् पनरड	महिवड चउमास । तिहा छम्मासी तप
सवन् सोलोत्तरड	जेसलमेरु चउमास, वीदा०
सवन् सतरोतरड	पाटण च०, न० चर्चाजय अभयदेव सूरि
सवत् १८	रुभाइत चउमास, सा० कम्म नड आग्रह
	चउ०
सवत् उगणीसोत्तरड	पाटणि चउमास
वीसोत्तरड	वीकानेर ।
इरुवीसोत्तरड	वीकानेर, सागा आग्रह ।
वात्रीसोत्तरड	जेसलमेर, विचि नागोर हसनकुलीखान
	जयलाभ पडसारउ
तेवीसोतरड	वीकानेर
चउवीसोत्तरड	नहुलाइ, लरकर नड भय काती-
	सुाड १० निवर्त्यउ ।
प चवीसोत्तरड	वापडाऊ

- इति नादि।५४ अहमदावादि ४३ माह सुदि १० बडी प्रतिष्ठा सोमजी
 ५५ रंभाइत ४४ श्री राजाजी ना तेडा
 ५६ अहमदावादि ४५ तत्र वरहानपुरि श्रीजोयें चीतारया,
 पठइ ईडर प्रमुख गामे थइ घगा लाभ लेड राजनगरि
 आव्या, अत्र श्री कर्मचन्द्र मन्त्री परोक्ष यथा
 ५७ पाटणि ४६
 ५८ रंभाइत ४७
 ५९ अहमदावादि ४८
 ६० पाटणि ४९
 ६१ महेवइ ५० का० कम्मइ प्रतिष्ठा करावी
 ६२ वीकानेर ५१ तत्र प्रतिष्ठा
 ६३ वीकानेर ५२ तत्र प्रतिष्ठा
 ६४ लवेरड ५३ राजा 'सूरि'वादिवाआव्यो जोधपुर थकी ।
 ६५ मेडतइ ५४ अहमदावा (द) सत्र रड तेडड राजनगरि
 आव्या
 ६६ रंभाइत ५५
 ६७ अहमदावादि ५६
 ६८ पाटणि ५७ जिनशामन नै कामै आगरै श्रीजी कन्हइ
 पधारया, पछै पटदर्शन मुगता कराव्या
 ६९ आगरइ ५८
 ७० वीलाडै ५९ स्वर्ग

इसके पश्चात् जिनदत्तसूरिजी सम्बन्धी कई बातें लिखी हैं लेकिन अप्रासंगिक होनेसे उसकी नकल भी नहीं दी गई और न ब्लाक ही बनाया गया ।

(पत्र १ हमारे संग्रह में तत्कालीन लिखित)

* जोधपुर के तत्कालीन नरेश सूरसिंहजी (सूर्यसिंहजी) ।

बिहार पत्र नं० २

सबत् पनरइ ६५ वैशाख (ग) वदि १२ जन्म । जन्मनाम	
	'सुरताण' दीघा ।
सबत् १६०२	दीक्षा लीधी ॥ 'सुमतिधीर' नाम दीघउ ॥
सबत् सोलडसट वारोतरड भादवा सुदि ६ गुरुवारइ पद दीघउ	
सबत् वारोतरड	श्री जेसलमेरु चउमास
सबत् तेरोतरड	वीकानेर चउमास ।
सबत् १४	वीकानेर चउमान्म, परिग्रह त्याग । म०
	सागड महोच्छव कीघउ ।
सबत् पनरड	महिबइ चउमास । तिहा उम्मासी तप
सबत् सोलोत्तरड	जेसलमेरु चउमास, वीदा०
सबत् सतरोतरड	पाटण च०, न०, चर्चाजय अमयदेव सृरि
सबत् १८	रभाटन चउमास, सा० कम्म नइ आप्रह
	चउ०
सबत् उगणीसोत्तरड	पाटणि चउमास
धीसोत्तरइ	वीकानेर ।
इरुवीसोत्तरइ	वीकानेर, मागा आप्रह ।
वापीसोत्तरड	जेमलमेर, त्रिचि नागोर हसनकुलीखान
	जयलाभ पडसारउ
तेवीसोतरड	वीकानेर
चउवीसोत्तरड	नहुलाइ, लडकर नउ भय काती-
	सुदि १० निवर्त्यउ ।
प चवीसोत्तरड	वापडाऊ

छावीसोत्तरइ वीकानेर

सतावीसोत्तरइ महिम, शा-कुं- अ- म-थूम । चन्द्र-मू-सु नेमि चै

विचि सोरीपुर यात्रा चन्दवाड हथणाउर पठइ आन

अठावीसोत्तरइ आगरइ

उगणतीसइ नारनउल

तीसइ रुस्तक चउमास

इगतीसइ वीकानेर

वत्तीसइ वीकानेर

तेतीसइ जेसलमेर

चउतीसइ देराउर

पइंतीसइ जेसलमेर

छत्तीसइ वीकानेर

सइतीसइ सेरुणइ

अडतीसइ वीकानेर

गुणतालइ जेसलमेर

चालइ आसणीकोट

इकतालइ जालोर चउमास । चर्चाजय

वयालइ पाटण चउमास । चर्चाजय --

* बिहार पत्रमें सूरिजी की विजय लिखी है, यही बात विस्तार
कुम्भचन्द्र कृत "सविहित परपरा" नामक ग्रन्थकी प्रशस्तिमें इस प्रकार
लिखी है —

त्रयालड	अहमदाबाद
चम्मालड	रभान
पइतालड	मूरत चउमास
छयालड	अहम्मदाबाद
मडतालड	पाटण श्रीजी ना तेडा आव्या आसा० सु० ८ चात्या
अढतालड	जालोर चउमास
गुणपचामड	लाहोर चउमाम
पचासड	हापाणड, चउमास
डकावनड	लाहोर
वापनड	हापाणड, चोर आधा थया पोथा लाधा
तिपनड	जेसलमेरु
चउपनड	अहम्मदाबाद, तत्र श्रीजी रा वरहाण श्री जी पीतारा
पचाननड	रभान

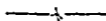
द्विगे पत्तनके च राजनगरे, विद्वत्समक्ष पुन ,
 कृत्वाष्टादश वासराणि सतत, यावच्च षाड भृशम् ।
 पूज्य श्री जिनचद्र सूरि गुह्या, मूकी कृता येन च ।
 किञ्चित् ज्ञत्व मदोद्धता, विजय युक्त सेनादि पाण्डित्या ॥१॥

भावार्थ — पाटण और राजनगरमें जिनचद्रसूरिजीने विजयतोमसूरि आदिपरी
 १८ दिन तक विद्वानोंके समक्ष शास्त्रार्थ करण पराजित किया ।

‘विजय प्रशस्ति काव्य’ से ज्ञात होता है कि यह नाम्नाभं नाम्नाण्ड
 रचित ‘प्रवचन परीक्षा’ के सम्बन्धमें हुआ था । उसमें विजयतोमसूरि
 विजय लिये हैं, संभव है वह अपने २ गच्छके पक्षपातके कारण हों ।

छपनइ	अहम्मदावाद
मतावनइ	पाटण चउमास
अठावनइ	रभाइत
गुणसठइ	अहमदावाद
साठइ	पाटण चउमास
उगमठइ	महेवइ, काकरियइ कम्मइ प्रतिष्ठा करावी
वासठइ	वीकानेर, तत्र प्रतिष्ठा
तेसठइ	पिण वीकानेर, प्रतिष्ठा
चउसठइ	लवेरइ चउमाम, श्रीराजाजी वादण आयो जोधपुरथी
पडमठइ	मेडतइ च०, अहमदावाद रा तेडा आया ।
छामटइ	रभाइत
सतसठइ	अहम्मदावाद
अठमटइ	पाटण चौमास
गुणहत्तरइ	आगरइ चौमास
सत्तरइ	वीलाडइ चउमास ।*

(पत्र १ हमारे सम्रह मे १८ वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे
कवि 'राजलाम' के लि०)



* विशार पत्र आदि की प्रतियों में व के स्थान पर व लिखा हुआ है
हमने यथाप्रसंग व के स्थान व कर दिया है ।

फरिशीष्ट (रु)

॥ क्रिया उद्धार नियमपत्र ॥

॥ ६० ॥ श्री प्रवचन वचन रचनायै ॥ ॐ मिद्धि ॥ श्रीमद्वि-
क्रमदुर्गस्थैस्त्र भवद्भि श्रीमज्जिनचन्द्रसूरि सूरेश्वरैर्विप्रि
दुर्विधि वारण वाग्ण केडारि किगोर वरै सुमति सुविहित
यति सनती रनुरुपयाद्भि सप्रेप्य प्रेक्षया सुरय यामि जगणभूत्रणा
ससत्रिना मम्मत समति मगत्याद् भ्रामोद विनोद कोविदपुर्णैरुरी-
कृता विगतायेन श्री मन्मुविधिसधेन तथेतिकरणपूर्वकमुत्तमागे
निवेशिता सा चैपा ॥

(१) चउमासि माहे एकड क्षेत्रि एक सामग्री × रहड । वली कोई
बीजा तप प्रमुत्त नड कार्थि रहड, तउ मुख* विहारीरा कथन माहि
रहड ॥ १ ॥

(२) जीयड क्षेत्रड जे सामग्री रहिवा आवड तीयड क्षेत्रड वस्त्र
कत्रलादिक विहरड । साधुनड प्रत्येकि वेस ३ विहरिवा, साध्वी नड
वेस २, कदाचिनि तिहा न मिलड तउ जिहा सामग्री न रही हुड तिहा
विहरड, आस्ता पूर्वक ॥ २ ॥

(३) पाचे तिथ्ये विगड निषेध सर्वदा, जाल ग्लानाडि विना ।
जिगेप तप रा करणहार यथाशक्ति भोक्त्रा ॥ ३ ॥

(४) अष्टमी चतुर्दशी समर्थ साधु उ (प) वाम करड ।
कदाचि न करड तउ आम्बिन्ड नीवी करड ॥ ४ ॥

× सघाडा + मुख्य-सघाडे के अधिपती

(५) लघु शिष्य वृद्ध ग्लान रा कार्य टालि, बोजड टकि न निह-
रणा आहार । उत्तर वारणा, पारणा, मारग मोकला ॥५॥

(६) जिणि क्षेत्रि नवउ शिष्यादिक मिलड तेहनड पदीकः मिलड
तेहनड पदीक दीक्षा दियइ, पर गणीश× दीक्षा न दीयइ । नवीन शिष्य
नइ १२५ कोश माहि पदीक न हुवड तउ गणि पिण वेप पहिरावड ।६।

(७) गणीश तप प्रमुग्ग नादि न करड ॥ ७ ॥

(८) एकल ठाणइ विहार न करड । एकलउ क्षेत्रि पिण न
रहड । स्वच्छन्द पणइ एरुउ रहड ते माडलि वाहर ॥ ८ ॥

(९) वणारिस उपाध्याय पदीके जे शिष्य दीख्यौ हुवइ ते
पारसी चोमासड पर्युपणा दिने वादता पहिलउ दीख्यउ ते वडउ, पठइ
दीखाणउ ते लघु । पठइ जि श्रीपूज्या तीरड वडी दीख्या लियइ,
तिहा थकी वड लहुडाड व्रत पर्याय गिणणउ । नाम पिणि वडी
दीक्षायइ श्रीपूज्य दियइ । माडलि रा तप पहिला वहइ, विहु उपधाना
ताइ अर्गला नहीं । वहि सकइ ते वहउ ॥ ९ ॥

(१०) श्री पूज्य जिणि देसि हुवइ तियइ देस माहे जे शिष्य
हुवइ, साधु नड ते पूज्य पूठावी चारित्र दियइ । कोश ४० माहि
पूठाविवा । उपरान्त हुवड तउ दीक्षा देता पूठावण रा विशेषको नहीं
श्री पूज्ये दूया देइ ज मेल्या छड श्री वीकानयरा देस माहि पूज्य
हुवड तउ रिणी प्रमुग्ग वीकानेर रा देस माहिला साधु श्रीपूज्य
पूठावी दीखइ ॥ १० ॥

*वाचक, उपाध्याय आदि पदो से विभूषित । × गण—इश = समुदाय
(सखाबा) का अधिपति, तथा 'गणि' पद भी दिया जाता है ।

(११) जिणा जिग्रड तीरड दिक्षा लीधो हुवड अनड गुरुना कथन माहि न चालड अनड सघाडा बाहिर नीसरड, तेहनड वीजा गच्छ-वासी साधु श्री पूज्यरा आदेश पाखड कोई राखिवा न ल्हइ ॥११॥

(१२) तथा अहोरात्रि माहे ५-७ शत सज्ञाय करणा । भणिवड गुणिमड तेहू सज्ञाय ॥ १२ ॥

(१३) मा वेटड स्त्री पुरुष अनड एकली स्त्री भाई वहिनि ए श्री पूज्य पूजावो इज चारित्र लियड ॥ १३ ॥

(१४) प्रहर उपरान्ति उपाश्रय माहि एकली श्राविका एकली साध्वी नावड । काड पूठिवा कि वादिवा आवड तड ४।५ मिली नड आवड ॥ १४ ॥

(१५) पाडिहेरु वस्त्र कम्बलादिक सरतड-- वरतड न लइणा । कारणि मोकला ॥ १५ ॥

(१६) उत्कृष्ट मध्यम जघन्य भागड ३।५।७ वड ओढिवा, नया पुराना पातला जाडा विचारि नड

तिनिन किसिणे जहन्ने, पचड इठ दुन्वलाड गिन्हैवा ।

सत्तय परिजुन्नाड, एय उक्कोमग गहण ॥ १ ॥

॥ इतिश्रो बृहत्कल्प वचनात् ॥ १६ ॥

(१७) वाणिया, ब्राह्मण जाति रे जोग दीक्षा देणी । १५ वर्ष माहिला ब्राह्मण दोसिया । जीयइ ब्राह्मण रइ कुलि मय मास न वापरड, ते दोखणा परीक्षा करि ॥ १७ ॥

(१८) विपम मार्गि साधु सघात निश्राड आगलि पाठलि जिम सजम निर्वहड, तिम निहार करणा साधु साध्वी ए ॥ १८ ॥

* उसके बिना भी चल सकता हो तो

(१६) जेपइ कालि एकइ नगरी एकइ उपाश्रयि कडाचि रहिवा
रा योग न हुवइ, तउ प्रभाति सज्ञाय एकठा करणा । जूए २ उपाहरइ
उपाश्रए नउ ॥ १६ ॥

(२०) पडिक्कमणउ वलि माडलि सगले जतिये एकठउ करणउ,
एकणि उपासरइ रहता जूयउ पडिक्कमणउ जको करइ, वि मुए-
विहारी, पदीक रा आदेश लियइ कारणि ॥ २० ॥

(२१) पोसाल-वाला माहतमा^५ मोकला तेह सउ परिचा(परिचय)
न करणा । माहतमा द्रव्य लिंगीया नट भणावणा न करणा । कोई
सुविहित माहतमा रूडा जाणि भणावइ तउ भणावउ । ऋपीश्वर आप
माहतमा तीरइ भणइ तउ सघनी अनुमति भणइ भणावइ ॥ २१ ॥

(२२) साध्वी एकइ खेत्रि एक वरस उपरान्त न रहइ, जिणइ
उपाश्रयि चउमासि कीधी हुवइ तिहा चउमासि नउ पारणइ वि मास-
क (लप) वोजइ थानकि रहइ, पछइ मूलगइ उपाश्रयि रहइ, जिहा
सामग्री रहइ ते साध्वी नो वस्त्र पात्रनी चिन्ता करइ, अनइ साध्वी
पिणि तेहना कथन माहि चालइ ॥ २२ ॥

(२३) जेप काल हुती चउमासि माहि साधु साध्विए विशेष
तप करणा ॥ २४ ॥

(२४) साध्वी पुस्तकादिक साधु नइ पूजा (छी?) बहिरइ ॥२४॥

(२५) यतियइ आपणइ काजि क्रोत पात्रादिक न करणा ॥२५॥

(२६) जको विशेष वइरागि आपणइ भावि चारित्र लियइ सु
जिहा तेहना मन हुवइ ते तिहा चारित्र लियइ ॥ सामान्य वइरागि

* मत्थेरण — जिन्हें कि क्रिया उद्धार के समय शिथलाचारी रहने से
साधु रूपसे निकाले गये थे ।

जे जिण्ड प्रतिबोच्या हुवड ते तियइज रानि दीक्षा लियइ जउ ठामि ठामि मुरा घातड तउ न दीखणा ।

(२७) जेहना मावित्र (माता-पिता)काड वाळ्ठा करड ते लघु छात्र नड सप नड रुहि दीक्षा देणी । सघड यथा योगि उद्यम करणा । यतियड जिम उड्डा हवड तिम न करणा ॥२७॥

(२८) साधु साध्वी नड जे पुस्तक पाना जोइयइ ते भिन्न भिन्न आवक नइ न कहणा, यथा योग्य ते सघ नइ कहणा, श्री सघड यथा योग्य चिन्ता करणी ॥ २८ ॥

(२९) गच्छ माहि ऋषीश्वरे माहो माहि पठन पाठन रा उद्यम करणा । भणण हारे पिणि विनयपूर्वक भणिवा ॥२९॥

(३०) कोड वडरागी नउ आवड तहनी परीक्षा करड, माम २ सीम । २ मासे भलउ जाणइ तउ दीखइ ॥ ३० ॥

तथा ऋषीश्वरा रा सघाडा जिफइ पोसाल माहि छइ, तियइ जके चेला कीधा छइ, जियारी जाति पाति जाणियइ जियइ, गाम माहि वमता रहता, तिया री सारि भरइ, सगउ मणीजउ अलगउ दूकडउ (निरुवर्ती) दिखाडइ सु ऋषीश्वरा माहि मन मानड तउ, श्री पूज्य रड आदिशि आणी जइ ॥ तथा पोशालमाहिला माहातमा जे क्रिया-उद्धरइ ति सघाडा वद्ध घालणी परजे चेला पैडडराखड, निया नड न घालणा वामइ अधोवारि न राखणी । बलि जि पूरडसघाडइ आवड ति वि वरस रुडा रहइ सघ रा मन मनावि श्री पूज्या तीरड आनि श्री पूज्या रइ मनि मान्यइ, ऋषीश्वरा री माडलि माहि आवइ ॥ तथा जियइ ऋषीश्वरे चेला १।२ पोसालमाहिला योग्य जाणी सप्रह्या । तियइ

(१६) शेषइ कालि एकड नगरी एकड उपाश्रयि कदाचि रहिवा
रा योग न हुवइ, तउ प्रभाति सझाय एकठा करणा । जूए २ उपाहरइ
उपाश्रए नउ ॥ १६ ॥

(२०) पडिकमणउ वलि माडलि सगले जतिये एकठउ करणउ,
एकणि उपासरइ रहता जूयउ पडिकमणउ जको करइ, वि सुख-
विहारी, पदीक रा आदेश लियइ कारणि ॥ २० ॥

(२१) पोसाल-वाला माहतमा+ मोकला तेह सउ परिचा(परिचय)
न करणा । माहतमा द्रव्य लिंगीया नइ भणावणा न करगा । कोई
सुविहित माहतमा रूडा जाणि भणावइ तउ भणावउ । ऋषीश्वर आप
माहतमा तीरइ भणइ तउ सघनी अनुमति भणइ भणावइ ॥ २१ ॥

(२२) साध्वी एकइ खेत्रि एक वरम उपरान्त न रहइ, जिणइ
उपाश्रयि चउमासि कीधो हुवइ तिहा चउमासि नइ पारणइ वि मास-
क (लप) बीजइ थानकि रहइ, पछइ मूलगइ उपाश्रयि रहइ, जिका
सामग्री रहइ ते साध्वी नो वस्त्र पात्रनी चिन्ता करइ, अनइ साध्वी
पिणि तेहना कथन माहि चालइ ॥ २२ ॥

(२३) शेष काल हुती चउमासि माहि साधु साध्विए विशेष
तप करणा ॥ २४ ॥

(२४) साध्वी पुस्तकादिक साधु नइ पूजा (छो?) बहिरइ ॥२४॥

(२५) यतियइ आपणइ काजि क्रोत पात्रादिक न करणा ॥२५॥

(२६) जको विशेष बइराणि आपणइ भावि चारित्र लियइ सु
जिहा तेहना मन हुवइ ते तिहा चारित्र लियइ ॥ सामान्य बइराणि

* मत्थेरण — जिन्हें कि क्रिया उद्वार के समय शिथलाचारो रहने से
साधु रूपमें निकाले गये थे ।

जे जिणइ प्रतिबोल्या हुवइ ते तियइज सनि दीक्षा लियइ जउ ठामि
ठामि मुख घातइ तउ न दीखणा ।

(२७) जेहना मावित्र (माता-पिता)काइ वाळ्ळा करइ ते लउ छात्र
नइ सव नइ कहि दीक्षा देणी । सघइ यथा योगि उद्यम करणा ।
यतियइ जिम उड्डा हवइ तिम न करणा ॥२७॥

(२८) साधु साध्वी नइ जे पुस्तक पाना जोइयइ ते भिन्न
भिन्न श्रावक नइ न कहणा, यथा योग्य ते सघ नइ कहणा, श्री सघइ
यथा योग्य विन्ता करणी ॥ २८ ॥

(२९) गच्छ माहि ऋषीश्वरं माहो माहि पठन पाठन रा उद्यम
करणा । भणण हारे पिणि विनयपूर्वक भणिवा ॥२९॥

(३०) कोइ वडरागी नवउ आचइ तेहनी परीक्षा करइ, माम र
सीम । २ मासं भलउ जाणइ तउ दीखइ ॥ ३० ॥

तथा ऋषीश्वरा रा सघाडा जिऊइ पोसाल माहि उइ, तियइ जने
चेला कीधा छइ, जिघारी जाति पाति जाणियइ जियइ, गाम माहि
वमता रहता, तिया री सारि भरइ, सगउ सणीजउ अलगउ ढूळडउ
(निकटवत्ता) दिखाइ सु ऋषीश्वरा माहि मन मानइ तउ
श्री पूज्य रउ आदशि आणी जइ ॥ तथा पोशालमाहिला साहातमा जे
क्रिया-उद्वरइ ति सघाडा बद्ध घालणी परजे चेला वेडइ राखइ, तिया न
न घालणा वामइ अधोवारि न राखणी । वलि जि पूरइ सघाडइ आव
ति वि वरस रुडा रहइ सघ रा मन मनावि श्री पूज्यां तीरइ आवि
श्री पूज्या रइ मनि मान्यइ, ऋषीश्वरा री माडलि माहि आवइ ॥ तथ
जियइऋषीश्वरं चेला १२ पोसालमाहिला योग्य जाणी समर्था । तियः

बलना पठइ बद्ध सघाडा पोसाल माहिला आवइ, तउ इज लइणा श्री पूज्या रा मन मनाविनइ । परं वलि १२ अधूराइ मन वइणा योग्य पणइज लइणा, श्री पूज्य रइ आवेशि ॥ तथा साधु श्रावक घणा माहि वइसी नइ गीत राग न गावइ, सभा माडिनइ । जउ कोई भणता होइ ते प्रति ढाल सीखावइ ॥

(पत्र १ हमारे सग्रहमें तत्कालीन लि०

श्री जिनचंद्रसूरिकृत समाचारी

एतला बोल ढोदला हुता सु श्री जिनचन्द्र सूरि बीजे उपाध्याये वाचनाचार्ये ए गीतार्ये एकठा मिली नइ श्री वीकानेर मध्ये थाप्या ।

१ श्री स्थापनाचार्य पडिलेही जिणि थानि माडिए ते ठाम पहिला दृष्टि सु जोड पूजा माडियइ, जइ तिहा कोई जीव जन्तु हुइ, तउ रुडा परठवीइ इरियावहि पडिक्रमीयइ, अन्यथा इरियावही पडिक्रमण विशेष कोई नहीं ।

२ पाणी पारीयड तेहनी विगतो । जइ अबड्ढ रा पचखाण कीधा हुइ तउ साझ री पडिलेहण पउइ पारीयड । बीजा पोरमि प्रमुग्य पचखाण कीधा हुइ तो पहिला पारीयइ ।

३ स्थापनाचार्य विधि पूज्या हुइ अनइ मामायकादिक क्रिया कीजइ तउ वारू । कदाचि न पूज्या हुइ अनइ को एक आप नीचइ भूमिका पूंजी काजइ उधरइ मामायकादिक क्रिया करइ पारइ, तउ पिणि असूक्ष्मवउ कोई नहीं ।

४ पउण पडिलेहणनी गुरे मुहपति पडिलेही पउइ, उपधान नदि पोसह क्रिया न सूझइ ।

५ पेटिली आढी हुइ अनइ गुरु स्थापनाचार्य आगलि क्रिया करइ तउ योग्य भूमिकाइ रखा आसूझिवउ कोइ नहीं ॥

६ जन्म सूतक हुए घर ना मनुष्य १२ दिन देव पूजा न करइ, पडिकमण ना विशेष कोई नहीं । मृतक सुअइ* (सूतक) १३ दिन पूजा टालइ मूल काधिया हुइ ते, वीजा घर रा दिन ३ देवपूजा पडिकमणा टालइ । घर रा मूल काधिया हुइ ते १२ दिन देवपूजा न करइ । पडिकमणा २४ पहर न सूझइ । मृतक भीट्या-- न हुइ, काधिया पिण भीट्या न हुइ, वस पालट्या हुइ तउ ८ पहर देवपूजा टालइ, जउ काधिया आभडइ तउ पहर १२ ॥

७ श्रावक क्रिया करतउ चउरुत्थ करइ विधि वादइ । आगिला छेहडा ऊ चा करइ ए परमार्थ ॥

८ स्थापना गुरु प्रतिमा पादुका सवाऊ सुकडि केसर प्रमुख द्रव्ये करि पूजिए ।

९ पासीरइ पडिकमणइ श्रावक पासीसूत्र वदितु गुणता "त निदे त च गरहामि" एतला मीम गुणइ "अमुद्वियोमि आराहणाए" ए चूलिका न गुणइ ।

१० जीरा वाड्या कपड-ठान्या फासू होइ । जीरा लूण अग्नि आदिक सयोग बिना फासू (प्रासुक) न गिणीयइ, व्यवहारइ जीरा करवा छाउ माहे घाट्या हुता रात्रि नइ आतरइ फासू गिणीयइ ।

११ मचित्त परिहारी द्रास लेइ । काला ?

१२ सूकडि केसर री पूजा नाइ री कालवेला उपराति न सूझइ ।

* स्पर्श * समीप

१३ भगवंत नईं धूप धुपणउ जे गाढउ अपूर्व हुई सररा,
ते सूझइ ।

१४ कटाला-काष्ट री प्रतिमा, थापनाचार्य, नवकरवाली न सूझइ,
अपर सूझइ ।

१५ छास रावड (रावडी ?) काजी रा उत्कट द्रव्य । घोलवडा
दही रो निवीतउ कहीयइ ।

१६ यतो नोनकरवालो श्रावक ननकार गुणउ तउ असूझिवउइ
को नहीं, पर अति प्रवृत्ति न घालिवी ।

१७ धनागरा माहि धाणा सूठ हरडइ दास ग्यारक ए सहु एक
द्रव्य । पर द्रव्य पचसाण ना धगी जुदा २ न साइ, एकठा करी
खाइ तउ एक द्रव्य ।

१८ कूलरि घी रउ निवीतउ कहीजइ ।

१९ काष्ट विदलईं फल काण ए विदल गणिवा, काष्ट
विदल न गणिवउ ।

२० उपाश्रय नीकलता खूलउ श्रावक आवस्मही न करइ ।
पोपहतउ सामयिकधर कहइ । देहरइ निकलता आवस्सई कहण
प्रयोजन को नहीं ।

२१ सध्यारइ पडिकमणइ तवन कह्या पउइ इच्छामि खमा० ए
पूरी समासमण देइ । (१)श्री आचार्य मिश्र कहइ (२)त्रीजइ समास-
मणइ उपाध्याय मिश्र वादइ । (३)त्रीजी समासमण सर्व साधु वादइ ।
(४) चौथी समासमणि पूरी देइ 'देवसी पायच्छिन विशुद्धि करेमि
काउसग' करइ ।

२२ त्रिकाल री देवपूजा अविरती आवरु जे पडिक्रमणउ नहीं करतउ छइ, ते करइ । पहिलउ श्री जिन प्रात्तमा पूजाइ सप करइ । अनइ जे विरती पडिक्रमणा ना कग्णहार करइ छइ ते पहिलो पडिक्रमणउ करी पाडिलेहण पहिला सामायक पारी छइ देवपूजा करइ ।

२३ पोसह माहे देहरइ पूछणउ (चलवला) ले जाइ, कदाचि देहरा अलगा हुइ कारणइ वइसइ पूजीनइ । तिण कारणि तीरइ हुइ तउ चारु । देहरा दूरुढा हुइ तउ न ले जाइ, तउ असूझिवउ पण को नहि ।

२४ चलवला काइ सबल अजयणा विचि हाट अथवा चैत्य गृह जाणइ तउ पूजिवा भणी ले जाइ । चलवला विना अजयणा न टलइ तउ ले जाइ ।

२५ आवरु देव गुरु प्रतिमा पाडुका, जेतलउ ढोवणउ ढोवड ते न साइ ।

२६ रोटी रोटला केणा वाटी प्रमुख ना जुदा २ द्रव्य गिणीजइ, एक पिंड आटा ना जे रोटी बेलणादिक कइ ते एरु द्रव्य ।

२७ अणपडिहेलउ ठे पाडउ पुउणा माहि न बाइइ । बाधइ ते अपडिहेही दुपडलेही दोप लागइ ॥ २७ ॥

॥ इति सत्तावीस चरचा बोल समाप्त ॥



फरिश्तिहट्ट (ग)

“शाही फरमान”

सरश्वती मासिक पत्रिका (स० १९१२ जून पृ० २६३)से बद्धत —

“फर्मान जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर बादशाह गाजी —

हुक्काम किराम व जागीरदागन व करोरियान व सायर मुत्सद्दियान मुहिम्मात सूवै मुलतान विदानंद ।

“कि चू हमगी तवजोह खातिर खैरदेश दर आसूदगी जमहूर अनाम बल काफफए जाँदार मसरूफ व मातू फस्त कि तवकात आलम दरमहाद अमन बूदा वफरागे बाल बइबादत हजरत एजिद मुनआल इश्तगाल नुमायद । व कब्ले अर्जी मुरताज खैर-अन्देश जैचदसूर खरतर गच्छ कि बफैजे मुलाजिमत हजरते मा-शरफ इखति सास याफता हकोकत व खुदा तलबी ओ व जहूर पैय(व?)स्ताबूद । ओरा मशगूल मराहिम शाहशाही फरमूदैम् । मुशा-रन् ईले है इलतिमास नबू(मू?)द कि पेश अर्जी हीरविजयसूरि सागर शरफ मुलाजिमत दर्याफता बूद । दर हर साल दोबाजदह रोज इस्तदुवा नमूदा बूद की दरा अय्याम दर मुमालिके महरुसा तस-लीरत जाँदारे न शवद । व अहदे पैरामून मुर्ग व माही व अमसाले आँ न गरदद । व अजरुय मेहरवानो व जाँ परवरी मुत्तमसे ऊ-दरजे क़बूल याफत । अबतू(नू?)उम्मेदवारम् कि यक हफत दीगर ई-

युगप्रधान श्रोजिनचन्द्रसरि



लायन मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि
मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि

काली काली काली काली

मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि

काली काली काली काली

मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि

काली काली काली काली

मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि

काली काली काली काली

मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि

काली काली काली काली

मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि मन्त्रि

काली काली काली काली

दूवागोय् मिसले आँ हुकमे आली शरफ सुदूर यावद् । बिनावर उमूम
 ग (रा?) फन हुकम फरमुदैम् कि अज तारोखँ नौमि ता पूरनमासी अज
 शुछ पठ असाढ दर हर साल तसलोख जॉदारं न शवद् । व अहदे
 दर मकाम आजार, जॉदार मोरे नागरदद । व अस्ठ व
 खुद आँनस्त कि चू हजरते वै चू अज वराए आदमी चदीं इन्धामत-
 हाय गुनागूं मुहय्या करदा अस्त । दर हेच वक्त दर आजार जान-
 वर व शवद् । व गिकमे खुदरा गोर हैवा नात न साजद । लेकिन
 वजेहत बाजे मसालह दानायान पेश तजबीज नमूदा अद । दरो-
 विला आचार्य जिनसिंह सूरि उर्फ मानसिंह व अरज अशरफ अक-
 दस रसानोद की फरमाने कि कळ अजो वशरह सदर अज सुदूर
 याफता वूद गुम शुदा । बिना वरॉ मुताविक मजमून हुमा फरमान
 सुजदद फरमान मरहमत फरमुदैम् । मे बायद् कि हस्वुल मस्तूल(र?)
 अमल नमदा व तकदीम रसानद । व अज फरमुदह तखल्लुफ व
 इनहिराफ नजरद । दरो धाव निहायत एतहमाम व कदगन्
 अजोम लाजिम दानिस्ता नगइयुर व तवददुल् वकयायद आँ राह
 न दिहद । तहरीरन् फीरोज रोज सी व यकुम माह सुरदाद्
 डलाही सन् ४६ ।

(१) “ब रिसालए मुकर्बुल हजरत स्सुलतानी दौलतया दर
 चौकी (उमदे उमरा)

(२) “जुनद तुल आयान राय मनोहर दर नौबत वाकया नवीसी
 खाजा लालचद” ।

जोधपुर निवासी मुन्गी देवीप्रमादजीने इसका अनुवाद हिन्दीमें इस तरह किया है —

फ़रमान अकबर बादशाह गाजीका



“सूत्रे मुल्तानके बडे २ हाकिम, जागीरदार, करोडी और सत्र मुत्सद्दी(कर्मचारी)जान लें कि हमारी यही मानसिक इच्छा है कि सारे मनुष्यो और जीव जन्तुओको सुख मिले, जिससे सब लोग अमन चैन मे रहकर परमात्मा की आराधना मे लगे रहे । इससे पहिले शुभचिन्तक तपस्वी जयचन्द्र (जिनचंद्र) सूरि सरतर (गच्छ) हमारी सेवामे रहता था । जब उसकी भगवद्रभक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बडी वादशाही की महरवानियोमे मिला लिया । उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले हीरविजयसूरि ने सेवामे उपस्थित होनेका गौरव प्राप्त किया था और हरसाल वारह दिन मागे ये, जिन मे वादशाही मुल्कोमे कोई जीव मारा न जावे और कोई आदमी किसी पक्षी, मठलो और उन जैसे जीवो को कष्ट न दे । उसकी प्रार्थना स्वीकार हो गई थी । अब मे भी आशा करता हू कि एक सत्ताहका और वैसा ही हुकम इस शुभचिन्तक के वास्ते हो जाय । इसलिये हमने अपनी आम दया से हुकम फरमा दिया कि आपाढ शुक्ल पक्ष को नवमी से पूर्णमासी तक सालमे कोई जीव मारा न जाय और न कोई आदमी किसी जानवरको मतावे । असल बात तो यह है कि जब परमेस्वरने आदमीके वास्ते भाति-भातिके पदार्थ उपजाये हैं तब वह कभी किसी जानवरको दुख न दे और अपने पेटको

पशुओका मरघट न बनाये । परन्तु कुठ हेतुओसे अगले बुद्धिमानोने वैसी तजवीज की है । इन दिनों आचार्य 'जिनसिंह' उर्फ मानसिंहने अर्ज कराई कि पहिले जो छपर लिखे अनुसार हुक्म हुवा था वह खोगया है इसलिये हमने उस फरमानके अनुसार नया फरमान इनायत क्रिया है । चाहिये कि जैसा लिख दिया गया है वैसा ही इस आज्ञा का पालन किया जाय । इस विषयमे बहुत बडी कोशिश और ताकीद समझकर इसके नियमोमे उलट फेर न होने दें । ता० ३१ सुरुदाद इलाही । सन् ४६ ॥

हजरत बादशाहके पास रहनवाले दौलतराँको हुकुम पहुचाने से उमदा अमीर और महकारी राय मनोहरकी चौकी और रजाजा लालचदके वाकिया (समाचार) लिखनेकी वारीमें लिखा गया ।”--



* यह फरमान लखनऊ में खरतर गच्छ के भटार में है । इसकी नकल 'कूपारस कोश' पृ० ३२ में भी छप चुकी है । मूल फरमान फारसी में है, और उपर शाही मुहर लगी हुई है ।

॥ शाही फरमान नं० २ ॥



नकल पातसाइ परवाने री इण ठिकाने नव मोहर री छाप

॥ श्री ॥

सेत्रुजा पर देहरा अरु किल्ला है सो तमाम जैन मारगके यात्रा का जगा है अरु भाण क्षेत्र(भानुचद्र?)सेवड मना करता है अरु किल्लामें देहरा मत करो । पहिला वखतमे भरत चक्रवर्तीने पा(हा)ड पर किल्ला अरु देहरा बनाया, दुसरी वखत सगर चक्रवर्ती सोमदेव के वेटे ने पाड पर देहरा वणाया, तीसरे वखत राजा जुधिप्रर पाडव ने पाड पर देहरा वणाया, चोथा वखत विक्रमादित्य के एकसोआठ सन मे जावड वनीये ने देहरा वणाया, पाचवा वखत १२१३ सन्मे मेहता वाहडदे जयसिंह-देव के चाकर नै पाड पर देहरा वणाया, छठा वखत अलाउदीनके वखतमे १३०० (१३७१ ?) सन् मे समर वनीये नै एरु मूरत नवी बनवाइ और जुने देहरे मे रग्री, सातवे* वखत वहादर (शाह) गुजराती के अमल मे १५८७ सन मे फरमान डोसो नै जो चं प्रान ।

*इस फरमानकी नकलमें जिन सात उद्धारोंका उल्लेख है, उनका वर्णन कवि-लावण्यसमय कृन शत्रुञ्जयउद्धार स्तवनमें इस प्रकार है —

उद्धार पहिलउ भरत केरु, बीजठ सगुरु छडावण ।

त्रीजठ ति पाण्डव राय युद्धिण्टर, पुहवी प्रगट करावण ।

चुउधउ ति जावड अनइ वाहड, कराव्यु जग जाणीयड ।

उद्धार छट्टो शाहं समरा, तणठ वलिय वखाणियण ॥

(श्री० विद्याविजयजी सम्पादित 'प्राचीन तीर्थ माला सम्रह')

पुनमीयै गठ का था, उसने जुने देहरे का मरमत करवाया और जुनी जुरा जरा मुरता तुटेली थी सो भडार कीवी और नवी मुरत जुनै देहरामें थापना कीवी । आठवी वसत १५६१ सन मे मजादेहरान गुजराती ने देहरे कु तोडा, कितनीक मूरता तोडी पीछे करमान डोसीने जेपुर सु आयकर देहरा कु मूरता को मरम्मत किया । १५६२ सन् मे राजकाज युक्त हुमायु बादशा गुजरात मे आये, १५६३ सन् मे बादर गुजराती कु फिरगी ने मारा, सुलतान महमद पातस्या हुआ अरु इस महमद के अमल मे ॥ (आधा) वरसतक सोरठ (देश) के मुलक मे दगा रहा, उस पीछे एकहजार पाचसौच्यार (मे) सैनुजा मजादाहरान कु जागोरी मे मिला । उस पीछे अश्वलगन्ध के जमयन्त पक्षारी बहुत आता जाता, मजाहीदखान का जागोरी मे उस अपने साहित्य कु वीनति किया, फागुण सुदि ३ सुक्रवार के दिन अमारत शुरू करी एक बडा देवल बनाया ३५ छोटे बनाए, अर सर-

इस तीर्थ मालामें उपरोक्त ६ उद्धारके वर्णनके पश्चात् सातवा उद्धार करमा शाह डोसी ने स० १५८७ में कराया जिमका वर्णन है । जावड-शाह का चौथा उद्धार होना कवि 'देवाल' कृत 'जावड भावड राम'से भी सिद्ध होता है । यथा —

जावड प्राग-पश सिणगार, सोरठिउ सहजिह् एविचार ।

जेहनउ शैश्रजि चउधु उद्धार, तसु गुण पुहवी न लाभह पार ॥१०८॥

(उक्त रासकी नकल हमारे मद्रद में है)

जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र मग्नि वश प्रबन्धमें भी —

उद्धारान् सप्त चैत्याना कारणादिदधु पुरा ।

नर गच्छके बनिया ने २२ देहरा बनाया अरु किल्ला में अंधारथ (तभी कराया । कर(ड ?) वामती के गच्छ के बनिये ने किल्ले दरम्यान अम्बारत (इमारत ?) करके २ देहरे बनाए, पायचन गच्छके बनिये ने किल्ले से अम्बारत करके देहरा ३ बनाए अचलगच्छ के बनियेने बोहट अम (अरु?) बदनवालेने ३ वरम तल किल्लामे अम्बारत किया, बडे देहरे ३(तीन) बनाए और छोटे ६ बन इलाहीके आठमे सनमे राजकाज युक्त पातशाहके १३ सन् मे पद (?) डोसी अरु हुमान मोहते ओसवाल खरतरान गच्छके थे, उन ने अम्बारत करके ५ वरस तक टूटे हुवे देहराकी मरम्मत करवा रामजी तपाने किल्लामे देहरा बनाया, इलाहीके १६ सन् मे गुजरात मुल्कमे काल पड्या, इस वास्ते ४(चार)वरस तलक सेतुजा उजड रह उस पीछे इलाहीके २२ सन् मे आवाद हुवा अरु अलाहीके २५ सन् मे तपागच्छके जसू बनियेने देह बनाया । फते इलाहीके ३० सन् मे खरतरान के सीस मेहता साम लहोरमे पातस्याहके कदवो से हुवा था । उसने रायण के झाडके नीचे ४ बडे देवल किल्ले में करवाये । अलाही के ३६ सनमे सहरा महीनेमे पातसाने गिरनार सत्रुजा और पालीताणै के देहरे सम्पू कृपासे महता कर्मचन्द कु कृपा दान किया और इस वाब(त)मे फरमा सुहर वाला कर दिया । अब करमान मेहता ने भलमणसाइ करके जै मारण के तमाम गच्छ के लोगा कु मत्र देहरे दे डाले । इस वास्ते मुझे तो पातसाने कृपाकर दए,हमे सेत्रुंजा के सब देहरे तवाब (तमाम) जैन मारण के टोला के हैं । मुझे एकला कु राखणे लायक नहीं, अ

तेहुत्तर वरस हुये के छोटे तपागच्छ ने हीरविजय सूर तपा के गच्छ कु अपनेसे जुदा किया अरु हीरविजयसूर के चेले भाणचन्द कु पूछणा चाहिये के आदिनाथके देहरा अरु फिला ७३ वर्ष पहले तुमारा था के ७३ वरस पीछे तुमारा हुवा, अगर भाणचद केहवे ७३ वरस पहला किसान हमारा था तो ओटे तपागच्छका लिया हुआ त (?)को किसमे हीरविजेसूर का गच्छ जुदा हुवा लिया हुआ अपने हाथमे है के सतरु जा अरु आदिनाथ का देहरा फिला तमाम जैन मारग का है, अगर कोइ दावा हरकत फर सो झूठा, अगर कोई तपा मतके कहते हैं, सेत्रुजा हमारा है सो विचार कर तजवीज करेगा, सेत्रुजा तमाम जैन मारग का है, कृपादान पर-वाना 'कर्मचन्द' का है । X

X मूल फरमान का यह अनुवाद, बिकानेर के (बडे उपाध्यमे) बुद्धजानभडारस्थ १९वीं शताब्दी लिखित १ पत्र की तदवत् नकल करके यहा प्रकाशित किया गया है, अनुवादकता की असावधानी के कारण भाषान्तर म कई भूल रह गयी जात होती है ।

तीर्थाधिराज शत्रुघ्नके सम्यन्धी इसमें बहुत महत्वका इतिहासिक ज्ञातव्य मिलता है । सम्राट्का गिरनार, शत्रुघ्न और पालीताणेके देवा-लयों को सुरक्षा के लिये मन्त्रीश्वर कमचन्दजी के आधीन करने का फरमान देने, शत्रुजय तीर्थ क दुर्ग में नवीन देवालय निर्माण करने के लिये भानुचन्द्र जी के निषध करने का इममें उल्लेख है । तीर्थपर नवीन मन्दिर निर्माण के विषय में छरतर गच्छ और तपा गच्छ वालों के झगडा होने का भानुचन्द्र चरित्र, परिशिष्टान्त-र्गत (न० ४) प्रशस्ति आदिसे भी जाना जाता है । झगडेके उपरान्तके

॥ नं० ३ परवाना ॥

श्रीकृष्ण

तलवारका चिह्न

श्री परमेश्वरजी

सही

॥=॥ स्वस्ति श्री महाराजाधिराज महाराजा श्री सूरिज-
मिहजी कु० । श्री गजमिघजी वचनात् युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि-
जी नु मया करे दुवो दीयो जु श्री जोधनेर सोझत मिवाणै
मेडतै जैतारण आसोप रे देस, माहरी धरती छै ततरी माहे वाजा
वजावो झालर दमामा वाजा मात्र वजावता कोई मनै करै सु गुन्है-
गार होसी मागथ्र (मार्गशीर्ष ?) वदि ६ सवत १६६४ दुवै श्रीमुख ।
प्र० । भाटी गोइन्ददासजी । पा । जोधनेर—

“औ मूलपरवानो उ० । श्री सरुपचन्दजी गाणि पास है श्री
जोधपुरमे, तिकैरी आ नकल छै—

(पत्र १ हमारे सप्रह मे)

लिये यह फरमान जाहिर किया ज्ञात होता है । इस विषयमें विशेष उहा-
पोहा मूल फरमान प्राप्त होने पर की जायगी ।

प्राचीन पत्रोंकी नकल करके तद्रूप ही प्रकाशित करने में हमने
पूर्ण सावधानी रखी है । जो प्रति अशुद्ध मिली, वह भी पाठक मूल
चम्तुका उसी रूपमें दर्शन कर सकें, अत उमकी प्राय उसी रूपमें नकल
प्रकाशित की गयी है ।

परिशिष्ट (घ)

सांवत्सरिक पत्र ।

॥ सकल विमल शाश्वत स्वस्तिम ज्योति रुद्योतित सर्व सूर्यादि
मन्त्रेषु तन्त्रेषु सर्वत्र भूर्यादि पत्रेषु यन्त्रेषु विद्या पवित्रेषु मिथ्यात्व वही
लवित्रेषु दत्तात्म भक्तातपत्रेषु ससिद्धि सन्त्रेषु मित्रेषु लिख्या विचि-
त्रेषु वाद्य पुनर्य च वाला पतद्वक्र लाला लसत्कण्ठ पोठेषु मुक्तादि
माला अनालिष्ट ससार मायादि जवाल जाला सुभाला सुबुद्ध्या
विशाला समात्मोय नाल प्रणाला करालास्त्रिकाला सदा सन्मुदा
मातृकाया पठतीह पूर्व तथा त्र (?) रक्षणे वातुरूप स्वरूप नता-
नेक भूप सदाम्नाय पानीय कूप सदाप्यव्यय न व्यय सन्मनोहारि
सर्वत्र विस्तारि मिथ्यात्व सहारि सम्यक्तव सम्कारि दुर्बुद्धि निवारि
सद्बुद्धि सचारि निर्वाण निर्द्वारि तीर्थेण धामेव शोर्षे प्रचडेन दडेन
सप्रोल्लसत्कीर्त्ति पिंडेन दीप्ते करडेन नित्य असडेन युक्त तदूर्ध्व
महेन्द्रध्वजेनापि कुभेन सर्वर्द्धि लभेन संशोभित वर्णमेकं पुन
पद्मनाभो विरचिर्बृपाकश्च देवत्रयं यत्र नित्य मिलित्वा स्थित वक्र-
धार कृपाण तथा लोह गोलं यको दानवो मानवो व्यतर किन्नरो
राक्षसो यक्ष वेताल वैमानिक प्रेत गन्धर्व विद्यावर क्षेत्रपालादि दिक्
भू पाल भूतप्रजो भास्करो भासुर इचचुर इचद्रमा मगुलो मगल
सोमपुत्रो (त्र ?) पवित्र स्तथा सन्नगी पतिर्भागवो नीलवासास्तथा
[सैहिकेय स्त्रिशस्त्रीयो (?) प्रहो दुर्महो या च नक्षत्रमाला विशाला तथा

शाकिनी डाकिनी नाकिनी किन्नरी सुन्दरी मंत्रिणी तन्त्रिणी यत्रिणी
दुष्टनारी तथा केसरी चित्रक कुञ्जरो वेसर सैरभेय स्तुरगो विरग
कुरगो महागो भुजगस्तथान्योपि जोवो महा दुष्टयुद्धि सदास्माक-
मेकाग्रचित्ताद् भृश भक्ति भाजा सुराजा विरूपं स्वरूपं विधास्यत्य-
हो तं वय मारयिष्याम एतद् द्वयस्य प्रहारै रितोवात्र हेतोर्दधान[ऽहं]
तथा सर्व वर्णेषु मुख्य सुरक्षं सुकक्षं सुलक्षं सुयक्ष सुदक्ष सुपक्ष विरि-
च्यात्म मार्तण्ड मौख्याद् वर्याभिधाधायकं नायकं त्रायक दायक
सविभाष्येति मम्यक्त्व वर्गं सुवर्गं लवर्णोवराक श्रियोर्वीर्यकं
साश्रत । सोपि मत्वाधिको दाच्छ्रिय देवदूष्या वृतात्मीय शीर्षोपरि
न्यस्तगस्त प्रशस्त स्फुरत्काम कुम्भान्वितं ॥ ॐ ॥ त तथा विश्वरेत
सुता सवदेवैनता हस यान स्थिता पुस्तकेनाकिता देववाणी रता कूर्म
पादोन्नता केलिजंघान्विता सिंहमध्याद्गुनावर्य वक्ष म्थला मजु सन्मे-
रला हस्तनोलात्पला ध्वस्त कुप्यत् रला सदगुणै निर्मला भक्त हृन्निश्चला
च्छिन्न दुष्ट चला नैव सा नि फला सर्वान सद्वला केशत श्यामला
विश्वत सत्कला केलित कोमला सद्वच कोकिला पेशला मासला
वत्सला मरणन्नूपुरा प्रौढ पुण्याकुरा चक्रमाच्चचुरा क्वापि नैवातुरा
सर्वदा मेदुरा दीप्ति सन्मुर्मरा सद्यश पुपुंरा भग्न भी मुर्भुंरा सपदा
कारिणी पङ्कजागारिणी विश्व सचारिणी बुद्धिविस्तारिणी भक्त
निस्तारिणी दुर्मतेर्दारिणी धर्म धी धारिणी सवका वारिणो ससृते
पारिणी मायिना भारिणी वैरिणा वारिणी दैत्य संहारिणी ऐ नमो
हारिणी शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा
शारदा शारदा शारदा शारदा तथा ॥ ६६६ ॥

॥ प्रथम ऋषभ देवता नामाभिरामाद्भुत श्री समेतोजितोनोजित
सयत सभव सभव सवराधीश जन्मा सुजन्मा जिनो मेघराजा
गजो नग जो देवपद्मप्रभु सप्रभ साधुपार्श्व सुपार्श्वश्चन्द्र प्रभो दीप्ति
चन्द्रप्रभो मातृरामाभिजातोऽभिजातो वच शीतल शीतलो विष्णुपुत्र
सुनेत्रस्तथावासु पूज्य सुपूज्यो विपूर्वोमलो निर्मलोऽनत तीर्थेश्वरो
भासुरोधर्मनाथ सनाथ श्रिया शातिङ्कर शकर कुथुनाथ प्रमाथ-
स्तताऽर कर सपदा मल्लिरापल्लना मल्लिरत्यत सत्सुव्रत सुव्रत
श्रीनमिर्निभ्रमिर्नेमि देवाधि देव मुशेवस्तथा पार्वतीर्थाधिप सत्कृप
सद्गुणैर्वर्द्धमानो जिनो वर्द्धमानस्तथा गुणर ग्रामवाम्नी प्रकाशीन्द्र
भूतिर्गणेशोऽग्निभूति स्तथा वायुभूति पुनर्व्यक्तनामा सुगर्मा गुणैर्म-
ण्डितो मण्डितो मौर्यपुत्र सुमूत्रस्तथाऽकपित कपितो नाचल भ्रातृक
स्तान्त्रिकस्त्यक्त भार्य मदार्यश्च मैतार्य साधु सदाचार साधु प्रभासो
नित्रासो गुणाना च्युत पचमस्वर्गतो धारिणी कुश्रिपाथोज सलब्ध
जन्माऽष्ट कन्या पगित्याग कर्ता हिरण्यादि कोटी प्रहर्ता लमत्केवल-
श्री सुभर्ता गणाधीश जयूयतीन्द्र प्रपूर्वो भगो भीम रुमार कातार
पारगमी सयमी सृरिमुच्य सुदक्षश्च शय्यभव श्री यशोभद्र सूर्यीन्द्र
नामायसभूत सग्निश्च मुनिर्गुणाना कलापै स्त्रया भद्रगह्ण पुन
स्थूलभद्रो मुनीन्द्रश्च कोशा सुवेद्या मनोबोधकारी महा ब्रह्मचारी
लसल्लब्धिगारी नराणा वराणा भवान्भोधितारी तथाय्यो महागिर्य्य
भिर्य्य मुञ्जिय्य सुहन्ती प्रशस्ती तथा शाति सरि गुणत्रेणि भूरि
पुन श्री हरेग्रगो भद्रमृरि गभीरार्थ प्रजापनासृत्र सद्भर्म विज्ञान विद्या
वरेण्य सुपुण्यश्च नोल्य्य भट्टारकस्तारक सम्त कारक सपदा-

मेप साडिल्ल सूरिर्मुनी रेवतीमित्रनामार्य्य वर्य्यार्य्य गुप्रार्य्य नामान्
 एव समुद्रादि सूर्य्यार्य्य मग्वार्य्य सौधर्म सूरिन्द्र मुख्या सुदक्षा पुन-
 र्भद्रगुप्त सुगुप्तो यतो निर्गता वाद्धिं सत्येय शास्त्रा सुनागेन्द्रचन्द्र
 स्फुरन्निवृत्ति स्फार विद्याधरोदार नामाभिरामा द्विपचाप्तपूर्वः
 सुपूर्वोनुवन्नादिम स्वामि सूरिश्चरो वीश्वरो रक्षितातार्य्यसूरि पुन-
 पुष्यभिन्न पवित्रस्तथार्य्यादि नन्दि प्रभुर्नाग हस्त प्रशस्तस्ततो
 रेवती सूरि राचार्य्यधुर्य्य सुगाभोर्य्य धैर्य्यादि वर्य्य. परब्रह्मवान् ब्रह्म-
 नामादिम द्वीप सडिल्लसूरि हिमाद्रन्त सूरिर्गणिर्वाचकाचार्य्य नागा-
 जुर्न प्राजुर्न सद्वगुणै सूरि गोविन्द सभूति सद्भावकौ सूरिलौहित्य
 नामा पुरि श्रीरत्नभयायक सर्वसिद्धान्त वृन्दानि तालादि पत्रे विचित्रे
 वरेल्लैर्य्यैर्य्यामास देवार्द्धिं भट्टारक । श्री उमास्वामि सूरिर्भृशं
 भाग्यकर्ता जिनाद्भद्र सूरि स्ततो देवसूरि पुनर्नेमिचन्द्र स्तथो द्योतनो
 वर्द्धमानो जिनावीश्वरो जैनचन्द्रोऽभयादेवसूरि जिनाद्वल्लभो दत्त
 चन्द्रो पति श्री जिनेश प्रबोधञ्च चन्द्र शिवाख्यो जिनात्पद्म लाब्द्धी
 च चन्द्रोदयो राजभद्रौ च चन्द्र समुद्रौ जिनाद्वस माणिक्य सूरि च
 पूर्वोक्त मन्नास्तथा तीर्थराजान् श्री गुरुन् सपनीपत्य लेल्लिज्यते
 पार्वणे ल्प एपोद्भुत ॥ २ ॥

कचिदिह मणिरत्न माणिक्य माल कचिन्मुक्त मुक्ताफलाली प्रवाल
 कचित्स्वर्ण रूप्यादि पु जै विंगाल कचित्स्वर्ण पट्टोल्लच्छ्रेष्ठ माल
 काचिद्धट्ट पीटे लुठन्नालिकेर । कचित्काचनी राजिका शृगणेर ।
 कचित्स्वस्तरी न्यस्त नानार्य्य मूल कचित्प्रम्फुट च्छाटिका पट्ट कूल
 कचिच्छाट्य धान्यादिर्जै गर्गिष्ठ । कचित्प्राज्यमाड्यादि कूपैर्वरिष्टं

कचिद्विप्रशाला पठच्छात्रवृट् । कचित्पीयमानाप्तवाणीमरन्द ।
 कचिद्द्वयोमानार्थि वाञ्छार्थदान । कचित्कामिनी गीत सगीत गान ।
 क्वचिन्मत्त मातंग घटानिनाद् । क्वचिद्वाजि ह्येपारवैर्लग्नवाद
 कचिद्रम्य हर्म्ये जित स्वर्विमान । कचिच्चारु चैत्यावली भ्राजमानं ।
 कचित्साधु साध्वो कृनाध्यायघोष । कचित्कामुकावि कृत प्रेमपोष ।
 कचित्क्लृप्त विस्फार शृ गारवेप । कचिद्विष्य नव्यागनारूपरेख (प) ।
 कचित्तोर सायात्रिकोत्तीर्णपण्य । कचिद्धारिमध्य भ्रमन्तौ वरेण्य ।
 कचित्स्वर्ण पोठोपविष्ट क्षमेश । कचित्साधुभिर्दीयमानोपदेशं ।
 कचित्सूरि मत्रस्मृतौ लीन बुद्ध । कचिद्राज ससद्भवन् मलयुद्ध ।
 कचित्स्तभनाथोऽथ चैत्य प्रधान । कचित्मद्गुरु स्तूप रूप प्रतान ।
 तत किं बहुक्तथा समृद्धया सुवृद्धया । सुनाशीरपुर्या सदृक्ष सुवृक्ष ।
 पुर स्तभतीर्थ सुतीर्थ च तस्मिन्स्तथोकेशवशाम्नुजोद्बोधने
 भास्करा रैहडीये कुले गाढराढाधरा , श्रीमदुद्बोह रत्नानि, सलक्षण
 ज्ञानविज्ञान चातुर्यविद्याचणा , गोलभास्वच्छिद्र्यादेविमातु प्रलब्धाव-
 तारा , कलाकेलिरूपरेखातिसारा, लसत्पचधात्रीभृङ्गपाल्यमाना, द्विसप्त
 प्रभा सज्ज्वला सन्कला मण्डिता , पण्डिता , सर्वदक्षा पुनर्लब्धलक्षा ,
 विनीता सुगीता सुमित्रा पवित्रा सुलावण्यवाणीसुधारजिता-
 नेकलोका सरोका सुदाक्षिण्यनैपुण्या जाग्रत्प्रतापा विपापा गुरो-
 र्जेनमाणिक्यसूरे सत्काशात्श्रुतासारकान्तारकाराविचारा समु-
 त्पन्नप्रेराग्यरगततरगा सरगा गृहीतत्रता सुत्रता गुप्ति गुप्ता
 समित्याभियुक्ता प्रमुक्ता सुमुक्ता श्रुतोक्तास्तपस्तेजसा दीप्यमाना
 समाना सुगाना सुताना सुदाना सुयानास्ततो जेसलान्मेरु दुर्गे

सुवर्गे सुसर्गे गुरुप्रदत्तपट्टाधिकारास्ततोविक्रमेसक्रिया श्रीफलद्वय्या
 महामत्रशक्त्याप्रभोर्म दिरे तालकोद्धाटका शात्रवोच्चाटका ढिल्ली-
 पुच्य्या पुनर्योगिनो साधका सूरि मत्रस्फुटाम्नायससाधका, गुर्जरेऽ
 जर्जर या तपोटैस्तपोटै कृतागालिनिन्दामयीपुस्तिका तद्विवादेपु सर्वत्र
 सप्राप्तजाप्रज्जयश्रीप्रवादा पुनर्यद्गुणाकर्णनाकृष्टसहृष्ट हत्साहिना
 मानसन्मानपूर्वं समाकारिता लाभपुच्य्यायकै साहिष्ण्वा प्रयोगेण अंगे
 कर्लिगे सुवगे प्रयागे सुयागे सुहृटे पुनश्चित्रकूटे त्रिकूटे किराटे वराटे च
 लाटे च नाटे पुनर्मेदपाटे तथा नाहले डाहले जगले सिधुसोवीरकाश्मीर
 जालधरे गुर्जरे मालवे दक्षिणे काविले पूर्वपंचावदेशेष्वमारिभृशपालया-
 चकिरे प्रापि यौगप्रधानं पदं स्तम्भतीर्थोदधौ दापितं सर्वमीनाभयं यै
 पचकूलङ्कपासगमे साधिता सूरिमंत्रेण पचापिपीरा महाभाग्य
 वैराग्यवंत सदाजैनचन्द्रा मुनीन्द्रा, सुभट्टारका ॥ ६६६ ॥

प्रवर विदुः रत्न निध्यहया श्री उपाध्याय विद्वद्भजेन्द्रा जयादि
 प्रमोदा श्रिया सुन्दरा सुन्दरा रत्नत सुन्दरा धर्मत सिन्धुरा हर्ष
 तो वल्लभा साधुतो वल्लभा प्राज्ञ पुण्य प्रधाना पुन स्वर्ण लाभास्तथा
 नेतृ जीवर्षि भीमाभिधानास्तथेत्यादि, सत्साधु साध्वी द्विरेफ म्रजा (जै)
 सेविताहि द्वयाम्भोजराजी मनोहारिणस्ता स्तथा मालकोट्टात्तटान्मे
 दिनीतश्च शिष्याणु सिद्धात चारुर्गाणिर्हर्षतो नदनो रत्नलाभो मुनेवर्द्ध-
 मानो मेवरेपा भिधानो तथा राजसी स्त्रीमसी ईश्वरो गगदासो
 गणादि पतिज्येष्ठ नामा मुनि —सुन्दरो मेघजीत्यादि यत्याश्रित.
 कार्त्तिकेयाऽक्षि मित्यद्भुतावर्त्तवत्या प्रणत्या च विज्ञप्तिमेव चचरी-
 कर्त्ति ववर्त्ति नि श्रेयस श्रेणिरत्राप्त सत्बुज्यराज क्रमाम्भोज मन्दार

सार प्रसादात् तथा पत्तनाच्छ्रीगुरुणामिहादेशरत्न गृहीत्वा विहत्यानु
सत्सार्थयोगेन सार्द्धं वराहकृष्णके पाश्वर्नाथ च जूत्कृत्य वैशाख
मासे द्वितीये नवम्याह्नि साढम्बरं सन्मुहूर्त्तौऽहमत्राजगामाशु सघोपि
सर्वो भयन्नामत प्रापितो धर्मलाभ जहर्ष प्रकर्ष । तत प्रातस्तथाय
मघाप्रत श्री विषाकश्रुते वाच्यमाने पुनर्हर्षनदे मुनेर्मेघनाम्न क्रमा-
द्वाणरुद्रादि कृष्णाह्नि पक्षाभिधाने तपस्यद्भुते वाह्यमाने प्रति कान्ति
मामायिकाऽर्हत्पदार्चादि सद्धर्मकार्ये विशेषेण सद्भ्य वरुं भृश
प्रेर्यमाण विनेयस्य सत्सप्तमाङ्गे पुन पाठ्यमाने सति श्रीमहापर्व-
राजाधिराज समागान्नदोत्पन्न रगद्विवेकातिरेकेण सन्मन्त्रिमग्राम
मह्येन भास्वत्कनीय सम • न सद्धमशाला समागत्य संग्रस्य सम्यक्
समक्ष क्षमा श्रान्ति पूर्वं स्फुट कल्प पुस्त प्रशस्त समादाय साय
निजाया मुदा मन्दिराया स्फुरच्चदिराया समानीय कृत्वा निशा
जागरा सुन्दरा देवगुर्वादि गीतादि गानै सुदानै प्रगे सर्व सघ
समाकाय वर्याति विस्कार कश्मीर जन्म उडाच्छोट पूगोकञ्च प्रौढ
सन्नालिकेरादि दानै, सत्कृत्य शृङ्गारितेभकुभस्थलारूढ रग
कुमार स्फुरत्पचगारावुजे स्थापयित्वा महापचगब्दादि वाजित्र
निर्घोष पोष त्रिके चत्परे राजमार्गे चतुष्के भृश भ्रामयित्वा मदीये
श्याम्भोज युग्मे प्रदत्त तत सघवाचा मया वाचित ब्रह्मगुप्ति प्रमाणा-
भिरामाभिर्वर वाचनाभि प्रभावाभिरम्याभिरानदत. पुस्तकप्राहिणै
वाक्षि वेद श्रुतीनामिहान्तवहिस्नाच्च सम्यग् दृशा पौपथा प्राहिणा
पुसा कसत्कुडलाकारपक्वान्नसन्मोदकै पारणा भीमससार-
कान्नार भोजारणाऽद्यायि दान घन दत्तमाशीलि शील तपस्वतप्तम-

प्टान्हिकापन्नमुत्थं पुनर्भाविना भाविने त्यादि सद्धर्मरीत्या समारा
धिन श्रोमहापर्व सर्वं कृनार्थं कृन मानवं जन्म एतत्पुनस्तात पादैरपि
स्वीयपर्वस्वरूप निरूप्य । महामत्रिराठ् मागचंद्र सदारगजी भाणजी
राववो वेणिडासोऽपि वावा च वीरम्मदे सामलो राजसी ईश्वरो
मत्रि हम्मोर पंगार [रगार] सत्कादि भोजू अमीपाल तेजा समू
उप मुत्थ्य पुरातश्च मेहाजल सिद्धराजश्च रेपासुरत्राण सद्दीरपाला
नृपालस्तथा राजमट्टोपि पीथादिक सर्वं संघ सदा वदते पृज्य
पादान् महा टण्डक ॥ ६६६ श्री श्री श्री ५

—o—

श्रीजिनसिंह सूरिजीका दिया हुआ आदेश पत्र ।

॥स्वतिश्री ॥ श्रीवेन्नातटात् ॥ श्रीजिनसिंह सूरय सपरिकरा ।
सर्वगुण सुन्दरान् वाचनाचार्य यश कुशल गणिवरान् । सपरिकरान् ।
नादरमनुनभ्यादिशति । श्रेयोऽत्राप प्रसत्ते ॥

तथा हिन्दुणोकइ तुहा । नइ लाहोर ना आदेश छड, भली परड
रहेज्यो । आवक आविका ना जिम घणा भाव वधइ तिम करेज्यो
तुहे पिण डाहा छड, सर्व वात ना जाण छड । जिम गच्छनी घणो
सोभा वधइ तिम करेज्यो । आवक आविका समस्त नड नाम लेई
धर्मलाभ कहेज्यो ॥ वा० राजसमुद्र गणि नादर प्रणमनि ॥ मगसिर
मुदि ११ दिने

पत्र के मुग्य पृष्ठ पर

। भट्टारक श्रीजिनसिंह सूरिभि २ १० ११ कुशल

(मूलपत्र

• पृ २४० में हम

परिशिष्ट में

सम्पूर्ण

६

५१

प्रशस्तिः ।



॥रङ्गद्वैराग्य वासनातिशयसमाहत कठोरतरमुन्दरसाधुक्रिया
समाचार, कृत्तकृत्तादिवृन्द तिरस्कार, प्रवान जन वदन श्रुत विश्रुत
निरुपमसद्गुरु गुणगण समुद्रसित चित्तद्वीयोदेश समाहूतागत श्री
गुरुराज समुपदिष्ट विशिष्टाभयदानादि धर्मवामनावासितात करणेन
तद्गुरुपदेशादेव यात्रज्जीव पाण्मासिक जीवामारि प्रवर्त्तकेन, विशेष
सकलगोमहिपजाति पालकेन, समस्त जैनसम्मत श्रेष्ठश्रद्धयादि
महातीर्थकर मोचकेन सकलस्वदेशपरदेशमुक्त शुद्धजीजीयादिकर-
सतापेन, निर्मलप्रवलजल निस्तुलभुजजल साधित सकलभ्रमण्टलेन,
दिल्लोपतिसुरत्राणेन, श्रीमदकरमाहिपुङ्गवेन प्रदत्त श्रीयुगप्रदानविस्दा-
धार सतत प्रहृष्टमाहिविनीर्णापाढीयाष्टाहिका मठमारि, स्तम्भतो-
र्थीय समुद्रजलचरजीव सघातघात निवारणजातयश सम्भार,
वितथतया साहिसमक्षदूरीकृत कुमतिकृतोत्सूत्रासम्भ्रशसनमय 'प्रवचन
परोक्षादि' शास्त्र व्याख्यान विचार, विशिष्ट स्वेष्ट मन्त्रादि प्रभाप्रसा-
धित पञ्चनदपति सोमराजादि यक्षपरिवार, श्रीगासनाधीश्वर वर्द्धमान-
म्बामि पट्टप्रभाकरपचमगग (धर) श्रीसुधर्मस्वामिप्रमुखयुगप्रधानाचार्या-
प्रिष्ठिन्न परपरायातकोटिकगगमडन वज्रशास्त्राद्द्वार श्रीचन्द्रकुल
भरण श्रीनेमिचन्द्रसुरि श्रीउद्योतन पट्ट प्रदीप सर्वातिशायिज्ञानगुणा-
तिशय प्रदीधित मन्त्रीश्वर निमलकारितार्नुदाचलशिर शेखरी भूत

विमलवसति नामक श्री आदिनाथ चैत्य प्रतिष्ठापक श्री वर्द्धमान
 सूरिपट्टासन श्रीमदणहिल (पुर) पत्तनाधिप दुर्लभराजमुत्तो-
 पल्लव श्रीखरतर विहद श्रीजिनेश्वरसूरि श्रीजिनचन्द्रसूरि तमाङ्गी
 विप्रणाविर्भाविक, श्रीस्तभनक पार्श्वनाथ प्रकाशक, श्री अभय
 देव सूरि, श्री जिनतवल्लभ सूरि, श्रीजिनदत्त सूरि, पट्टातुक्रम समा-
 गत सुगृहीत नामधेय श्री जिनमाणिस्य सूरि पट्टभाकर श्रीश्रपमेश
 देवकृतानेकवार चरण मन्त्रिवेश श्री पुण्डरीकाचलोपरिप्रदेश समु-
 टलसित परमरमा ससर्गान्त दुर्गान्त परित परविहार प्रतिपेध
 दुर्ललित कोपविकार दुराचार प्रतिपन्थि मथनोद्भूत नव्यभन्व्य
 चैत्यनिष्पादन प्रभूत परमोत्साह सुखसागरावगाह सन्तुष्ट पुष्ट
 सत्कर्म वारित श्री खरतरसद्व कारित श्रीयुगादिविहार मुक्ताहार
 पुत्रस्थापक पद सपदनुत्तर सुवामबु मधुरतर वचन रचनाऽवर्जिता
 तर्जिता ज्ञविज्ञ श्री सलेम मुरत्राण सदाचीर्ण वितोर्ण रवि गुरुवार
 दुर्निवार सदुच्चारामारि पट्टह प्रकार प्रसादीकृतोच्छ्रितोच्छ्रित निरु-
 पम परित्राण श्री पितृ मुरत्राण धर्मप्रभार सदुपदेशोल्लास जगत्प्र-
 काश जगाति जेजीया प्रभृति करमोचन कारित दिग्बलय, मलयज,
 हास, काश, सकाश, यशोमरालपाल पद प्रचार प्राभृतीकृत स्फुरत
 कानकाति स्फुट स्फुटिक विमलदल तद्गणिति घटित सुघट कलिकाल
 प्रगट प्रनाप दृरीकृत मनाप व्याप पुरुपादेय श्रीवामेयत्रिभ्य प्रतिष्ठा
 विप्रायक श्री खरतर गठनायक सुविहित चक्रचूडामणि युगप्रधान श्री
 जिनचन्द्र सूरि पुग्दरै श्री मदाचार्य श्री जिनसिंह सूरि श्री समय-
 राजोपाध्याय श्री रत्ननिधानोपाध्याय वा० पुण्यप्रधानगणिप्रमुत्त

शिव्य प्रशिष्य साधुसङ्घसुपरिकरै प्रतिष्ठित श्रीआदिनाथस्विकारित च सकल श्री सधेन पूज्यमानं चिरं नन्दतादाचन्द्राकर्कतीर्थमिदम् ॥ स० १६६२ वर्षे चैत्रवदि सप्तमी दिने श्री विहम नगरे राजाधिराज श्रीरायसिंह विजयिराज्ये ।

युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि पुग्दराणा-सदुपदेशेन श्री विक्रम-नगर वास्नव्य भव्योसत्राल ज्ञातोय चौपडा गोत्रीय सधपति कचरा पुत्र रत्न सधपति अमरसो भार्या अमरादेवो पुत्र सधपति आसकर्णेन भ्रानृ अमीपाल कपूर परिवृतेन श्री योगशास्त्र घृत्ति पुस्तक लेख-यिन्वा, श्री युगप्रधान गुरुभ्य प्रददे, तैश्च श्री स्नम्भतीर्थ ज्ञानकोशे ज्ञान सधद्वये स्थापया चक्रे । शिव्य प्रशिष्य पत्परया वाच्यमान चिरनन्दतादानन्द विनायक । श्री रस्तु ।

(श्री पूज्यजी सप्रहमे, प्रशस्तिपत्र ? (गुणवितय लि ?) से ।

विज्ञप्ति पत्र ।

॥ ६० ॥ स्वस्ति श्री शान्ति जिन मानम्य ॥ श्री मति वेन्ना-तटे । प्रकट प्रोत्कट सकट कोटि करटि सत्पराक्रमा क्रान्त नभ क्रान्ता भ्रान्त वादि वृन्द प्रदत्तामान सन्मान दानान, प्रस्फुरददुप-मार प्रिसारि श्लेच्छ म्भभार हारि निरर प्रणामाभिगाम पादसाहि सलेम स्वच्छळ गलन्मानावमति तापित जिनपतियति तति कृन चाणाप्रदानान्, युग प्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि राजान् वा० सुमति

* यही प्रशस्ति (पोट की २, ३ लाइनों को छोड़ कर) प्रवक्तक सुखसागरजीके प्रेषित वसुदेव हिन्दीके अन्तिम पत्र में भी लिखी हुई है ।

कश्चोल वाचनाचार्य, पुग्य प्रगान गणि, पं० मुनि वल्लभ गणि,
 प० अमीपाल प्रमुख सावु मधुकर ससेवित पदिन्दीयरान्, श्री
 जेमलमेरु दुर्गतो, वि० विमलतिलक गणि, वा० साधुसुन्दर
 गणि, वि० विमलकीर्ति, वि० विजयकीर्ति, वि० उदयकीर्ति
 प्रभृति यत्ति तत्ति समनुगत सरणि सादर सुन्दर त्रि प्रदक्षिणी
 कृत्य सत्य विज्ञापयतीदवच । श्रेयोत्र श्री सौव गुरु राज प्रसादत ।

श्रीमता वडिमय(अ ?)स्मि । तथा पत्र मेकं श्री युगप्रधान
 गुरुणामागतमवगतादत प्रवृत्ति राग(?)दितं मन्मनस ॥ यत्तु
 कोट्टडा देश सत्क आदेशो नेतरथाकारि । तच्चारु कृन ।
 नहि पुण्य प्रत्रय । मतरेण पुण्यार्क युक्तस्य क्षेत्रस्य देवसस्येव कार्य-
 सिद्धौ तत्काल मेव दु प्राप्य माणत्वान्मम द्विरूप दिष्टा विशिष्ट क्षेत्रा-
 दिष्टि पुण्यमेवाविर्भावयति । यत्तु द्विस्थान्या तत्पाठ्ववर्तिनि ग्रामे
 स्थेय मिति लिखित तत्दूर पाठ्व वत्त (वर्त्ति)१ ग्रामोपिनास्ति । पृथग्
 चातुर्मास्यवस्थान कृदपिनास्ति ॥ इति विज्ञेय । भवत्प्रसादात्ताअपि
 मुपिन वाह स्थास्ये इति न कापि चिन्तास्ति । सा० थिरुकस्य
 प्रति शोधयते । यावदत्र स्थास्यामि तावत्तत्प्रतिगोधनं करिष्यामीति ॥

तथा श्री गुरुराज दर्शनार्थं गत रूपी मच्चक्षुषीसतृषीस्तस्तत्
 स्व दर्शन दान प्रधान पीयूष दानेन तोपणीये इति ॥ सदा वन्दना-
 वमेया ॥ भाटी गोइद दासोपि चलितु मुत्तालना करोति तथापि
 कतिच्चिदिनानि लगिष्यन्ति । वलमानपत्रं प्रसाद्यम् । सर्वेषा पाठ्व-
 वर्तिना साधूना मन्नामग्राह वदना निवेद्या । चैत्रासित दशम्या
 रजन्याम् ॥ (मूलपत्र हमारे संग्रह मे)

फरिशिष्ट (६)

श्रीजिनचंद्र हरिश्चर कृत

अष्टमद् चौपड

प्रथम रूपभ नमु जिनराज, जसु सेवइ सवि सीझड काज ।

अष्टमद् चउपड सुचग, रचिमि (सु?) भाव भगति मन रगि ॥१॥

पर हित पर उपकार मुणिद, पूउइ गोयम वोर जिणउ ।

कहि प्रभु कर्म विपाक विचार, किम जीव र्लइ मदड संमार ॥२॥

जाति न अन्ह समउ उत्तम कोइ, इसइ गरवि मरी सो क्रमि होइ ।

पूरव भव जाति मद कीयउ, मरी चडाल 'हरकेसो वली हुओ ॥३॥

जे कुल मद करइ बोलइ आल, ते परभवि हुइ ससउ सीयाल ।

कुलमद 'मरीचि' 'लगाई' खोडि, भमिउ सागर कोडा कोडी ॥४॥

हम सम रूपि नइसि मदि नडिउ, निररएन सयल अचल(चलत)आरडीउ

विणसत रूप न लागी वार, हुओ सुउट योनि अरतार ॥५॥

पटरएड पृथनो शरद्धि अपार, चउद रतन नवनिध भडार ।

रूप गर्व कीय 'सननकुमार', जिणठउ तन धिग २ ससार ॥६॥

कहइ न वलवत हम सम कोई, मरि पतग सो निश्चय होइ ।

गति यौवन बलि थिर न रहेइ, तु 'वाहूबलि' दीक्षा लेइ ॥७॥

मति बुधि नउ फल परतवि जोइ, मरि मूरए मृग छालउ होइ ।

पढत पाठ(ड) गरविउ अयाण, हु जगि पडित अवर न जाण ॥८॥

ज्ञान मदिइ वलदिउ सु होइ, रथ जूतइ दुख सहसिइ सोइ ।

धण कण कचण ऋद्धि मदकीउ, धिग धनु जिसु लगइ कूरहुउ ॥६॥

रानिहि घरि २ भमतउ रहइ, हडकत राक न गुरचनि लहइ ।

नवइ नदि मम्मणि लोभियउ, धन न धर्म दुख आगल थयो ॥१०॥

भोजन करि वेयावच करइ, निदइ तसु तपुगरव मनि धरइ ।

‘कूरगडू’ नो परि दुख सहइ, तृपति आहार करत नवि लहइ ॥११॥

सुझ न गमइ इहु दोभागियउ, हु जगियलभ सोभागिउ ।

इमा वचन गरव मनि धरइ, साप काग होइ अवतरइ ॥१२॥

सूया मारु मधुरमि लवइ, वचन दड पजर दुख सहइ ।

मगर सहस योजन विस्तार, तदुल लघुतमि मन व्यापार ॥१३॥

इक इक दण्डि महादुख पार, तिहु सहत तिणि कवण आधार ।

माया त्रागुल क्रोध भुजंग, मानिहि वेसर होइ मतगु ॥१४॥

लोभिइ उदरडो मरि होइ, कर्म आगल नवि छूटइ कोइ ।

नयन रूपि रगि रमइ पतग, नाद वेधि वेधियउ कुरंगु ॥१५॥

मीन रसनि परिमल भमरलउ, फरस रसि गज गयवर गलिउ ।

इक २ इद्रि लगइ दुख सहइ, जिस तनि पचइ ते किम सहइ ॥१६॥

इय सुणिय मुणिय विचार निर्मल, आठमद जिउ परिहरइ ।

सिजी राग दस (द्वेष?) कपाय इन्द्रि, पच विषय न चित धरइ ॥

धन्न धन्न खरतर गठ सुरतरु, भणइ ‘जिणचन्द्रसूरि’ ।

जे पढइ तेहनइ आदि ‘जिणवर’, मनइ वछित पूरि ॥१७॥

(पत्र १ स० तत्कालीन)

(२) विक्रमपुर मंडण आदि जिन स्तवन

राग :—धारणि

साचउ इरु अरिहन्त अरुल सरूपी जिणवर जाणीयइ र ।

हरिहर ब्रह्मा देव ते सुहणइ मनहि न आणियइ रे ॥

सामी समरथ आज मई नयणउ निरखीयइ र ।

मन माहरउ रे रूडा, जिणगुग गाइया हरखीयउ रे ॥आ०॥

रमणि रग विलाम योवन धन छइ सहु(य) कारिमउ रे ।

भवभय भजण धोर श्रोत्रपहेसर सुर(सुर) सुरतरु समउरे ॥२॥

तुम्ह दरसिण जगनाह, सफल जमारो जाण्यो मइ माहरो रे ।

कामिन फल दातार हिव हु नाम न ठोडं ताहरउ रे ॥३॥

द्यो समकिन मुझ सामी वलि वलि पय पणमी वीनवउं सही रे ।

गरुआ तणउ रे सभाव एहज प्रारथिया पहडड नही रे ॥४॥

‘विक्रमनयर’ शृङ्गार श्री आदिसर निज मन ध्याडयइ रे ।

श्रीजिनचन्द्रसूरि एम, पभगड वडित(बहु) फल पाईयइ रे ॥स०॥५॥

(३) जोगी वाणी

काया नगरी कोट सबल तिहा, अष्ट वुरज नव द्वार ।

सहस बहुत्तरि राणी रमना, राडण (रावडन) विरचत वार ॥१॥

जोगी हो भूलि म भरम ससार,

यहु घट काचउ कूड म राचउ कोजड जिनधर्म सार ॥१॥जो०॥

चौर कपूर आसन कि पडवर ताल सु अमृत हार ।

देखत धिग धिग सयल सगत ए, फीटी हुइम्यइ असार ॥२॥जो०॥

काचउ रे कुम्भ भर्यो जिम नोरइ, होइ न विणसन वारं ।

तेम अधिर तनु छोजइ विण विण, कोजइ पुण्य अपार ॥३॥जो॥

जडिय न औपय मन्त्र न मूली, तत्र न जत्र जनोइ ।

जामन मरण जरा दुख वारण, राखणहार न कोइ ॥४॥जो॥

नव तत(त्व) मेरी कगुरी (किन्नरी) रे, जीवदया तंत सार ।

जे कगरी(किन्नरी) वावइ अरिहन्त ध्यावइ, ते पावइ भवपारं ॥५॥जो॥

वाणी श्रुत रग सोगी पूर, नासइ दुकृत पूर ।

कानइ मोरइ तप मुद्रा दीपइ, जीपइ चंद नइ सूर ॥६॥जो॥

समता अगि विभूति लगाउ, विनइ जटा सुर खाऊ ।

मेरालि मौनि महावृत कथा, पहिरि परम पद पाउ ॥७॥जो॥

शील गुण्ड तिन डपति जोगवटउ, दीनउ गुरु हितकार ।

जान मढी थिर आसन वइठउ, मन्त्र जपु(जपइ) नवकार ॥८॥जो॥

भावना भूमि विमा मोरी मिज्या, मोवत सयर सुरंगो ।

गुरु वचन सुणि मोह निद्रा मिसि, राव ? लगी सिव रंगो ॥९॥जो॥

रुपर राड सघ(था)रइ सोवइ, भार जटा सिर धारइ ।

जोगी नाम विगोवइ का रे, जिण मत विण भ(व) हारइ ॥१०॥जो॥

आदीसर जिन शामन जोगी, नेमि नइ थूलिभद्र राया ।

जेहनइ नामइ पाप पुलायइ, निर्मल होवइ काया ॥११॥जो॥

पूरि मनोरथ वीर जोगीसर, 'ढिलीपुर' प्रभु जाणी (राया) ।

जोगी वाणि 'जिनचन्द्र सूर' हि, रगइ एम वखाणी ॥१२॥जो॥

पाठा श्री जिनचंद सूरिसर'इणपरि जोगी फु समझाया ॥जो॥

॥ इति गोतम् ॥

पञ्चतीर्थी स्तवनम् ।



कनक केनक केसर दीर्घिति, मिलिन मुक्त महासुख सन्ततिम् ।
 विदित विश्वपति विगतानृत, नमत नाभि भव नयनामृतम् ॥१॥
 सुमुख गोमुख यत्र वरेण्य, समनु सेवित आदिमतीर्थप ।
 दम दयापर काम फलाजित, शिव रमा दृढतान्सवपाङ्कित ॥२॥
 मृदु मृगाङ्क महाभव भीत भिद्गगन नीरवि चापति नुस्सवित् ।
 कलकुमारक काचल कान्तजित्, विजयना जिन शान्ति त्रिकालवित् ॥३॥
 सकल सद्गुण रत्न करण्डकम्, भय महोदधि तार तरण्डकम् ।
 सपदि वारित वाद वितण्डकम्, स्मरति शाति जिनेश म चडक ॥४॥
 विगत विस्तर वाम विरामकम्, मुख कला जित तापन धामकम् ।
 नन सुरासुर शङ्कर नामकम्, विधिन माज्जर्नताकृत कामकम् ॥५॥
 धन घना घन कज्जलकासितम्, परम केवल भाग विभासितम् ।
 नमित निज्जर राज नरेश्वरम्, भजत सुन्दर नेमि जिनेश्वरम् ॥६॥
 सकल मगल मूलमपापकम्, विदलितारिण कर्म कलापकम् ।
 वर विभाभर भासुर भालकम्, प्रणत पाञ्चपति परपालकम् ॥७॥
 तव जिनेश दिनेश समाकृति जनित लोक सुकोक चमत्कृति ।
 रुचिर रोचि कलाप कलावृति कृन कुत्रोव तमोह्य नादति ॥८॥
 मयित मन्मथ मन्थुर सकथ, जरित जन्म जरा मरणव्यथम् ।
 सत्रल मज्जित मयम सद्रथम्, विनुत वीर जिन धृत सत्पथम् ॥९॥

तरुण तप्त हिरण्य समत्विषम्, दरितरत्य रति प्रभृति द्विषम् ।
 विकट सङ्कट कोटि पराङ्मुखम्, हृदि विवक्त जिन विलसत्सुखम् ॥१०॥
 इति जगद्गुरु पञ्चक सस्तवस्सविनय जिनचन्द्र कृनस्तव ।
 सुकवि चित्त कृतानघ समद प्रतनुतात्सुर सन्तति सम्पद ॥ ११॥
 ॥ इति पञ्चतीर्थी स्तवनम् सम्पूर्णम् ॥

पार्श्वनाथ स्तवन

पद्म द्वायाशक्त नख प्रभूता अभीषवोयस्य परि प्रभूता ।
 उर्ध्वं प्रयान्ति प्रतिभास माना, सूर्यस्य जेतु प्रतिभा समाना ॥ १ ॥
 वीर्यादि हार्यादित मन्युनेव रक्ता नितान्त खलु मन्युनेव ।
 अय जन तापयति प्रमोदात् दस्मस्सु सत्सु प्रभुष प्रमोदात् ॥ २ ॥
 पद्म द्वय यरय विमाति कामम् सरोज सभार मिव प्रकामम् ।
 सुरेन्द्र नागेन्द्र कृत प्रणामम् स्तवीमि पार्श्व सुगुणाभिरामम् ॥ ३ ॥
 सुदेशोस्तु'पार्श्वो जिनो मे विनाल सदायोष्ट देहो भवत्शर्मकाल ।
 अहेर्नप्र भूतस्य सप्तास्य चूडामणि विम्ब नोष्ट प्रकर्मच्छि देहि ॥ ४ ॥
 स्वच्छ श्री शशि गच्छ मण्डपमणि गाम्भीर्य्य धैर्य्योदधि
 श्रीमच्छ्री जिन पूर्वको गुणनिधि माणिभ्य सूरि गुरु
 शिष्य श्री जिनचन्द्र सूरिभिरिति सम्यक् स्तुतो भक्ति
 श्री पार्श्व प्रददातु निर्मल फलं त्रैलोक्य चूडामणि ॥ ५ ॥
 ॥ इति पार्श्वनाथ स्तवनं समाप्तम् ॥

(पत्र १ हमारे सग्रह मे)

अवश्य पढिये !

शीघ्र खरीदिये !!

श्री अभय जैन ग्रन्थमाला की

सस्ती, सुन्दर और उपयोगी पुस्तके ।

ग्रन्थमालाका उद्देश्य—प्रायः लागत मूल्यमें या उससे भी कम मूल्यमें यावत् अमूल्य तरु में, भी सुन्दर उपयोगी जैन साहित्यका प्रचार करना ।

ग्रन्थमाला स्थापन—श्रीमान् शकरदानजी नाहटाके पुत्ररत्न, परम धर्मज्ञ विद्याविलासी, शिक्षाप्रेमी, सुधार प्रिय स्वर्गीय, श्रीमान् अभयराजजी की पवित्र स्मृतिमें स० १९८२ में स्थापित की गयी थी । थोड़े ही वर्षों में अत्युपयोगी ८ ग्रन्थोंका प्रकाशन होना हर्षका विषय है । ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित पुस्तकोंका संक्षिप्त परिचय यह है —

१ अभयरत्नसार

अलभ्य

खरतरगच्छोप पद्यप्रतिक्रमण, साधु प्रतिक्रमणके साथ श्रावकोपयोगी स्तवन सहाय, तपस्या विधि, विधान भक्ष्याभक्ष्य आदि सभी आवश्यक विषयोंका अत्युत्तम संग्रह, सजिलद पृ० ८०० का लागतसे भी कम मूल्य ॥१॥ मात्र । इसकी उपयोगिताका स्पष्ट प्रमाण यही है कि २००० पुस्तकें धडाधड बिक गयीं, अब भी प्रचुर मांग है, लेकिन अब पुस्तकें स्टोकमें नहीं रहीं ।

२ पूजा संग्रह—पृष्ठ २६४ सजिलद ग्रन्थका मूल्य मात्र १) ।

भिन्न भिन्न विद्वान् कवियोंके रचित १७ पूजाओंके साथ अप्रकाशित कविवर समयसुन्दरजीकृत चौबीसी और मनोहर स्तवनोंका उपयोगी संग्रह ।

मगानेकी शीघ्रता करनी चाहिये, अन्यथा अभयरत्नसार की तरह पठताना पडेगा ।

३ सती मृगावती ले०—भवरलाल नाहटा

प्रायः स्मरणीय सती मृगावतीका सरल और रोचक भाषामें मनोहर चरित्र इस पुस्तकमें बड़ी ही खूबीके साथ अङ्कित है पृ० ४० मूल्य २) मात्र

४ विधवा कर्तव्य ले०—अगरचन्द नाहटा

ताडपत्र पर लिखित प्राचीन 'विधवा कुलक'का सरल विस्तृत विवेचनात्मक भाषान्तरके साथ विधवा बहिनोंके उपयोगी सभी विषयों और कर्तव्यों पर इसमें प्रकाश डाला गया है । विधवा बहिनोंके लिये तो यह मार्गदर्शक ही है । प्रभावनाम अमूल्य वितरण करने योग्य ग्रन्थरत्न पृ० ६८ मूल्य मात्र =) ।

५ स्नात्र पूजादि सग्रह —पोस्टेज)।।। का टिकट भेजने पर मुफ्त स्नानपूजा, अष्टप्रकारी, दादाजीकी अष्टप्रकारी पूजाओंके साथ दशार्त्रिक स्तवनादि सग्रह ।

६ जिनराजभक्ति आदर्श अलभ्य

जिनेश्वरकी भक्ति और पूजाका सच्चा स्वरूप दर्शानेवाला अत्युत्तम ग्रन्थरत्न, प्रारम्भमें 'मूर्ति पूजा विचार' नामक बाबू अगरचन्दजीका मननोय लेख है । १००० प्रतिया घडाघड बिक गयीं, अब स्टोकमें नहीं है ।

७ युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि

आपके कर कमलोमें विद्यमान, हाथ कङ्कनको आरसी क्या ।

८ ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह छप रहा है

१३ वीं शताब्दीसे वर्तमान तककी भाषाओंका क्रमिक विकाश, जैन धर्मका उज्वल अतीत गौरव, जेनाचार्यों, विद्वानोंकी जीवनी और शासन सेवाओंका दिग्दर्शन करनेवाला हिन्दी साहित्य ससारमें अपूर्व अजोड ग्रन्थरत्न बडे ही सजदज सुन्दर चित्रोंके साथ छसजित होकर शीघ्र ही प्रकाशित होगा । पहलेसे ग्राहक बनिये नहीं तो पछताना पडेगा ।

मविष्यमे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ

१—जिनदत्तसूरि चरित्र २—कविचर समयसुन्दर ३ कविचर धर्मवर्द्धन
४—मस्तयोगी ज्ञानसारजी, आदि ऐतिहासिक अनेकों ग्रन्थरत्न बडी ही महत्त्वपूर्ण खोज शोधके साथ प्रकट होंगे ।

परिशिष्ट (च)

(परिशिष्ट "ग" के पूर्ति रूप)

(अल्लाहो अकबर)

नकल प्रतिभाशाली फरमान तारीख २२ महीना अथान आलही सन् ४० (मेरे) साम्राज्य के वर्तमान व भविष्य के मुत्सद्दियो (समस्त कर्मचारियो—या कार्यकर्त्ताओ) को मालूम हो कि युग-प्रधान जिनचन्द्रमूरि व (और) जिनमिहसूरि कि जो ईश्वर-भक्त व ईश्वर के विषय के पंडित हैं , चाहिये कि उनको तमत्ली (दिलजमी) देनेका प्रयत्न करे (याने प्रमन्न रखे) कोई उनके साथियो को दुख न देने पावे । यदि वे अपन किसी चेले या साथीको अपने पास से दूर करदेतो किसीको ऐसे (उम) व्यक्ति की सहायता नहीं करना चाहिये । उनके उपासरो व मन्दिरो आदि मे कोई भी किसी तरह से भी उनके कार्यमे वित्र न डाले । क्योकि वादशाह (अकबर) का यह नियम है कि हरएक सम्प्रदाय अपनी रीतिके अनुमार ईश्वर की सेवा-पूजा करे ।

जो झगडा ईश्वरभक्त हीरविजयमूरि व विजयसेनसूरि के सम्प्रदाय वालोमे हुआ था वह वादशाह के सामने अर्ज किया गया वादशाह ने हुक्म फरमाया कि अत्र उनके अनुयायियो मे किसी भी कारण से झगडा न हो और नह एक दूसरी की बढी (बुरी) न चाहे । और जो कुछ उनके चेले धर्मसागर ने "प्रवचन परीक्षा" नामक पुस्तक मे उनकी बुराई लिखी है उसको उसमे से दूर करदे और यदि उन्होने अपनी पुस्तक मे उसके विरुद्ध कुछ लिखा है तो उसे वे भी दूर करदे क्योकि ईश्वरभक्ति को पहली पूजी-सीढी यह है कि ऐसे कार्यों से दूर रहे ।

ईश्वर से प्रार्थना है कि इन दोनो सम्प्रदायो मे प्रेम व मेल होजाय ।

अबुलफजल

बाके अनवीस सरफुद्दीन हुसेन

अल्लाह अकबर

नकल प्रतिभाशाली (चमकदार) फरमान जिसपर
मुहर “अल्लाह अकबर” लगी हुई है ।

तारीख शहरयूर ४ माह महर आलहो सन् ३७

चूकि उमदतूल मुल्क रुकनूम मलतनत उल काहेरात उजदूद-
दोला निजामुद्दीन सददखॉ जो बादशाह का कृपापात्र है, मालुम हो
चू कि मेरा (बादशाह का) पूर्ण हृदय तमाम जनता यथा सारे जान-
दारो (जीवधारियो) के शान्ति के लिए लगा है कि समस्त समार
के निवामी शान्ति और सुख के पालने मे रहे । इन दिनों मे ईश्वर
भक्त व ईश्वर के विषय मे मनन करने वाले जिनचन्द्रसूरि खरतर
भट्टारक को मेरे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उसकी ईश्वर भक्ति
प्रगट हुई, मने उमको बादशाही मिहरवानियो से परिपूर्ण कर दिया
उमने प्रार्थना की कि इमसे पहिले ईश्वर-भक्त हीरविजयसूरि
तपसाने (हजूरके) मिलने का सौभाग्य प्राप्त किया था उसने प्रार्थना
की थी कि हरसाल वारह दिन साम्राज्य मे जीववध न हो और किसी
चिडिया या मन्त्री के पास न जाय (न मतावेँ) उसकी प्रार्थना
कृपाकी दृष्टि से व जीव वचाने की दृष्टि से स्वीकार हुई थी अब मे
आशा करता हू कि मेरे लिए (एक) मफ्ताह भर के लिए उसी तरह
से (बादशाह का) हुक्म हो जाय । इमलिए हमने पूर्ण दया से हुक्म
किया कि आपाठ मास के शुक्लपक्ष मे सातदिन जीववध न हो और

न मताने वाले (गैर मूजी) पशुओं को कोई न सताने, उसकी तफ-
सील यह है —नवमी, दसमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी
और पूर्णमासी । वास्तव में बात यह है कि चूंकि आदमी के लिए
ईश्वर ने भिन्न भिन्न अच्छे पदार्थ दिए हैं अतः उसे पशुओंको न
मनाना चाहिए और अपने पेट को पशुओं की कन्न न बनाए ।
कुछ हेतुवश प्राचीन समय के कुछ बुद्धिमानलोगों ने इस प्रथा को
चला दिया था । चाहिए कि जैसा ऊपर लिखा गया है उसपर अमल
करे इसमें कमी न हो और इसे (हुम्न को) कार्य रूपमें परिणित
करने में बहुत महनशीलता में काम ले ।

उपर लिखी तारीख को लिखा गया

अधुलफजल व वाकयानवीस इब्राहिमवेग

(१) उडीमा और उडीमा की सब सरकारें,

जिहन्तावाड

मारोहा (मादोहा)

तारीकावाड

गोरीया

कफदा

फीचर

बलाद (टाण्डा)

ताजपुर

हसन गाँव

खिलनीयावाड

सरीफावाड

सासा गाँव

सारकाम

सलीमावाड

सलमल (सिलमल)

फतहावाड

भूराघाट

महमूदावाड

मदारक,

(२) परमान परमात्मिक मोक्ष 'अन्तर्गत' अन्तर्गत ४
 मन्त्ररूप मन्त्ररूप 'अन्तर्गत' ३३ व्यक्ति जागीरदारान
 व सन्निवृत्त ओ मुद्रादिमान नृपे अन्तर्गत विद्वान्द.

अथ । परमान्द

नैराश्रय मोक्षरूप

एतन्नर

(३) (कदा कदा कदा उपर का, भाग नहीं मिटा)

धर्म । मन्त्ररूप

धर्म । मन्त्ररूप

धर्म—परिपत्र मन्त्ररूप

रिपत्र

मोक्ष—परमान्द परमान्द मोक्षरूप मोक्षरूप मोक्षरूप मोक्षरूप
 हमें पात्र शाही-परमान्द की प्रकृत प्राप्त हुई, निम्नम मोक्ष केपत्र, शाही
 एतन्नरिपत्ररूपि परमान्द है। मुद्राप्रमाण मूद्रा एक परमान्द परिपत्र
 (ग) में उपर गया है। ये तीन परमान्द प्रकृत मूद्रा उद्गीमा, उपर और
 रिपत्रिके हैं। पदना परमान्द धर्मशास्त्र एतन्नर "प्रपत्र-परिपत्र" मन्त्ररूपी है
 उपरकी दोनो नरूप अत्यन्त लीन और जगति होने कारण पूर्ण शब्दानुसार
 न हो सया, अन्तर्गत भाषा मुद्रा ही प्रकृतित करते है। परमान्दका अनु-
 पात्र एतन्नर शाहीशाही शाही भीषान्द M A pl: D महोदयों करनेकी
 एतन्नर की है एतन्नर आपको अन्तर्गत धर्मशास्त्र है। मूर्तिरूपीको निते एतन्नर
 परमान्दोंम धर्मशास्त्र परमान्दके जगत्पर एतन्नर पर्ये अन्तर्गत मूर्तिके
 परमान्द, पर्ये शाही आमन्त्रण-पर्ये, दर्शनविद्वान्द मोक्ष इत्यादि कई
 और मिथो चाहिप। भविष्यमें प्राप्त एतन्नर तो द्वितीयावृत्तिमें प्रकृतित
 करेंगे।

परिशिष्ट (छ)

पूर्ति

- पृ० ९ श्रीवर्द्धमानसूरि कृत उपमितिभवप्रपञ्चानामसमुच्चय, उपदेश-
माला वृद्धवृत्ति और स० १०४५ का प्रतिमा-लेख (कट्टिग्राममें)
उपलब्ध है ।
- पृ० १२ श्री अभयदेवसूरि कृत १ सत्तरीभाष्य (गा० १९२ कृपा० भ०),
२ नवतत्त्वप्रकरण भाष्य, ३ पचनिग्रन्थी, ४ घटणक भाष्य,
५ निगोत्र पट्टिनिशिका, ६ पुढगल पट्टिनिशिका, ७ साहम्मती घच्छल
कुण्ड (गा० २९) और ८ महावीर एतवादि उपलब्ध है ।
- पृ० १३ जिनदत्तसूरि कृत १ सगुरु पारतन्त्र २ विघ्नविनाशी स्तोत्र, ३ उप-
देश कुत्र, ४ समाधिप्रायी स्तोत्र, ५ श्रुतस्तत्र, ६ आध्यात्म
गीतानि ७ मन्त्रगर्भित स्तोत्र आदि उपलब्ध है ।
- पृ० १४ जिनपतिसूग्नि कृत पत्रलिगीटीका, तीर्थमाला, चतुर्विंशतिविना
स्तत्र, विरोधालङ्कार प्रपञ्च एतुति इत्यादि उपलब्ध है ।
- पृ० १५ श्री जिनप्रबोधसूरिजीने विवेकसागर कृत 'पुण्यसार कथा' का
समीक्षण किया था ।
- पृ० १६३ विनयसोम—इनके शिष्य सोमछन्दर शि० अमर कृत विवाह
पदल (प० १५) उपलब्ध है ।
- पृ० १६३ लज्जोत्थ शि० दानमागर शि० रत्नवीर कृत भुवनदीपक्या
(स० १८०० जे० मा० स० इ०) मिलता है ।
- पृ० १६४ कल्याणधीर कृत त्रिपुमहाय गा० ६८ पत्र ३ चतुर० स० में है ।
- पृ० १६४ गुणरत्न कृत काव्यप्रकाश टीका (स० १६१० ज्ये० घ० ७ दि०
रत्नविशालार्थ) और सारस्वतत्रियाचन्द्रिका (स० १६४१

भुवन० भ० पा ४४) उपलब्ध है । इसके शिष्य रत्नविशाल कृत
रत्नपाल चौ० (सं० १६६२ महिमापुर भुवन० भ०) और
इनके लिखित प्रशस्ति स० १६६६ भा० सु० ३ घोरमपुर
(नाहर लेलाहू १७१५) है । शिष्यके प्रशिष्य महिमोदय कृत
पचाङ्गनयनविधि गा० ०४ (स० १७२३ भा० सु० ७
की उपलब्ध है ।

- पृ० १६४ कुशलवीर कृत 'रसिकप्रिया भावाटीका' (जोधपुर, वर्द्धमा
भ० गु०) और कुशललाभ कृत वनराजर्षि चौ० (स० १७०
जय० भ०), मल्लिस्त० (१८५६ जेमलमेर) उपलब्ध है ।
- पृ० १६४ महिमोदय कृत ब्रह्मपक्षगुह्यस्पष्टानयन चौ० गा० ४६ (स०
१७३१ भा० सु० ५ सागाजी हेतरे रचित) सग्रह
नं० १२५ में है ।
- पृ० १६५ क्षेमरङ्ग शिष्य विनयप्रमोद शि० महिमासेन लिखित प्रति महिम
भ० व० नं० २० में है ।
- पृ० १७३ पद्महेम शिष्य कृत देशीनाममाला अवचूरि (स० १६५
रूपा० भ० न० ५२५) उपलब्ध है ।
- पृ० १८१ श्रीजिनसिंहसूरिजी के भुवनराज नामक शिष्य थे जिन
स० १६८७ फा० शु० ५ बीकानेरमें लिखित प्रति का अन्त्य
पत्र हमारे सग्रहमें है ।
- पृ० १८२ रामचन्द्र कृत मूलदेव चौ० (स० १७११ नवहर-चतुर० स०
एव सामुद्रिकभाषा (स० १७२२ माघ क० ६ भेदर
जिनहर्षसूरि भ०) उपलब्ध है । वैद्यविनोद स० १७२० लिख

- है यह सवत् रामविनोद का है। पंचविनोद इससे अलग होगा
उमका रचनाकाल सं० १७२६ घै० सु० १७ मरोट (दान० भं०) है।
- पृ० १८३ दयासागर कृष्ण शीलवतीरास (म० १७०५ फा० सु० ९ चर्द्ध०
भ०) उपलब्ध है।
- पृ० १८५ उमतिकलशोल कृष्ण मृगापुत्र सन्धि (रामचन्द्र भ०) स० १६६१
(१) भा० य० ११ महिमनगरमे रचित उपलब्ध है।
- पृ० १८५ रत्नचन्द्र शि० रत्नराज शि० नरसिंह कृष्ण कल्पसूत्र वाला० और
योगचिन्तामणि वाला० उपलब्ध है।
- पृ० १८६ ज्ञानचन्द्र कृत जिनपालिन जिनरक्षितरास (गा० १८४) और
चित्तमभूति चौडा० (गा० १८६) क्षमा० भ० मे उपलब्ध है।
- पृ० १८६ साधुराग कृष्ण धर्मोपदेश गा० ८७, सूयगडग धीपिकादि उपलब्ध है।
- पृ० १८८ विनयनाम कृष्ण 'पार्व भक्तामर' गा० ४५ "भक्तामर पाद पूर्ति
काव्यसंग्रह" भा० २ में मुद्रित है।
- पृ० १८६ देवचन्द्रनी कृष्ण "दण्डक वाला०" (स० १८०३ का० सु० ११
गवानगर० चतुर० स०) उपलब्ध है।
- पृ० १९० की फूटनोटमें उल्लिखित "लघुविधिप्रपा" का अवतरण —
"श्री जिनचन्द्रसूरिजी यह श्री पुण्यसागर महोपाध्याय नह पूलायउ
हुतउ तिवारइ एही जबाब कीधउ हुतउ"
- पृ० १९१ पद्मराज कृत चौदह गुणस्थान स्त० टया और ० बोलगर्भित
चौबीस जिन स्तवनादि उपलब्ध है।
- पृ० १९२ अमरमाणिक्य शि० वा० क्षमारग शि० रत्नलाम शि० राजकीर्ति
कृत "वर्द्धमानदेशना" उपलब्ध है।
- पृ० १९३ विमलकीर्ति कृत (१) दशत्रैकालिकटया (२) पाक्षिकसूत्र टया
और (३) प्रतिक्रमण समाचारी टया उपलब्ध है।

- पृ० १९३ ज्ञानमेरु कृत (१) कालिकाचार्य कथा (भुवन० भ०),
(२) माधवनिदान बाला० उपलब्ध है ।
- पृ० १९३ नयमेरुके शिष्य केशवदास लिखा है किन्तु वे उनके प्रशिष्य यानी
शि० लावण्यरत्नके शिष्य थे ।
- पृ० १९६ राजसिंह कृत विद्याविलास चौ० (स० १६७९ वै० चपावती दान०
भ०) उपलब्ध है ।
- पृ० १९६ कुशलभाभ कृत जिनरक्षितरास (स० १६२१ धा० सु० ५)
उपलब्ध है । इनके गुरुभाई भानुचन्द्र-रामचन्द्र (स० १६५७
बाल्यत्रयपक्क, ग्रहपेपी) थे, भानुचन्द्रजीके पास सुप्रसिद्ध कविवर
धनारमीदास श्रीमाल प्रतिक्रमणादि पद्ये थे (भा०का०म०मौ० ७
पृ० १९८) ।
- पृ० १९७ चरित्रसिंह कृत देशीनाममाला वृत्ति पत्र ४५ महिमा० भ० में
उपलब्ध है ।
- पृ० १९७ प्रमोदमाणिस्य शि० क्षेमसोम पुण्यतिलक शि० विद्याकीर्त्ति कृत
जखर्म चरित्र स० १६६९ पत्र ५ महिमा० भ० में है ।
- पृ० १९९ लावण्यकीर्त्ति कृत "देवको ६ पुत्र डाल" हमारे सम्यहके
न० १४०२ में है ।
- पृ० २०१ गुणविनय कृत ऋषिमण्डल अवचूरि (पत्र० १९ भुवन० भ०) और
जयतिहुभण बाला० (लाहौर, स्वयं लि० राम० भ०) उपलब्ध है ।
- पृ० २०२ मतिकीर्त्ति कृत सम्यत्त्वपचीसी टरा (पत्र ४ महार० भ०), ललिताङ्ग
रासादि उपलब्ध है ।
- पृ० २०३ श्रीवल्लभ कृत "चतुर्दश स्वर स्थापन वादस्थल जिनराजसूरिराज्ये
रचित उ० जयचन्द्रजीके निजी पुस्तकमें है ।

- पृ० २०४ चारुदत्त शि० कल्याणनिधान शि० लज्जिचन्द्र कृत जन्मपत्रो पद्धति (स० १७५१ का० छ० महिमा० भ०) उपलब्ध है।
- पृ० २०४ पुण्यकीर्ति कृत मोहछत्तीसी (१६८४ भा० नागौर) मढछत्तीसी (स० १७८५ भा० घ० १३ मेडता) महिमाभक्ति भडारमें उपलब्ध है।
- पृ० २०४ सूरचन्द्र शि० हीर उदय प्रमोद कृत चितरु मृति चौ० (म १७१९ जेसलमेर चतुर० खं०) उपलब्ध है।
- पृ० २०५ शिवनिधानकृत गुणम्यानस्तबाला० (पूनमचन्द्रजी यति स० पत्र १६) मग्रामपुर म श्रावक जीवराज की धर्मपत्नी के लिए रचित पर्व भाषाके कालिकाचार्यकथा य चौभासीव्याख्यान उपलब्ध है। इनके शिष्य "माा" कृत रसमञ्जरी (गा० १०७) शिक्षा छत्तीसी (दान० भ०) और उत्तराध्ययनगीत जो सिद्धविनयकृत लिखा है वास्तवम महिमासिंह "मानकवि" कृत ही है, इय कृतिमें मतिंसिंह और कनकसिंह दो गुरुभाइयोका उल्लेख दिया है।
- पृ० २०६ सहजकीर्ति कृत विसनसत्तरो (स० १६६८ नागौर भुवन० भ०) उपलब्ध है। इनके हरिश्चन्द्र रास में १ सायर सेठ २ बच्छराज ३ नरदेव ४ सुदर्शन ५ कलावती ६ रायपसेणी उद्धार ७ शत्रुञ्जय रासके रचनेका उल्लेख है। देवराज बच्छराज चौ० भिन्न भिन्न लिखा वह परु ही है। इनके शिष्य रत्नसुन्दर शि० नन्दलाल कृत (१) अष्टाहिका व्या० (१७८९ का० छ० ५), (२) शृङ्गा-धैराग्य तरङ्गिणी वृत्ति (सं० १७८५ आगरा), चौदहगुणम्यान विवरण (सं० १७८८ वै० शु० ३ कासमपुर जय० भ०), (४)

सिद्धान्तरत्नवार्त्ता आदिपद ध्याख्या० (प० २ दान० भ०)
आदि उपलब्ध है ।

पृ० २०६ श्रीसार कृत जयतिहुमण बाला० (पत्र २५ जय० भ०) और
कई स्तोत्रादि उपलब्ध हैं ।

पृ० २०८ ज्ञानप्रमोद कृत जगदाभरण वृत्ति (जिनराजसूरि राज्ये प० ६१
दान भ० और कतिपय स्तवनादि उपलब्ध हैं । इनके शिष्य गुण-
नन्दन कृत इलातीपुत्र चौपई (स० १६७५ विजयादशमी, विहार
पुर क्षमा० भ०) और प्रशिष्य विनयचन्द्र कृत मेन्द्रूतभवचूरि
(स० १६६४ राहद्रह० स्वय लि० प्र०) सग्रह में है । दूसरे शिष्य
विशालकीर्त्ति के शिष्य क्षेमहर्ष कृत (१) पुण्यपाल चौपई (स०
१७०४ पौ० शु० १० श० सिन्धु-सजाउलपुर, वर्द्ध० भ), (२)
चन्द्रनमलयागिरि चौ० (स० १७०४ महिमा० भ०) उप-
लब्ध है । क्षेमहर्ष कृत फलोदीपार्श्वस्त० गा० ७४ (प० ३)
और लक्ष्मीविनय कृत भुवनदीपक बाला० (स० १७६७ मि० कृ०
१० दान० भ०) उपलब्ध है ।

पृ० २०८ हीरकलश कृत श्मुनिपतिचौ० (१६१८ मा० कृ० ७ र०
बीकानेर महिमा० भ०), २ आराधना चौ० (स० १६२३), ३
जीभटातमवाद (स० १६४३ बीकानेर स०), हियाली
(स० १६४३ बीकानेर) और इनके शिष्य हेमाणद कृत अङ्ग
फुगण चौ० और दशारणभद्रभास (स० १६५८ कार्तिक
पूर्णिमा गा० ५६) भी उपलब्ध है ।

पृ० २०८ जयनिधान कृत १ देवदिन्नचरित्र (कृपा० भ०), २ अठारह
गाता सज्ञाय (स० १६३६ जय) ३ समेतशिलर यात्रा स्त०

(स० १६९९ गा० १७) ४ चौबीसजिन अन्तरकाल स्त० (स-१६३४) और कई स्तवन स्तोत्रादि उपलब्ध हैं । इनके शिष्य कमलसिंह शि० कमलरस कृत ज्ञानपञ्चमोस्तवनादि उपलब्ध है, कमलरसके शिष्य दानधर्मने पृथ्वीराज वेलि का टया लिखा (महिमा० भ० न० ३३) । जयनिधानजी के लिखे हुई कई प्रतिष्ठी धीकानेर के ज्ञानभण्डारों में है ।

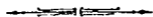
पृ० २०९ छलितकीर्त्ति कृत शीलोपदेशमाला वृत्ति और इनके शिष्य पुण्य-हर्ष कृत हरिबल चौ० (इपु गुमुनि शशि—कृपा० भ०) उपलब्ध है । हीरगान के शिष्य उदयहर्ष भी अच्छे कवि थे ।

पृ० २०९ चन्द्रकीर्त्ति शिष्य समतिरङ्ग स्रकवि थे । उनकी १ प्रमोदचित्तामणि चौ० २ मोहविनेक चौ० (स० १७२९ वि०३० मुलतान), ३ हरिकेशी चौ० (स० १७२७ श्रा० शु० २ म० मुलतान), ४ जम्बू चौ० (स० १७२९ आ० कृ० ९ मुलतान श्रीपूज्य० म०) आदि कई कृतियों उपलब्ध है ।

पृ० २१० “कीर्त्तिरत्नसूरि परपरा” के हैडिङ्ग में जो कवि लिखे गए हैं उनमें केवल नं० १८-१९ के ही उक्त परपरा के हैं । भावहर्ष सागर-चन्द्रसूरि परपरा के ये और विजयमेरु नाम भूलसे छपा है । इनका नाम वास्तव में विनयमेरु है । इनके रचित पन्नवणा विचार स्तवन गा० २५ (स० १६९२ पौष शु० १० साचौर) संग्रहमें है, ये श्रीजिनकुमारसूरि शि० क्षेमकीर्त्ति शाखाके थे ।



* शुद्धाशुद्धि पत्रम् *



पृष्ठ पक्ति अशुद्ध	शुद्ध
१३—२२ (पत्र रह)	(पत्र ८६)
१६—२० समयसुन्दरोपाध्यायौ	समयसुन्दरोपाध्यायै
१६—१६ पहले	पहले
२६—५ कैलक	लेखक
३३—१५ पहाडो	पहाडो
३४—६ लेओ	तेओ
४७—६ प्रसिद्धेया	प्रसिद्ध थया
४९—२१ पट्ट	पट्ट
५०—५ सन्वन्धी	सम्बन्धी
५१—२२ नखू	खून
५५—४ सूधी मा	सूधी मा
५५—७ सं० १६४८	स० १६४८
५७—५ ६५	७५
६७—१७ नो	तो
६८—२१ पण	पण
७०—३ शकतो	शकतो
७०—२१ मनी शकलीनधी	मलीशकल नधी
७७—१४ मोठिया	मेठिया

पृष्ठ पक्ति अशुद्ध	शुद्ध
५—१४ स० १५६६	स० १५६८
७—२ स्रोत	स्रोत
८—२ चरित्र	चारित्र
१०—२२ सौजस्योथ	सौजस्योथ
१६—६ परिग्रह	परिग्रह
२४—१२ आग	आगे
२१-४, १२ परिग्रह	परिग्रह
३१—४ धर्मिष्ठ	धर्मिष्ठ
४१—५ स्थम्भणा	स्थम्भणा
४४—३ उद्धत	उद्धत
४६—५ वादका	वाद कीयउ
७२—८ ओर	ओर
७४—१५ फरनिजा	फरहर नेजा
७६—१६ गुणो के	अवगुणो के
७६—२० कभी कभी	कभी धनी कभी
७७—५ विनेचन	पिनेचन
७६—२१ अरुद्ध	आरुद्ध
८०—२० आदुर्भाव	प्रादुर्भाव
८२—२१ बलाए	बुलाए
८३—२१ मात्रा	माता
८४—२२ याग	जेग

पृष्ठ पक्ति अशुद्ध	शुद्ध
६०—१६ महान्त	महान्त
६१—१३ काश्मीरान	कश्मीरान्
६१—१७ तथाहूता	तदाहूता
६१—१७ नायक	ययु
६१—१८ श्रीगुरोर्देशना देवानन्दितो भून्नराधिप	श्रीगुरोर्दर्शना देवनन्दि- तोऽभून्नराधिप
६१—२० ददो	ददौ
६३—६ जीवो को	जीवों के
६३—२० स्तु	स्तत्
६७—१३ समं मत्री साहिनाचाल- यत्तराम्	महामत्रो सार्द्धं साहे- रचालयत्
६७—१४ मयमन्	सयमान्
६७—१६ वृताचार	व्रताचार
६७—२० म्यदमीगितु	म्पदमीगितु
१००—१५ तड	तडं
१०६—१३ वसात्	वैशात्
१०७—१ रायसिधै	रायसिधै
१०७—२१ ससर्ग	ससर्ग से
१०८—४ समझ	समक्ष
११६—१४ कने	कर वे
११६—१० made	mode

पृष्ठ पक्ति अशुद्ध	शुद्ध
११६—२० अघ्राट्	सघ्राद्
१२४—२० करो	करी
१३०—२० घी	जी
१४३—११ कर्मो	कर्मो
१४३—२३ चको	चूको
१५३—२० चत्र	चैत्र
१६४—२३ मुमतिमन्दिर	सुमतिमन्दिर
१६८—१२ चत्री	चैत्री
१८७—८ पत्र०	पत्र० ७
१६०—२२ साधुकीर्त्य	साधुकीर्त्यु
१६६—६ आरामशाभा	आरामशोभा
१६६—२१ कुशललाम	कुशललाम
१६७—२२ महो	महो०
१६८—११ (रना	(रचना
२०१—१० अन्तिय	अन्तिम
२०७—६ उपधानवधि	उपधानविधि
२०६—१३ भजनगर	भुजनगर
२१४—१६ ॥२४॥	॥२४८॥
२१८—२१ वासुपूज्य	वासुपूज्य
२१८—२२ वामपूज्य	वासुपूज्य
२२१—१० स्नान	स्नात्र

पृष्ठ पक्ति अशुद्ध	शुद्ध
२२२—२३ यहकर्मो	पहकर्मो
२२५—८ धर्मधौरयताधर	धर्मधौरयताधर.
२२५—६ सर्व	सर्व
२२५—६ सासुक्तं	साहेयं
२२५—११ प्राप्यसंष्ट महादेश सिद्ध प्रअरितो भवा	प्राप्य सँह महादेश सिद्ध प्रअरितोऽभवत्
२२७—१२ प्रभो	प्रभो
२२५—१४ पर्यन्त	पर्यन्त
२२७—१३ गुणावले	गुणावले
२२७—१७ गन्तव्यमेवेति	गन्तव्यमेवेति
२२६—१२ पीतलमय	पीतलमय
॥ —१३ वगो	घगो
॥ —१६ भव	ऽभवत्
२२३—७ नद्व	सिद्ध
॥ —२१ मोहे	माह
२२२—१७ जोपडा	जोपडा
२३७—२० गभिन	गभिन
२२६—२३ जालाग्रीवा	जालाग्रीवा
॥ ॥ मेरु फोट	ऽनेक
॥ २४ ननि	पनि
२२३—१६ दृष्ट	१

पृष्ठ पक्ति अशुद्ध	शुद्ध
२४६—६ म०	म०
२७६—१ सरस्वती	सरस्वती
२८३—१३ तद्वन्	तद्वन्
२६४—५ जिननवल्लभ	जिनवल्लभ
३०४—२२ भविष्य	भविष्य

पृ० ८३-६७ की फुटनोटमे जो श्लोक दिए हैं वे “कर्मचन्द्रमत्रिवश प्रबन्ध”के हैं और पृ० २३६-४० के फुटनोटका अवतरण “कर्मचन्द्र मत्रिवश प्रबन्ध वृत्ति”का हैं। पृ० ७३ का अवतरण “अकर्म-प्रतिबोध रास” का है। पहले फरमेमे फुटनोटके चिन्ह (स्टार) शब्दोंके पीछे लगे हैं वे आगे लगाने चाहिए।

प्रेस दोपसे अनेक जगड मात्राए टूट गई और अक्षर अस्पष्ट उठे हैं एव ‘व’ के स्थान पर ‘व’ छपा है, ऐसी माधारण अशुद्धि हमने नहीं लियी है।





विशेष नामोंकी सूची

अ

अकम्पित २८७	अगडदत्त रास १०७, २०२
अकबर ६, ८, ०१, ६१, ६२, ६४, ६५, ६६, ६७, ७४, ७५, ८२, ८३, ८७, ८८, ८९, ९१, ९२, ९४, ९९, १००, १०२, १०३, १०४, १०६, १०७, ११२, ११३, ११५, ११६, ११७, १२०, १२१, १२६, १३३, १७४, १७५, १८०, १९२, १९८, २११, २१८, २१९, २२३, २२४, २२५, २२६, २२८, २४०, २४९, २५६, २९३	अग्निभूति २८७
अकबर जला० मोहम्मद २७६, २७८	अगरचन्द नाहटा ३०४
अकबर नामा ९४, १२०	अचल २८७
अकबर प्रतिशोधगस ६०, ७६, ८३, ८५, ९७, २२७, २२८, २२९	अचलेश २३७
अकबरी दरवाज ६३	अजमेर १३, २२७
अखेरराज २३०	अज्जा २५०
अगडदत्त प्रबन्ध १७२	अगायनदे २२१, २३८, २३९
	अजित २८७
	अजितदेव ५५
	अजितस्त० १९०
	अजित शान्ति वृत्ति २०१
	अञ्जलिया ३८
	अणहिलपुर १०, ४६, १५९
	अनन्त २८७
	अनाथी मन्धि १९६
	अनिरुद्ध ९३
	अोकशास्त्र सार समुच्चय २०७
	अनेकार्थ रत्न मंजूषा ९६, १६४
	अनुलफजल ८५, १०३, १०४, १०५, १२०, १२१, २५६

अभयकुमार चौ० १९१	अमरो २३४
अभयकुमार रास २०८	अमारि फरमान ८
अभय जैन ग्रन्थमाला ३०३	अमियउ ४८
अभयदेवसूरि १०, १२, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, १७२, १९१, २३३, २३६, २४४, २६३, २८८	अमिया २४५
अभयधर्म १९६	अमीपाल १५३, २५०, २९३, २९५, २९६
अभयमाणिज्य २०८	अमोलिकदे २५०
अभयरत्नसार १९५, १९७, ३०३,	अमृतमर १९४, २०४
अभयरज ३०३	अष्टापदमन्तवन १६८
अभयसिंह २२२	अर २८७
अभयसुन्दर १८३	अरणोद २५३
अभिधान नाममालावृत्ति २०३	अग्नाथ स्तुति सवृत्ति २०३
अम्बिका देवी ९९	अरिनाथ ५३
अमर २०८	अर्जुन २४
अमरचन्द्रजी बोधरा १६४	अर्थरतावली ९६, १६८
अमरदत्त मित्रानन्द रास १९५	अर्थशास्त्र २
अमरमाणिज्य १९२	अर्जुदावल २९३
अमरसर १६८, १७६, १९२	अर्हदास सम्बन्ध २०५
अमरसी ५५, १३५, २९१	अलवर १८१
अमरसेन वयरसेन चौ० १८३, १९६	अल-बदाउनी १२०
अमरसेन वयरसेन सधि १९५	अलाउद्दीन २८०
अमरा देवी २९५	अल्प बहुत्व वृत्ति १७१, १९७
	अवस्था कुलक १३
	अशोक २

अष्टक वृत्ति १२	१५१, १५२, १६४, १६६,
अष्टमद घो० २१७	१६८, १७२, १७८, १८२,
अष्टलक्ष्मी १८, १९, १८२, १६७,	१८३, १९२, १९४, २४५,
	१६८, २५७, २६२, २६४, २६६
अष्टमसतिरु १३	आदि मन्त० माला० २०१
अष्टापद प्रामाद १८	आचलिया ४४
अष्टोत्तार नपकग्यालीमन्त० १९०	आघार दिाङ्गप्रशस्ति १७१
अष्टोत्तरी घ्रात्र १०८, २२८	आचार प्रवीप ४१
अष्टोत्तरी ग्रात्र विधि १०८	आचारङ्ग द्वीपिका १८
अहमदाबाद १८, २६, ५८, ८९,	आजमगान ८८, ९०, १२१
६०, ६१, ६७, ८८, ९०, १३२	आर्णामूर १२४
१३३, १३८, १४०, १५९,	आणनोन्य ५३
१६७, १६९, १७०, १७७,	आत्मशिक्षा १८६
१८१, १८६, १९८, २०९,	आत्मानन्द प्रकाश १२२, १८७,
२३०, २३२, २४०, २४१,	१०१
२४२, २४४, २४५, २८५,	आदिनाथ २४१, ३०१
२६०, २६१, २६२, २६८,	आदिनाथका० १७१
२६६	आदिनाथ घो० २९३

आ

आहन-ह-अकवरी ९४, १२०, १२१	आदिनाथ देहग २८३
आगम अष्टोत्तरी १२	आद्यपक्षीय १८८
आगमिया ४०, ४४	आदिनाथ पञ्चकन्याणन्त० २०६
आगमिया गच्छ ३९	आदिनाथ प्रशस्ति १८५
आगरा ८, ५३, ६३, १४६, १५०,	आदिनाथ मन्दिर् १३५, १०१, २४२
	आदिनाथ वि० २९४

आग्निनाथ स्तोत्र १६४	आरासण २५
आग्निनाथ स्त १६०, १९०, १९९	आलिजागीत १३९, १८०
आनन्दकाव्य महोदधि ८८, १९७	आलोचना छतीसी १७०
आनन्दजी कलयोगजी २४४	आवड २८०
आनन्दप्रद्वन १७३	आसकरण १५३, १७७, २०५, २३५
आवू १०, ८०, २१५, २४१, २६०	२४५, २९६
आवू तीर्थ १७७	आसनीकोट ५८, १८४, २०६
आवू तीर्थयात्रा स्तवन १६८	आसावलीपुर १४०
आवू स्तवन १६०	आसानियोंका चौक २४०
आमंत्र्य सूत्रि ३२	आतोप २८४
आर्द्रकुमार चौ० १९४	आशापत्नी १७
आमोड ५७	आपाटभूति प्रबन्ध १०२, १९४
आर्यगुप्त २८८	आपाटभूति रास २०८
आर्य धर्म २८७	आपादी अष्टा० फगमान १७६
आर्यनटि २८८	इ
आर्यमगू २८८	इक्वीस प्रश्नोत्तर २०२
आर्य महागिरी २८७	इकावन थोल चौपाई वृत्ति १२३, २०१
आर्य रक्षित २८८	इतिहास साहित्य अङ्क २५३
आर्य मभूत २८७	इन्द्रिय पराजय शतक वृत्ति २००
आर्य समुद्र २८८	इन्द्रभूति २८७
आर्य सहस्ती २८७	इन्दोर २५२
आर्य मोधम २८८	इब्राहिम मिर्जा २१६
आराधना कुलक १२	इर्यापिधिकी पट्टिशिका १२२
आरामशोभा चौ० १९६	इलायुत्र चौपाई १८३

ई

ईडर १३३, २०८, २६२

ईश्वर २९०, २९२

उ

उकश २८९

उक्ति ग्लाकर १९३

उग्रसेनपुर १४५, १४६, १५१

उच्चनगर १२९, १६९

उत्तम देवी १८९

उत्तराध्ययन गीत २०६

उत्तराध्ययन वृत्ति १७१

उत्सूरनन्द कुहाल ४२, ४३, ४५, १२२

उदयकरण ३४

उदयक्रीति १९३, २९६

उदयपुर १६४, २३१, २३५, २३८, २३९

उदयरत्नसूरि ३८, ४२

उदयरराज ४०,

उदयसिंहजी १३९, १८९, २१४, २४८

उद्यमनर्म सत्राद १६५

उद्योतन सूरि ९, १०, २८८, २९३

उपनेशगच्छ २०३

उपनेश रातेचा ५०

उपनेश वश ५५, १४४, १३५

उपनेश शब्द व्युत्पत्ति २०३

उपनेशपद टीका १०

उपनेश रमायन १३

उपनेश मत्तरी ३३, ३९, ४२

उपाध्यायपद १६३, १६७, १८४, १९२

उपामन्त्रमाग बाला० १८०

उमास्वामि २८४

उववाई वृत्ति १२

ऊ

ऊगे २३३

ऋ

ऋद्विकरणाती यति १६

ऋपभ २८७

ऋपभजिनालय १३६

ऋपभदास ८६, ८८, २०४

ऋपभदेव ५५

ऋपभदेव मन्दिर ६८, १३७, १७६,

१८०, १८४

ऋपभभक्तामर १७१

ऋपभ स्तत्रन १३७, १८७, १६३,

१७२, १८५

ऋपिदत्ता चौपाई १८६, २००, २४४

ऋपिमण्डल वृत्ति १७१

ऋपिमती ३७, ४०, १-३, २६०,

२६१

ऋषिमती तपागच्छ ५८

ऋषिगमा ३९

ए

ए सेंट हिंदी आफ मुस्लिम स्कुल

इन इण्डिया ११८

एकमो साठ मोल स० १२३

एकादशतपर्यन्त शब्दमाधनिका २०७

ऐ

ऐतिहासिक जैनकाव्य समग्र १०, १७

१५६, १७९, १८२, १८८

१९१, १९२, १९७, २०७,

२१०, २२७, २३०, २५१, ३०४

ऐतिहासिक रास समग्र १२२

ऐतिहासिक रास समग्र भाग(४) ४४

ओ

ओक्ठ १७०

ओजाजी २३८

ओसत्र शे १५८

ओमवाल २१, २४९, २८२,

ओमवालगच्छ ३८, ४०

ओसवाल जाति १३८, २१३, २१९,

२५०, २५५, २९५

ओसवाल जातिका इतिहास २१६,

२३९, २५०

ओसवाल प्रश्न १९२

औ

औष्टिकमतोत्सूत्रदीपिका ३२

अं

अग २९०

अञ्जलगच्छ ४०, २८२,

अञ्जलगच्छे ३८

अञ्जलमत स्वरूप वर्णन २०१

अज्ञाना सुन्दरी प्रबन्ध २००

क

कडवामती ३९, २९२

कडवो २३३

कडीयागोत्र २५५

कचरा २९५

कच्छदेश १५०

कठमाहा ९४

कटागिया ७०, १५३, २४६

कथाकोश १२

कनक कवि १६३

कनककीर्त्ति १७३

कनक कुमार २०२

कनकतिलक २०८

कनकतिलकोपाध्याय १९

कनकनिधान २०४

कनकप्रभा १९५

कनकधिमल १६५	२११, २१३, २१४, २१५,
कनकविलाम २०२	२१६, २१८, २२०, २२५,
कनकमोम २१, २२, २६, ७४, १९४, १९८	२२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२९, २३०, २३१,
कपूरचंद्र १३९, २०५, २४८, २९८	२३२, २३४, २३७, २३८,
कपूरद २२१	२३९, २४०, २५१, २६२
कम्मा ४७, १३५, २४५, २६३	२६४, २८३
कम्मा (का०) २६२, २६६	कर्मचन्द्र मन्त्रियदा प्रबन्ध ५०, ८१,
कमलकीर्ति १६४	८६, ९०, ९१, ९३, १०६,
कमललाभ १८३	११२, १९९, २१३, २१४,
कमलहर्ष १८७	२२१, २२२, २२५, २२७,
कयप्रन्ता चौ० १९६	२८१
कयप्रन्ता सधि २००	कर्मचन्द्र मन्त्रि वश प्रबन्ध वृत्ति
करकुंडु प्रत्ये० गस १६८	६५, १८४, १९९, २००, २२९
करणगज ९४	कर्मचन्द्र व शावली चौपाई १०५
कण (राणो) २३९	कर्मचन्द्र घ शावली गस २००
करमान २८०, २८१	कर्मठतीमी १३०
कणपुरी २०९	कर्मसी १८, २३३
कणावती १७	कर्मसुन्दर सूरि ३८
कर्नल पावलेट २२३	कलफता २०६
कर्मचन्द्र ६५, ७१, ७४, ८१, ८२, ८५, ८६, ८९, ९१, ९७, ९९ १०२, १०३, १०४, १२५, १३३, १३४, १७५, १९८,	कलिकाल केवली १५ कलिंग २९० कल्प किरणावली १२३ कल्पमञ्जरी २०३

कल्पलता ११, १७०, १७१, २२९, २४१	काछेला पुनमिया ३८
कल्पसूत्र १७०	काजी १०८
कल्पसूत्र या० १६४	कातन्त्र विभ्रमावचूर्णि १९७
कल्पसूत्रशाला० २०५	कातेला २४७
कल्पसूत्र वृत्ति १२४, २०६	कान्हड २३६, २३७
कल्प सुयोधिका वृत्ति १२३	कान्हू १२८
कल्पान्तरवाच्य ३३, ४१	कान्ति २९०
कल्याण ८६	काजुल १७५, २१९
कल्याणकमल ५३, १७२	कातत्र व्याकरण १५
कल्याणकान्त० १९६	कालस्वरूप कुठक १३
कल्याणतिलक १८५	कालिकाचार्य कथा १६९, १९०, १८५
कल्याणदासजी १५८, २३०	काशमीर ९१, ९३, ९४, ९६, ९७,
कल्याणेश्व १८७	९८, १७५, १८०, २९०
कल्याणधीर १६४	काशी १५२
कल्याणमन्दिर वृत्ति १७०	क्रियाउद्धार १६७, २१४, २७०
कल्याणरत्न सूरि ३८, ४१	क्रियाउद्धार नियम पत्र १६५, २५७
कल्याणरत्न सूरि प्रबन्ध ४१	कीर्तिधर सुक्रोशल प्रबन्ध २००
कल्याणलाभ १६४	कीर्तिरत्न सूरि पद्मपरा २०९
कल्याणसिंहजी २१४, २१५, २१६	कीर्तिरत्नाचार्य १७
कविवर धर्ममर्दन ३०५	कीर्तिराज उपाध्याय १७
कविवर समयसुन्दर ३०५	कीर्ति विलास २०२
कसूर ७२	कुतबपुरातपागच्छ ३०
कसूरपुर १९६	कुतबुद्दीन १५
काकरिया १३५	कुथुनाथ ५३, १३८, २८७

कुभार २२१	कोचरोकी गुवाड १३५
कुमताहि त्रिप जागुली १२३	कोटवालगच्छ ३८
कुमतिकट कुदाल ४३, ४४	कोशा २८७
कुमति कुदाल २६१	को० हेरलड २५३
कुमतिमत कुदाल ३२	कौटिल्य २
कुमतिमत एण्डन १२३, २०१	क्षमाकल्याण २८, ५१, ५६, १४०, १६२, २२०, २४०
कुमति विध्वंसन चौ० २०८	क्षमाकल्याण पट्टावली १८८
कुम्भकरण १५९	क्षमाकल्याण भण्डार १८३, १८४, २०२, २०७
कुम्भलमेर १७, २३९	क्षमाधीर १७३
कुमागिरि ४१	क्षमासुन्दर ३८
कुमारपाल २	क्षुलककुमार १७०, २०५
कुमार मुनिरास २०४	क्षुलकप्रतिप्रबन्ध १९१
कुमुदिनीमित्र ११४	क्षेत्रपाल १२९
कुलञ्जरास १८४	क्षेमरीतिशाखा १६३
कुवर्गी १३८	क्षेमगा १६५
कुशलधीर १६४, १६५	क्षेमशाखा १९७
कुशलराज २७, १९६	क्षेमा ४०
कुशलसूरि २७	कृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डार १९७, २०४, २०५
कुशलसूरिस्त० २०४	कृपास कोश २७०
केवली स्व० मझाय १२३	कृष्ण स्वमणी त्रेलि वाला० २०५, २०७
केमरीमिह २३४, २३५	
केशप्रतासजी १९३	
केशी प्रेसी सधि १९६	
कोडा ६०, २४५	रत्न
	रत्नप्रशस्तिरत्नवृत्ति ६४, ६५, २००

स्यंज १२८	खाडप ७०, १७८
खभात १७, ४७, ४८, ६१, ६५, ६६, ६७, १००, १०२, १३३, १३५ १४०, १६७, १७०, १९४, १९५, २००, २४४, २४५, २४६, २४८, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३, २६५, २६६	खानखाना १२१, २५६ खानखाना नामा १२१ खाने आजम ९० खियास २३२ खीमसी २९० खीचराज २३२ खेडनगर २५५
खडखडता तपागच्छ ३८	खेतसर २१, २२
खत्त ३१, ३३, ३४, ४०, ४४, १८८, २४९	खेतसी १३४, १८७
खत्तगच्छ ३२, ५७, ३८, ४०, ४१ ४२, ४७, ६३, ६४, १०७, २२९, २३३, २४१, २४४, २४९, २८२	खेतासर ५१, १७४ खेमलदेवी १९२ खोडियाक्षेत्रपाल १२८, २५६
खत्तगच्छ गुवावली १९७	
खत्तगच्छ पट्टावली २८, २९, ५१, ५६, ५८, १७१, २४०	ग
खत्तगच्छ पट्टावली सग्रह ९, ५८, १२९	गंगदाम २०९, २९९ गजनी १७५ गजमन्दिर ११० गजसिंघजी २८४ गजसुकमालरास १९९, २०८ गजसुन्दरी चौपाई २०० गढीसर २५ गणधरवसहीस्त १६९ गणधरसप्तति १३
खत्तगच्छ भण्डार २७९	
खत्तगच्छत्रीय १३४, २६१	
खत्तरगुवावली गीत २०२	
खत्तरसही २४२, २४४	
खत्तरवसही मम्बन्धी हगडा २४४	
खत्राम २३४, २३५	

गणधरसार्द्धशतकभापातर १०, ११०, २६२	गुणरग ३०, १९८
गणधर सार्द्धशतक १३	गुणरत्नसूनि १७
गणधरसार्द्धशतक बृहदवृत्ति १०	गुणरिनय ६९, ६४, ६८, ८४, ९२, ९८, १००, १०१, १२०, १८४
गणपतिज्येष्ठ २९०	२००, २०२, २२६, २२९, २४४, २९६
गणाधीश २८०	गुणस्थानक्रमारोह २०७
गणित साठिमा १६४	गुणोखर १९८
गद्यवशावलि ४१६	गुणावली चौपाई १६४, १९३, २०२
ग्वालेर ८३	गुरदूज १६९
गहुली १२७, १४६	गुरपनावली ४२
गागरण २३७	गुरपत्रप्रभावक ग्रथ ४१
गागृ ८४, २४८	गुरमुकुट १२६
गाथालक्षण १६९	गुनापलीपत्र १६९
गाथामहम्बी १७०	गूर्जर १८, २९०
गाधर्व ७०	गृढा १७७
गिगनाग ९०, ९१, २१८, २३१, २४१, २८०, २८३	गेली ८७, २४८
गुजगत २७, ३०, ३१, ६१, १४८, १८०, १६३, १६४, २२०, २८८, २८६	गोइन्द्रदासजी २८४
गुणकित्चपोडशिका १०२	गोकलदास द्वाग्कादाम २४३
गुणतिग्द ४०	गोडचाल २६३
गुणप्रभसूनि ३४, ३६	गोयलीय २२३, २२४, २२८, २३८
गुणभद्र १७३	गोपा १९
गुणमाणिस्य ४०	गोपीपुग ९६
	गोलठा १३८, १७३, १९९

चतु शरणमधि १९७	चैत्यवन्दन कुलकवृत्ति १५
चम्पक घोषाई १८६	चैत्यवन्दन भाष्यवृत्ति १६५
चम्पकश्रेष्ठ घोषाई १७०	चोपडा १८३, १८४, २४५, २९०
चर्चरी १३	चोपडा गोत्र ५१
चरणसत्तरी करणमतगीभेट २०१	चोला १३८, १८६
चरणकुमार १८३	चोलाजी २५४
चरित्रटिप्पनक द्वय ४१	चैत्यवन्दन कुलक १३
चातुमानिरुज्या० पद्धति १६८	चोपर्वी चो० १७२
चामुण्डा १२	चोमासीध्या १७७, १८७, २०४, २०५
चारण ७०	चोमुलजीकी पोल २४२
चारमगलगीत २००	चौराण (राजपूत) २३३, २३७
चारित्रलाभ १६४	चौवीसजिन २४ बोल स्त० १८३
चारित्रविजय १८७	चौवीसजिन गणधरमल्यास्त० १९९
चारुदत्तजी २०४	चौवीसजिनगुरुस्त० १६८
चित्रमूढ २९०	चौरीसटा २२०
चित्रपालगच्छ ३५, ४०, ४१	चौवीसी १६८, १८१
चित्तौड १२	
चिन्तामणिमहाभाष्य १७१	छ
चिन्तामणियापाडा ४०	छद १५०
चिन्तामणीजीमन्दिर ८९, १३८, २१९	छतीसबोल १२ बोलस्त० १२३
चिन्नाह (चिनाह) १२८	छन्मासीतप ३०
सुनीलालजी यति सं० १९४	छाजहडगोत्र ५५
चूडा (ग्राम) १६४	छापरिया पुनमिया ४०
चैत्यपरिपाटी स्तवन ३०, १७७, २०७	छापरिया पुनमिया पद्यावली ४१

ज

जबू २८७

जबूद्वीप पन्नति वृत्ति १९०, १९१

जबूगस १६८, १८१, २०१

जगतगुर १०३

जजिया ३

जज्मल १८७

जज्मपत्री पद्धति १६४

जयतीर्त्ति १६३

जयचन्द्रजी ८६

जयचन्द्रजी भंडार ११८-१११, १६४,
१८५, १९०, २०४

जज्ञेवाचार्य १४

जयनन्दन १६४

जयनिधान २०९

जयतारण ७०

जयतिहुअण १२, १०४

जयतिहुअणवृत्ति १७०

जयतिहुअण बाला० १९३

जयप्रमोद २४६, २९०

जयपुर १३२, २२२

जयपुर ज्ञानभंडार २०१

जयपुर मंडार २०२, २०६,

जयमन्दिर १७३

जयमा (श्रा०) १०८, १८१

जयग १९६

जयलाम उपाध्याय ४०

जयवन्त १६७

जयत्रिजय चौपाई १६४, २०७

जयसागर २०२

जयसिंह २८०

जयसागरसूग् ११०

जयसोम ४१, ४८, ६०, ६४, ६५,
७४, ८६, ९१, ९८, १०१,
१०३, ११२, ११३, १२९,
१९७, २००, २०२, २१९,
२८६

जहतपट्टेलि १९४

जलालुद्दीन अकबर ५, ६, ९०, १०३
१२६, २४०

जसमादे २४०

जसलदे १५९

जसवन्त २१४, २१५, २३४, २३०

जम्समुद्र १५९

जसू बनिया २८२

जहागीर ८, ११४, ११७, १४७,
१५२, १६२, १७६, १७७,
१७८, २३०, २६१

जहागीरग आत्म-जीवनी ११४	जिनचन्द्रसूरि ७, ०, १२, १३, १८,
जहानाबाद १६४	१६, १७, २०, २८, २६, २८,
जालधर २९०	३०, ३१, ३३, ३६, ३७, ४०,
जालोर १७, ५८, ५९, ६०, १७०,	४६, ४७, ४८, ५०, ५३, ५५,
१७८, १९२, १९६, २३६,	५६, ५७, ५९, ६१, ६५, ६६,
२३७, २६१, २६२, २६४,	७४, ७५, ८३, ८४, ८५,
२६५	८६, ८९, ९१, ९४, १००,
जावड ४८, २४५	१०१, १०३, १०६, ११९, १२०,
जावडभावडराम २८१	१२१, १२४, १२७, १२८,
जावडिया गच्छ ३८	१३४, १३५, १३७, १३८,
जावालपुर ६९, ७०	१३९, १४०, १४५, १४६,
जिनकृपाचन्द्र सूरि १७, २९, १२७,	१४९, १५०, १५२, १५६,
१६६	१५७, १५८, १५९, १६०,
जिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभडार ५१,	१६१, १६४, १६५, १६६,
१७२, २२०, २२९, २४८, २५२	१७६, १८०, १८१, १८४,
जिन कृपाचन्द्रज्ञानभडार इन्द्रोर ११०	१८८, १८९, १९०, १९१,
जिन कृपाचन्द्रसूरि भडार पटा १२४	१९२, १९५, १९७, १९८,
जिनकुशलसूरि १६, १९, १२५,	१९९, २११, २१४, २२०,
१६३, १९०, २०३,	२४२, २४४, २४८, २५०,
२०७, २२९, २४७,	२५३, २५६, २५७, २६५,
२५०, २८८	२६७, २७२, २७६, २७८,
जिनकुशलसूरि रास १६	२८८ (४) २९०, २९२, २९०,
जिनकुशलसूरि स्तम्भ १२०	२९७, २९८, २९९
जिनकुशलसूरि स्तूप ५८, ५९, ६०	जिनचन्द्रसूरि अकरर प्रति ० रास ०
	२०९, २२२, २५०

जिनचन्द्रसूरि गीत २१, २२, ९२, १००, १२१, १२८, १६८, १७२	जिनभद्रसूरि १०, १६, १७, १९२, २८८
जिनचन्द्रसूरि चरित्र ११०, १६२, २९२	जिनभद्रसूरि शाखा १६३, २०४
जिनचन्द्रसूरि गहुली १३२	जिनमाणिक्यसूरि १८, १९, २२, २३, २४, २६, २८, ५०, ५७, ६०३, १२०, १२६, १२९, १३०, १३४, १३८, १३९, १६४, १६५, १८९, १९७, २५०, २८८, २८९, २९४
जिनचन्द्रसूरि निपाण १७४, १७५	जिनमाणिक्यसूरि शाखा १६३
जिनचन्द्रसूरि समाचारी २७२	जिनमेरुसूरि २४
जिनदत्तसूरि ९, १०, १३, ६१, ९९, १००, १२३, १२६, १२९, १७८, २२५, २२७, २५०, २६२, २८८, २९४	जिनराजभक्ति आदर्श ३०४
जिनदत्तसूरि ज्ञान भंडार १९९, २०१	जिनराजसूरि १६, ९४, १३१, १४०, १५८, १६५, १७६, १७७, १८१, १८७, १९८, २०२, २४२, २८८
जिनदत्तसूरिज्ञानभंडार चम्पई १६२	जिनराजसूरि अष्टक २०१
जिनदत्तसूरि चरित्र ३०४	जिनराजसूरि गीत १९६
जिनदत्तसूरि परम्परा २०५	जिनराजसूरि रास १३४, १४०, १७९, २०७, २२९
जिनदत्तसूरि सतानीय १६३	जिनवल्लभ गीत १४
जिनदत्तसूरि स्तवन २०५	जिनवल्लभ सूरि १२, ३३, ४१, १६४, १९४, २०१, २८८
जिनदत्तसूरि रूप १७३	जिनवर्द्धन सूरि १६
जिनपतिसूरि १४, २८८	जिनविजय १८, १३, १२२, १२९, २०३
जिनपद्मसूरि ९, १५, २८८	
जिनप्रतिमा छत्तीसी १९६	
जिनप्रबोध सूरि, १५, २८८	
जिनप्रभसूरि ११०, १११, १७२	
जिनपालोपाध्याय १४	
जिनपालित जिन रक्षितरास १९४	

जिनविम्ब स्थापन स्तं ५७	जीवांटे २२१
जिनमत्तगी प्रकरण १७	जीवानुशासन वृत्ति ४२
जिनसमुद्रसृष्टि १८, २८८	जीवार्थ २४७, २४६, २९०
जिनसागरमृष्टि १७६, १८२, १८६, १८८, २३२, २३८	शुधिष्ठर २८०
जिनसागरमृष्टि रास १७९, १८३, २२९, २३२, २३८	जूठा (ग्राम) १७१,
जिनसिंहसृष्टि ५१, ९२, १००, १०१, १०६, १०७, १०८, ११३, ११७ ११८, १३२, १७७, १८०, १८४, १८७, १९८, १९९, १६५, १६७, १७४, १७५, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०, १८१, १८२, १९०, १९९, २०१, २४७, २९९, २७७, २७९, २९२, २९४	जूठा (कटारिया) २४५ जेजीया २९४ जेतमाह २ ५ जेसल २३३ जेसलमेर १३, १७, १८, २०, २३, २४, २५, २६, २८, ३०, ५०, ५१, ५६, ५८, ५९, ६०, ७०, १३०, १३१, १३२, १५३, १८८, १६४, १६७, १६८, १६९, १७३, १७४, १९०, १९१, १९३, १९६, १९७, २०१, २०२, २०७, २४८, २५४, २५९, २६०, २६१, २६३, २६४, २६५, १८९, २९६
जिनसिंहसृष्टिगीत १७६	जेसलमेरभाडा १६८
जिनहर्षसृष्टि भडाग ४६	जेसलमेरभाडा ० ग्रं सू १०, २४८
जिनहंससृष्टि १८, २६, १८९	जे ० भ ० सू १६८
जिनहंससृष्टिशाला १६३	जेसलमेरभाडा ० सचि १७०, १७१
जिनेश्वरसृष्टि १०, ११, १२, १८, ३१, ३३, ३५, २३६, २८८	
जिनोदयसृष्टि १६, ९४, २८८	
जीयराज १९०	
जीवत्रिचार शाला १९३	

जिनचन्द्रसूरि गीत २१, २२, ९२,	जिनभद्रसूरि १०, १६, १७, १९२, २८०
१००, १११, १२८, १६८, १७२	जिनभद्रसूरि शाखा १६३, २०४
जिनचन्द्रसूरि चरित्र ११०, १६२, २५२	जिनमाणिस्यसूरि १८, १९, २२, २३
जिनचन्द्रसूरि गहुली १३२	२४, २६, २८, ५०, ५७
जिनचन्द्रसूरि निराण १७४, १७५	१०३, १२०, १२६, १२९
जिाचन्द्रसूरि ममावागी २७२	१३०, १३४, १३८, १३९
जिनदत्तसूरि ०, १०, १३, ६१, ९९,	१६४, १६५, १८९, १९७
१००, १२३, १२६, १२९,	२५०, २८८, २८९, २९४
१७८, २२५, २२७, २५०,	जिनमाणिस्यसूरि शाखा १६३
२६२, २८८, २९४	जिनमेरसूरि २४
जिनदत्तसूरि ज्ञान भंडार १९९, २०१	जिनराजभक्ति आदर्श ३०४
जिनदत्तसूरिज्ञानभंडार वम्पट्टे १६२	जिनराजसूरि १६, ९४, १३१, १४०
जिनदत्तसूरि चरित्र ३०४	१५८, १६५, १७६, १७७
जिनदत्तसूरि पद्मपरा २०५	१८१, १८७, १९८, २०२
जिनदत्तसूरि संतानीय १६३	२४२, २८८
जिनदत्तसूरि स्तवन २०५	जिनराजसूरि अष्टक २०१
जिनदत्तसूरि स्तूप १७३	जिनराजसूरि गीत १९६
जिनपतिसूरि १४, २८८	जिनराजसूरि रास १३४, १४०
जिापद्मसूरि ९, १५, २८८	१७९, २०७, २२९
जिनप्रतिमा छत्तीसी १९६	जिनवल्लभ गीत १४
जिनप्रमोघ सूरि १५, २८८	जिनवल्लभ सूरि १२, ३३, ४१, १६४,
जिनप्रभसूरि ११०, १११, १७२	१९४, २०१, २८८
जिनपालोपाध्याय १४	जिनवल्लभ सूरि १६
जिनपालिन जिन रक्षितरास १९४	जिनविजय १८, १३, १२२, १२९, २०३

जिनत्रिम्य स्थापन स्त० ५७	जीवादे २२१
जिनसत्तगी प्रकरण १७	जीवानुशासन वृत्ति ४२
जिनसमुद्रमृगि १८, २८८	जीवार्थ २४७, २४६, २९०
जिनसागरमृगि १७६, १८२, १८६, १८८, २३२, २३८	जुधिष्टर २८०
जिनसागरमृगि गम १७९, १८३, २२९, २३२, २३८	जूठा (ग्राम) १७१,
जिनसिंहसूरि ५१, ९२, १००, १०१, १०६, १०७, १०८, ११३, ११७ ११८, १३२, १३७, १४०, १५४, १८७, १५८, १८०, १६५, १६७, १८४, १७५, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०, १८१, १८२, १९०, १९९, २०१, २४७, २-९, २८७, २७९, २९२, २९४	जूठा (कटारिया) २४५ जेजीया २९४ जेतमाह २ ५ जेसल २३३ जेसलमेर १३, १७, १८, २०, २३, २४, २५, २६, २८, ३०, ५०, ५१, ५६, ५८, ५९, ६०, ७०, १३०, १३१, १३२, १५३, १५८, १६४, १६७, १६८, १६९, १७३, १७४, १९०, १९१, १९३, १९६, १९७, २०१, २०२, २०७, २४५, २५४, २५९, २६०, २६१, २६३, २६४, २६५, २८९, २९६ जेसलमेरभाडा० १६८ जेसलमेरभाडा० ग्र० सू० १०, २४८ जे० भ० सू० १६८ जेसलमेरभाडा०सचि १७०, १७१
जिनसिंहसूरिगीत १७६	
जिनहर्षसूरि भडाग ४६	
जिनहंससूगि १८, २६, १८९	
जिनहंससूरिशारदा १६३	
जिनेश्वरसूरि १०, ११, १२, १४, ३१, ३३, ३५, २३६, २८८	
जिनोदयसूगि १६, ९४, २८८	
जीयराज १९०	
जीयविचार थाला० १९३	

जेमाण्ड १५९	ज्योतिष्करड वृत्ति २४८
जैतसी १०६, २१५	ज्योतिपरत्नाकर १६४
जैतशाह ४८	झ
जैतारण २४८	झर्झरपुर १९७
जैनगूर्जरकविओ १०, ५७, १९१, १९६, २०२, २०४, २०७	झरेरीवाडा २४२
जैनतत्व सार २०४	झूटा ५५
जै० वा० प्र० ले २-१३५, १७०, १८०	ट
जैनरौप्यमहोत्सव अक २३७	टाक २२४
जैनलेखसग्रह १३२, १४०, १६९, २०६, २४७	ठ
जैनसाहित्यनो सक्षिप्त इतिहास ३१, ६४, १२०, १२१, २४४	ठाकुरसिंह (मत्री) ७२
जैसिंध १९८	ठाकुरसी १९९
जैसूपुट ११९	ठाणाग वृत्ति १८१
जोइसहीर २०९	ड
जोगीदाम २४०, २४१	डागोकी गवाड १३८
जोगीवाणि २९९	दुगरजी ९६, ९७, २३४, २४०
जोगीमाह १३२	डेक (नदी) २२१
जोधनेर २८४	डोसी ८२, २८०, २८१
जोधपुर २१, ७०, १३९, १७३, २०२, २०३, २१५, २१६, २६२, २६६, २७८	डा० जुल्हर २०३
जोध्या २४७	डा० स्मिथ १७, १८
जोहरी २४५	ढ
	ढढेरिया पुनमिया गच्छ ३९
	ढिछी २९०
	ढुढक मतोत्पत्तिरास २०८
	ढोलामारवण चौ० १९७'

त

तत्पतगिगी वृत्ति ३२

तत्पतगिगी ४२, ४३, १२८

तत्त्वदीपिका १६०

तपा २८२

तपाश्र्मिमती १३०, १३१

तपागच्छ २५, ३०, ४०, ४१, ४२, ४३

तपागच्छीय ३२, ३३, ३०, ६३, ६४
१२०, १६१

तपाग्न १७

तपाग्नसूरि १५

तपाग्नभाचार्य १६

ताद्य ५८, १०१

तारादे १३८

तायतिलक २००, २०२

तिमरी २१

तिमरीपुर १६९

तिग्नाडा ४४

तिलकमल १७३

तिलकचन्द्र १९६

तिलकप्रमोद २०२

तिलोकसी १३८

तीर्थमाला २४०

तुग्ममलान ८९, २१७, २१९

तोपाल २०३

तेजसारगास १९७

तोामी २०७

तेजसुन्दर १७३

तेजा २००

तेली २०१

तेमूर ०

तोस्यामदेश १२८, २२९

तोस्यामपुर २००

त्रम्यावती ४७, ८८

त्रागडिया पुनमियागच्छ ३९

थ

थानसिद्ध ८६, १७८

थायद्यालकोशल चौ० १९४, २०९

थायद्या चौ० १७०

थाहरसाह २४०, २९६

थिरचन्द्रसूरि ३८

थिरपाल १९४

थिरा २४०

द

दण्डकवृत्ति १७०

दण्डकवाला० १९३

दशविधि यतिधर्मगीत १९०

द्यू २००

देवराज १८	धनपति १८
देवराज चौ० २०६	धनराज ४६, १९१, १९२
देवराजमछगान चौ० २०२	धनराचगिरी २०४
देवलगाडा १६, २३३	धनाराम २०६
देवल्ले २४९	धनराधुतारपोट २४२
देवप्रिया १८३	धनराशाहिभद्र चौ० १७३, १८१, २०१
देवप्रिया १८६	धनराशाह २०३
देवसूर १२१, २८८	धनु ५०
देवानन्दसूरि ३९	धनेश्वरसूरि ४१
देवीप्रसाद (मुदी) २२४, २७८	धरणप्रार १३०
देवेन्द्रसूरि ३८	धरणेन्द्र ३३
देवो २३४, २३५	धर्मदत्त १५
देवमार्ग २०५	धर्मकीर्ति १७९, १८३, १८४
देवावहागस्तोर माला १९३	धर्मन्त धनपति राय २०९
देवाडड ७०, १७८	धर्मनाथ २८७
देवतला २७७, २७९	धर्मनिधान ५३, १८३, १८४
देवदी चौ० १७०	धर्मप्रमोद १६८
देवदीराम ५७, १७३	धर्मबुद्धिगाम २०२
देवदीसहगण १७१	धर्ममन्त्री चौ० १८३
देवशंकर १२	धर्ममन्दिर १८७, १९६
देविका ८८	धर्मरत्न १६४
	धर्मरत्नसूरि १७
	धर्ममाग ३१, ३२, ३३, ३४, ३५,
	३६, ४०, ४२, ४३, ४४, ४५, ४८,
	१२१, १२२, १२३, १६४, २६५,

ध

धाड २०

धनदत्त चौ० १७०

धर्मसागर उपाध्याय ३१
 धर्मसागर गण्डन १२३
 धर्मसागर गणिगाम १२२
 धर्ममिन्पुर २४६, २००
 धर्मसी १५५, १९४
 धर्मशिखा १२
 धर्मवर्द्धन १९४
 धवलकपुर १०७
 धर्मपर्वीया आचलिया २०
 धर्म ५४, २४५
 धातुप्रतिभा १३२, १०७
 धातुवक्र १९३
 धातुवैची १७५
 धारानगरी १३
 धारिणी २८७

न

नगई प्रत्ये० राम १६८
 नगराज २१३
 नगा ४०
 नगावत २३५
 नगो २३४
 नडुलाइ २५९, २६३
 नथमलनी गादिया १६६
 नन्दिजय २४७

नमस्कार प्रथमपदअथा १६४
 नमि २८७
 नमि प्रत्ये० राम १६८
 नमि राजर्षि चौ० १९२
 नमुत्थुणं बाला० २०२
 नमण २४५
 नयणा ५५
 नयणराम १७३
 नयनकमल १७३
 नयाकलरा १७२
 नयमेरजी १९३
 नयनग १५६, १९५
 नयविलास ५३, १७२, १७४
 नवामन्दिर ११३
 नरवर्म १३
 नरसिंह २३३
 नरसिंहदास २३०
 नरोत्तमदासजी १६४
 नलद्रमयन्ती चौ० १६९
 नलद्रमयन्ती चम्पूवृत्ति २००
 नलद्रमयन्ती प्रयन्ध २००
 नवकारछद्द १९७
 नवकारबाला० १८७
 नवकारराम १८७

नम्रतत्वमाला० १९३	नारनोति २५९, २६४
नम्रतत्व शब्दार्थ वृत्ति १७०	नाल १६६
नम्रवाडशीलम० १६९	नाहटा १९५, २०३
नम्रागी वृत्तिकारक ३७	नाहटोकी गमाड १३६, १५७, १८०, १९१
नमानगर १९३, २०१	
नमहर १३०	नाहर १८७
नमहरम्पादर्वास्त० १८४	नाहरजी १६६
नाकोडा १३५	निगमियातपागच्छ ३८
नागजी ४८, २४-	नित्यमणि विनय० हा० १८५
नागण्वे ९८, २३३	निर्युक्ति म्थापन २०२
नागपुरीय तपागच्छ ६३	निराण राम १५६
नागहस्मिन् २८८	निलयसुन्दर १७३, १८७
नागाजुंन २८८	नितृत्तिशाखा २८८
नागेन्द्र २८८	निराजिपार्श्वन्त० २०१
नागौर १७, ५०, ७१, १५०, १६८, १६९, १९२, १९४, २०९, २४५, २४७, २६३	नीमा ५०
नाडोल २५३	नेमसुन्दर १७३
नाडोलाई ५१, ५-	नेमि २८७, ३०१
नाथनगर १६४	नेमिचन्द्र यति १८८
नाथू ५४, २४६	नेमिचंद्रसूरि २८८, २९३
नानिग १२९, २४५	नेमिदूत काव्यवृत्ति २००
नामकोश २०७	नेमिनाथ ५३, ५४, २२०
नागचन्द्रशिष्यन १६	नेमिनाथ महाकाव्य १७
	नेमिनाथ राम १७३
	नेमिनाथ स्वामी १८

नेमिगम १८३

नेमिनाथस्त० १७२

नेमिविद्याहला १९३

नपथकाव्यवृत्ति १८१

नोग्गखान ८९

प

पञ्चखणनिर्युक्ति १८४

पञ्चम्याणस्त० १९०

पञ्चमन्थी १२

पञ्चतीर्थस्त० ३०१

पञ्चतीर्थीश्लेषालङ्कारचित्री २०४

पञ्चनद्री १२९

पञ्चनद्रीमाधनजिनचन्द्रसूरिगीत २०,
२२, १३२

पञ्चनद्रीमाधनगीत १२७

पञ्चनद्रीमाधनविधि १२८

पञ्चपरमेष्ठिनमस्कारफलकुलक १२

पञ्चलिंगीप्रकरण १२

पञ्चानन ९६, ९७

पञ्चासरा ३६

पञ्चाशक्वृत्ति १२

पञ्जाब ६

पाचनद्री १६७

पाचस्तत्रन अवचूरे १९४

पाचहजारीपत्र २३९, २४०

पाचीसिंह २५४

पाडव २८०

पेंतीस अतिशयस्त० १९०

पुजगाजीटीका १८७

पठान १७२

पडिद्वारा ७१

पत्तन ३३, ४०, १२९, २६०

पत्तना २९१

पद्मकीर्ति १८२

पद्मचन्द्र १८२

पद्मप्रभु २८७

पद्मप्रभुस्तवन १६८

पद्ममङ्गि १९८

पद्मग १८२

पद्मराज २०, १२७, १३२, १९०

पद्मजी २४५

पद्मसी ४८, २७०

पद्मसुन्दर ६३

पद्मशेखर ३८

पद्महेम १७३

पद्मिनीचरित्र चौ० १६३

पद्मो २८२

पदव्यवस्था १९३	पाटमटे १३८
पदव्यवस्था टीका १९३	पात्तीगाम २०९
पद्मावली ९, १०८, १३९, १४०, १५१, १५६, १६२, १६३, २२९, २४१, २४५	पादुकाऐल १५७
पद्मे ५४, २४५	पायचन्द्रगन्ठ २८२
पन्नचणासूत्र १०७	पाज्ज २८७, ३०१
परवतशाह (जोहरी) ८२	पार्श्वजन्माभिपक्र १९-
परमहंस सत्रोधवग्नि १९०	पार्श्वनाथ ५६, ७१, २२७
परमाण्ड मूरि ३८	पार्श्वनाथजी १३०, १३५
परमात्मप्रकाश चौ० १८७	पार्श्वनाथप्रातुमूर्ति १२२
पर्यूसणा व्या० पद्धति १८३, १८७	पार्श्वनाथ रास २-७
परवतसाह २४५	पार्श्वनाथविम्ब २४९
परवना २८४	पार्श्वनाथस्तम्भ १६८ २०२
पल्लीवालगाच्छ ४२	पार्श्वप्रगटकारक ३७
पहुतगीप १८०	पार्श्वस्तम्भ १८७, १०६, २०१, २०२
पाटण १६, १७, १८, ३०, ३१, ३४, ३५, ३६, ५७, ४२, ४९, ५८, ६१, ८८, १२१, १२६, १३४, १३५, १४०, १४६, १५०, १५९, १७०, १७३, १७७, १९२, १९८, २६३, २६४, २६५, २६६	पार्श्वस्तुति १९३
पाटणि २५९, २६०, २६१, २६२	पालहणपुर १४, १५, २८, १३०
	पालहणपुरराच्छ ३९
	पाटहणपुरीशाग्या तपागच्छ २०
	पाली ७०
	पालीताना २५०, २५५, २८२
	पात्रापुगी १३, ५५
	पाम १३८
	पामा १३८
	पिण्डविशुद्धि १९५



प्रताप (महागणा) ६८

प्रतिक्रमण शाला २०७

प्रतिक्रमण विधि स्त १९३

प्रतिक्रमण समाचारी १२

प्रदेशी चौ १८६

प्रदेशी खन्धि १९६

प्रभावक चित्र १०, ४२

प्रभास २८७

प्रमाणलक्षण १२

प्रमोदमाणिस्य १९७

प्रमोदद्वंस ३९

प्रयास २९०

प्रहादनपुर १७०

प्रचनपरीक्षा ३०, १२१, १२२,
२६५, २९३

प्रक्षोत्तर २०२

प्रक्षोत्तरकाव्यवृत्ति १९०

प्रक्षोत्तर ग्रन्थ ४८, १०३, १२९,
१२१, १९९

प्रक्षोत्तर पत्र विचार १७१

प्रक्षोत्तर त्रिचास्मा ४१

प्रक्षोत्तर शतक १०

प्रशान्ति पत्र २९०, २९३

प्राकृतन्याकरण दोषकावचूरि १८५

प्राकृत ऋग्वेद शतक वृत्ति २००

प्राग्वदा २८१

प्राग्वदा १३२, २४०, २४८

प्राचीन जैन लेख स ११३

प्राचीन तीथमाला २८०

प्राचीन पद्यावली ५६

प्रासाद स्त २०४

प्रीति त्रतीसी २०७

प्रो० ईश्वरीप्रसाद ११८

पृथ्वीगान २३७

पृथ्वीगानरासो २३८

पृथ्वीगान त्रैलोक्य १६५

फ

फत्तपुर ८९, १९३, २०६, २१७

फगोधी ५६, १८६, २०७, २२१, २२५

फमलागोत्र २५०

घ

घकचूराम २००

घग २९०

घघस्वामित्वावचूरि १६५

घघस्वामित्व पदशीतिवृत्ति १०७

घडगञ्जा ३८

घडली २१, ३०, १७७

यीकानेर गॅजेटियर २२३	योथरा २३७, २४५
यीकानेर ज्ञानभण्डार १०८, ११०, ११६, १४०, १६०, १७१, १८०, १७३, १८१, १९३, २०१, २०२, २०४, २०७, २१०	योरासरी १३६ योल ७, १०, १२, १२३ योहट २८२ योहित्य २३३, २३६ योहित्यरा गोत्र १३४, १३८ योहित्यवश १०० यौद्ध ११०
यीकानेर जन लेख संग्रह २१८	
यीकानेर राज्य का इतिहास १०६, २२२, २२३,	
यीकानेर वृद्धत ज्ञानभण्डार ६४	भ
यीकानेर स्टेट २०२	भडारी ४८
यीकानेर स्टेट लायब्रेरी २३८, २४८	भवरलाल नाहटा ३०३
यीकानेरी सब २०२	भाडागारिक नेमिचन्द्र १४
यीजू २४०	भक्तामर स्तोत्र अग्रचूरि १९२
यीझू ५६	भक्तामर सुशोधनी वृत्ति १७०
यीयीगम्नी १२८	भक्तिग ५३
यीलाडा ७०, १५३, १५४, १५७, १५९, २६२, २६६	भगतादेवी २१४
बुद्धिमागसूरि १०, ११, १२	भगवतीसूत्र २१९, २२०, २२०
बुग्हानपुर २३२	भगवती सूत्र प्रशास्ति १७२
बगडगच्छ २४, २६	भगवती सूत्र सहाय २२०
बगडा २५	भगसाली २४५
बेनातट ७७	भगसाली गोत्र १६४
बेरमवा ६, १२१	भद्वाण्ड १०४, २०९
बोकडियागच्छ ३९	भद्रगुप्त २८८
	भद्रयाहु २८७

भद्रानन्द सधि १७३	भाणभेत्र (चन्द्र) २८०, २८३
भमराणी ७०	भावडहरा ४१
भरत २८०	भावप्रभाचार्य १७
भरअच्छ तपागच्छ ३८	भावप्रमोद २७
भरच १५९	भावरत्न ४०
भावहर्षीयशाखा २०९	भावरसिंह १६५
भरानी छन्द १९७	भावदातक १६८
भाङ्गला १५९	भाप्रहर्ष २०९
भाग्यचन्द्र ७१, २२१, २३२, २३३,	भावहर्षगणि १९
२३४, २३५, २३६, २३७,	भावारिवारण १९६
२३८, २९२	भीनामर २०८
भाग्यविशाल २०२	भीम २४, ३३, १४०, १९०, २४७,
भाड ५०	२५६, २९०
भाट ७०	भीमजी १६७
भाटी २८४	भीममुनि २४६, २९०
भाटी गोइन्द्रदास २९६	भीमराज २१५
भाण २३१, २३८, २३९	भीवरराज २३४
भाणजी ४८, २४५	भुजनगर २०९
भानु ८६	भुवनकीर्ति १९९
भानुचन्द्र ६४, १०३, १०४, ११९	भुवनधीर १६४
भानुचन्द्रचरित्र ८६, २२९, २८३	भुवनमेह १८७
भानुमेर २०२	भुवनरत्नाचार्य १६
भामाशाह २३८	भुवनलाम १७३
भारतके प्राचीन राजवंश १०६, २२३	

भुवनहिताचार्य १९१	मतिभद्र १९७
भुवनानन्द चौ० १८०	मतिसिंह २०६
भोज २, २३४	मतिहम १६४
भोजक ७०	मतिहर्ष १७३
भोजचरित्र चौ० १०४, २०९	मयणेरहा चौ० १८५
भोज चौपाई १६४	मधुग २१९
भोजनविच्छति १७१	मध्याह्न व्याख्या० पद्धति १७१, २११
भोजराज २३८, २३९	मनरूप १८६
भोज २९२	मनुवा ४८, २४५
भोलाजी २५४	मनोहर २७७, २७९
	मनोहरदास २३२, २३३, २३४, २३५, २३६
म	
मगलकलश रास १९४	मनोहरदासनी १०८
मदित २८७	मयणा १३१
मडोवर १६७	मरदेश २२१
मंत्रिपद २१५	मरोट १४, १६९, २०८
माण्डण ४८, १५९, २३३, २४०	मलधारगच्छ ३८, ४०
मपनूमशेख १६७	मल्लवि १०४
मगनभाई हकमचन्द २४२	मल्लि २८७
मगरवाडि १३०	मल्लिनाथ ५३
मजादेहपान २८१	मस्तयोगी ज्ञानगार ३०५
मणिभद्र १२८	मसूर १५२
मत्पेगण २९, २७०	महत्तियाण १३, १४
मत्स्योदर चौ० २०४	महाजनर्षदा मुक्तावली २३१, २०४
मतिकीर्ति २०२	

महोदय ६३	महुर ६८
महानिशीथ सूत्र २४८	महिमोदय १६४
महावीर ८, २७, १९१, २६९	महेवढ २५९, २६२, २६३, २६६
महावीर चैत्य २४७	महेवा ३०, १३५
महावीरजी मन्दिर २४९, २५०	म्हेसाणा ६८
महावीर भगवान १०	महोपाध्याय धर्मसागर (लेख) १२
महावीर स्तुति वृत्ति २०७	महोपाध्याय धर्मसागर गणि १५१
महावीर मन्दिर १३८	माणकदे १३८
महावीरगन्त० १६९, १९०	माणिभद्रयक्ष १२८, १३०
महाशतक श्रा० सधि १६५	माडू ५०
महिम ५३, ७२, १००	माधवानल चौ० १९६
महिमपुर २००	मानकवि २०५
महिमगन ५१, ५३, ५८, १०६, १६६, १७४, २२८	मानसिंह ५१, ६५, ८६, ९३, ९६ ९७, ९८, १००, १७८, १२१ १७४, २०१, २२६, २५६ २७७, २७८
महिमसिंह २००	
महिमसुन्दर १७३, १९३	मारवाड १५, १८, २७, ६१
महिमाकुशल १८७	माल्येव राउल २४, २५, २५९
महिमाभक्ति त्रिभाग ५६, २०२	भालकोट २९०
महिमामाणिस्य १७३	मालपुर २०१
महिमायती १८	मालवा २९०
महिमात्रिमल १८७	मालसर ७१
महिमासार १८४	मालूगोत्र १९
महिपाल चरित्र १६४	माडवगड १७
महीमागत सूत्रि ३८	मिरगा देवी १७६

मिन्ना १३८	मूला ५४, २४५
मिजा अजीजकोश ९०	मजकुमार चौदा० १६३
मिजा अब्दुर्गहीम १२१	मवजी २९०
मिना महमद हुसेन २१७	मघदत सयूति
मीगते अहमजी ९०	मेघमाली ९६, ९७
मीगते मिस्त्रजी २४२	मघगजागज २८७
मुक्तिमुन्द्र १७.	मघा ५०, २४६, २९०
मुस्नचन्द्रजी यति ११०	मघो २३४
मुस्नयपान १२१, १७७, १८०	मेडता ७०, ७१, ११३, १४०, १४६,
मुनिपति चण्डि १८७	१५०, १५३, १६९, १७७,
मुनिमालिका १८५, १८९, १९०	१७९, १८३, १८६, २०४,
मुनिप्रहम १७३, २९६	२२२, २२५, २४५
मुनिमुन्द्र २९०	मडताशिलालय २०४
मुनिमुद्रत २८७	मेडते २२७, २६६
मुनिमुद्रत जिनालय १७५	मतार्य २८७
मुनिमुद्रतरिम्ब १३८	मेडपाटे २९०
मुनिमुद्रत स्त० २०४	मताय ऋषि सम्बन्ध चा० २०५
मुनीमखा ६	मेग ७०, २४५
मुलतान १५०, १६९, १७३, १८६,	मेगे २३३
१८७, १९६, १९८, १९९,	मेगडा ६६, १५०
२०९, २७६, २७८	मवाडड २३९
मुसलमान ११६	मेवाडाधिपति २१४
मुहणोत्तमोत्र २५०	मेराडी २३४
मूलचक्र १५९	मेवात*श ०३

महाण्येव ६३	महुर ६८
महानिग्रीध सूत्र २४८	महिमोदय १६४
महावीर ८, २७, १९१, २१०	महेवह २०९, २६२, २६३, २६६
महावीर चैत्य २४७	महेवा ३०, १३५
महावीरजी मन्दिर २४९, २५०	म्हेसाणा ६८
महावीर भगवान १०	महोपाध्याय धर्मसागर (लिख) १२२
महावीर स्तुति वृत्ति २०७	महापाध्याय धर्मसागर गणि १५१
महावीर मन्दिर १३८	माणकटे १३८
महावीरमन्त्र १६९, १९०	माणिभद्रयक्ष १२८, १३०
महाशतक श्रा० सधि १६०	मादू ५०
महिम ५८, ७२, १५०	माधवानल चौ० १९६
महिमपुर २००	मानकवि २०५
महिमगज ५१, ५३, ५८, १०१, १६६, १७४, २२८	मानसिंह ५१, ६५, ८६, ९३, ९६, ९७, ९८, १००, १७८, १२१, १८४, २०१, २२६, २५६, २७७, २७९
महिमसिंह २०५	
महिमखण्ड १७३, १९३	मारवाड १५, १८, २७, ६१
महिमाकुण्डल १८७	माल्येव राउल २४, २५, २५९
महिमाभक्ति विभाग ५६, २०२	भालकोट २९०
महिमाभाषित्य १७३	मालपुर २०१
महिमाप्रती १८	मालवा २९०
महिमात्रिमल १८७	मालसर ७१
महिमासान १८४	मालुगोत्र १९
महिपाल चरित्र १६४	माडवगड १७
महीसागर सुरि ३८	मिरगा देवी १७६

मिन्ना १३८	मूला ०४, २३५
मिना अजीजकोका ९०	मेवकुमार चौडा० १६३
मिजा अब्दुर्गहीम १२१	मेवजी २९०
मिजा महमद हुसन २१७	मघदूत सवृत्ति
मीराते अहमदी ९०	मेघमाली ९६, ९७
मीराते सिकन्दगी २४२	मेपराजागज २८७
मुक्तिचन्द्र १७३	मेपा ५०, २४६, २९०
मुकतचन्द्रजी यति ११०	मेघो २३४
मुकतखान १२१, १७७, १८०	मेडता ७०, ७१, ११३, १८०, १४६,
मुनिपति चगिर १८७	१५०, १५३, १६९, १७७,
मुनिमालिका १८२, १८९, १९७	१७९, १८३, १८६, २०४,
मुनिबल्लभ १५३, २९६	२२२, २२५, २४५
मुनिचन्द्र २९०	मडताशिलालेख २०४
मुनिचवत २८७	मेडते २२७, २६६
मुनिचवत जिनालय १३५	मंतार्य २८७
मुनिचवतजिम्न १३८	मेडपाटे २९०
मुनिचवत स्त० २०४	मेतार्य कृषि सम्ग्रन्थ चौ० २०५
मुनीमया ६	मेग ७०, २४५
मुलतान १५९, १६९, १७३, १८६,	मगे २०३
१८७, १९१, १९४, १९९,	मेवडा ६६, १५०
२०९, २७६, २७८	मेवाडड २३९
मुमलमान ११६	मेवाडाधिपति २१४
मुद्दणोतगोत्र २५०	मेवाडी २३४
मूलचक्र १५९	मेवातदेश ०३

मोहणसिंह २५४

मेहतासागर २८२

मेहा ७१

मेहाजल २९२

मोकल ४०, २५०

मोतीकडिया २५५

मोहता २८२

मोहनजी २५५

मोहनलाल मगनभाई २४२

मोहनलाल व० दे० ९४, २६१

मोहनलाल देसाई ३१

मोहविपेकरास १८७

मौनपुत्रादशी स्त० १६९, १८१, १९२

मौर्यपुत्र २८७

मौलमी १०९

य

यतिभाराधना १७०

यतीन्द्रविहार दिग्दर्शन २४७

यति सूर्यमलजी १८१

यमुना नदी १५१

यश कुशल १९५, २९२

यशोभद्र २८७

यशोभद्रसूरि २५३

यामिनीभानु मृगावती चौ० २०९

युगप्रधान १०३

युगप्रधान जिनचन्द्रसूरि ३०४

युगप्रधाननिर्वाणरास २२, १४६,
१५२, १५६, ५६१

युगप्रधानपद ९९, २२५

युगप्रधान भट्टागक १५२

युगादिविहार २९४

योगविधि १७

योगशास्त्र वृत्ति २९१

योगिनी १२९, २४७, २९०

योगीनाथ ५९, ६०

र

रगकुशल १९५

रगनिधान ३९, १८५

रगप्रमोद १८६

रगा ४०

रगादे १३८

रका ४८, २४५

रावडी चौक २८, २३१

राणो २३३

रगतिया क्षेत्रपाल २३१

रघुवश टीका २००

रघुवश वृत्ति १७०, २२६

रता २३३

रत्नचूडगस २०४	राजपूतानेके जैन धीर २२२, २२३
रत्नधीर ३८	राजलाम १७३, २६६
रत्ननिधान २२, ५३, ५९, ७४, ९८, १००, १०१, १३०, १३७, १८४, १९८, २४६, २४७, २९०, २९४	राजममुद्र १३१, १४०, १६५, १७५, १७६, १८१, २००, २९२
रत्नमुनिनी १२७	राजमागरजी १८६
रत्नलाम २९०	राजसार १८४
रत्नमागर ३८, ३९	राजसिंह १७५, १७८, १९६, २२२, २४५
रत्नमागर दूसरा भाग १०	राजसी २३३, २३५, २९०, २९२
रत्नविमल १८७	राजउन्दर १७३
रत्नमाग २०८	राजसोम १३१
रत्नहर्ष ४०, २०७	राजहस १८३
रत्नदितोपदेश १२३	राजहर्ष १७३, १८७, २०९
रत्नलाम १६६, २०३	राजापद २२२
रत्नगादेवी १८	राजेन्द्राचार्य १५
राउल्ले १८	राडहपुर २०१
रायेचा २४९	राणकपुर २४१, २५०
राजगृह १४, ५५	राणकपुर यात्रास्तो १६९
राजचन्द्र २०९	राणो २३४
राजधानी १७०	राधनपुर १९८
राजनगर २६, ४८, ४९, १३३, १४०, १५९, १७६, १८७, २६२, २६५	राम १३५
राजप्रमोद २४७	रामजी २८२
राजपाल १२९, २४०, २९०	रामा २८७
	रामकृष्ण घो० १९९
	रामचन्द्र १८२, २०८, २३४, २३५, २३८, २३९

रामदास ९४

रामलालजी यति १०९, २३१

रामसिंह २२३

रायचुग २४३

रायगन्नाड २८२

रायत्रयीदास म्युजियम २०६

रायचन्द्र १८६

रायसिंह (मत्री) ७२

रायसिंह १००, १०६, १०७, १३१,
१३६, १३८, २१४, २१६, २१७,
२१८, २२०, २२१, २२२, २२३,
२२४, २२५, २२६, २२७, २३०,
२३२, २३७, २५९, २४०,
२४९, २६६, २९८

(रायल) भीमजी १३१

राव्य (गात्री) १२८

रावी (नदी) १२१

रिणथभ २३७

रिणी ७१, १७०, १९७, २४५, २६८

रीहड २८९

रीहडगोत्र २१, १६६

रजनाथ २३४, २६०, २३८, २३९

रचिगण्डक वृत्ति १९१

रघुपत्नीय ३९

रम्भक ०५, २४७, २००, २६४

रुदा १३४

रूपकमालाचूर्णि १६८, १८४

रूपकमाला वृत्ति १९७

रूपचन्द्र १८६

रूपजी २४२

रूपसो १६७

रूपसेनराज चौ० २०४

रूपा १३८

रूपाडे १३८

रेकजी २२३, २२४

रेखा १९९, २४५, २९२

रेखा (मुनि) २४६, २९०

रेलडादाजी १५७, १८०

रेवतीमित्र २८७

रेवतीसूक्ति २८८

रोहितासपुत्र ९६, ९७

रोहीठ ७०, २४५

ल

लक्ष्मीचन्द्र ७१, २२१, २३३, २३४,
२३५, २३७, २३८, २३९

लक्ष्मीदास ५४, २४५

लक्ष्मीनिधान ३८

लक्ष्मीप्रभ १९८

लक्ष्मीप्रिय २०८

वाणगंगा १०६, १५७	विजयदान सूरि ३२, ३३, ३४, ४२
वाढम्यल १४	४३, ४४, ४५
वामनम्यली २४३	विजयदेव महात्म २०३
वायुभृति २८७	विजय प्रशान्ति काव्य २६५
वामनदत्त ३४	विजयपुर १९३
वासुपूज्य २२०, २८७	विजयमेर २१०
वासुपूज्य चतु० षट् २४०	विजयराज २३३
वासुपूज्य मन्दिर ५०, २१९	विजयराज घाटी १८७
विक्रम १७६	विजयसेन विजयाग्रन्थ १९३
विक्रमनगर २५०	विजयसेनसूरि ४४, ४५, ४६, ११९
विक्रमनगर २९९	१२३, २६५
विक्रमपुर ६०, ७०, १०७ १३४,	विजयवर्ष १९४
१३८, १५७, १५९, २५९,	विद्याघर शाखा २८८
२६७, २९०, २९८	विद्याग्रन्थसूचि ३९
विक्रमपुर मण्डल जिन म्त् २९८	विद्यामागर १८५, २४८
विक्रमादित्य २, २८०	विद्यासार १८४
विज्ञप्तिपत्र २९५	विद्यात्रिायगी १२२
विज्ञप्ति त्रिणी १०	विद्यात्रिजय २८०
विचाररत्न मण्ड १९९, २००	विद्यामिडि १८०
विचारशतक १६९	विद्याराज्य ३०
विजयकीर्ति २०६	विधिनन्दनी १९५
विजयचन्द्र १८६	विधिन्यातक ३६
विजयतिलक २०१	विजयदुर्गा ३८
विजयतिलकसूचि गाम् ४२, ५२२, ५२३	विजयकीर्ति-३०
विजयदान १२०	

विनयतिलकसूरि ३९	विशिका १३
विनयप्रमोद १८६	विशेष संग्रह १७०
विनयमोम १६३	विशेष शतक १६९, १७०
विपाकसूत्र २९१	विष्णुपुत्र २८७
विमल २८७, २९३	विहृत्य (झेलम) १२८
विमलकीर्ति १९३, १९४, २९६	विहारपत्र ७६, १६२, १६५, २३२, २५९, २६३
विमलचन्द्र १९४	विहारपत्र न० (१) १३३
विमलचन्द्रसूरि ३८	वीर ३००, ३०१
विमलतिलक १५३, १९३ २०६	वीरकलश २०४
विमलनाथ १३५	वीरचरित्र वाला १६४
विमलप्रबन्ध ५	वीरजो ४८, २४०
विमलयमलवृत्ति १७१	वीरदास ७२, २४०
विमलरग २०९	वीरपाल २९२
विमलप्रिनय (कृतगीत) ८३, १०६	वीरभाण उदयभाण राम १९३
विमल स्त० १९६	वीरमगाच १९७
विमलवसति २९३	वीरमदे १३८, २३६, २३७
विमलशाह १०	वीरमपुर १६९, १७२, १८३, १९५
विमलाचल १३४	वीरमन्त्र १२
विमलाचल स्त० १३४	वीरोदय ५३
विलाडा २४५	वीलपुर २०४
विवदणीक घारेजिया ३८	वीसलगर ४९
विसवाद शतक १७०	वीमलनगरि २५०
विसेष्ट पृ० स्मिय ११५, ११७	वीमलनयनि ४३
विशालकीर्ति २०८	

- चीनी १८१
 घेतालपवीसी २०९
 घैद्यविनोद घो० १८२
 वैदाका मन्दिर २७०
 वैगम्यप्रावनी १८१
 वैगट १०४
 व्यक्त २८७
 व्यग्रम्याकुलक १३, १४
 व्यग्रम्यापत्रक २९
 व्याह (व्याम) १२८
 वृत्तप्रवर्णरास १९९
 वृत्तरसाकर १९५
 वृत्तरत्नाकर वृत्ति १७०
 वृद्धशास्त्रीय तपागच्छ ३८
 वृद्धतरुलप २६८
 वृहत्तपागच्छ ३८
 वृहद्ब्रह्मज्ञान भण्डार ४६, ४८, २८३
 वृहन्मस्तपनावली १८७
 श
 शङ्कर २२३
 शङ्करदानजी ३०३
 शतश्लयन्त्रपादर्वन्त० २०६
 शत्रुजय ३०, ९०, ११३, १३९, १४०
 १८४, १९८, २००, २१४, २१५,
 २१९, २४५, २४९, २५०, २००
 शत्रुजयउद्धारस्त० २८०
 शत्रुजयरूपभन्त० १८३
 शत्रुजय चै० प० म्त० १०९, २०२
 शत्रुजयतीर्थोद्धारकल्प १९३
 शत्रुनय महात्मगम २०६
 शत्रुजय यात्रा २६०
 शत्रुजययात्रापत्रिपाटीस्त० १७२
 शत्रुजययात्रास्त० १६८, २००
 शत्रुजयगस १६९
 शत्रुजयविमलाचल २४०, २४१
 शत्रुजयावतार १३६
 शब्दप्रभेदटीका २०२
 शब्दप्रभेदनाममाला १०३
 शब्दरत्नाकर १९३
 शब्दभय २८७
 शास्त्र ७२
 शातगम्भावना १८६
 शाति २८७, ३०१
 शान्तिचन्द्र ६४
 शान्तिनाथ ५३
 शान्तिनाथजी १२०, १३२, १३५
 शान्तिनाथजी मन्दिर २४२, २५३
 शान्तिस्तपन १८३
 शान्तिसूत्रि २८७

शाम्भ्रप्रद्युम्न चौ० ५७, १६८	शृङ्गाग्रशतक १३
शाग्दा २४३	श्रावकविधि १२
शाग्दा १८६	श्रावरुधर्मविधि १५
शास्त्रत चैत्य स्त० १९७	श्रावकागधना १६९
शाहीफरमान २७२	श्रावक १२ व्रत कुलक १६९
शिवनिधान ५१, ६४, १९०, २०६	श्रियादेवी २१, २२
शिवपुरी ६८, २१७	श्रीचन्द्र २१९
शिवराज १३८	श्रीचन्द्रादि १७३
शिवासोमजी २४१, २४२, २४४	श्रीजिनचन्द्रसूनि जीवतचग्नि २४०
श्रीतपुर १८४	श्रीनगर ९७, १७७
शीतल २८७	श्रीनिर्वाणराम १८८
शीतल जिनस्त० १९२	श्रीपाल ५३
शीतलनाथ ७१, ७२	श्रीपालगस १६४
शीलठत्तीसी १६९	श्रीपूज्यजीसग्रह ५५, १०७, ११०, १६४, १६५, १८१, १८३, १८५, १८७, १९३, १९४, १९५, १९६, १९७, २०१, २०३, २०४, २०६, २०७, २९५
शीलजतीगस ५७	श्रीपूज्यवाहणगीत ४७
शीलविजय २४०	श्रीमद्वेद्यचन्द्र (भा० १-२-३) १८६
शीलोच्छनामरूप २०२	श्रीमलशाह २०४
शुक्रराज चौ० १८७	श्रीमाल १०५, १७६, २०१
शुभवर्द्धन २०८	श्रीवच्छ ५४, २४७
शुभवर्द्धनगणि १९	श्रीवन्तशाह २१, १४६
शेखू (सलीम) २२७	श्रीवल्लभ २०२
शेखूनी ८६	
शोपनाममाला १९३	
श्यामाचार्य २८७	

श्रीमार्ग १३१, १७८, १७९, २०७
श्रीगुन्दर १२, १०२, १३४, १७२,
२४६, २९०
श्रीमोम १८४

प

पद्मशीति १९८
पद्मशीतिर्भोग्रन्ध १२
पद्मवश्यकपालाग्रयोध १८, १७१
पद्मत्रिशूलविद्या १२३
पद्मत्रिशूलधर्म्यज्ञापविचार १२३
पटभाषान्तः १७२
पटस्थानभाष्य १२
पटस्थानरूपकरण १२
पट्टिगतक १७
पट्टिगतकृत्ति १७

स

सङ्ग २७७
सङ्गाल २०४
सङ्गाल गोत्र १०७
सङ्गेश्वर २०८
सङ्गेश्वर स्तः १८७, २०२
सङ्गेश्वरीशाला ६४, २०८
संग्रामपुर १९९
संग्रामसिंह १९, २८, २९, १९२,
२१३, २१८
संग्रामसिंह वृत्ताग्रत ५०
सङ्गपट्टक १२
सङ्गपट्टक वृत्ति १०, १४

सङ्गपति पत्र १७७
सङ्गेश्वर ३८
सन्तोषरतीसी १७०
सन्देह दोलाचली पयाय १७०
सन्धोधमसतिका वृत्ति २००
सम्भार २८७
संयममाग सूरि ३०
सयति सन्धि १६४
सयराघोना २८७
संयगरङ्गशाला १२
सङ्गलवन्द ८३, १६६
सङ्गीगाम १८७
सङ्ग २८०
सङ्गा २३३
सतम्भेरी पूजा १९२, १९८
सतम्भेरी पूजा शान्ति स्तः २०७
सतगिसय वाला १८३
सतलज २२१
सताइसगोल चर्चा २७२
सताइस गग गर्भित स्तः १६८
सती मृगाघती ३०३
ससदीपिशाङ्गार्णव २०७
सदयवच्छ १२२
सङ्गारङ्ग २९२
सप्तस्मरण टाग १८६
सप्तस्मरण वृत्ति १७०
सनतकुमार घो १७२
सनतकुमार रास १९१
सन्देह दोलाचली १०, ४१

सप्तपदार्थी वृत्ति १६	सगम्बती २७६
सप्तस्मरणपाला १९२, २१४	सगम्बती (विल्ल) २०८
सप्तसिंह २३४, २३५	सगम्बती देवी १६
सप्तदानगर २४७	सगम्बती पत्तन (सगम्मा) ७२, १९१
सप्तधर २३३	सगम्बती पुत्र १४
सप्त २८०	सगम्मा १८२, १९४
सम्प्रति २	सगणउ ७०
सम्प्रोधमत्तगे प्रकरण १०	सरूपचन्द्रजी २८४
सम्प्रयत्त्व कोमुडी रास २०८	सलीम ८५, ८६, ९७, १०५, १२१
सम्प्रयत्त्व विचार रूप १९७	१४०, १४५, १५१, १५५
समयकीर्ति १८४	१७५, १७६, १७८, १७९
समयत्रय १९५	२५६, २४९, २९५
समयप्रमोद १००, १५६, १७२	सम्प्रयत्त्व शब्दार्थ समुच्चय २०१
समयग्र १९५	सवाइ युगप्रधान १५१
समयरत्न ३८	सवालक्ष देश २०८
समयराज ५३, ११३, १३२, १३४,	सवामोमा २४३
१३७, १६७, १८२, २४७, २९४	सवैयाछतीसी १७०
समप्रसुन्दर ४१, ७४, ९१, ९२, ९५	सवैया दावनी १८६
९८, ११३, १२१, १२८, १३१,	सहजकीर्ति २०६
१३१, १४१, १४९, १५१, १६०,	सहजिया ४८, २४५
१६३, १६७, १७१, १७६, १७८,	सहमा २४७
१८३, १८४, १८८, १९३, १९८,	साकर २१५, २४५
२००, २२९, २४१, २५५, २५६	सागा २६३
समप्रसुन्दर कृत रूप १३७	सागावत २३४, २३५, २३६
समप्रसुन्दरजी गीत १३१	सागहेमाब्दानुशासन १८४
समाचारी १४	सागानेर १६८, २०४, २०७
समाचारी शतक ४१, १६९, १७१	सागासुत १००
समियाणा २१७	सागैकादशाग २४८
सम्प्रेशिशिरजी ५५	सागो (संप्रामसिंह) २३४,

साडा १३१, १६७	सामायिक वृद्धि स्त० १००
साङ्गिह २८७	सामीदास ५४, २४५
साभा २३७	सागधर ४८, ४०
सामलिनगर ८५, ८४, २४८	सागधरमत्यवादी २४८
सावत्सरिक पत्र २८८	सागसार वृत्ति २०३
सावतसी २३५	सार्द्धशतक कर्मग्रन्थ ४१
सावलदाम २६	साग्धत १८३
सागरचन्द्राचार्य १६	सारधतटीपिका १९९
सागरचन्द्रसूग्णि पग्म्यरा २०८	सारधतगह्म्य १७१
सागरचन्द्रसूग्णि शाग्ना १६३	सारधतवृत्ति २०६
सागर वावनी ४३	साहम्मीकुलकटया १७२
सागर सेठ घो० २०६	सिद्धविनय ४३, २०६
साचोर् १५७, १६९	सिद्धरलोदी १८, १८९
साठ पुनमिया ४४	सिरधन्त २१
साधुकीर्ति ४५, ६३, १९०, १९२, १९४, २१५	सिद्धपुर ६८, १६९, २४८
साधुदेव १०२	सिद्धराज २९२
साधुपटावली ४१	सिद्धमूरि ३८, २०३
साधु पूनमियागच्छ ४०	सिद्धाचल ५९, १७७, २४२
साधु पूनमियापटावली ४२	सिद्धाचलस्त० १८६
साधुगङ्ग १८६	सिद्धान्तचक्रचमत्तौ १९८
साधुधन्दा १७०	सिद्धान्तिया ३८
साधुवर्द्धन ५५	सिद्धान्तियागच्छ ३९
साधुवल्भ २४७, २९०	सिद्धान्तियातपगच्छ ३८
साधुसमावाग्नि व्या० २०१	सिद्धिचन्द्र २२९
साधुसमाधारी बाला० १८३	सिद्धिसेन १६८, १७८, १८२
साधुसाङ्ग २१९	सिन्ध (नदी) १८२
साधुसुन्दर २९५	सिन्धु १८
सानिह धानु १७१	सिन्धुदेश १८, ५९, १६७, २२१, २४८

सिगियदेवी २१	सुभतिलाम १६४
मित्राणो २८४	सुमतिसागर १८६, २०२
सिंहलसुतप्रिय० रास १६९	सुमतिसिन्धुग २०२
मिहासनवत्तीसी १८६	सुमतिसुन्दर १८३
मोहा ३८	सुमतिशेखर १८७
मीकरी ८९	सुमेरमलजी यति १६, २०८
मीतागम चो० १६९, १७१	सुयदाकीर्त्ति २००, २०२
सीरोही ५९, ६०, ६२, ६९, ८९, १३४, १७८, २१७	सुरताण २०९, २६३, २९२
मीरोहीराज्यका इतिहास ६८	सुरताणदेवी २१४
सुचिति १९२	सुरतान ६८, ६९, १३३, २४७, २५०
सुखबोधिका १७०	सुरप्रियरास २०९
सुखसागग्जी २५, २९५	सुरूपादेवी २१४
सुगुरुमहिमालन्द २५६	सुलतान २२, २३
सुन्दरदास २३५	सुलतानमहमद २८१
सुधर्मरुचि २०८	सुविदितपरम्परा २६४
सुधर्मवोपगच्छ ३९	सुहावानगर १८३
सुधमा २८७, २९३	सूक्ष्मार्थविचारसार १२
सुपाशर्व २८७	सूजा २३३
सुपाशर्वनाथ ५०, ८६	सूर १४०, २५६
सुपाशर्वनाथजी मन्दिर १३६, १३७	सूरचन्द्र २०४, २०५
सुप्राहुमन्वि १८९	सूरचन्द्रपन्यास ४३
सुभद्रचो० २०६	सूरजसिंघ २३६, २३७, २३८
सुमतिकुञ्जोल १३७, १५३, २९०, १७१, २४८	सूक्त ९६, १५९, १९९, २०१
सुमतिधर्म १८४	सूक्ति २६१
सुमतिधीर २३, २५, २६, २५९, २६३	सूरसिंह २३०, २३१, २३२, २३३, २३४, २६५
सुमतिनाथमन्दिर १३२	सूग्मिहजी १३९, १४०, २३४
सुमतिमन्दिर १६४	सूरजसिंहजी २८४
	सूरिमत्रसाझायकल्प २४९

सूरीश्वर ओर सम्राट ६४, ८६, ९४
 मेतालीमटोपमशाय १७०
 सेखना पाडा २५०
 सेडियालाइनेगी २००
 मेडी ३३
 सेरणा ५८, २५९, २६४
 सेचड २८०
 मेचडा १५०
 संगुजा २८१, २८२, २८३
 मैत्रावा २०७, २५३, २५४
 सेत्रावास्त० २०४
 मैमलिया २५३
 मेरिसे ५९
 सोजत ७०, १६४, १६५
 योजितरे ८८
 सोझत २८४
 सौवीगेश २५०
 सोमसुन्दरसुरि ४२
 सोमजी २४, ५९, ६०, १३२, १३३,
 १६२, २४३, २४४
 सामजीशिना २३९, २४०, २४१
 २४३, २४५
 सोमदेव २८०
 सोमधर्म ३३
 सोमराज १२८, २९३
 सोमसुन्दरसुरि ३९
 मोरठ ५९, ६०
 मोरठदेश २८१
 स्पेशीयलट्रेनम्भरणाक २५३

सौहमकुलपट्टावली १२३
 सोभाकरसुरि ३८
 सोरीपुर ५३, ५४, २५०, २५०, २६४
 स्तम्भण ४०
 स्तम्भतीर्थ ३७, ४७, १०२, १८७,
 १२६, १२७, १५८, २१५
 २४८, २९३, २९४
 स्तम्भतीर्थज्ञानकोष २९५
 स्तम्भन २८९, २९०
 स्तम्भनपार्श्वनाथ ६१, १७७
 स्तम्भनकृतीर्थ १६
 स्तम्भनरुपाश्वरनाथ १२
 स्तम्भण ३३, ३७, ३९
 स्थानागगाथावृत्ति १८५
 स्थानागगाथागतवृत्ति १७१
 स्थानागसूत्रवृत्ति २४८
 स्थापना पत्रशिक्षिका १९९
 स्थूलभद्र २८७
 स्थूलिभद्र फाग १६
 स्थूलिभद्रसहाय १७०
 स्नात्रपूजादिप्रबन्ध ३०४
 स्वप्नाष्टक विचार १३
 स्वर्णगिरि ६९
 स्वर्णप्रभाचार्य १६
 स्वर्णलाभ २४६, २४७, २९०

ह

हसप्रमोद ११३, २०३, २०४
 हसरजप्रच्छराज चौ० २०५

हमगाजवच्छगाजप्रबन्ध २१०	हमिश्रचन्द्ररास १८१, २०६
हथिणाडरि (हस्तिनापुर) ५०	हरो २३४
हथिणापुर २०९, २६४	हासू २४९
हमीर २३७	हाजापेटेलपोल २४२
हमीरमन्त्री २९२	हाजीखानदंग १६४
हमसमंत २४	हापाण्ड ७२, ७३, ११०, १११, ११२, १२५, २६१, २६५
हमसा ४८, २४५	हापाणक २४८
हमगाजजी १३१	हीरकलश २६, १०३, १८८, २०८
हमगाजराडल २३	हीरक्रीति १७३
हर्षकल्लोल २०९	हीरजी ४८, २४५
हर्षकुल १९०	हीरनन्दन १८१
हर्षचन्द्रजी २०३	हीरप्रियसूरि ३३, ३४, ४४, ६४, ८६, ८८, १०४, ११९, १३०, २७६, २७८, २८३
हर्षनन्दन १३१, १७१, १७७, १८०, १८५, २११, २६४, २९०, २९१	हीग १३८, २४९, २५०
हर्षनन्दनमाटी १६३	हीगटे १३८, २४९
हर्षराज १७३	हीगनन्द १४०
हर्षवल्लभ १८०, २४६, २९०	हीगेढ्य १८७
हर्षविजय २०६	हुमायू ५, २८१
हर्षविनय ३८	हुमान २८२
हर्षविमल ५३, १७३	हेमक्रीति २०७
हर्षमिशाल ९६	हेमनन्दन २०६, २०७, २०८
हपसाग ६७, २०५	हेममन्दिर १५९, १८१
हर्षमोम २७	हेमराज ५०
हर्षशील १६३	हेमहमसूरि ४१
हरिकेशीमन्धि १९४	हेमहर्ष २०८
हमिश्रमन्त्रि १९४	हेमाणद १०४, २०९
हरिमन्त्रसूरि १२, २८७	
हमिमागरजी १२७, १३२	

